नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य आनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर-गुरुभ्यो नमः

सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि

भाग 14

आगम ११-१२

"विपाकश्रुत तथा औपपातिक" मूलं एवं वृत्तिः

मूल संशोधक :- पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यश्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराजसाहेब

अभिनव-संकलनकर्ता :- आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

पूज्य शासनप्रभावक आचार्यश्री हर्षसागरसूरिजी की प्रेरणा से

'वर्धमान जैन आगम मंदिर संस्था' पालिताणा

ईस प्रोजेक्ट के संपूर्ण-अनुदान-दाता

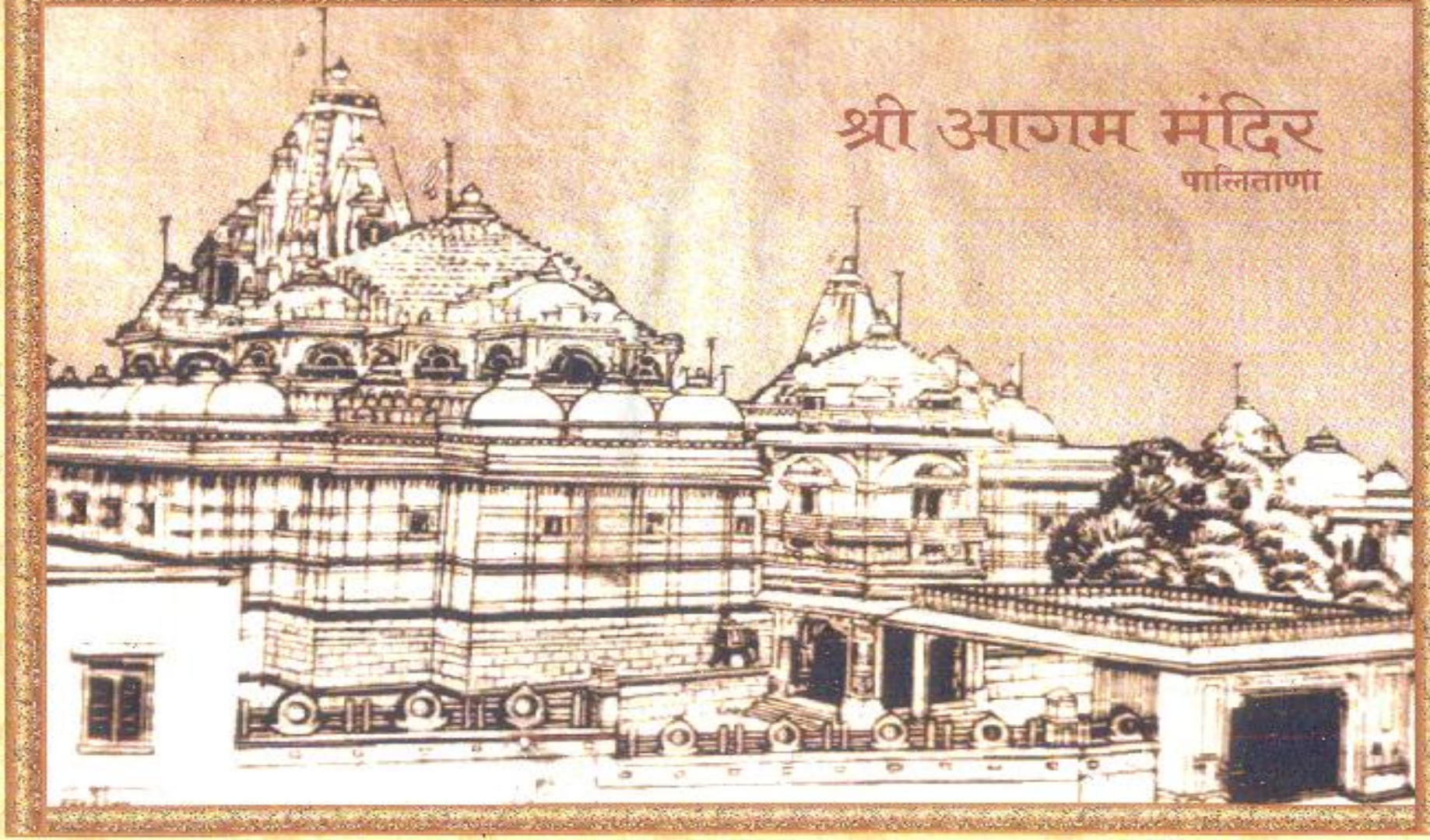

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि

मूल संशोधक

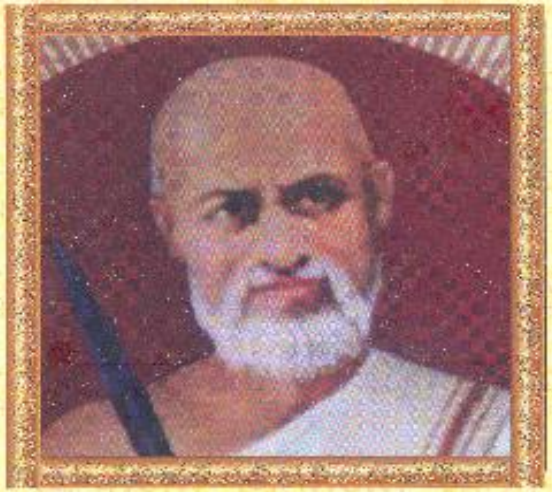

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य
श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज

अभिनव-संकलनकर्ता

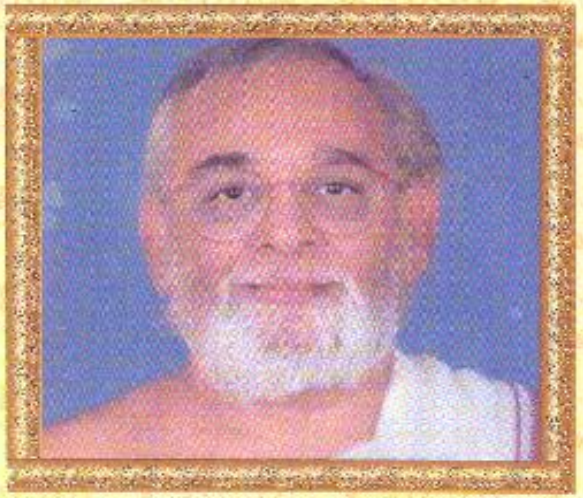

आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी
[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

प्रत-प्राप्ति और पेज-सेटिंग कर्ता : www.jainelibrary.org के चेरमन श्री प्रवीणभाई शाह, अमेरिका
मुद्रक : नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस अमदावाद Mo 9825598855 / 9825306275

आगम

वाचना शताब्दी वर्ष

[भाग-१४] “विपाक” एवं “औपपातिक” सूत्रम्

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

“विपाकश्रुत तथा औपपातिक” मूलं एवं वृत्ति:

[आगमसूत्र ११,१२] मूलं एवं वृत्ति:

[आद्य संपादकश्री]

पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म॰ सा॰

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

पुन: संकलनकर्ता→ मुनि दीपरत्नसागर (M.Com., M.Ed., Ph.D.श्रुतमहर्षि)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५ **‘सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि’ श्रेणि भाग-१४**

श्री आगमोद्धारक-वाचना-शताब्दी-वर्ष-निमित्त ‘आगम-वृत्ति-मुद्रण-प्रोजेक्ट’

सामाचारी-संरक्षक, ज्ञानधनी, आगम-संशोधक, तीव्र-मेधावी, समाधिमृत्यु-प्राप्त, बहुमुखीप्रतिभाधारक

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

◆ जिन्होने शुद्ध-श्रद्धा, सम्यक्-श्रुत आराधना, यथाख्यातचारित्र के प्रति गति और अंत समय देह-ममत्व के त्याग के द्वारा कायोत्सर्ग नामक अभ्यंतर-तप कि मिशाल कायम कि है ऐसे बहुश्रुत आचार्य श्री सागरानंदसूरीश्वरजी महाराज का परिचय कराना मेरे लिए नामुमकिन है, फ़िर भी गुरुभक्ति बुद्धि से श्रद्धांजली स्वरुप एक मामुली सी झलक पैस करने का यह प्रयास मात्र है |

◆ चारित्र-ग्रहण के बाद अल्प कालमे जो अपने गुरुदेव की छत्रछाया से दूर हो गये, तो भी गुरुदेव के स्वर्ग-गमन को सिर्फ़ कर्मो का प्रभाव मानकर अपने संयम के लक्ष्य प्रति स्थिर रहते हुए अकेले ज्ञान-मार्ग कि साधना के पथ पर चले | पढाई के लिए ही कितने महिनो तक रोज एकासणा तप के साथ बारह किल्लोमिटर पैदल विहार भी किया | लेकिन अपने मंझिल पे डटे रहे, और परिणाम स्वरुप संस्कृत एवं प्राकृत भाषा का, प्राचीन लिपिओ का, व्याकरण-न्याय-साहित्य आदि का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया | जैन आगमशास्त्रो के समुद्र को भी पार कर गए|

◆ एक अकेला आदमी भी क्या नहीं कर शकता? इस प्रश्न का उत्तर हमें इस महापुरुष के जीवन और कवन से मिल गया, जब वे चल पड़े देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमण के स्थापित पथ पर. बिना किसी सहाय लिए हुए सिर्फ अकेले ही "जैन-आगम-शास्त्रो" को दीर्घजीवी बनाने के लिए अनेक हस्तप्रतो से शुद्ध-पाठ तैयार किये | दो वैकल्पिक आगम, कल्पसूत्र और निर्युक्तिओ को जोड़कर ४५ आगम-शास्त्रो को संशोधित कर के संपादित किया | फिर पालीताणामें आगम मंदिर बनवाकर आरस-पत्थर के ऊपर ये सभी आगम-साहित्य को कंडारा, सूरतमें ताम्रपत्र पर भी अंकित करवाए और "आगम मंजूषा" नाम से मुद्रण भी करवा के बड़ी बड़ी पेटीमें रखवा के गाँव गाँव भेज दिए | वर्तमानकालमे सर्व प्रथमबार ऐसा कार्य हुआ |

◆ सिर्फ मूल आगम के कार्य से ही उन के कदम रुके नही थे, उन्होंने आगमो की वृत्ति, चूर्णि, निर्युक्ति, अवचूरी, संस्कृत-छाया आदि का भी संशोधन-सम्पादन किया | उपयोगी विषयो के लिए उन्होंने एक लाख श्लोक प्रमाण संस्कृत-प्राकृत नए ग्रंथो की रचना भी की | कितने ही ग्रंथो की प्रस्तावना भी लिखी | ये सम्यक्-श्रुत मुद्रित करवाने के लिए आगमोदय समिति, देवचंद लालभाई इत्यादि विभिन्न संस्था की स्थापना भी की |

◆ ज्ञानमार्ग के अलावा सम्मेतशिखर, अंतरीक्षजी, केशरियाजी आदि तीर्थरक्षा कर के सम्यक-दर्शन-आराधना का परिचय भी दिया | राजाओं को प्रतिबोध कर के और वाचनाओ द्वारा अपनी प्रवचन-प्रभावकता भी उजागर करवाई | बालदिक्षा, देवद्रव्य-संरक्षण, तिथि-प्रश्न इत्यादि विषयोमे सत्य-पक्षमें अंत तक दृढ़ रहे | जैनशासन के लिए जब जरुरत पड़ी तब अदालती कारवाईंओ का सामना भी बड़ी निडरता से किया था |

◆ सागरानंदजी के नाम से मशहूर हो चुके पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजीने अपने परिवार स्वरुप ८७० साधू-साध्वीजी भी शासन को भेट किये |

...ये थे हमारे गुरुदेव "सागरजी"... *.....मुनि दीपरत्नसागर...*

संयमैकलक्षी, उपधान-तप-प्रेरक, चारित्र-मार्ग-रागी, प्रवचन-पटु, सुपरिवार-युक्त

पूज्य गच्छाधिपतिआचार्यदेव श्री देवेन्द्रसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

***** परमपूज्य आचार्यश्री आनंदसागरसूरीश्वरजी के पाट-परंपरामे हुए तिसरे गच्छाधिपति थे पूज्य आचार्य श्री देवेन्द्रसागरसूरीश्वरजी, जो एक पून्यवान् आत्मा थे, दीक्षा ग्रहण के बाद अल्पकालमे ही एक शिष्य के गुरु बन गये | फ़िर क्या ! शिष्यो कि संख्या बढती चली, बढ़ते हुए पुन्य के साथ-साथ वे आखिर 'गच्छाधिपति' पद पे आरूढ़ हो गए | इस महात्मा का पुन्य सिर्फ शिष्यों तक सिमित नही था, वे जहा कहीं भी 'उपधान-तप' की प्रेरणा करते थे, तुरंत ही वहां 'उपधान' हो जाते थे | प्रवचनपटुता एवं पर्षदापुन्य के कारण उन के उपदेश-प्राप्त बहोत आत्माओने संयम-मार्ग का स्वीकार किया | खुद भी संयमैकलक्षी होने के कारण चारित्रमार्ग के रागी तो थे ही, साथसाथ ज्ञानमार्ग का स्पर्श भी उन का निरंतर रहेता था | आप कभी भी दुपहर को चले जाइए, वे खुद अकेले या शिष्य-परिवार के साथ कोई भी ग्रन्थ के अध्ययन-अध्यापनमें रत दिखाई देंगे |**

***** ये तो हमने उनके जीवन के दो-तीन पहेलु दिखाए | एक और भी अनुसरणीय बात उन के जीवनमें देखने को मिली थी- 'आराधना-प्रेम'. कैसी भी शारीरिक स्थिति हो, मगर उन्होंने दोनों शाश्वती ओलीजी, [पोष}दशमी, शुक्ल पंचमी, त्रिकाल देववंदन, पर्व या पर्वतिथि के देववंदन आदि आराधना कभी नहीं छोड़ी | आखरी सालोमें जब उन को एहसास हो गया की अब 'अंतिम-आराधना' का अवसर नजदीक है, तब उन के मुहमें एक ही रटण बारबार चालु हो गया- " *अरिहंतनुं शरण, सिद्धनुं शरण, साधुनुं शरण, केवली भगवंते भाखेला धर्मनुं शरण* " इसी चार शरणो के रटण के साथ ही वे समाधि-मृत्यु-रूप सम्यक् निद्रा को प्राप्त हुए थे | ऐसे महान् सूरिवर को भावबरी वंदना |**

***** मुनि दीपरत्नसागर...**

◆◆◆ श्री वर्धमान जैन आगम मंदिर संस्था, पालिताणा ◆◆◆

पूज्यपाद आनंदसागर-सूरीश्वरजी की बौद्धिक-प्रतिभा का मूर्तिमंत स्वरुप ऐसी इस संस्था की स्थापना विक्रम-संवत १९९९ मे महा-वद ५ को हुइ| *पूज्य आचार्य हर्षसागरसूरिजी की प्रेरणा से* जिन की तरफ़ से इस *सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि* के लिए संपूर्ण द्रव्य-सहाय की प्राप्ति हुइ |

शिल्प-स्थापत्य, शिलोत्कीर्ण आगम और समवसरण स्थित नयनरम्य ४५ चौमुख जिन-प्रतिमाजी से सुशोभित ऐसा ये 'आगममंदिर' है, जो शत्रुंजय-गिरिराज कि तलेटीमे स्थित है | वर्तमान २४ जिनवर, २० विहरमान जिनवर और १ शाश्वत मिलाकर ४५ चौमुखजी यहा बिराजमान है | जहां ४० समवसरण की रचना मेरु पर्वत के तिनो काण्ड के वर्णो के अनुसार चार अलग-अलग रंगो के आरस-पत्थर से बना है, देवो द्वारा रचित समवसरण के शास्त्र वर्णन-अनुसार आगम-मंदिर कि समवसरण का स्थापत्य है | ऐसी अनेक विशेषता से युक्त ये आगममंदिर है |

****** मुनि दीपरत्नसागर...***

'सागर-समुदाय-एकता-संरक्षक, तीर्थ-उद्धार-कार्य-प्रवृत्त, गुणानुरागी'

इस "सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि' श्रेणि भाग १ से ४० के संपूर्ण अनुदान के प्रेरणादाता

पूज्य शासनप्रभावक आचार्य श्री हर्षसागरसूरिजी महाराज साहेब

पूज्यपाद स्व॰ गच्छाधिपति देवेन्द्रसागर-सूरीश्वरजी के विनयी शिष्य एवं दो गच्छाधिपतिओ के मुख्य सहायक के रुपमे 'सागर समुदाय' के सुचारु संचालक पूज्य हर्षसागरसूरिजी, जिन की प्रेरणा से ये "सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि" के मुद्रण के लिए संपूर्ण द्रव्यराशि प्राप्त हुई, उनका अत्यल्प परिचय यहां करेंगे| समुदाय-एकता के लिए सदैव प्रयत्नशील रहते हुए ये महात्मा *समुदाय के साधु-साध्वीजी* की आवश्यकताओकी पूर्ती के लिए भी प्रवृत्त रहेते है, प्राचीन-अर्वाचीन तीर्थो के जीर्णोद्धार एवं विकाश के लिए भी उत्साहित रहेते है, ज्ञान-क्षेत्र अछूता न रहे इसीलिए अनुमोदना, अनुदान एवं समय मिलने पर शास्त्र-वांचनमें भी रूचि रखते है | समुदाय के जरूरतमंद साध्वीजी भगवंतो के आवास का विषय हो या साध्वीजी के विहारमें मजदूर का वेतन चुकाना हो, ऐसे छोटे-छोटे कार्यो के प्रति भी उन का लक्ष्य रहेता है | दर्शन-शुद्धि के लिए जब उन्होंने समग्र भारतवर्ष के १०० साल तक के पुराने जिनालयो में १८ अभिषेक की प्रेरणा की, उस वक्त लगभग सभी अभिषेक-सामग्री की द्रव्य-शुद्धि का ख़याल रखते हुए अपनी मेधावी बुद्धि का परिचय दिया था, साथमे अनुकंपा भाव से पुजारी या विधि करानेवाले को यत्किंचित् बहुमान प्रगट करते हुए कुछ धन-राशि प्रदान करवाई |

ऐसे बहुगुण-संपन्न महात्मा पूज्य आचार्यश्री हर्षसागर-सूरिजी को हम भावभरी वंदना करते हुए इस श्रुतकार्य का प्रारंभ करने जा रहे है |

**** मुनि दीपरत्नसागर*

[कात्रज]पूना, कपडवंज, प्रभासपाटण आदि स्थानोमे आगममंदिर के प्रेरक, कर्मग्रंथ अभ्यासु, निस्पृह महात्मा

पूज्यपाद गच्छाधिपति आचार्य श्री दौलतसागर-सूरीश्वरजी महाराज साहेब

(एवं) अजातशत्रु, स्वाध्याय-रसिक, प्रशांतमूर्ती और अपने गुरु के प्रीतिपात्र

परम पूज्य आचार्य श्री नंदीवर्धनसागर-सूरिजी महाराज साहेब

इस पवित्र श्रुत-कार्यमे दोनो सूरिवरो का स्मरण करते हुए कोटि कोटि वंदना के साथ

.....मुनि दीपरत्नसागर

	श्रुतस्कंध - १ [आश्रव]	०१०			श्रुतस्कंध - १ [आश्रव]	-----			श्रुतस्कंध - २ [संवर]	
मूलांक:	अध्ययन	पृष्ठांक		मूलांक:	अध्ययन	पृष्ठांक:		मूलांक:	--------	पृष्ठांक:
००१	-१- मृगापुत्र:	०११		०३२	-८- सौर्यदत्त:	१०३		०४०	-४- सुवासव:	१३५
०११	-२- उज्झितक:	०३५		०३३	-९- देवदत्ता	१०९		०४१	-५- जिनदास:	१३५
०१८	-३ अभग्नसेन:	०५६		०३४	-१०- अंजू	१२०		०४२	-६- धनवती	१३५
०२४	-४- शकट:	०७५			*** श्रुतस्कंध - २ [संवर]	१२४		०४३	-७- महाबल:	१३५
०२७	-५- बृहस्पतिदत्त:	०८१		०३५	-१- सुबाहु:	१२४		०४४	-८-भद्रनंदी	१३६
०२९	-६- नन्दिवर्धन:	०८५		०३८	-२- भद्रनंदी	१३४		०४५	-९- महाचंद्र:	१३६
०३१	-७- उंबरदत्त:	०९३		०३९	-३- सुजात:	१३५		०४६-४७	-१०-वरदत्त:	१३६

मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:		मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक
०१-४३	समवसरण-पदं	१४०		४४-४७	उपपात-पदं	३०५
	-चम्पानगरी, -पूर्णभद्रचैत्यं, -वनखंड, -शीलापट्ट,				-गौतम गणधर:, -अम्बडपरिव्राजक:, -देवउपपातवर्णनं	
	भगवंत महावीरस्य अन्तेवासी, -स्थवीर वर्णनं				-केवलीसमुद्घात:, -सिद्धजीव:, -सिद्धशीला,	
	-अशोकवृक्ष,-तप-भेदा:, -देवआगमनं,-आगारधर्मं				-सिद्धजीवस्य सौक्ख्यं, द्रष्टि:,	

आगम [११] "विपाकश्रुत" मूलं एवं वृत्तिः

इस प्रकाशन की विकास-गाथा

यह प्रत सबसे पहले "विपाकश्रुताङ्ग" के नामसे सन १९२० (विक्रम संवत १९७६) में आगमोदय समिति द्वारा प्रकाशित हुई, इस के संपादक-महोदय थे पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी (सागरानंदसूरिजी) महाराज साहेब |

✣ हमारा ये प्रयास क्यों? ✣ आगम की सेवा करने के हमें तो बहोत अवसर मिले, ४५-आगम सटीक भी हमने ३० भागोमे १२५०० से ज्यादा पृष्ठोमें प्रकाशित करवाए है, किन्तु लोगो की पूज्य श्री सागरानंदसूरीश्वरजी के प्रति श्रद्धा तथा प्रत स्वरुप प्राचीन प्रथा का आदर देखकर हमने इसी प्रत को स्केन करवाई, उसके बाद एक स्पेशियल फोरमेट बनवाया, जिसमे बीचमे पूज्यश्री संपादित प्रत ज्यों की त्यों रख दी, ऊपर शीर्षस्थानमे आगम का नाम, फिर श्रुतस्कन्ध, अध्ययन और मूलसूत्र के क्रमांक लिख दिए, ताँकि पढ़नेवाले को प्रत्येक पेज पर कौनसा श्रुतस्कंध एवं अध्ययन चल रहे है उसका सरलता से ज्ञान हो शके, बायीं तरफ आगम का क्रम और इसी प्रत का सूत्रक्रम दिया है, उसके साथ वहाँ 'दीप अनुक्रम' भी दिया है, जिससे हमारे प्राकृत, संस्कृत, हिंदी गुजराती, इंग्लिश आदि सभी आगम प्रकाशनोमें प्रवेश कर शके | हमारे अनुक्रम तो प्रत्येक प्रकाशनोमें एक सामान और क्रमशः आगे बढते हुए ही है, इसीलिए सिर्फ क्रम नंबर दिए है, मगर प्रत में गाथा और सूत्रों के नंबर अलग-अलग होने से हमने जहां सूत्र है वहाँ कौंस [-] दिए है और जहां गाथा है वहाँ ||-|| ऐसी दो लाइन खींची है या फिर गाथा शब्द लिख दिया है |

हमने एक अनुक्रमणिका भी बनायी है, जिसमे प्रत्येक श्रुतस्कंध, अध्ययन आदि लिख दिये है और साथमें इस सम्पादन के पृष्ठांक भी दिए है, जिससे अभ्यासक व्यक्ति अपने चहिते वर्ग्ग, अध्ययन या विषय तक आसानी से पहुँच शकता है | अनेक पृष्ठ के नीचे विशिष्ठ फूटनोट भी लिखी है, जिसमे उस पृष्ठ पर रहे ख़ास विषयवस्तु की, मूल प्रतमें रही हुई कोई-कोई मुद्रण-भूल की या क्रमांकन सम्बन्धी जानकारी प्राप्त होती है |

शासनप्रभावक पूज्य आचार्यश्री हर्षसागरसूरिजी म०सा० की प्रेरणासे और श्री वर्धमान जैन आगममंदिर, पालिताणा की संपूर्ण द्रव्य सहाय से ये 'सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि' भाग-१४ का मुद्रण हुआ है, हम उन के प्रति हमारा आभार व्यक्त करते है |

.....मुनि दीपरत्नसागर.

प्रत सूत्रांक [-] दीप अनुक्रम [-]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]विपाकश्रुत मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

॥ अर्हम् ॥

श्रीमद्द्वादशाङ्गीविरचयितृश्रीमद्गणधारिसंकलितं ।

श्रीमदभयदेवाचार्यसंदृब्धविवरणयुतं ।

श्रीमद्–विपाकसूत्रम् ।

१ नत्वा श्रीवर्धमानाय, वर्द्धमानश्रुताध्वने । विपाकश्रुतशास्त्रस्य, वृत्तिकेयं विधास्यते ॥ १ ॥ अथ विपाकश्रुतमिति कः शब्दार्थः ?, उच्यते, विपाकः–पुण्यपापरूपकर्मफलं तत्प्रतिपादनपरं श्रुतं–आगमो विपाकश्रुतं, इदं च द्वादशाङ्गस्य प्रवचनपुरुषस्यैकादशमङ्गं, इह च शिष्टसमयपरिपालनार्थं मङ्गलसम्बन्धाभिधेयप्रयोजनानि किल वाच्यानि भवन्ति, तत्र चाधिकृतशास्त्रस्यैव सकलकल्याणकारिसर्ववेदिप्रणीतश्रुतरूपतया भावनन्दीरूपत्वेन मङ्गलस्वरूपत्वात् न ततो भिन्नं मङ्गलमुपदर्शनीयं, अभिधेयं च शुभाशुभकर्मणां विपाकः, स चास्य नाम्नैवाभिहितः, प्रयोजनमपि श्रोतृगतमनन्तरं कर्म्मविपाकावगमरूपं नाम्नैवोक्तमस्य, यत्किल कर्मविपाकावेदकं श्रुतं तत् शृण्वतां प्रायः कर्मविपाकावगमो भवत्येवेति, यत्तु निःश्रेयसावाप्तिरूपं परम्परप्रयोजनमस्य तदाप्तप्रणीततयैव प्रतीयते, न ह्याप्ता यत्कथञ्चिन्निःश्रेयसार्थं न भवति तत्प्रणयनायोत्सहन्ते आप्तत्वहानेरिति, सम्बन्धोऽप्युपायोपेयभावलक्षणो नाम्नैवास्य प्रतीयते, तथाहि–इदं शास्त्रमुपायः कर्म्मविपाकावगमस्तूपेयमिति, यस्तु गुरुपर्वक्रमलक्षणसम्बन्धोऽस्य तत्प्रतिपादनायेदमाह–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	वृत्तिकार-कृत् प्रस्तावना

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]विपाकश्रुत मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१]

दीप अनुक्रम [१]

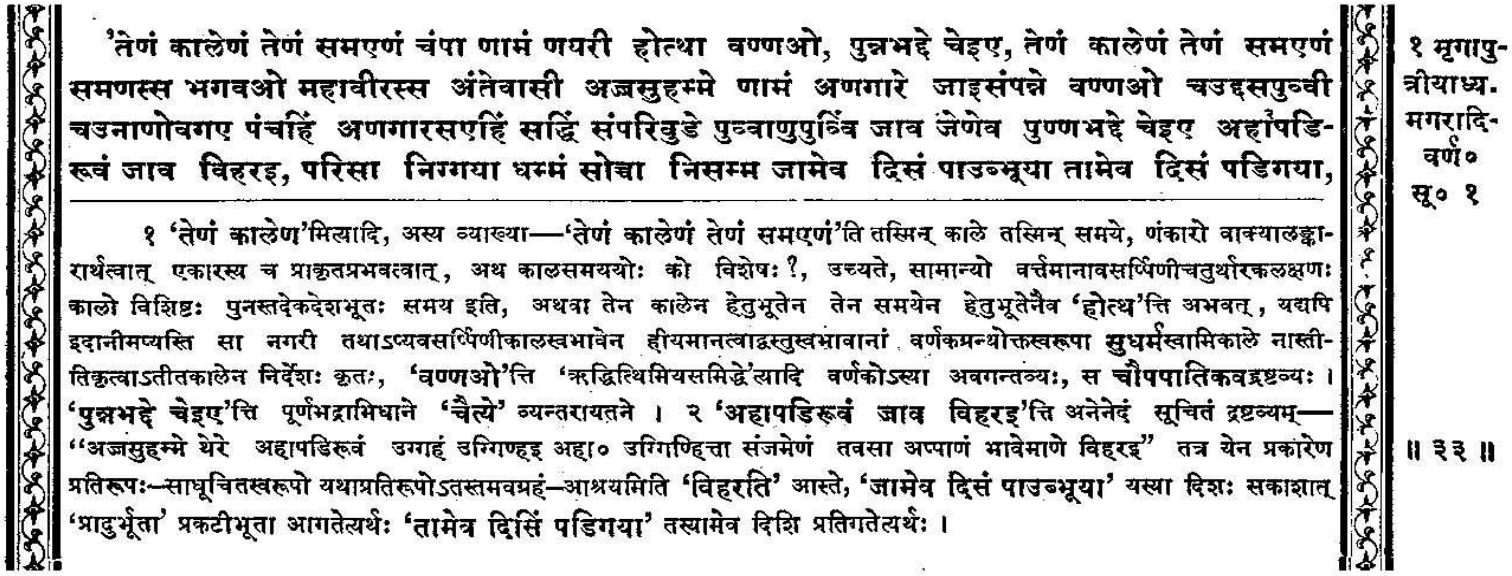

विपाके श्रुत० १ ॥ ३३ ॥

'तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा णामं णयरी होत्था वण्णओ, पुन्नभद्दे चेइए, तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी अज्जसुहम्मे णामं अणगारे जाइसंपन्ने वण्णओ चउद्दसपुव्वी चउनाणोवगए पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं जाव जेणेव पुण्णभद्दे चेइए अहापडिरूवं जाव विहरइ, परिसा निग्गया धम्मं सोच्चा निसम्म जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया,

१ 'तेणं कालेण'मित्यादि, अस्य व्याख्या—'तेणं कालेणं तेणं समएणं'ति तस्मिन् काले तस्मिन् समये, णंकारो वाक्यालङ्कारार्थत्वात् एकारस्य च प्राकृतप्रभवत्वात्, अथ कालसमययोः को विशेषः?, उच्यते, सामान्यो वर्त्तमानावसर्पिणीचतुर्थारकलक्षणः कालो विशिष्टः पुनस्तदेकदेशभूतः समय इति, अथवा तेन कालेन हेतुभूतेन तेन समयेन हेतुभूतेनैव 'होत्थ'त्ति अभवत्, यद्यपि इदानीमप्यस्ति सा नगरी तथाऽप्यवसर्पिणीकालस्वभावेन हीयमानत्वाद्वस्तुस्वभावानां वर्णकग्रन्थोक्तस्वरूपा सुधर्मस्वामिकाले नास्तीतिकृत्वाऽतीतकालेन निर्देशः कृतः, 'वण्णओ'त्ति 'ऋद्धिस्थिमियसमिद्धे'त्यादि वर्णकोऽस्या अवगन्तव्यः, स चौपपातिकवद्द्रष्टव्यः। 'पुन्नभद्दे चेइए'त्ति पूर्णभद्राभिधाने 'चैत्ये' व्यन्तरायतने। २ 'अहापडिरूवं जाव विहरइ'त्ति अनेनेदं सूचितं द्रष्टव्यम्—"अज्जसुहम्मे थेरे अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हइ अहा० उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ" तत्र येन प्रकारेण प्रतिरूपः—साधूचितस्वरूपो यथाप्रतिरूपोऽतस्तमवग्रहं—आश्रयमिति 'विहरति' आस्ते, 'जामेव दिसं पाउब्भूया' यस्या दिशः सकाशात् 'प्रादुर्भूता' प्रकटीभूता आगतेत्यर्थः 'तामेव दिसिं पडिगया' तस्यामेव दिशि प्रतिगतेत्यर्थः।

१ मृगापुत्रीयाध्य. मगरादिवर्णः० सू० १ ॥ ३३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र प्रथम-श्रुतस्कंधः आरब्धः

अथ प्रथम अध्ययनं "मृगापुत्र" आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [१] दीप अनुक्रम [१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]विपाकश्रुत मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

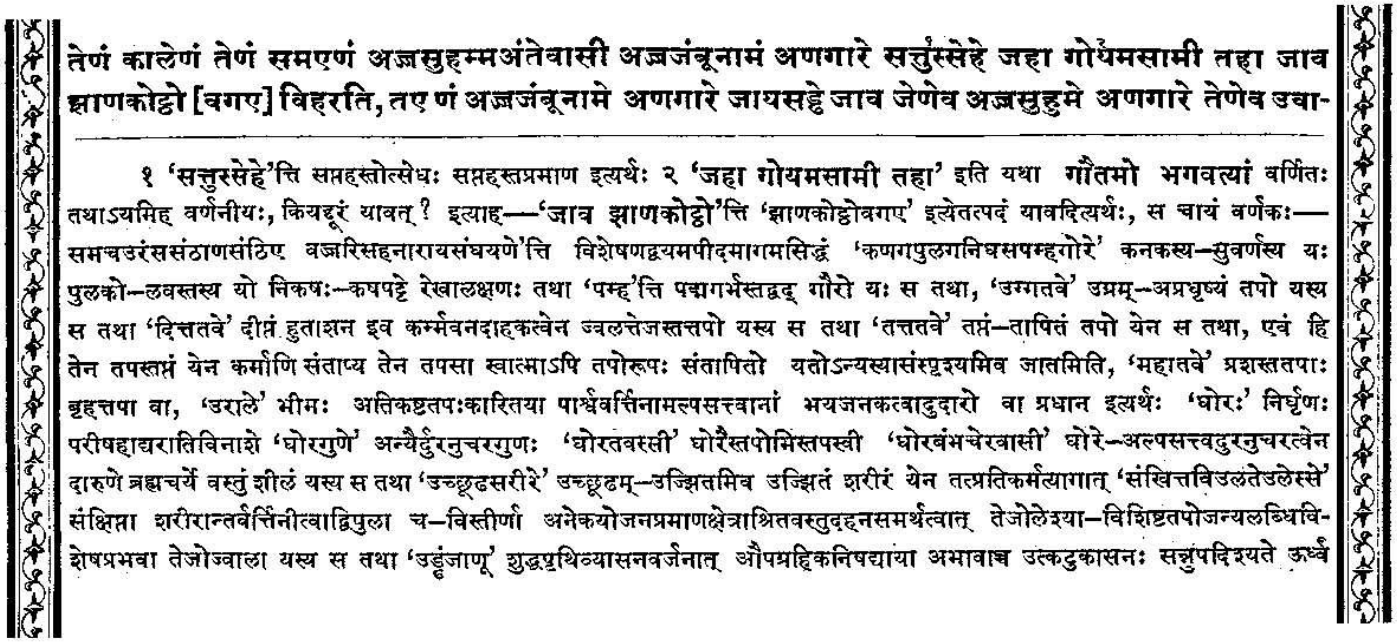

तेणं कालेणं तेणं समएणं अज्जसुहम्मअंतेवासी अज्जजंबूनामं अणगारे सत्तुस्सेहे जहा गोयमसामी तहा जाव झाणकोट्ठो [वगए] विहरति, तए णं अज्जजंबूनामे अणगारे जायसड्ढे जाव जेणेव अज्जसुहुमे अणगारे तेणेव उवा-

१ 'सत्तुस्सेहे'त्ति सप्तहस्तोत्सेधः सप्तहस्तप्रमाण इत्यर्थः २ 'जहा गोयमसामी तहा' इति यथा गौतमो भगवत्यां वर्णितः तथाऽयमिह वर्णनीयः, कियदूरं यावत्? इत्याह—'जाव झाणकोट्ठो'त्ति 'झाणकोट्ठोवगए' इत्येतत्पदं यावदित्यर्थः, स चायं वर्णकः—समचउरंससंठाणसंठिए वज्जरिसहनारायसंघयणे'त्ति विशेषणद्वयमपीदमागमसिद्धं 'कणगपुलगनिघसपम्हगोरे' कनकस्य—सुवर्णस्य यः पुलको—लवस्तस्य यो निकषः—कषपट्टे रेखालक्षणः तथा 'पम्ह'त्ति पद्मगर्भस्तद्वद् गौरो यः स तथा, 'उग्गतवे' उग्रम्—अप्रधृष्यं तपो यस्य स तथा 'दित्ततवे' दीप्तं हुताशन इव कर्म्मवनदाहकत्वेन ज्वलत्तेजस्तत्तपो यस्य स तथा 'तत्ततवे' तप्तं—तापितं तपो येन स तथा, एवं हि तेन तपस्तप्तं येन कर्माणि संताप्य तेन तपसा स्वात्माऽपि तपोरूपः संतापितो यतोऽन्यस्यासंस्पृश्यमिव जातमिति, 'महातवे' प्रशस्ततपाः बृहत्तपा वा, 'उराले' भीमः अतिकष्टतपःकारितया पार्श्ववर्त्तिनामल्पसत्त्वानां भयजनकत्वादुदारो वा प्रधान इत्यर्थः 'घोरः' निर्घृणः परीषहाद्यरातिविनाशे 'घोरगुणे' अन्यैर्दुरनुचरगुणः 'घोरतवस्सी' घोरैस्तपोभिस्तपस्वी 'घोरबंभचेरवासी' घोरे—अल्पसत्त्वदुरनुचरत्वेन दारुणे ब्रह्मचर्ये वस्तुं शीलं यस्य स तथा 'उच्छूढसरीरे' उच्छूढम्—उज्झितमिव उज्झितं शरीरं येन तत्प्रतिकर्मत्यागात् 'संखित्तविउलतेउलेस्से' संक्षिप्ता शरीरान्तर्वर्त्तिनीत्वाद्विपुला च—विस्तीर्णा अनेकयोजनप्रमाणक्षेत्राश्रितवस्तुदहनसमर्थत्वात् तेजोलेश्या—विशिष्टतपोजन्यलब्धिवि-शेषप्रभवा तेजोज्वाला यस्य स तथा 'उड्ढंजाणू' शुद्धपृथिव्यासनवर्जनात् औपग्रहिकनिषद्याया अभावाच्च उत्कटुकासनः सन्नुपदिश्यते ऊर्ध्व

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	गौतमस्वामिनः वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१]

दीप अनुक्रम [१]

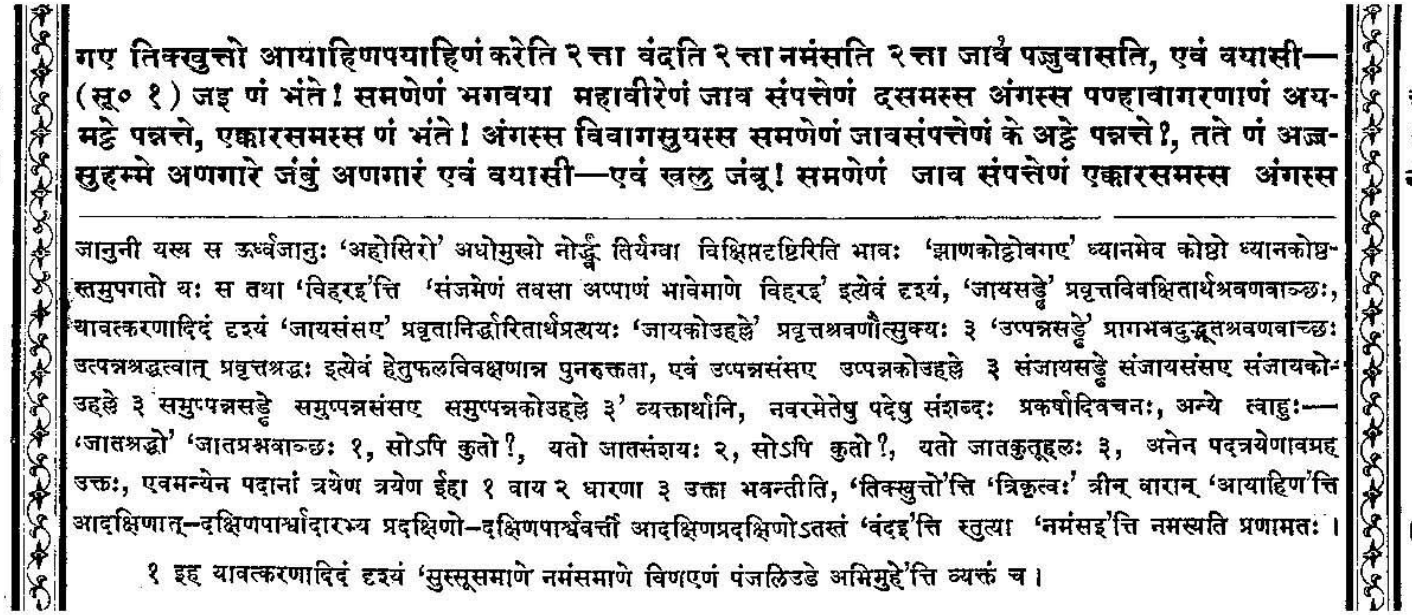

विपाके श्रुत० १ ॥ ३४ ॥

गए तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेति २त्ता वंदति २त्ता नमंसति २त्ता जावं पज्जुवासति, एवं वयासी—(सू० १) जइ णं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं दसमस्स अंगस्स पण्हावागरणाणं अयमट्ठे पन्नत्ते, एक्कारसमस्स णं भंते! अंगस्स विवागसुयस्स समणेणं जावसंपत्तेणं के अट्ठे पन्नत्ते?, तते णं अज्जसुहम्मे अणगारे जंबुं अणगारं एवं वयासी—एवं खलु जंबू! समणेणं जाव संपत्तेणं एक्कारसमस्स अंगस्स

जानुनी यस्य स ऊर्ध्वजानुः 'अहोसिरो' अधोमुखो नोर्द्ध्वं तिर्यग्वा विक्षिप्तदृष्टिरिति भावः 'झाणकोट्ठोवगए' ध्यानमेव कोष्ठो ध्यानकोष्ठस्तमुपगतो यः स तथा 'विहरइ'त्ति 'संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ' इत्येवं दृश्यं, 'जायसड्ढे' प्रवृत्तविवक्षितार्थश्रवणवाञ्छः, यावत्करणादिदं दृश्यं 'जायसंसए' प्रवृत्तानिर्द्धारितार्थप्रत्ययः 'जायकोउहल्ले' प्रवृत्तश्रवणौत्सुक्यः ३ 'उप्पन्नसड्ढे' प्रागभवदुद्भूतश्रवणवाञ्छः उत्पन्नश्रद्धत्वात् प्रवृत्तश्रद्धः इत्येवं हेतुफलविवक्षणान्न पुनरुक्तता, एवं उप्पन्नसंसए उप्पन्नकोउहल्ले ३ संजायसड्ढे संजायसंसए संजायकोउहल्ले ३ समुप्पन्नसड्ढे समुप्पन्नसंसए समुप्पन्नकोउहल्ले ३' व्यक्तार्थानि, नवरमेतेषु पदेषु संशब्दः प्रकर्षादिवचनः, अन्ये त्वाहुः—'जातश्रद्धो' 'जातप्रभवाञ्छः १, सोऽपि कुतो?, यतो जातसंशयः २, सोऽपि कुतो?, यतो जातकुतूहलः ३, अनेन पदत्रयेणावग्रह उक्तः, एवमन्येन पदानां त्रयेण त्रयेण ईहा १ वाय २ धारणा ३ उक्ता भवन्तीति, 'तिक्खुत्तो'त्ति 'त्रिकृत्वः' त्रीन् वारान् 'आयाहिण'त्ति आदक्षिणात्—दक्षिणपार्श्वादारभ्य प्रदक्षिणो—दक्षिणपार्श्ववर्त्ती आदक्षिणप्रदक्षिणोऽतस्तं 'वंदइ'त्ति स्तुत्या 'नमंसइ'त्ति नमस्यति प्रणामतः।

१ इह यावत्करणादिदं दृश्यं 'सुस्सूसमाणे नमंसमाणे विणएणं पंजलिउडे अभिमुहे'त्ति व्यक्तं च।

१ मृगापुत्रीयाध्य. अध्ययनोपोद्घातः सू० २

॥ ३४ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गौतमस्वामिनः वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२] + गाथा

दीप अनुक्रम [२-४]

विवागसुयस्स दो सुयक्खंधा पन्नत्ता, तं०—दुहविवागा य १ सुहविवागा य २, जइ णं भंते! समणेणं जाव संपत्तेणं एक्कारसमस्स अंगस्स विवागसुयस्स दो सुयक्खंधा पन्नत्ता, तंजहा—दुहविवागा य १ सुहविवागा य २, पढमस्स णं भंते! सुयक्खंधस्स दुहविवागाणं समणेणं जाव संपत्तेणं कइ अज्झयणा पन्नत्ता?, तते णं अज्जसुहम्मे अणगारे जंबूअणगारं एवं वयासी—एवं खलु जंबू! समणेणं० आइगरेणं तित्थगरेणं जाव संपत्तेणं दुहविवागाणं दस अज्झयणा पन्नत्ता, तंजहा—'मियापुत्ते १ य उज्झियते २ अभग्ग ३ सगडे ४ वहस्सई ५ नंदी ६। उंबर ७ सोरियदत्ते ८ य देवदत्ता य९ अंजू या १० ॥ १ ॥' जइ णं भंते! समणेणं० आइगरेणं तित्थयरेणं

१ 'दुहविवागा य'त्ति 'दुःखविपाकाः' पापकर्मफलानि दुःखानां वा—दुःखहेतुत्वात् पापकर्मणां विपाकास्ते यत्राभिधेयतया सन्त्यसौ 'वरणानगर'मिति न्यायेन दुःखविपाकाः—प्रथमश्रुतस्कन्धः, एवं द्वितीयः सुखविपाकाः, 'तए णं'ति ततः—अनन्तरमित्यर्थः। २ 'मियउत्ते' इत्यादिगाथा, तत्र 'मियउत्ते'त्ति मृगापुत्राभिधानराजसुतवक्तव्यताप्रतिबद्धमध्ययनं मृगापुत्र एव १, एवं सर्वत्र, नवरम् 'उज्झियए'त्ति उज्झितको नाम सार्थवाहपुत्रः २, 'अभग्ग'त्ति सूत्रत्वादभग्नसेनो विजयाभिधानचौरसेनापतिपुत्रः ३, 'सगडे'त्ति शकटाभिधानसार्थवाहसुतः ४, 'वहस्सइ'त्ति सूत्रत्वादेव बृहस्पतिदत्तनामा पुरोहितपुत्रः ५, 'नंदी'इति सूत्रत्वादेव नन्दिवर्द्धनो राजकुमारः ६, 'उंबर'त्ति सूत्रत्वादेव उदुम्बरदत्तो नाम सार्थवाहसुतः ७, 'सोरियदत्ते' शौरिकदत्तो नाम मत्स्यबन्धपुत्रः ८, चशब्दः समुच्चये 'देवदत्ता य'त्ति देवदत्ता नाम गृहपतिसुता ९, चः समुच्चये 'अंजू य'त्ति अञ्जूनामसार्थवाहसुता १०, चशब्दः समुच्चये, इति गाथासमासार्थः, विस्तरार्थस्तु यथास्वमध्ययनार्थावगमादवगम्य इति।

अनु. ८

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रुतस्कन्ध एवं अध्ययनस्य नामानि

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२] + गाथा

दीप अनुक्रम [२-४]

जाव संपत्तेणं दुहविवागाणं दस अज्झयणा पन्नत्ता, तं०—मियापुत्ते य १ जाव अंजू य १०, पढमस्स णं भंते! अज्झयणस्स दुहविवागाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पन्नत्ते?, तते णं से सुहम्मे अणगारे जंबूअणगारं एवं वयासी—एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं मियग्गामे नामे णगरे होत्था वण्णओ, तस्स णं मियगामस्स णयरस्स बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए चंदणपायवे नामं उज्जाणे होत्था, सव्वोउयवण्णओ, तत्थ णं सुहम्मस्स जक्खस्स जक्खाययणे होत्था चिरातीए जहा पुन्नभद्दे, तत्थ णं मियग्गामे णगरे विजएनामं खत्तिए राया परिवसइ वन्नओ, तस्स णं विजयस्स खत्तियस्स मिया नामं देवी होत्था अहीणवन्नओ, तस्स णं विजयस्स खत्तियस्स पुत्ते मियाए देवीए अत्तए मियापुत्ते नामं दारए होत्था, जातिअंधे जाइमूए जातिबहिरे जातिपंगुले य हुंडे य वायव्वे य, नत्थि णं तस्स दारगस्स हत्था वा पाया वा कन्ना वा अच्छी वा नासा वा, केवलं से तेसिं अंगोवंगाणं आगई आगतिमित्ते,

१ 'एवं खलु'त्ति 'एवं' वक्ष्यमाणप्रकारेण 'खलुः' वाक्यालङ्कारे 'सव्वोउयवण्णओ'त्ति सर्वर्तुककुसुमसंछन्ने नंदणवणप्पगासे इत्यादिरुद्यानवर्णको वाच्य इति, 'चिराइए'त्ति चिरादिकं—चिरकालीनप्रारम्भमित्यादिवर्णकोपेतं वाच्यं, यथा पूर्णभद्रचैत्यमौपपातिके, 'अहीणवन्नओ'त्ति 'अहीणपुन्नपंचिंदियसरीरे' इत्यादिवर्णको वाच्यः 'अत्तए'त्ति आत्मजः—सुतः 'जाइअंधे'त्ति जात्यन्धो—जन्मकालादारभ्यान्ध एव 'हुंडे य'त्ति हुण्डकश्च सर्वावयवप्रमाणविकलः 'वायव्वे'त्ति वायुरस्यास्तीति वायवो—वातिक इत्यर्थः, 'आगिई आगइमेत्ते'त्ति अङ्गावयवानामाकृतिः—आकारः किंविधा? इत्याह—आकृतिमात्रं—आकारमात्रं नोचितस्वरूपेत्यर्थः

॥ ३५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दुःखविपाक-श्रुतस्कन्धे मृगापुत्रस्य कथायाः आरम्भः

तते णं सा मियादेवी तं मियापुत्तं दारगं रहस्सियंसि भूमिघरंसि रहस्सिएणं भत्तपाणेणं पडिजागरमाणी २ विहरइ (सू० २) तत्थ णं मियग्गामे णगरे एगे जातिअंधे पुरिसे परिवसइ, से णं एगेणं सचक्खुतेणं पुरिसेणं पुरओ दंडएणं पगढिज्जमाणे २ फुट्टहडाहडसीसे मच्छियाचडगरपहकरेणं अणिज्जमाणमग्गे मियग्गामे नयरे गेहे २ कालुणवडियाए वित्तिं कप्पेमाणे विहरइ। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जाव समोसरिए जाव परिसा निग्गया। तए णं से विजए खत्तिए इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे जहा कोणिए तहा निग्गते जाव पज्जुवासइ, तते णं से जातिअंधे पुरिसे तं महया जणसद्दं जाव सुणेत्ता तं पुरिसं एवं वयासी–किन्नं देवाणुप्पिया! अज्ज मियग्गामे णगरे इंदमहेइ वा जाव निग्गच्छइ?, तते णं से पुरिसे तं जातिअंधपुरिसं एवं वयासी—नो खलु देवाणुप्पिया!

१ 'रहस्सियं'ति राहसिके जनेनाविदिते 'फुट्टहडाहडसीसे'त्ति 'फुट्टं'ति स्फुटितकेशसंचयत्वेन विकीर्णकेशं 'हडाहडं'ति अत्यर्थं शीर्ष–शिरो यस्य स तथा, 'मच्छियाचडकरपहयरेणं'ति मक्षिकाणां प्रसिद्धानां चटकरप्रधानो–विस्तरवान् यः प्रहकरः–समूहः स तथा अथवा मक्षिकाचटकराणां–तद्वृन्दानां यः प्रहकरः स तथा तेन 'अणिज्जमाणमग्गे'त्ति 'अन्वीयमानमार्गः' अनुगम्यमानमार्गः, मलाविलं हि वस्तु प्रायो मक्षिकाभिरनुगम्यत एवेति 'कालुणवडियाए'त्ति कारुण्यवृत्त्या 'वित्तिं कप्पेमाणे'त्ति जीविकां कुर्वाणः। २ 'जाव समोसरिए'त्ति इह यावत्करणात् 'पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे' इत्यादिवर्णको दृश्यः, 'तं महया जणसद्दं च'त्ति सूत्रत्वान्महाजनशब्दं च, इह यावत्करणात् 'जणवूहं च जणबोलं चे'त्यादि दृश्यं, तत्र जनव्यूहः–चक्राद्याकारः समूहस्तस्य शब्दस्तदभेदाज्जनव्यूह एवोच्यतेऽतस्तं बोलः–अव्यक्तवर्णो ध्वनिरिति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३]

दीप अनुक्रम [५]

इंदमहेइ वा जाव णिग्गच्छंति, एवं खलु देवाणुप्पिया! समणे जाव विहरति, तते णं एते जाव निग्गच्छंति, तते णं से अंधपुरिसे तं पुरिसं एवं वयासी—गच्छामो णं देवाणुप्पिया! अम्हेवि समणं भगवं जाव पज्जुवासामो, तते णं से जातिअंधे पुरिसे पुरतो दंडएणं पगडिज्जमाणे २ जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागए २ त्ता तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ २ त्ता वंदति नमंसति २ त्ता जाव पज्जुवासति, तते णं समणे० विजयस्स० तीसे य० धम्ममाइक्खति० परिसा जाव पडिगया, विजएवि गते। (सू० ३) तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स० जेट्ठे अंतेवासी इंदभूतिनामं अणगारे जाव विहरइ, तते णं

१ 'इंदमहे इ व'त्ति इन्द्रोत्सवो वा, इह यावत्करणात् 'खंदमहे वा रुद्दमहे वा जाव उज्जाणजत्ताइ वा, जन्नं बहवे उग्गा भोगा जाव एगदिसिं एगाभिमुहा' इति दृश्यम्, इतो यद्वाक्यं तदेवमनुसर्त्तव्यं, सूत्रपुस्तके सूत्राक्षराण्येव सन्तीति, 'तए णं से पुरिसे तं जाइअंधपुरिसं एवं वयासी—नो खलु देवाणुप्पिया! अज्ज मियग्गामे नयरे इंदमहे वा जाव जत्ताइ वा जन्नं एए उग्गा जाव एगदिसिं एगाभिमुहा णिग्गच्छंति, एवं खलु देवाणुप्पिया! समणे भगवं महावीरे जाव इह समागते इह संपत्ते इहेव मियग्गामे णगरे मिगवणुज्जाणे अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति, तए णं से अंधपुरिसे तं पुरिसं एवं वयासी' इति, 'विजयस्स तीसे य धम्म'त्ति इदमेवं दृश्यं—'विजयस्स रन्नो तीसे य महइमहालियाते परिसाए विवित्तं धम्ममाइक्खइ जहा जीवा बज्झंती'त्यादि परिषद् यावत् परिगता 'जाइअंधे'त्ति जातेरारभ्यान्धो जात्यन्धः, स च चक्षुरुपघातादपि भवतीत्यत आह—'जायअंधारूवे'त्ति जातं—उत्पन्नमन्धकं—नयनयोरादित एवानिष्पत्तेः कुत्सिताङ्गं रूपं—स्वरूपं यस्यासौ जातान्धकरूपः,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से भगवं २ गोयमे तं जातिअंधपुरिसं पासइ २ त्ता जायसड्ढे जाव एवं वयासी—अत्थि णं भंते! केई पुरिसे जातिअंधे जातिअंधारूवे?, हंता अत्थि, कहण्णं भंते! से पुरिसे जातिअंधे जातिअंधारूवे?, एवं खलु गोयमा! इहेव मियग्गामे नगरे विजयस्स खत्तियस्स पुत्ते मियादेवीए अत्तए मियापुत्ते नामं दारए जातिअंधे जातिअंधारूवे, नत्थि णं तस्स दारगस्स जाव आगतिमित्ते, तते णं सा मियादेवी जाव पडिजागरमाणी २ विहरति, तते णं से भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसति २ त्ता एवं वयासी–इच्छामि णं भंते! अहं तुब्भेहिं अब्भणुन्नाए समाणे मियापुत्तं दारगं पासित्तए, अहासुहं देवाणुप्पिया!, तते णं से भगवं गोयमे समणेणं भगवया० अब्भणुन्नाए समाणे हट्ठे तुट्ठे समणस्स भगवओ० अंतियाओ पडिनिक्खमइ २ त्ता [1]अतुरियं जाव सोहेमाणे २ जेणेव मियग्गामे णगरे तेणेव उवागच्छति २ त्ता मियग्गामं नगरं मज्झंमज्झेण जेणेव मियादेवीए गेहे तेणेव उवागए, तते णं सा मियादेवी भगवं गोयमं एज्जमाणं पासइ २ त्ता हट्ठतुट्ठ जाव एवं वयासी—संदिसंतु णं देवाणुप्पिया! किमागमणपयोयणं?, तते णं भगवं गोयमे मियादेविं एवं वयासी–अहण्णं देवाणुप्पिए! तव पुत्तं पासितुं हव्वमागए, तते णं सा मियादेवी

१ 'अतुरियं'ति अत्वरितं मनःस्थैर्यात्, यावत्करणादिदं दृश्यम्—'अचवलमसंभंते जुगंतरपलोयणाए दिट्ठीए पुरओ रियं'ति तत्राचपलं–कायचापल्याभावात् क्रियाविशेषणे चैते, तथा 'असंभ्रान्तः' भ्रमरहितः युगं–यूपस्तत्प्रमाणो भूभागोऽपि युगं तस्यान्तरे-मध्ये प्रलोकनं यस्याः सा तथा तया दृष्ट्या–चक्षुषा 'रियं'ति ईर्या–गमनं तद्विषयो मार्गोऽपीर्याऽतस्तां 'जेणेव'त्ति यस्मिन् देशे २ 'हट्ठजाव'त्ति इह 'हट्ठतुट्ठमाणंदिए' इत्यादि दृश्यम्, एकार्थाश्चैते शब्दाः, ३ 'हव्वं'ति शीघ्रम ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४]

दीप अनुक्रम [६]

मियापुत्तस्स दारगस्स अणुमग्गजायते चत्तारि पुत्ते सव्वालंकारविभूसिए करेति २ त्ता भगवतो गोयमस्स पादेसु पाडेति २ त्ता एवं वयासी–एए णं भंते! मम पुत्ते पासह, तते णं से भगवं गोयमे मियादेवीं एवं वयासी—नो खलु देवा० अहं एए तव पुत्ते पासिउं हव्वमागते, तत्थ णं जे से तव जेट्ठे मियापुत्ते दारए जाइअंधे जातिअंधारूवे जं णं तुमं रहस्सियंसि भूमिघरंसि रहस्सिएणं भत्तपाणेणं पडिजागरमाणी २ विहरसि तं णं अहं पासिउं हव्वमागए, तते णं सा मियादेवी भगवं गोयमं एवं वयासी—से के णं गोयमा! से तहारूवे णाणी वा तवस्सी वा जेणं तव एसमट्ठे मम ताव रहस्सिकए तुब्भं हव्वमक्खाए [1]जओ णं तुब्भे जाणह?, तते णं भगवं गोयमे मियादेवीं एवं वयासि—एवं खलु देवाणुप्पिया! मम धम्मायरिए समणे भगवं महावीरे जतो णं अहं जाणामि, जावं च णं मियादेवी भगवया गोयमेण सद्धिं एयमट्ठं संलवति तावं च णं मियापुत्तस्स दारगस्स भत्तवेला [2]जाया यावि होत्था, तते णं सा मियादेवी भगवं गोयमं एवं वयासी —तुब्भे णं भंते! इहं चेव चिट्ठह जा णं अहं तुब्भं मियापुत्तं दारगं उवदंसेमित्तिकट्टु जेणेव भत्तपाणघरे तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता [3]वत्थपरियट्टयं करेति वत्थपरियट्टयं करित्ता कट्ठसगडियं गिण्हति कट्ठसगडियं गिण्हित्ता विपुलस्स असणपाणखाइमसाइमस्स भरेति विपुलस्स असणपाणखाइमसाइमस्स भरित्ता

१ 'जओ णं'ति यस्मात्। २ 'जाया यावि होत्था' जाता चाप्यभवदित्यर्थः। ३ 'वत्थपरियट्टं'ति वस्त्रपरिवर्त्तनम्।

॥ ३७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४] दीप अनुक्रम [६]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

तं कट्ठसगडियं अणुकड्ढमाणी २ जेणामेव भगवं गोयमे तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता भगवं गोयमं एवं वयासी—एह णं तुब्भे भंते! मम अणुगच्छह जा णं अहं तुब्भं मियापुत्तं दारगं उवदंसेमि, तते णं से भगवं गोयमे मियं देविं पिट्ठओ समणुगच्छति, तते णं सा मियादेवी तं कट्ठसगडियं अणुकड्ढमाणी २ जेणेव भूमिघरे तेणेव उवागच्छइ २त्ता चउप्पुडेणं वत्थेणं मुहं बंधेति मुहं बंधमाणि भगवं गोयमं एवं वयासी—तुब्भेऽवि णं भंते! मुहपोत्तियाए मुहं बंधह, तते णं से भगवं गोयमे मियादेवीए एवं वुत्ते समाणे मुहपोत्तियाए मुहं बंधेति, तते णं सा मियादेवी परम्मुही भूमिघरस्स दुवारं विहाडेति, तते णं गंधे निग्गच्छति [1]से जहानामए अहि[2]मडेति वा सप्पकडेवरे इ वा जाव [3]ततोऽविणं [4]अणिट्ठतराए चेव जाव गंधे पन्नत्ते, तते णं से मियापुत्ते दारए तस्स विपुलस्स असणपाणखाइमसाइमस्स गंधेणं अभिभूते समाणे तंसि विपुलंसि असणपाण० [5]मुच्छिते० तं विपुलं असणं ४ आसएणं आहारेति आहारित्ता खिप्पामेव विद्धंसेति विद्धंसेत्ता ततो पच्छा पूयत्ताए य सोणियत्ताए य परिणामेति तंपि य णं पूयं च सोणियं च आहारेति, तते णं भगवओ गोयमस्स तं मिया-

१ 'से जहानामए'त्ति तद्यथा नामेति वाक्यालङ्कारे। २ 'अहिमडेइ वा सप्पकडेवरे इ वा' इह यावत्करणात् 'गोमडेइ वा सुणहमडेइ वा' इत्यादि द्रष्टव्यम्। ३ 'ततोवि णं'ति ततोऽपि—अहिकडेवरादिगन्धादपि। ४ 'अणिट्ठतराए चेव'त्ति अनिष्टतर एव गन्ध इति गम्यते, इह यावत्करणात् 'अकंततराए चेव अपियतराए चेव अमणुन्नतराए चेव अमणामतराए चेव'त्ति दृश्यम्, एकार्थाश्चैते। ५ 'मुच्छिए' इत्यत्र 'गढिते गिद्धे अज्झोववन्ने' इति पदत्रयमन्यद् दृश्यम्, एकार्थान्येतानि चत्वार्यपीति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४]

दीप अनुक्रम [६]

पुत्तं दारयं पासित्ता अयमेयारूवे [1]अज्झत्थिए समुप्पज्जित्था–अहो णं इमे दारए [2]पुरापोराणाणं दुच्चिण्णाणं दुप्पडिक्कंताणं असुभाणं पावाणं कडाणं कम्माणं पावगं फलवित्तिविसेसं पच्चणुब्भवमाणे विहरति, ण मे दिट्ठा णरगा वा णेरइया वा पच्चक्खं खलु अयं पुरिसे नरयपडिरूवियं वेयणं वेयतित्तिकट्टु मियं देविं आपुच्छति २ त्ता मियाए देवीए गिहाओ पडिनिक्खमति गिहा २ त्ता मियग्गामं णगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छति नि २ त्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छति २ त्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ २ त्ता वंदति नमंसति २ त्ता एवं वयासी—एवं खलु अहं तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मियग्गामं नगरं मज्झंमज्झेण अणुप्पविसामि जेणेव मियाए देवीए गेहे तेणेव उवागते, तते णं सा मियादेवी ममं एज्जमाणं पासइ २ त्ता हट्ठा तं चेव सव्वं जाव पूयं च सोणियं च आहारेति, तते णं मम इमे अज्झत्थिए समुप्पज्जित्था—अहो णं इमे दारए पुरा जाव विहरइ (सू० ४) से णं भंते! पुरिसे

१ 'अज्झत्थिए' इत्यत्र 'चिंतिए कप्पिए पत्थिए मणोगए संकप्पे' इति दृश्यम्, एतान्यप्येकार्थानि। २ 'पुरापोराणाणं दुच्चिन्नाणं' इहाक्षरघटना 'पुराणानां' जरठानां कक्खडीभूतानामित्यर्थः 'पुरा' पूर्वकाले 'दुश्चीर्णानां' प्राणातिपातादिदुश्चरितहेतुकानां 'दुप्पडिक्कंताणं'ति दुःशब्दोऽभावार्थस्तेन प्रायश्चित्तप्रतिपत्त्यादिना अप्रतिक्रान्तानां–अनिवर्त्तितविपाकानामित्यर्थः, 'असुभाणं'ति असुखहेतूनां 'पावाणं'ति पापानां दुष्टस्वभावानां 'कम्माणं'ति ज्ञानावरणादीनाम्।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [५] + गाथा

दीप अनुक्रम [७-८]

पुव्वभवे के आसि [किंनामए वा किंगोए वा] कयरंसि गामंसि वा नयरंसि वा किं वा दच्चा किं वा भोच्चा किं वा समायरित्ता केसिं वा पुरा जाव विहरति?, गोयमाइ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी—एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे २ भारहे वासे सयदुवारे नामं नगरे होत्था रिद्धत्थिमिए वन्नओ, तत्थ णं सयदुवारे नगरे धणवई नामं राया हुत्था वण्णओ, तस्स णं सयदुवारस्स नगरस्स अदूरसामंते दाहिणपुरच्छिमे दिसीभाए विजयवद्धमाणे णामं खेडे होत्था रिद्धत्थिमियसमिद्धे, तस्स णं विजयवद्धमाणस्स खेडस्स पंच गामसयाइं आभोए यावि हुत्था, तत्थ णं विजयवद्धमाणे खेडे इक्काई णामं रट्ठकूडे होत्था अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे, से णं इक्काई रट्ठकूडे विजयवद्धमाणस्स खेडस्स पंचण्हं गामसयाणं

१ 'पुव्वभवे के आसि' इत्यत एवमध्येयं—'किंनामए वा किंगोत्तए वा' तत्र नाम—यादृच्छिकमभिधानं गोत्रं तु—यथार्थं कुलं वा 'कयरंसि गामंसि वा नगरंसि वा किं वा दच्चा किं वा भोच्चा किं वा समायरेत्ता केसिं वा पुरा पोराणाणं दुच्चिन्नाणं दुप्पडिक्कंताणं असुहाणं पावाणं कम्माणं पावगं फलवित्तिविसेसं पच्चणुब्भवमाणे विहरइ'त्ति। २ 'गोयमाइ'त्ति गौतम इत्येवमामन्त्रयेति गम्यते ३ 'ऋद्धिस्थिमिए'त्ति ऋद्धिप्रधानं स्तिमितं च—निर्भयं यत्तत्तथा, 'वण्णओ'त्ति नगरवर्णकः, स चौपपातिकवद्द्रष्टव्यः, 'अदूरसामंते'त्ति नातिदूरे न च समीपे इत्यर्थः, 'खेडे'त्ति धूलीप्राकारं 'रिद्ध'त्ति 'रिद्धत्थमियसमिद्धे' इति द्रष्टव्यम्, 'आभोए'त्ति विस्तारः 'रट्ठउडे'त्ति राष्ट्रकूटो—मण्डलोपजीवी राजनियोगिकः ४ 'अहम्मिए'त्ति अधार्मिको यावत्करणादिदं दृश्यम्—'अधम्माणुए अधम्मिट्ठे अधम्मपलोई अधम्मपलज्जणे अधम्मसमुदाचारे अधम्मेणं चेव वित्तिं कप्पेमाणे दुस्सीले दुव्वए'त्ति, तत्र अधार्मिकत्वप्रपञ्चनायोच्यते—'अधम्माणुए'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मृगापुत्रस्य पूर्वभवः -- "इक्काई रट्ठकूड"

आहेवच्चं जाव पालेमाणे विहरइ, तए णं से इक्काई विजयवद्धमाणस्स खेडस्स पंच गामसयाइं बहूहिं करेहि

अधर्म्म–श्रुतचारित्राभावं अनुगच्छतीत्यधर्म्मानुगः, कुत एतदेवमित्याह–अधर्म्म एव इष्टो–वल्लभः पूजितो वा यस्य सोऽधर्म्मिष्टः अतिशयेन वाऽधर्म्मी–धर्मवर्जित इत्यधर्म्मिष्टः, अत एवाधर्माख्यायी–अधर्म्मप्रतिपादकः अधर्मख्यातिर्वा–अविद्यमानधर्मोऽयमित्येवंप्रसिद्धिकः, तथाऽधर्म्मं प्रलोकयति–उपादेयतया प्रेक्षते यः स तथा, अत एवाधर्मप्ररजनः–अधर्मरागी अत एवाधर्मः समुदाचारः–समाचारो यस्य स तथा, अत एवाधर्मेण–हिंसादिना वृत्तिं–जीविकां कल्पयन् सन् दुःशीलः–शुभस्वभावहीनः दुर्व्रतश्च–व्रतवर्जितः दुष्प्रत्यानन्दः–साधुदर्शनादिना नानन्दत इति । १ 'आहेवच्चं'ति अधिपतिकर्म्म, यावत्करणादिदं दृश्यं—'पोरेवच्चं सामित्तं भट्टित्तं महत्तरगत्तं आणाईसरसेणावच्चं कारेमाणे'त्ति तत्र पुरोवर्त्तित्वं–अग्रेसरत्वं स्वामित्वं–नायकत्वं भर्तृत्वं–पोषकत्वं महत्तरकत्वं–उत्तमत्वं आज्ञेश्वरस्य–आज्ञाप्रधानस्य यत्सेनापतित्वं तदाज्ञेश्वरसेनापत्यं कारयन्–नियोगिकैर्विधापयन् पालयन् स्वयमेवेति । २ 'करेहि य'त्ति करैः–क्षेत्राद्याश्रितराजदेयद्रव्यैः 'भरेहि य'त्ति तेषामेव प्राचुर्यैः 'विद्धीहि य'त्ति वृद्धिभिः–कुटुम्बिनां वितीर्णस्य धान्यस्य द्विगुणादेर्ग्रहणैः, वृत्तिभिरिति कचित्, तत्र वृत्तयो–राजादेशकारिणां जीविकाः, 'उक्कोडाहि य'त्ति लञ्चाभिः 'पराभएहि य'त्ति पराभवैः 'देज्जेहि य' अनाभवद्दातव्यैः 'भेज्जेहि य'त्ति यानि पुरुषमारणाद्यपराधमाश्रित्य ग्रामादिषु दण्डद्रव्याणि निपतन्ति कौटुम्बिकान् प्रति च भेदनोद्ग्राह्यन्ते तानि भेद्यानि अतस्तैः 'कुंतेहि य'त्ति कुन्तकम्–एतावद्द्रव्यं त्वया देयमित्येवं नियन्त्रणया नियोगिकस्य देशादेर्यत्समर्पणमिति, 'लंछपोसेहि य'त्ति लञ्छाः–चौरविशेषाः संभाव्यन्ते तेषां पोषाः–पोषणानि तैः, 'आलीवणेहि य'त्ति व्याकुललोकानां मोषणार्थं ग्रामादिप्रदीपनकैः 'पंथकोट्टेहि य'त्ति सार्थघातैः 'उवीलेमाणे'त्ति अवपीलयन्–बाधयन् ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

य भरेहि य विद्धीहि य उक्कोडाहि य पराभवेहि य दिज्जेहि य भेज्जेहि य कुंतेहि य लंछपोसेहि य आलीवणेहि य पंथकोट्टेहि य उवीलेमाणे २ विहम्मेमाणे २ तज्जेमाणे २ तालेमाणे २ निद्धणे करेमाणे २ विहरति। ततेणं से इक्काई रट्ठकूडे विजयवद्धमाणस्स खेडस्स बहूणं राईसरतलवरमाडंबियकोडुंबियसेट्ठि सत्थवाहाणं अन्नेसिं च बहूणं गामेल्लगपुरिसाणं बहुसु कज्जेसु य कारणेसु य संतेसु य गुज्झेसु य निच्छएसु य ववहारेसु य सुणमाणे भणति—न सुणेमि असुणमाणे भणति—सुणेमि एवं पस्समाणे भासमाणे गिण्हमाणे जाणमाणे, तते णं से इक्काई रट्ठकूडे एयकम्मे एयप्पहाणे एयविज्जे एयसमायारे सुबहुं पावकम्मं कलिकलुसं समज्जिणमाणे विहरति, तते णं तस्स इक्काईयस्स रट्ठकूडस्स अन्नया कयाइं सरीरगंसि

१ 'विहम्मेमाणे'त्ति विधर्म्मयन्—स्वाचारभ्रष्टान् कुर्वन् 'तज्जमाणे'त्ति कृतावष्टम्भान् तर्जयन्—ज्ञास्यथ रे यन्मम इदं च इदं च न दत्स्वेवं भेषयन् 'तालेमाणे'त्ति कशचपेटादिभिस्ताडयन् 'निद्धणे करेमाणे'त्ति निर्द्धनान् कुर्वन् विहरति। २ 'तए णं से इक्काई रट्ठकूडे विजयवद्धमाणस्स खेडस्स सत्कानां बहूणं राईसरतलवरमाडंबियकोडुंबियसेट्ठिसत्थवाहाणं' इह तलवराः—राजप्रसादवन्तो राजोत्थासनिकाः 'माडम्बिकाः' मडम्बाधिपतयो मडम्बं च—योजनद्वयाभ्यन्तरेऽविद्यमानग्रामादिनिवेशः सन्निवेशविशेषः शेषाः प्रसिद्धाः,। ३ 'कज्जेसु'त्ति कार्येषु—प्रयोजनेषु अनिष्पन्नेषु 'कारणेसु'त्ति सिसाधयिषितप्रयोजनोपायेषु विषयभूतेषु ये मन्त्रादयो व्यवहारान्तास्तेषु, तत्र मन्त्राः—पर्यालोचनानि गुह्यानि—रहस्यानि निश्चया—वस्तुनिर्णयाः व्यवहारा—विवादास्तेषु विषये ४। 'एयकम्मे' एतद्व्यापारः एतदेव वा कार्म्यं—कर्मनीयं यस्य स तथा, 'एयप्पहाणे'त्ति एतत्प्रधानः एतन्निष्ठ इत्यर्थः, 'एयविज्जे'त्ति एषैव विद्या—विज्ञानं यस्य स तथा 'एयसामायारे'त्ति एतज्जीतकल्प इत्यर्थः 'पावकम्मं'ति अशुभं—ज्ञानावरणादि 'कलिकलुसं'ति कलहहेतुकलुषं मलीमसमित्यर्थः,।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [५] + गाथा

दीप अनुक्रम [७-८]

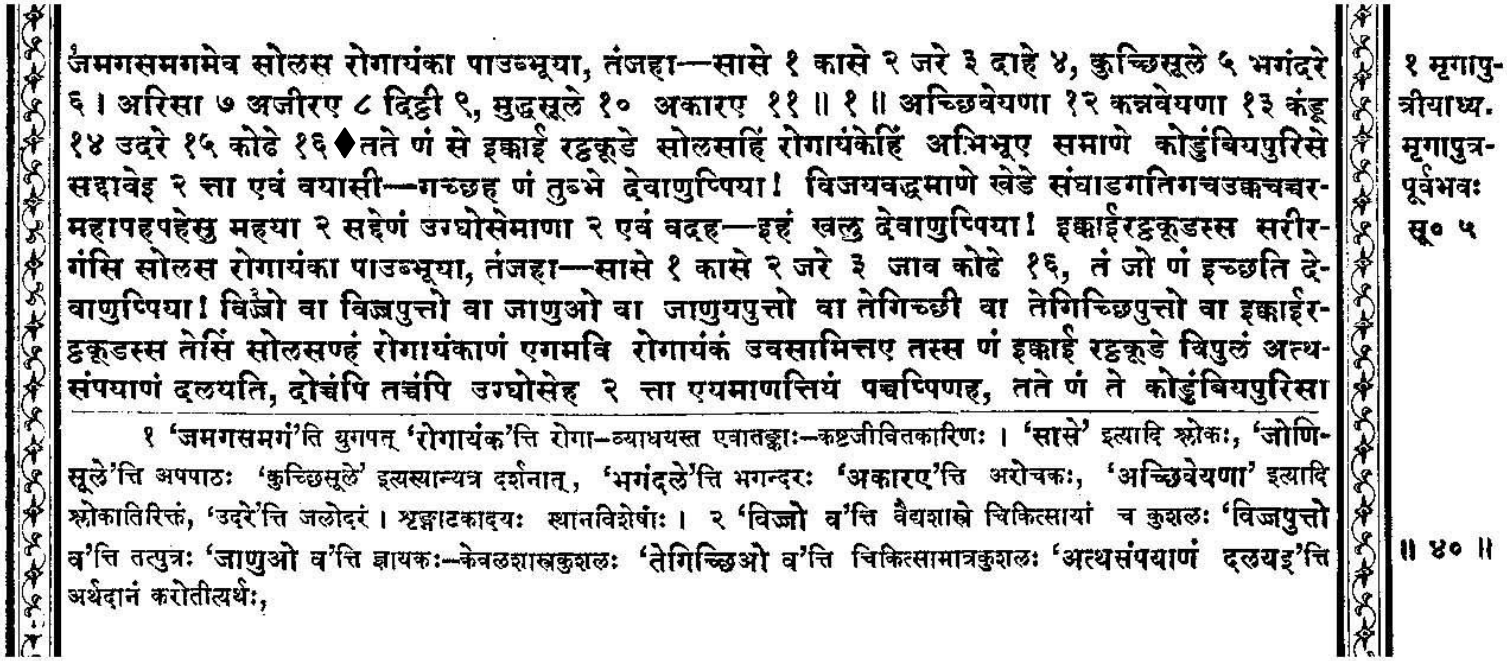

विपाके श्रुत० १

॥ ४० ॥

जमगसमगमेव सोलस रोगायंका पाउब्भूया, तंजहा—सासे १ कासे २ जरे ३ दाहे ४, कुच्छिसूले ५ भगंदरे ६। अरिसा ७ अजीरए ८ दिट्ठी ९, मुद्धसूले १० अकारए ११ ॥ १ ॥ अच्छिवेयणा १२ कन्नवेयणा १३ कंडू १४ उदरे १५ कोढे १६ ◆तते णं से इक्काई रट्ठकूडे सोलसहिं रोगायंकेहिं अभिभूए समाणे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी—गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! विजयवद्धमाणे खेडे संघाडगतिगचउक्कचच्चरमहापहपहेसु महया २ सद्देणं उग्घोसेमाणा २ एवं वदह—इहं खलु देवाणुप्पिया! इक्काईरट्ठकूडस्स सरीरगंसि सोलस रोगायंका पाउब्भूया, तंजहा—सासे १ कासे २ जरे ३ जाव कोढे १६, तं जो णं इच्छति देवाणुप्पिया! विज्जो वा विज्जपुत्तो वा जाणुओ वा जाणुयपुत्तो वा तेगिच्छी वा तेगिच्छिपुत्तो वा इक्काईरट्ठकूडस्स तेसिं सोलसण्हं रोगायंकाणं एगमवि रोगायंकं उवसामित्तए तस्स णं इक्काई रट्ठकूडे विपुलं अत्थसंपयाणं दलयति, दोच्चंपि तच्चंपि उग्घोसेह २ त्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह, तते णं ते कोडुंबियपुरिसा

१ 'जमगसमगं'ति युगपत् 'रोगायंक'त्ति रोगा—व्याधयस्त एवातङ्काः—कष्टजीवितकारिणः। 'सासे' इत्यादि श्लोकः, 'जोणिसूले'त्ति अपपाठः 'कुच्छिसूले' इत्यस्यान्यत्र दर्शनात्, 'भगंदले'त्ति भगन्दरः 'अकारए'त्ति अरोचकः, 'अच्छिवेयणा' इत्यादि श्लोकातिरिक्तं, 'उदरे'त्ति जलोदरं। शृङ्गाटकादयः स्थानविशेषाः। २ 'विज्जो व'त्ति वैद्यशास्त्रे चिकित्सायां च कुशलः 'विज्जपुत्तो व'त्ति तत्पुत्रः 'जाणुओ व'त्ति ज्ञायकः—केवलशास्त्रकुशलः 'तेगिच्छिओ व'त्ति चिकित्सामात्रकुशलः 'अत्थसंपयाणं दलयइ'त्ति अर्थदानं करोतीत्यर्थः,

१ मृगापुत्रीयाध्य. मृगापुत्रपूर्वभवः सू० ५

॥ ४० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

◆ अत्र मूल सम्पादकेन न किंचित् स्वतंत्र सूत्र घोषितः , परंतु एका सूत्र संख्या-क्रमांकने स्खलना कृताः मया तत् स्थाने स्वतन्त्र अनुक्रमः दत्वा सूत्र ६ इति सूत्रक्रम-६ लिखितं ***[यहां प्रत के संपादनमें सूत्र ५ के बाद ६ के स्थानमे सिधा ७ सूत्रक्रम हि दिया है , मैनेसूत्र-गाथा के बाद अतिरिक्त क्रम देकर सू० ६, सू० ७ ऐसा लिख दिया है]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [६]

दीप अनुक्रम [९]

जाव पवप्पिणंति, तते णं से विजयवद्धमाणे खेडे इमं एयारूवं उग्घोसणं सोचा निसम्म बहवे विज्जा य ६ सत्थकोसहत्थगया सएहिं २ गिहेहिंतो पडिनिक्खमंति २ त्ता विजयवद्धमाणस्स खेडस्स मज्झंमज्झेणं जेणेव इक्काइरट्ठकूडस्स गिहे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता इक्काईरट्ठकूडस्स सरीरगं परामुसंति २ त्ता तेसिं रोगाणं निदाणं पुच्छंति २ त्ता इक्काईरट्ठकूडस्स बहूहिं अब्भंगेहि य उव्वट्टणाहि य सिणेहपाणेहि य वमणेहि य विरेयणेहि य अवद्दहणाहि य अवण्हाणेहि य अणुवासणाहि य वत्थिकम्मेहि य निरुहेहि य सिरावेहेहि य तच्छणेहि य पच्छणेहि य सिरोवत्थीहि य तप्पणाहि य पुडपागेहि य छल्लीहि य मूलेहि य कंदेहि य

---

१ 'सत्थकोसहत्थगय'त्ति शस्त्रकोशो–नखरदनादिभाजनं हस्ते गतो–व्यवस्थितो येषां ते तथा, २ 'अवद्दहणाहि य'त्ति दग्भनैः 'अवण्हाणेहि य'त्ति तथाविधद्रव्यसंस्कृतजलेन स्नानैः 'अणुवासणाहि य'त्ति अपानेन जठरे तैलप्रवेशनैः 'वत्थिकम्मेहि य'त्ति चर्म्मवेष्टनप्रयोगेण शिरःप्रभृतीनां स्नेहपूरणैः गुदे वा वर्त्त्यादिक्षेपणैः 'निरुहेहि य'त्ति निरुहः–अनुवास एव केवलं द्रव्यकृतो विशेषः 'सिरावेहेहि य'त्ति नाडीवेधैः 'तच्छणेहि य'त्ति क्षुरादिना त्वचस्तनूकरणैः 'पच्छणेहि य'त्ति ह्रस्वैस्त्वचोविदारणैः 'सिरोवत्थीहि य'त्ति शिरोबस्तिभिः शिरसि बद्धस्य चर्मकोशकस्य द्रव्यसंस्कृततैलाद्यापूरणलक्षणाभिः, प्रागुक्तबस्तिकर्म्माणि सामान्यानि अनुवासनानिरुहशिरोबस्तयस्तु तद्भेदाः 'तप्पणाहि य'त्ति तर्पणैः स्नेहादिभिः शरीरबृंहणैः 'पुडपागेहि य'त्ति पुटपाकाः–पाकविशेषनिष्पन्ना औषधिविशेषाः 'छल्लीहि य'त्ति छल्लयो–रोहिणीप्रभृतयः

अनु. ९

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [६]

दीप अनुक्रम [९]

॥ ४१ ॥

पत्तेहि य पुप्फेहि य फलेहि य बीएहि य सिलियाहि य गुलियाहि य ओसहेहि य भेसज्जेहि य इच्छंति तेसिं सोलसण्हं रोगायंकाणं एगमवि रोगायंकं उवसमावित्तए, नो चेव णं संचाएंति उवसामित्तए। तते णं ते बहवे विज्जा य विज्जपुत्ता य जाहे नो संचाएंति तेसिं सोलसण्हं रोगायंकाणं एगमवि रोगायंकं उवसामित्तए ताहे संता तंता परितंता जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया, तते णं इक्काईरट्ठकूडे विज्जेहि य ६ पडियाइक्खिए परियारगपरिचत्ते निविण्णोसहभेसज्जे सोलसरोगायंकेहिं अभिभूए समाणे रज्जे य रट्ठे य जाव अंतेउरे य मुच्छिए रज्जं च रट्ठं च आसाएमाणे पत्थेमाणे पीहेमाणे अभिलसमाणे अट्टदुहट्टवसट्टे अट्ठाइज्जाइं वाससयाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उक्को-

१ 'सिलियाहि य'त्ति शिलिकाः—किरातितिक्तकप्रभृतिकाः 'गुलियाहि य'त्ति द्रव्यवटिकाः 'ओसहेहि य'त्ति औषधानि—एकद्रव्यरूपाणि 'भेसज्जेहि य'त्ति भैषज्यानि—अनेकद्रव्ययोगरूपाणि पथ्यानि चेति। २ 'संत'त्ति श्रान्ता देहखेदेन 'तंत'त्ति तान्ता मनःखेदेन 'परितंत'त्ति उभयखेदेनेति 'रज्जे य रट्ठे य' इत्यत्र यावत्करणादिदं दृश्यं—'कोसे य कोट्ठागारे य वाहणे य'त्ति, 'मुच्छिए गढिए गिद्धे अज्झोववण्णे'त्ति एकार्थाः, 'आसाएमाणे'त्यादय एकार्थाः, 'अट्टदुहट्टवसट्टे'त्ति आर्त्तो मनसा दुःखितो—दुःखार्त्तो देहेन वशार्त्तस्तु—इन्द्रियवशेन पीडितः, ततः कर्मधारयः, 'उज्जला' इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'विउला कक्कसा पगाढा चंडा दुहा तिव्वा दुरहियास'त्ति एकार्था एव, 'अणिट्ठा अकंता अप्पिया अमणुन्ना अमणामा' एतेऽपि तथैव।

॥ ४१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [६]

दीप अनुक्रम [९]

सेणं सागरोवमट्ठितीएसु नेरइएसु नेरइयत्ताए उववन्ने, से णं ततो अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव मियग्गामे णगरे विजयस्स खत्तियस्स मियाए देवीए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववन्ने, तते णं तीसे मियाए देवीए सरीरे वेयणा पाउब्भूया उज्जला जाव जलंता, जप्पभिइं च णं मियापुत्ते दारए मियाए देवीए कुच्छिंसि गब्भत्ताए उववन्ने तप्पभिइं च णं मियादेवी विजयस्स अणिट्ठा अकंता अप्पिया अमणुन्ना अमणामा जाया यावि होत्था, तते णं तीसे मियाए देवीए अन्नया कयाइं पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि कुडुंबजागरियाए जागरमाणीए इमे एयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–एवं खलु अहं विजयस्स खत्तियस्स पुव्विं इट्ठा ६ धेज्जा वेसासिया अणुमया आसी, जप्पभिइं च णं मम इमे गब्भे कुच्छिंसि गब्भत्ताए उववन्ने तप्पभिइं च णं अहं विजयस्स खत्तियस्स अणिट्ठा जाव अमणामा जाया यावि होत्था, निच्छति णं विजए खत्तिए मम नामं वा गोयं

---

१ 'पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि'त्ति पूर्वरात्रो–रात्रेः पूर्वभागः अपररात्रो–रात्रेः पश्चिमो भागस्तल्लक्षणो यः कालसमयः –कालरूपः समयः स तथा तत्र 'कुडुंबजागरियाए'त्ति कुटुम्बचिन्तयेत्यर्थः, 'अज्झत्थिए'त्ति आध्यात्मिकः आत्मविषयः, इह चान्यान्यपि पदानि दृश्यानि, तद्यथा—'चिंतिए'त्ति स्मृतिरूपः 'कप्पिए'त्ति बुद्ध्या व्यवस्थापितः 'पत्थिए'त्ति प्रार्थितः प्रार्थनारूपः 'मणोगए'त्ति मनस्येव वृत्तो बहिरप्रकाशितः संकल्पः–पर्यालोचः, 'इट्ठे'त्यादीनि पञ्चैकार्थिकानि प्राग्वत्, 'धिज्जे'त्ति ध्येया 'वेसासिय'त्ति विश्वसनीया 'अणुमय'त्ति विप्रियदर्शनस्य पश्चादपि मता अनुमतेति, 'नामं'ति पारिभाषिकी सञ्ज्ञा 'गोयं'ति गोत्रं–आन्वर्थिकी सञ्ज्ञैवेति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [६]

दीप अनुक्रम [९]

विपाके श्रुत० १

॥ ४२ ॥

वा गिण्हित्तए वा किमंग पुण दंसणं वा परिभोगं वा १, तं सेयं खलु मम एयं गब्भं बहूहिं गब्भसाडणाहि य पाडणाहि य गालणाहि य मारणाहि य साडित्तए वा ४, एवं संपेहेइ संपेहित्ता बहूणि खाराणि य कडुयाणि य तूवराणि य गब्भसाडणाणि य खायमाणी य पीयमाणी य इच्छति तं गब्भं साडित्तए वा ४ नो चेव णं से गब्भे सडइ वा ४। तते णं सा मियादेवी जाहे नो संचाएति तं गब्भं साडेत्तए वा ४ ताहे संता तंता परितंता अकामिया असवसा तं गब्भं दुहंदुहेणं परिवहइ, तस्स णं दारगस्स गब्भगयस्स चेव अट्ठ नालीओ अब्भिंतरप्पवहाओ अट्ठ नालीओ बाहिरपवहाओ अट्ठ पूयप्पवहाओ अट्ठ सोणियप्पवहाओ दुवे दुवे कण्णंतरेसु दुवे दुवे अच्छिंतरेसु दुवे दुवे नक्कंतरेसु दुवे दुवे धमणिअंतरेसु अभिक्खणं अभिक्खणं पूयं च सोणियं च परिसवमाणीओ २ चेव चिट्ठंति, तस्स णं दारगस्स गब्भगयस्स चेव अग्गिए नामं वाही

१ 'किमंग पुण'त्ति किं पुनः 'अंग' इत्यामन्त्रणे 'गब्भसाडणाहि य'त्ति शातनाः—गर्भस्य खण्डशो भवनेन पतनहेतवः 'पाडणाहि य'त्ति पातनाः यैरुपायैरखण्ड एव गर्भः पतति 'गालणाहि य'त्ति यैर्गर्भो द्रवीभूय क्षरति 'मारणाहि य'त्ति मरणहेतवः। २ 'अकामिय'त्ति निरभिलाषाः 'असयंवस'त्ति अस्वयंवशा 'अट्ठ नालीओ'त्ति अष्टौ नाड्यः—शिराः 'अब्भिंतरप्पवहाउ'त्ति शरीरस्याभ्यन्तर एव रुधिरादि स्रवन्ति यास्तास्तथोच्यन्ते, 'बाहिरप्पवहाउ'त्ति शरीराद्बहिः पूयादि क्षरन्ति यास्तास्तथोक्ताः, एता एव षोडश विभज्यन्ते 'अट्ठे'त्यादि, कथमित्याह—'दुवे दुवे'त्ति द्वे पूयप्रवाहे द्वे च शोणितप्रवाहे, ते च केत्याह—'कन्नंतरेसु' श्रोत्ररन्ध्रयोः, एवमेताश्चतस्रः, एवमन्या अपि व्याख्येयाः, नवरं धमन्यः—कोष्ठकहृदन्तराणि 'अग्गियए'त्ति अग्निको भस्मकाभिधानो वायुविकारः

१ मृगापुत्रीयाध्य. मृगापुत्रपूर्वभवः सू० ५

॥ ४२ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पाउब्भूए जे णं से दारए आहारेति से णं खिप्पामेव विद्धंसमागच्छति पूयत्ताए सोणियत्ताए य परिणमति, तंपि य से पूयं च सोणियं च आहारेति, तते णं सा मियादेवी अन्नया कयाइं नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं दारगं पयाया जातिअंधे जाव आगइमित्ते, तते णं सा मियादेवी तं दारगं हुंडं अंधारूवं पासति २ त्ता भीया ४ अम्मधाइं सद्दावेति २ त्ता एवं वयासी—गच्छह णं देवाणुप्पिया! तुमं एयं दारगं एगंते उक्कुरुडियाए उज्झाहि, तते णं सा अम्मधाई मियादेवीए तहत्ति एयमट्ठं पडिसुणेति २ त्ता जेणेव विजए खत्तिए तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता करयलपरिग्गहियं एवं वयासी—एवं खलु सामि! मियादेवी नवण्हं मासाणं जाव आगतिमित्ते, तते णं सा मियादेवी तं हुंडं अंधारूवं पासति २ त्ता भीया तत्था उव्विग्गा संजायभया ममं सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी–गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! एयं दारगं एगंते उक्कुरुडियाए उज्झाहि, तं संदिसह णं सामी! तं दारगं अहं एगंते उज्झामि उदाहु मा?, तते णं से विजए खत्तिये तीसे अम्मधाईए अंतिए एयमट्ठं सोच्चा तहेव संभंते उट्ठाए उट्ठेति उट्ठा २ त्ता जेणेव मियादेवी तेणेव उवागच्छ-

१ 'जाइअंधे' इत्यत्र यावत्करणात् 'जाइमूए' इत्यादि दृश्यं, 'हुंडं'ति अव्यवस्थिताङ्गावयवं 'अंधारूवं'ति अन्धाकृतिः, 'भीया' इत्यत्रैतद्दृश्यं 'तत्था उव्विग्गा संजायभया' भयप्रकर्षाभिधानायैकार्थाः शब्दाः, 'करयले'त्यत्र 'करयलपरिग्गहियं दसणहं मत्थए अंजलिं कट्टु' इति दृश्यं, 'नवण्ह'मित्यत्र 'मासाणं बहुपडिपुन्नाण'मित्यादि दृश्यं, तथा 'जाइअंध'मित्यादि च, 'संभंते'ति उत्सुकः 'उट्ठाते उट्ठेइ'त्ति उत्थानेनोत्तिष्ठति, 'पय'त्ति प्रजाः—अपत्यानि, 'रहस्सिगयंसि'त्ति राहस्यिके विजने इत्यर्थः ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [६]

दीप अनुक्रम [९]

ति २ त्ता मियादेवीं एवं वयासी–देवाणुप्पिया! तुब्भं पढमं गब्भे तं जइ णं तुब्भे एयं एगंते उक्कुरुडियाए उज्झासि ततो णं तुब्भे पया नो थिरा भविस्सति, तो णं तुमं एयं दारगं रहस्सियगंसि भूमिघरंसि रहस्सिएणं भत्तपाणेणं पडिजागरमाणी २ विहराहि तो णं तुब्भं पया थिरा भविस्सति, तते णं सा मियादेवी विजयस्स खत्तियस्स तहत्ति एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेति पडि २ त्ता तं दारगं रहस्सियंसि भूमिघरंसि रह० भत्तपाणेणं पडिजागरमाणी विहरति, एवं खलु गोयमा! मियापुत्ते दारए पुरापुराणाणं जाव पच्चणुब्भवमाणे विहरति। (सू० ६) मियापुत्ते णं भंते! दारए इओ कालमासे कालं किच्चा कहिं गमहिति? कहिं उववज्जिहिति?, गोयमा! मियापुत्ते दारए छव्वीसं वासाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे वेयड्ढगिरिपायमूले सीहकुलंसि सीहत्ताए पच्चायाहिति, से णं तत्थ सीहे भविस्सति अहम्मिए जाव साहसिए सुबहुं पावं जाव समज्जिणति जाव समज्जिणित्ता कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उक्कोससागरोवमठितीएसु जाव उववज्जिहिति, से णं ततो अणंतरं उव्व-

१ 'पुरा पोराणाणं'ति पुरा–पूर्वकाले कृतानामिति गम्यम् अत एव 'पुराणानां' चिरन्तनानाम्, इह च यावत्करणात् 'दुचिन्नाणं दुप्पडिकंताणं' इत्यादि 'पावगं फलवित्तिविसेसं'मित्यन्तं द्रष्टव्यम्। २ 'अहम्मिए' इत्यत्र यावत्करणादिदं दृश्यं—'बहुनगरनिग्गयजसे सूरे दढप्पहारी'ति, व्यक्तं च। ३ 'कालमासे'त्ति मरणावसरे। ४ 'सागरोवम जाव'त्ति 'सागरोपमट्ठिईएसु नेरइयत्ताए' द्रष्टव्यम्।

१ मृगापुत्रीयाध्य. मृगापुत्रगत्यादि सू० ७

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मृगापुत्रस्य आगामि-भवाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्ति:

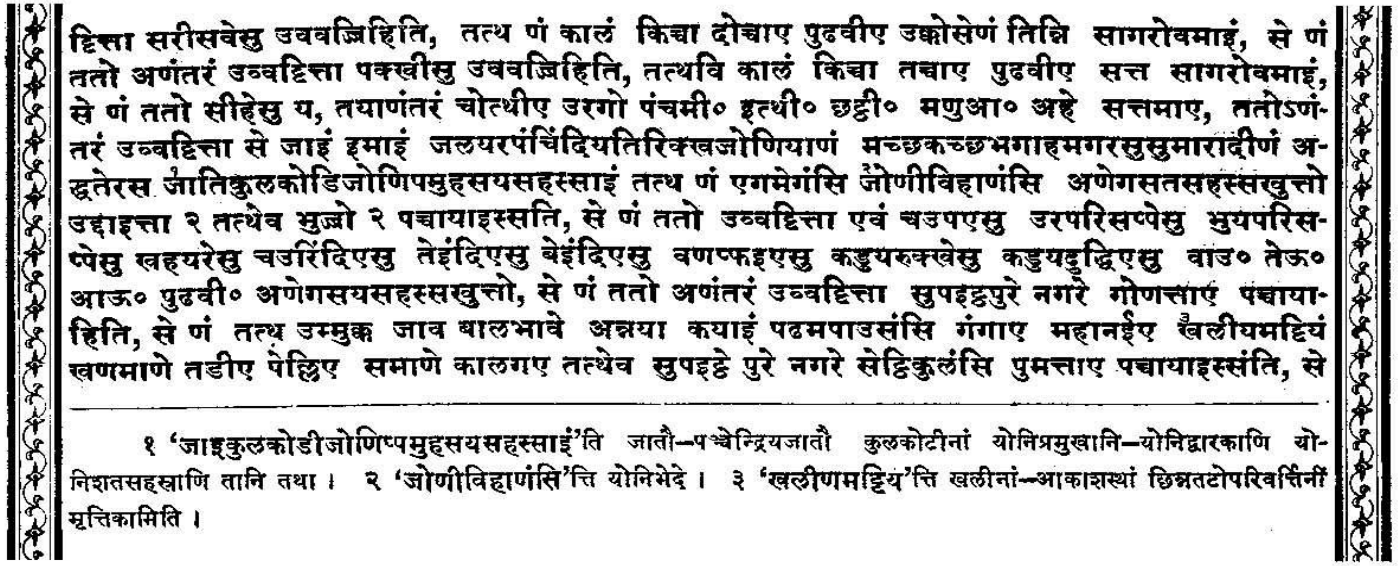

ट्टित्ता सरीसवेसु उववज्जिहिति, तत्थ णं कालं किच्चा दोच्चाए पुढवीए उक्कोसेणं तिन्नि सागरोवमाइं, से णं ततो अणंतरं उव्वट्टित्ता पक्खीसु उववज्जिहिति, तत्थवि कालं किच्चा तच्चाए पुढवीए सत्त सागरोवमाइं, से णं ततो सीहेसु य, तयाणंतरं चोत्थीए उरगो पंचमी० इत्थी० छट्ठी० मणुआ० अहे सत्तमाए, ततोऽणंतरं उव्वट्टित्ता से जाइं इमाइं जलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं मच्छकच्छभगाहमगरसुसुमारादीणं अद्धतेरस जातिकुलकोडिजोणिपमुहसयसहस्साइं तत्थ णं एगमेगंसि जोणीविहाणंसि अणेगसतसहस्सखुत्तो उद्दाइत्ता २ तत्थेव भुज्जो २ पच्चायाइस्सति, से णं ततो उव्वट्टित्ता एवं चउप्पएसु उरपरिसप्पेसु भुयपरिसप्पेसु खहयरेसु चउरिंदिएसु तेइंदिएसु बेइंदिएसु वणप्फइएसु कडुयरुक्खेसु कडुयदुद्धिएसु वाउ० तेऊ० आऊ० पुढवी० अणेगसयसहस्सखुत्तो, से णं ततो अणंतरं उव्वट्टित्ता सुपइट्ठपुरे नगरे गोणत्ताए पच्चायाहिति, से णं तत्थ उम्मुक्क जाव बालभावे अन्नया कयाइं पढमपाउसंसि गंगाए महानईए खलीयमट्टियं खणमाणे तडीए पेल्लिए समाणे कालगए तत्थेव सुपइट्ठे पुरे नगरे सेट्ठिकुलंसि पुमत्ताए पच्चायाइस्संति, से

१ 'जाइकुलकोडीजोणिप्पमुहसयसहस्साइं'ति जातौ—पञ्चेन्द्रियजातौ कुलकोटीनां योनिप्रमुखानि—योनिद्वारकाणि योनिशतसहस्राणि तानि तथा। २ 'जोणीविहाणंसि'त्ति योनिभेदे। ३ 'खलीणमट्टिय'त्ति खलीनां—आकाशस्थां छिन्नतटोपरिवर्त्तिनीं मृत्तिकामिति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मृगापुत्रस्य आगामि-भवा:

णं तत्थ उम्मुक्कबालभावे जाव जोव्वणगमणुपत्ते तहारूवाणं थेराणं अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइस्सति, से णं तत्थ अणगारे भविस्सति ईरियासमिए जाव बंभयारी, से णं तत्थ बहूइं वासाइं सामन्नपरियागं पाउणित्ता आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे देवत्ताए उववज्जिहिति, से णं ततो अणंतरं चयं चइत्ता महाविदेहे वासे जाइं कुलाइं भवंति अड्ढाइं जहा दढपइन्ने सा चेव वत्तव्वया कलाओ जाव सिज्झिहिति। एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं दुहविवागाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्तेत्तिबेमि (सू० ७) ॥ १ ॥

१ 'उम्मुक्क जाव'त्ति 'उम्मुक्कबालभावे विन्नयपरिणयमेत्ते जोव्वणगमणुपत्ते'त्ति दृश्यं, तत्र विज्ञ एव विज्ञकः स चासौ परिणतमात्रश्च–बुद्ध्यादिपरिणामापन्न एव विज्ञकपरिणतमात्रः। २ 'अणंतरं चयं चइत्त'त्ति अनन्तरं शरीरं त्यक्त्वा च्यवनं वा कृत्वा। ३ 'जहा दढपइन्ने'त्ति औपपातिके यथा दृढप्रतिज्ञाभिधानो भव्यो वर्णितस्तथाऽयमपि वाच्यः, कस्मादेवमित्याह—'सा चेव'त्ति सैव दृढप्रतिज्ञसम्बन्धिनी अस्यापि वक्तव्यतेति, तामेव स्मरयन्नाह—'कलाओ'त्ति कलास्तेन गृहीष्यन्ते दृढप्रतिज्ञेनेव यावत्करणाच्च प्रव्रज्याग्रहणादिः तस्येवास्य वाच्यं, यावत्सेत्स्यतीत्यादि पदपञ्चकमिति, ततः सेत्स्यति–कृतकृत्यो भविष्यति भोत्स्यते–केवलज्ञानेन सकलं ज्ञेयं ज्ञास्यति मोक्ष्यति–सकलकर्म्मविमुक्तो भविष्यति परिनिर्वास्यति–सकलकर्मकृतसन्तापरहितो भविष्यति, किमुक्तं भवति?–सर्वदुःखानामन्तं करिष्यतीति ॥ प्रथमाध्ययनविवरणं ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मृगापुत्रस्य सिद्धिगमनं

अत्र प्रथमं अध्ययनं परिसमाप्तं

प्रत सूत्रांक [८]

दीप अनुक्रम [११]

द्वितीये किञ्चिल्लिख्यते—

जइ णं भंते! समणेणं जाव संपत्तेणं दुहविवागाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते दोच्चस्स णं भंते! अज्झयणस्स दुहविवागाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते?, तते णं से सुहम्मे अणगारे जंबूं अणगारं एवं वयासी–एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं वाणियगामे नामं नयरे होत्था रिद्धित्थिमियसमिद्धे, तस्स णं वाणियगामस्स उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए दूईपलासे नामं उज्जाणे होत्था, तत्थ णं दूईपलासे सुहम्मस्स जक्खस्स जक्खाययणे होत्था, तत्थ णं वाणियगामे मित्ते नामं राया होत्था वन्नओ, तस्स णं मित्तस्स रन्नो सिरीनामं देवी होत्था वण्णओ, तत्थ णं वाणियगामे कामज्झया नामं गणिया होत्था [१]अहीण जाव सुरूवा बावत्तरिकलापंडिया चउसट्ठिगणियागुणोववेया एगूणतीसविसेसे रममाणी

१ 'अहीणे'ति अहीणपुण्णपंचिंदियसरीरेत्यर्थः, यावत्करणात् 'लक्खणवंजणगुणोववेया माणुम्माणप्पमाणपडिपुन्नसुजायसव्वंगसुंदरंगी'त्यादि द्रष्टव्यं, तत्र लक्षणानि–स्वस्तिकादीनि व्यञ्जनानि–मषीतिलकादीनि गुणाः–सौभाग्यादयः मानं–जलद्रोणमानता उन्मानं–अर्द्धभारप्रमाणता प्रमाणं–अष्टोत्तरशताङ्गुलोच्छ्रयतेति, 'बावत्तरीकलापंडिय'त्ति लेखाद्याः शकुनरुतपर्यन्ताः गणितप्रधानाः कलाः प्रायः पुरुषाणामेवाभ्यासयोग्याः स्त्रीणां तु विज्ञेया एव प्राय इति, 'चउसट्ठिगणियागुणोववेया' गीतनृत्यादीनि विशेषतः पण्यस्त्रीजनोचितानि यानि चतुष्षष्टिर्विज्ञानानि ते गणिकागुणाः अथवा वात्स्यायनोक्तान्यालिङ्गनादीन्यष्टौ वस्तूनि तानि च प्रत्येकमष्टभेदत्वाच्चतुःषष्टिर्भवन्तीति, चतुःषष्ट्या गणिकागुणैरुपपेता या सा तथा, एकोनत्रिंशद्विशेषा एकविंशती रतिगुणा द्वात्रिंशच्च पुरुषोपचाराः कामशास्त्रप्रसिद्धाः,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ द्वितीयं अध्ययनं "उज्झितक" आरभ्यते

एक्कवीसरतिगुणप्पहाणा बत्तीसपुरिसोवयारकुसला णवंगसुत्तपडिबोहिया अट्ठारसदेसीभासाविसारया सिंगारागारुचारुवेसा गीयरतिगंधव्वनट्टकुसला संगयगय० सुंदरथण० ऊसियज्झया सहस्सलंभा विदिण्णछत्तचामरवालवीयणीया कन्नीरहप्पयाया यावि होत्था, बहूणं गणियासहस्साणं आहेवच्चं जाव विहरइ

१ 'नवंगसुत्तपडिबोहिय'त्ति द्वे श्रोत्रे द्वे चक्षुषी द्वे घ्राणे एका जिह्वा एका त्वक् एकं च मनः इत्येतानि नवाङ्गानि सुप्तानीव सुप्तानि यौवनेन प्रतिबोधितानि—स्वार्थग्रहणपटुत्वं प्रापितानि यस्याः सा तथा 'अट्ठारसदेसीभासाविसारय'त्ति रूढिगम्यं 'सिंगारागारचारुवेस'त्ति शृङ्गारस्य—रसविशेषस्यागारमिव चारु वेषो यस्याः सा तथा, 'गीयरइगंधव्वनट्टकुसल'त्ति गीतरतिः—श्रवणं गन्धर्व्वनाट्यकुशला चेति समासः, गन्धर्वं नृत्यं गीतयुक्तं नाट्यं तु नृत्यमेवेति, 'संगयगय'त्ति 'संगयगयभणियविहियविलाससललियसंलावनिउणजुत्तोवयारकुसले'ति दृश्यं सङ्गतानि—उचितानि गतादीनि यस्याः सा तथा, सललिताः—प्रसन्नतोपेता ये संलापास्तेषु निपुणा या सा तथा, युक्ताः—सङ्गता ये उपचारा—व्यवहारास्तेषु कुशला या सा तथा, ततः पदत्रयस्य कर्म्मधारयः, 'सुंदरथण'त्ति एतेनेदं दृश्यं—'सुंदरथणजहणवयणकरचरणनयणलावण्णविलासकलिय'त्ति व्यक्तं नवरं जघनं—पूर्वकटीभागः लावण्यं—आकारस्य स्पृहणीयता विलासः—स्त्रीणां चेष्टाविशेषः 'ऊसियज्झय'त्ति ऊर्द्धीकृतजयपताका सहस्रलाभेति व्यक्तं 'विदिन्नछत्तचामरवालवीयणीय'त्ति वितीर्णं—राज्ञा प्रसादतो दत्तं छत्रं चामररूपा वालव्यजनिका यस्याः सा तथा, 'कन्नीरहप्पयाया यावि होत्थ'त्ति कर्णीरथः—प्रवहणं तेन प्रयातं—गमनं यस्याः सा तथा 'वाऽपी'ति समुच्चये 'होत्थ'त्ति अभवदिति, 'आहेवच्चं'ति आधिपत्यम्—अधिपतिकर्म, इह यावत्करणा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९]

दीप अनुक्रम [१२]

(सू० ८) तत्थ णं वाणियगामे विजयमित्ते नामं सत्थवाहे परिवसति अड्ढे० तस्स णं विजयमित्तस्स सुभद्दा नामं भारिया होत्था अहीण०, तस्स णं विजयमित्तस्स पुत्ते सुभद्दाए भारियाए अत्तए उज्झियए नामं दारए होत्था अहीण जाव सुरूवे। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे समोसढे परिसा निग्गया राया निग्गओ जहा कोणिओ तहा णिग्गओ धम्मो कहिओ परिसा पडिगया राया य गओ, तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूइनामं अणगारे जाव लेसे छट्ठंछट्ठेणं जहा पन्नत्तीए पढम जाव जेणेव वाणियगामे तेणेव उवा० उच्चनीयअडमाणे जेणेव रायमग्गे तेणेव ओगाढे, तत्थ

दिदं दृश्यं—'पोरेवच्चं' पुरोवर्त्तित्वं—अग्रेसरत्वमित्यर्थः 'भर्तृत्वं' पोषकत्वं 'स्वामित्वं' स्वस्वामिसम्बन्धमात्रं 'महत्तरगत्तं' महत्तरत्वं शेषवेश्याजनापेक्षया महत्तमताम् 'आणाईसरसेणावच्चं' आज्ञेश्वरः—आज्ञाप्रधानो यः सेनापतिः—सैन्यनायकस्तस्य भावः कर्म्म वा आज्ञेश्वरसेनापत्यम् आज्ञेश्वरसेनापत्यमिव आज्ञेश्वरसेनापत्यं 'कारेमाणा' कारयन्ती परैः 'पालेमाणा' पालयन्ती स्वयमिति।

१ 'अहीण'त्ति 'अहीणपुन्नपंचिंदियसरीरे'त्ति व्यक्तं च, यावत्करणादिदं दृश्यं 'लक्खणवंजणगुणोववेए' इत्यादि। २ 'इंदभूई' इत्यत्र यावत्करणात् 'नामे अणगारे गोयमगोत्तेण'मित्यादि 'संखित्तविउलतेयलेसे' इत्येतदन्तं दृश्यं। ३ 'छट्ठंछट्ठेणं जहा पन्नत्तीए'त्ति यथा भगवत्यां तथेदं वाच्यं, तच्चैवं—'छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणे विहरति, तए णं से भगवं गोयमे छट्ठक्खमणपारणगंसि' 'पढम' इत्यत्र यावत्करणादिदं दृश्यं—पढमाए पोरिसीए सज्झायं करेति बीयाए पोरिसीए झाणं झियाति तइयाए पोरिसीए अतुरियमचवलमसंभंते मुहपोत्तियं पडिलेहेइ भायणवत्थाइं पडिलेहेइ भायणाणि पमज्जति भायणाणि उग्गाहेइ जेणेव समणे भगवं महा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णं बहवे हत्थी पासइ सन्नद्धबद्धवम्मियगुडियउप्पीलियकच्छे उद्दामियघंटे णाणामणिरयणविविहगेविज्जउत्तरकंचुइज्जे पडिकप्पिए झयपडागवरपंचामेलआरूढहत्थारोहे गहियाउहप्पहरणे अन्ने य तत्थ बहवे आसे वीरे तेणामेव उवागच्छति २ समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ २ एवं वयासी–इच्छामि णं भंते! तुज्झेहिं अब्भणुण्णाए समाणे छट्ठक्खमणपारणगंसि वाणियगामे णगरे उच्चनीयमज्झिमकुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए अडित्तए' गृहेषु भिक्षार्थं भिक्षाचर्यया–भैक्षसमाचारेणाटितुमिति वाक्यार्थः, 'अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं' स्खलनां मा कुर्वित्यर्थः, 'तए णं भगवं गोयमे समणेणं ३ अब्भणुन्नाते समाणे समणस्स ३ अंतियाओ पडिनिक्खमति अतुरियमचवलमसंभंते जुगंतरप्पलोयणाए दिट्ठीए पुरओ रियं सोहेमाणे'त्ति।

१ 'संनद्धबद्धवम्मियगुडिए'त्ति संनद्धाः–सन्नह्या कृतसन्नाहाः तथा बद्धं वर्म्म–त्वक्त्राणविशेषो येषां ते बद्धवर्म्माणस्त एव बद्धवर्म्मिकाः, तथा गुडा–महांस्तनुत्राणविशेषः सा संजाता येषां ते गुडितास्ततः कर्म्मधारयः, 'उप्पीलियकच्छे'त्ति उत्पीडिता–गाढतरबद्धा कक्षा–उरोबन्धनं येषां ते तथा तान् 'उद्दामियघंटे'त्ति उद्दामिता–अपनीतबन्धना प्रलम्बिता इत्यर्थः घण्टा येषां ते तथा तान् 'णाणामणिरयणविविहगेविज्जे'त्ति नानामणिरत्नानि विविधानि ग्रैवेयकानि–ग्रीवाभरणानि उत्तरकञ्चुकाश्च–तनुत्राणविशेषाः सन्ति येषां ते तथा, अत एव 'पडिकप्पिए'त्ति कृतसन्नाहादिसामग्रीकान् 'झयपडागवरपंचामेलआरूढहत्थारोहे' ध्वजाः–गरुडादिध्वजाः पताकाः–गरुडादिवर्जितास्ताभिर्वरा ये ते तथा पञ्च आमेलकाः–शेखरका येषां ते तथा आरूढा हस्त्यारोहा–महामात्रा येषु ते तथा, ततः पदत्रयस्य कर्म्मधारयोऽतस्तान्, 'गहियाउहप्पहरणा' गृहीतानि आयुधानि प्रहरणाय येषु अथवा आयुधान्यक्षेप्याणि प्रहरणानि तु क्षेप्याणीति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९]

दीप अनुक्रम [१२]

पासति सन्नद्धबद्धवम्मियगुडिए आविद्धगुडिओसारियपक्खरे उत्तरकंचुइयओचूलमुहचंडाधरचामरथासकपरिमंडियकडिए आरूढआसारोहे गहियाउहप्पहरणे अन्ने य तत्थ बहवे पुरिसे पासइ सण्णद्धबद्धवम्मियकवए उप्पीलियसरासणपट्टीए पिणिद्धगेवेज्जे विमलवरबद्धचिंधपट्टे गहियाउहप्पहरणे, तेसिं च णं पुरिसाणं मज्झगयं पुरिसं पासति अवउडगबंधणं उक्खित्तकन्ननासं नेहतुप्पियगत्तं वज्झकक्खडियजुयणियत्थं

१ 'सन्नद्धबद्धवम्मियगुडिए'त्ति एतदेव व्याख्याति—'आविद्धगुडे ओसारियपक्खरे'त्ति आविद्धा—परिहिता गुडा येषां ते तथा, गुडा च यद्यपि हस्तिनां तनुत्राणं रूढा तथाऽपि देशविशेषापेक्षयाऽश्वानामपि संभवतीति, अवसारिता—अवलम्बिताः पक्खराः—तनुत्राणविशेषा येषां ते तथा तान्, 'उत्तरकंचुइयओचूलमुहचंडाधरचामरथासगपरिमंडियकडिय'त्ति उत्तरकञ्चुकः—तनुत्राणविशेष एव येषामस्ति ते तथा, तथाऽवचूलकैर्मुखं चण्डाधरं—रौद्राधरौष्ठं येषां ते तथा, तथा चामरैः थासकैश्च—दर्प्पणैः परिमण्डिता कटी येषां ते तथा, ततः कर्मधारयोऽतस्तान्, 'उप्पीलियसरासणपट्टीए'त्ति उत्पीडिता—कृतप्रत्यञ्चारोपणा शरासनपट्टिका—धनुर्यष्टिर्बाहुपट्टिका वा यैस्ते तथा तान्, 'पिणिद्धगेविज्ज'त्ति पिनद्धं—परिहितं ग्रैवेयकं यैस्ते तथा तान्, 'विमलवरबद्धचिंधपट्टे' विमलो वरो बद्धश्चिह्नपट्टो—नेत्रादिमयो यैस्ते तथा तान्, 'अवउडगबंधणं'ति अवकोटकेन—कूर्पराटिकाया अधोनयनेन बन्धनं यस्य स तथा तम्, 'उक्खित्तकन्ननासं'ति उत्पाटितकर्णनासिकं 'नेहतुप्पियगत्तं'ति स्नेहक्लेदितशरीरं 'वज्झकक्खडियजुयणियच्छं'ति वध्यश्वासौ करयोः—हस्तयोः कट्यां—कटीदेशे युगं—युग्मं निवसित इव निवसितश्चेति समासोऽतस्तम्, अथवा वध्यस्य यत्करकटिकायुगं—निन्द्यचीवरिकाद्वयं तन्निवसितो यः स तथा तं ।

अनु. १०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विपाके श्रुत० १ ॥ ४७ ॥

कंठेगुणरत्तमल्लदामं चुण्णगुंडियगत्तं चुण्णयं वज्झपाणपीयं तिलंतिलं चेव छिज्जमाणं काकणीमंसाइं खाविय-तं पावं खक्खरमसएहिं हम्ममाणं अणेगनरनारीसंपरिवुडं चच्चरे चच्चरे खंडपडहएणं उग्घोसिज्जमाणं, इमं च णं एयारूवं उग्घोसणं पडिसुणेति—नो खलु देवा! उज्झियगस्स दारगस्स केइ राया वा रायपुत्तो वा अवरज्झइ अप्पणो से सयाइं कम्माइं अवरज्झन्ति (सू० ९) तते णं से भगवतो गोयमस्स तं पुरिसं पासित्ता इमे अज्झत्थिए ५ अहो णं इमे पुरिसे जाव नरयपडिरूविवं वेदणं वेदेतित्तिकट्टु वाणियगामे नयरे

१ 'कंठेगुणरत्तमल्लदामं' कण्ठे—गले गुण इव—कण्ठसूत्रमिव रक्तं—लोहितं मल्लदाम—पुष्पमाला यस्य स तथा तं 'चुन्नगुंडियगायं' गैरिकक्षोदावगुण्डितशरीरं 'चुन्नयं'ति संत्रस्तं 'वज्झपाणपीयं'ति वध्या बाह्या वा प्राणाः—उच्छ्वासादयः प्रतीताः प्रिया यस्य स तथा तं 'तिलंतिलं चेव छिज्जमाणं'ति तिलशश्छिद्यमानमित्यर्थः 'कागणिमंसाइं खावियंतं' काकणीमांसानि तदेहोत्कृत्तह्रस्वमांसखण्डानि खाद्यमानं 'पावं'ति पापिष्टं 'खक्खरसएहिं हम्ममाणं'ति खर्खरा—अधोत्रासनाय चर्ममया वस्तुविशेषाः स्फुटितचंशा वा तैर्हन्यमानं—ताड्यमानम् 'अप्पणो सेसयाइं'ति आत्मनः—आत्मीयानि 'से' तस्य स्वकानि। २ 'अज्झत्थिए' आत्मगतः, इहेदमन्यदपि दृश्यं 'कप्पिए' कल्पितो—भेदवान् कल्पितो वा—उचितः 'चिंतिए' स्मृतिरूपः 'पत्थिए' प्रार्थितो भगवदुत्तरप्रार्थनाविषयः 'मणोगए'त्ति अप्रकाशित इत्यर्थः संकल्पो—विकल्पः 'समुप्पज्जित्था' समुत्पन्नवान् 'अहो णं इमे पुरिसे पुरापोराणाणं दुच्चिण्णाणं दुप्पडिक्कंताणं असुभाणं पावाणं कम्माणं पावगं फलवित्तिविसेसं पच्चणुब्भवमाणे विहरइ, न मे दिट्ठा णरगा वा नेरइया वा पच्चक्खं खलु अयं पुरिसे निरयपडिरूविवं वेयणं वेएइत्तिकट्टु' इत्येतत्प्रथमाध्ययनोक्तं वाक्यमाश्रित्याधिकृताक्षराणि गमनीयानीति।

२ उज्झितकाध्य. उज्झितकस्य पूर्वभवः सू० १०

॥ ४७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उज्झनीयमज्झिमकुले जाव अडमाणे अहापज्जत्तं समुयाणियं गिण्हति २ त्ता वाणियगामे नयरे मज्झंमज्झेणं जाव पडिदंसेति, समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ २ त्ता एवं वयासी—एवं खलु अहं भंते! तुज्झेहिं अब्भणुन्नाए समाणे वाणियगामं जाव तहेव वेदेति, से णं भंते! पुरिसे पुव्वभवे के आसी? जाव पच्चणुब्भवमाणे विहरति ?, एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे २ भारहे वासे हत्थिणाउरे नामं नगरे होत्था रिद्धं०, तत्थ णं हत्थिणाउरे नगरे सुनंदे नामं राया होत्था महया हि०, तत्थ णं हत्थिणाउरे नगरे बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे गोमंडवए होत्था अणेगखंभसयसन्निविट्ठे पासाईए ४, तत्थ णं बहवे नगरगोरूवाणं सणाहा य अणाहा य नगरगाविओ य नगरवसभा य नगरबलिवद्दा य नगरपड्डियाओ य पउरतणपाणिया निब्भया निरुवसग्गा सुहंसुहेणं परिवसंति, तत्थ णं हत्थिणाउरे नगरे भीमे

---

१ 'रिद्धि'त्ति 'रिद्धत्थिमियसमिद्धे' इत्यादि दृश्यं, तत्र ऋद्धं—भवनादिभिर्वृद्धिमुपगतं स्तिमितं—भयवर्जितं समृद्धं—धनादियुक्तमिति । २ 'महया हि'त्ति इह 'महयाहिमवंतमलयमंदरमहिंदसारे' इत्यादि दृश्यं, तत्र महाहिमवदादयः पर्वतास्तद्वत्सारः—प्रधानो यः स तथा, 'पासा' इत्यत्र 'पासाईए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे'त्ति दृश्यं, तत्र प्रासादीयो—मनःप्रसन्नताहेतुः दर्शनीयो—यं पश्यञ्चक्षुर्न श्राम्यति अभिरूपः—अभिमतरूपः प्रतिरूपः—द्रष्टारं द्रष्टारं प्रति रूपं यस्येति । ३ 'नगरबलीवद्दे'त्यादौ बलीवर्दा—वर्द्धितगवाः पड्डिका—ह्रस्वमहिष्यो ह्रस्वगोस्त्रियो वा वृषभाः—साण्डगवः 'कूडगाहे'त्ति कूटेन जीवान् गृह्णातीति कूटग्राहः ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उज्झितकस्य पूर्वभव: -- "गोत्रास"

प्रत सूत्रांक [१०]

दीप अनुक्रम [१३]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

नामं कूडग्गाही होत्था [1]अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे । तस्स णं भीमस्स कूडग्गाहस्स उप्पला नामं भारिया होत्था [2]अहीण०, तते णं सा उप्पला कूडग्गाहिणी अन्नया कयाई [3]आवन्नसत्ता जाया यावि होत्था, तते णं तीसे उप्पलाए कूडगाहिणीए तिण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं अयमेयारूवे दोहले पाउब्भूते—[4]धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ ४ जाव सुलद्धे जम्मजीविए (यफले) जाओ णं बहूणं णगरगोरूवाणं सणाहाण य जाव

---

१ 'अहम्मिए'त्ति धर्म्मेण चरति व्यवहरति वा धार्मिकस्तन्निषेधादधार्मिकः, यावत्करणादिदं दृश्यम्—'अहम्माणुए' अधर्मान्—पापलोकान् अनुगच्छतीत्यधर्म्मानुगः 'अहम्मिट्ठे' अतिशयेनाधर्मो—धर्मरहितोऽधर्म्मिष्ठः 'अहम्मक्खाई' अधर्म्मभाषणशीलः अधार्म्मिकप्रसिद्धिको वा 'अधम्मपलोई' अधर्म्मानेव—परसम्बन्धिदोषानेव प्रलोकयति—प्रेक्षते इत्येवंशीलोऽधर्म्मप्रलोकी 'अहम्मपलज्जणे' अधर्मे एव—हिंसादौ प्ररज्यते—अनुरागवान् भवतीत्यधर्म्मप्ररजनः 'अहम्मसमुदाचारो' अधर्म्मरूपः समुदाचारः—समाचारो यस्य स तथा 'अहम्मेणं चेव वित्तिं कप्पेमाणे'त्ति अधर्मेण—पापकर्म्मणा वृत्तिं—जीविकां कल्पयमानः—कुर्वाणः तच्छील इत्यर्थः 'दुस्सीले' दुष्टशीलः 'दुव्वए' अविद्यमाननियम इति 'दुप्पडियाणंदे' दुष्प्रत्यानन्दः—बहुभिरपि सन्तोषकारणैरनुत्पद्यमानसन्तोष इत्यर्थः । २ 'अहीण'त्ति 'अहीणपुण्णपंचेंदियसरीरे'त्यादि दृश्यम् । ३ 'आवन्नसत्त'त्ति गर्भे समापन्नजीवेत्यर्थः । ४ 'धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ'त्ति अम्बा—जनन्यः, इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'पुन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ कयत्थाओ णं ताओ अम्मयाओ कयलक्खणाओ णं ताओ, तासिं अम्मयाणं सुलद्धे जम्मजीवियफले'त्ति व्यक्तं च ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१०]

दीप अनुक्रम [१३]

वसभाण य ऊहेहि य थणेहि य वसणेहि य छप्पाहि य ककुहेहि य वहेहि य कन्नेहि य अच्छिहि य नासाहि य जिब्भाहि य उट्ठेहि य कंबलेहि य सोल्लेहि य तलिएहि य भज्जिएहि य परिसुक्केहि य लावणेहि य सुरं च मद्दुं च मेरगं च जातिं च सीधुं च पसण्णं च आसाएमाणीओ विसाएमाणीओ परिभुंजेमाणीओ परिभाएमाणीओ दोहलं विणयंति, तं जइ णं अहमवि बहूणं नगर जाव विणिज्जामित्तिकट्टु, तंसि दोहलंसि अविणिज्जमाणंसि सुक्का भुक्खा निम्मंसा ओलुग्गा ओलुग्गसरीरा नित्तेया दीणविमणवयणा पंडुल्लइयमुहा

---

१ 'ऊहेहि य'त्ति गवादीनां स्तनोपरिभागैः 'थणेहि य'त्ति व्यक्तं 'वसणेहि य'त्ति वृषणैः—अण्डैः 'छेप्पाहि य'त्ति पुच्छैः ककुदैः—स्कन्धशिखरैः 'वहेहि य'त्ति वहैः—स्कन्धैः कर्णादीनि व्यक्तानि 'कंबलेहि य'त्ति साक्षाभिः 'सोल्लिएहि य'त्ति पक्वैः 'तलिएहि य'त्ति स्नेहेन पक्वैः 'भज्जिएहि य'त्ति भ्रष्टैः 'परिसुक्केहि य'त्ति स्वतः शोषमुपगतैः 'लावणेहि य'त्ति लवणसंस्कृतैः सुरा—तन्दुलधवादिछल्लीनिष्पन्ना मधु च—माक्षिकनिष्पन्नं मेरकं—तालफलनिष्पन्नं जातिश्च—जातिकुसुमवर्णं मद्यमेव सीधु च—गुडधातकीसंभवं प्रसन्ना—द्राक्षादिद्रव्यजन्या मनःप्रसत्तिहेतुरिति । 'आसाएमाणीओ'त्ति ईषत्स्वादयन्त्यो बहु च त्यजन्त्य इक्षुखण्डादेरिव 'विसाएमाणीओ'त्ति विशेषेण खादयन्त्योऽल्पमेव त्यजन्त्य खर्जूरादेरिव 'परिभाएमाणीओ'त्ति ददत्यः 'परिभुंजमाणीओ'त्ति सर्वमुपभुञ्जानाः अल्पमप्यपरित्यज्यन्त्यः शुष्का—शुष्केव शुष्का रुधिरक्षयात् 'भुक्ख'त्ति भोजनाकरणाद्धीनबलतया बुभुक्षायुक्तेव बुभुक्षा अत एव निर्मांसा 'ओलुग्ग'त्ति अवरुग्णा—भग्नमनोवृत्तिः 'ओलुग्गसरीरा' भग्नदेहा 'णित्तेय'त्ति गतकान्तिः 'दीणविमणवयण'त्ति दीना—दैन्यवती

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१०]

दीप अनुक्रम [१३]

ओमंथियनयणवयणकमला जहोइयं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकाराहारं अपरिभुञ्जमाणी करयलमलियव्व कमलमाला ओहय जाव झियायति। इमं च णं भीमे कूडग्गाहे जेणेव उप्पला कूडग्गाहिणी तेणेव उवागच्छति २ सा ओहय जाव पासति ओहय जाव पासित्ता एवं वयासी—किं णं तुमे देवाणुप्पिए! ओहय झियासि?, तते णं सा उप्पला भारिया भीमं कूड० एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिया! मम तिण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं दोहला पाउब्भूया धन्नाणं ताओ जाओ णं बहूणं गो० ऊह० लावणएहि य सुरं च ४ आसाएमाणी ३ दोहलं विणेंति, तते णं अहं देवाणुप्पिया! तंसि दोहलंसि अविणिज्जमाणंसि जाव झियामि।

विमनाः—शून्यचित्ता हीणा च—भीतेति कर्म्मधारयः, 'दीणविमणवयण'त्ति पाठान्तरं, तत्र विमनस इव—विगतचेतस इव वदनं यस्याः सा तथा, दीना चासौ विमनवदना चेति समासः, 'पंडुलइयमुहा' पाण्डुकितमुखी पाण्डुरीभूतवदनेत्यर्थः 'ओमंथियणयणवयणकमले'ति 'ओमंथिय'त्ति अधोमुखीकृतानि नयनवदनरूपाणि कमलानि यया सा तथा, 'ओहय'त्ति 'ओहयमणसंकप्पा' विगतयुक्तायुक्तविवेचनेत्यर्थः, इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'करतलपल्हत्थमुहा' करतले पर्यस्तं—निवेशितं मुखं यया सा तथा 'अट्टज्झाणोवगया भूमीगयदिट्ठीया झियाइ'त्ति ध्यायति—चिन्तयति।

१ 'इमं च णं'ति इतश्चेत्यर्थः 'भीमे कूडग्गाहे जेणेव उप्पला कूडग्गाही तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता उप्पलं कूडग्गाहिणिं ओहयमाणसंकप्प' इत्यादि सूत्रं प्रागुक्तसूत्रानुसारेण परिपूर्णं कृत्वाऽध्येयं, सूचामात्रत्वात्पुस्तकस्य।

॥ ४९ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ततेणं से भीमे कूडग्गाही उप्पलं भारियं एवं वयासी—मा णं तुमं देवाणुप्पिया! ओह० झियाहि, अहन्नं तं तहा करिस्सामि जहा णं तव दोहलस्स संपत्ती भविस्सति, ताहिं इट्ठाहिं ५ जाव वग्गूहिं सम्मासासेति, ततेणं से भीमे कूडग्गाही अद्धरत्तकालसमयंसि एगे अबीए सन्नद्ध जाव पहरणे सयाओ गिहाओ निग्गच्छइ सयाओ गिहाओ निग्गच्छित्ता हत्थिणाउरे नगरे मज्झंमज्झेणं जेणेव गोमंडवे तेणेव उवागते बहूणं णगरगोरुवाणं जाव वसभाण य अप्पेगइयाणं ऊहे छिंदति जाव अप्पेगतियाणं कंबले छिंदति अप्पेगइयाणं अण्णमण्णाणं अंगोवंगाणं वियंगेति २ जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छति २ उप्पलाए कूडग्गाहिणीए उवणेति, ततेणं सा उप्पला भारिया तेहिं बहूहिं गोमंसेहि य सूलेहि य सुरं च आसाएमाणी तं दोहलं विणेति, ततेणं सा उप्पला कूडग्गाही संपुन्नदोहला संमाणियदोहला विणीयदोहला वोच्छिन्नदोहला संपन्नदोहला तं गब्भं सुहंसुहेणं परिवहइ, ततेणं सा उप्पला कूडग्गाहिणी अन्नया कयाइं नवण्हं मासाणं बहुप-

१ 'ताहिं इट्ठाहिं' इत्यत्र पञ्चकलक्षणादङ्कादिदं दृश्यं—'कंताहिं पियाहिं मणुन्नाहिं मणामाहिं' एकार्थाश्चैते, 'वग्गूहिं'त्ति वाग्भिः 'एगे'त्ति सहायाभावात् 'अबीए'त्ति धर्म्मरूपसहायाभावात्। २ 'सन्नद्धबद्धवम्मियकवए' पूर्ववत् यावत्करणात् 'उप्पीलियसरासणपट्टीए' इत्यादि 'गहियाउहपहरणे' इत्येतदन्तं दृश्यम्। ४ 'संपुन्नदोहल'त्ति समस्तवाञ्छितार्थपूरणात् 'सम्माणियदोहल'त्ति वाञ्छितार्थसमानयनात् 'विणीयदोहल'त्ति वाञ्छाविनयनात् 'विच्छिन्नदोहल'त्ति विवक्षितार्थवाञ्छाऽनुबन्धविच्छेदात् 'संपन्नदोहल'त्ति विवक्षितार्थभोगसंपाद्यानन्दप्राप्तेरिति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

डिपुत्ताणं दारयं पयाया (सू० १०) तते णं तेणं दारए णं जायमेत्तेणं चेव महया महया सद्देणं विघुट्ठे विस्सरे आरसिते, तते णं तस्स दारगस्स आरसियसद्दं सोच्चा निसम्म हत्थिणाउरे नगरे बहवे णगरगोरुवा जाव वसभा य भीया उव्विग्गा सव्वओ समंता विप्पलाइत्था, तते णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो अयमेयारूवं नामधेज्जं करेंति, जम्हा णं अम्हे इमेणं दारएणं जायमेत्तेणं चेव महया महया (चिच्ची) सद्देणं विघुट्ठे विस्सरे आरसिए तते णं एयस्स दारगस्स आरसियं सद्दं सोच्चा निसम्म हत्थिणाउरे बहवे णगरगोरुवा जाव भीया ४ सव्वओ समंता विप्पलाइत्था तम्हा णं होउ अम्हं दारए गोत्तासए नामेणं, तते णं से गोत्तासे दारए उम्मुक्कबालभावे जाते यावि होत्था, तते णं से भीमे कूडग्गाहे अन्नया कयाई कालधम्मुणा संजुत्ते, तते णं से गोत्तासे दारए बहूणं मित्तणाइनियगसयणसंबंधिपरिजणेणं सद्धिं संपरिवुडे रोयमाणे कंदमाणे विलवमाणे भीमस्स कूडग्गाहिस्स नीहरणं करेति नीहरणं करित्ता बहूइं लोइयमयकज्जाइं करेंति, तते णं से सुनंदे

---

१ 'भीया' इत्यत्र 'तत्था तसिया संजायभया' इति दृश्यं, भयोत्कर्षप्रतिपादनपराण्येकार्थिकानि चैतानि । २ 'सव्वओ'त्ति सर्वदिक्षु 'समंत'त्ति विदिक्षु चेत्यर्थः, 'विपलाइत्थ'त्ति विपलायितवन्तीति । ३ 'अयमेयारूवं'ति इदमेवंप्रकारं वक्ष्यमाणस्वरूपमित्यर्थः । ४ 'महया २ चिच्ची'त्ति महता २ चिच्चीत्येवं चित्कारेणेत्यर्थः । ५ 'आरसिय'ति आरसितं—आरटितम् । ६ 'सोच्च'त्ति अवधार्य ।

॥ ५० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [११] दीप अनुक्रम [१४]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

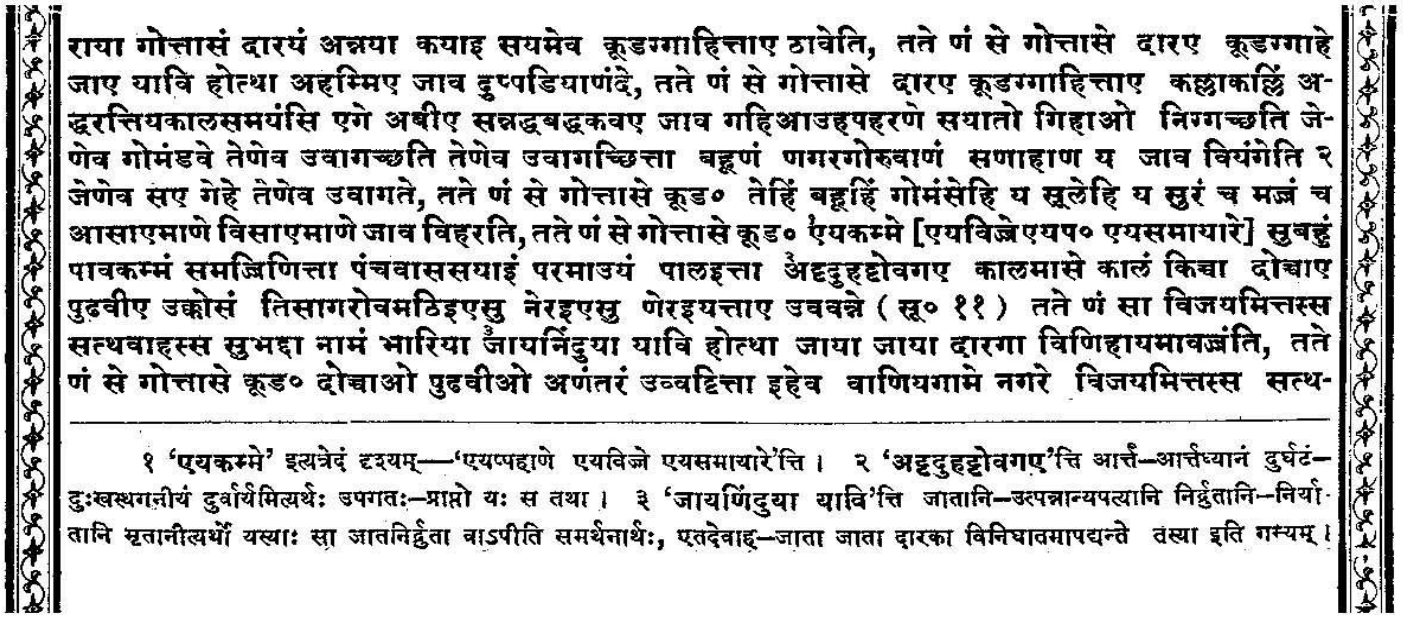

राया गोत्तासं दारयं अन्नया कयाइ सयमेव कूडग्गाहित्ताए ठावेति, तते णं से गोत्तासे दारए कूडग्गाहे जाए यावि होत्था अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे, तते णं से गोत्तासे दारए कूडग्गाहित्ताए कल्लाकल्लिं अद्धरत्तियकालसमयंसि एगे अबीए सन्नद्धबद्धकवए जाव गहिआउहपहरणे सयातो गिहाओ निग्गच्छति जेणेव गोमंडवे तेणेव उवागच्छति तेणेव उवागच्छित्ता बहूणं णगरगोरुवाणं सणाहाण य जाव वियंगेति २ जेणेव सए गेहे तेणेव उवागते, तते णं से गोत्तासे कूड० तेहिं बहूहिं गोमंसेहि य सूलेहि य सुरं च मज्जं च आसाएमाणे विसाएमाणे जाव विहरति, तते णं से गोत्तासे कूड० [१]एयकम्मे [एयविज्जेएयप० एयसमायारे] सुबहुं पावकम्मं समज्जिणित्ता पंचवाससयाइं परमाउयं पालइत्ता [२]अट्टदुहट्टोवगए कालमासे कालं किच्चा दोच्चाए पुढवीए उक्कोसं तिसागरोवमठिइएसु नेरइएसु नेरइयत्ताए उववन्ने (सू० ११) तते णं सा विजयमित्तस्स सत्थवाहस्स सुभद्दा नामं भारिया [३]जायनिंदुया यावि होत्था जाया जाया दारगा विणिहायमावज्जंति, तते णं से गोत्तासे कूड० दोच्चाओ पुढवीओ अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव वाणियगामे नगरे विजयमित्तस्स सत्थ-

---

१ 'एयकम्मे' इत्यत्रेदं दृश्यम्—'एयप्पहाणे एयविज्जे एयसमायारे'त्ति । २ 'अट्टदुहट्टोवगए'त्ति आर्त्त—आर्त्तध्यानं दुर्घटं—दुःखस्थगनीयं दुर्वार्यमित्यर्थः उपगतः—प्राप्तो यः स तथा । ३ 'जायणिंदुया यावि'त्ति जातानि—उत्पन्नान्यपत्यानि निर्द्रुतानि—निर्यातानि मृतानीत्यर्थो यस्याः सा जातनिर्द्रुता वाऽपीति समर्थनार्थः, एतदेवाह—जाता जाता दारका विनिघातमापद्यन्ते तस्या इति गम्यम् ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	उज्झितकस्य आगामि-भवाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१२]

दीप अनुक्रम [१५]

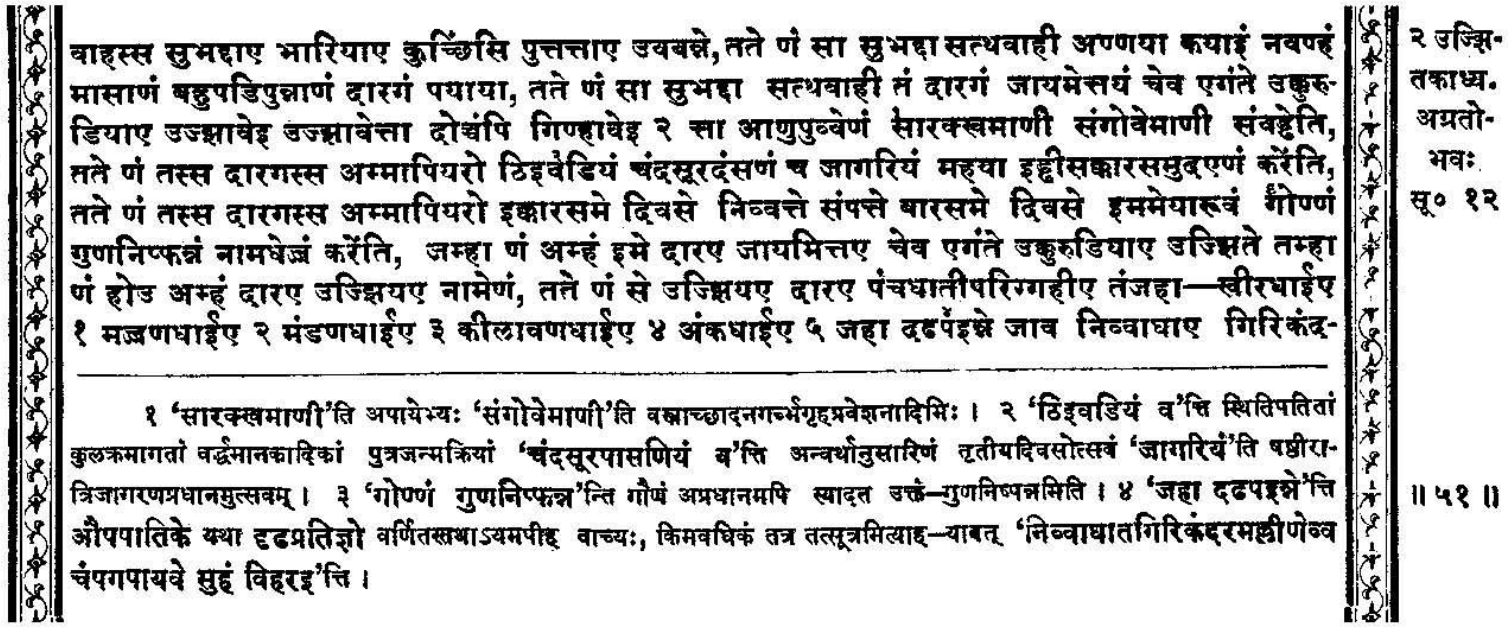

विपाके श्रुत० १ ॥ ५१ ॥

वाहस्स सुभद्दाए भारियाए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववन्ने, तते णं सा सुभद्दा सत्थवाही अण्णया कयाइं नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं दारगं पयाया, तते णं सा सुभद्दा सत्थवाही तं दारगं जायमेत्तयं चेव एगंते उक्कुरुडियाए उज्झावेइ उज्झावेत्ता दोच्चंपि गिण्हावेइ २ सा आणुपुव्वेणं सारक्खमाणी संगोवेमाणी संवड्ढेति, तते णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो ठिइवडियं चंदसूरदंसणं च जागरियं महया इड्ढीसक्कारसमुदएणं करेंति, तते णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो इक्कारसमे दिवसे निव्वत्ते संपत्ते बारसमे दिवसे इममेयारूवं गोण्णं गुणनिप्फन्नं नामधेज्जं करेंति, जम्हा णं अम्हं इमे दारए जायमित्तए चेव एगंते उक्कुरुडियाए उज्झिते तम्हा णं होउ अम्हं दारए उज्झियए नामेणं, तते णं से उज्झियए दारए पंचधातीपरिग्गहीए तंजहा—खीरधाईए १ मज्जणधाईए २ मंडणधाईए ३ कीलावणधाईए ४ अंकधाईए ५ जहा दढपइन्ने जाव निव्वाघाए गिरिकंद-

१ 'सारक्खमाणी'ति अपायेभ्यः 'संगोवेमाणी'ति वस्त्राच्छादनगर्भगृहप्रवेशनादिभिः। २ 'ठिइवडियं व'त्ति स्थितिपतितां कुलक्रमागतां वर्द्धमानकादिकां पुत्रजन्मक्रियां 'चंदसूरपासणियं व'त्ति अन्वर्थानुसारिणं तृतीयदिवसोत्सवं 'जागरियं'ति षष्ठीरात्रिजागरणप्रधानमुत्सवम्। ३ 'गोण्णं गुणनिप्फन्न'न्ति गौणं अप्रधानमपि स्यादत उक्तं—गुणनिष्पन्नमिति। ४ 'जहा दढपइन्ने'त्ति औपपातिके यथा दृढप्रतिज्ञो वर्णितस्तथाऽयमपीह वाच्यः, किमवधिकं तत्र तत्सूत्रमित्याह—यावत् 'निव्वाघातगिरिकंदरमल्लीणेव्व चंपगपायवे सुहं विहरइ'त्ति।

२ उज्झितकाध्य. अग्रतोभवः सू० १२

॥ ५१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१२]

दीप अनुक्रम [१५]

रमल्लीणे व चंपयपायवे सुहंसुहेणं विहरति, तते णं से विजयमित्ते सत्थवाहे अन्नया कयाइं गणिमं च १ धरिमं च २ मेज्जं च ३ पारिच्छेज्जं च ४ चउव्विहं भंडगं गहाय लवणसमुद्दं पोयवहणेणं उवागते, तते णं से विजयमित्ते तत्थ लवणसमुद्दे पोयविवत्तीए निबुड्डभंडसारे अत्ताणे असरणे कालधम्मुणा संजुत्ते, तते णं तं विजयमित्तं सत्थवाहं जे जहा बहवे ईसरतलवरमाडंबियकोडुंबियइब्भसेट्ठिसत्थवाहा लवणसमुद्दे पोयविवत्तीए छूढं निब्बुड्डभंडसारं कालधम्मुणा संजुत्तं सुणेंति ते तहा हत्थनिक्खेवं च बाहिरभंडसारं च गहाय एगंते अवक्कमंति। तते णं सा सुभद्दा सत्थवाही विजयमित्तं सत्थवाहं लवणसमुद्दे पोयविवत्तीए निब्बुड्ड कालधम्मुणा संजुत्तं सुणेति २त्ता महया पइसोएणं अप्फुण्णा समाणी परसुणियत्तावि चंपगलता धसत्ति धरणीतलंसि सव्वंगेण सन्निवडिया, तते णं सा सुभद्दा सत्थवाही मुहुत्तंतरेण आसत्था समाणी बहूहिं

---

१ 'कालधम्मुण'त्ति मरणेन। २ 'लवणसमुद्दपोयविवत्तियं' लवणसमुद्रे पोतविपत्तिर्यस्य स तथा तं, 'निबुड्डभंडसारं' निमग्नसारभाण्डमित्यर्थः, 'कालधम्मुणा संजुत्तं'ति मृतमित्यर्थः, शृण्वन्ति ते तथेति ये यथेत्यतदपेक्ष्यं। ३ 'हत्थनिक्खेवं'ति हस्ते निक्षेपो—न्यासः समर्पणं यस्य द्रव्यस्य तद्धस्तनिक्षेपं, 'बाहिरभंडसारं च' हस्तनिक्षेपव्यतिरिक्तं च भाण्डसारं—सारभाण्डं गृहीत्वा एकान्तदूरमपक्रामन्ति—विजयमित्रसार्थवाहभार्यायास्तत्पुत्रस्य च दर्शनं ददति—तदर्थमपहरन्तीतियावत्। ४ 'परसुणियत्ता इव'त्ति परशुनिकृत्तेव—कुठारच्छिन्नेव 'चम्पकलते'ति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मित्तं जाव परिवुडा रोयमाणी कंदमाणी विलवमाणी विजयमित्तसत्थवाहस्स लोइयाइं मयकिच्चाइं करेति, तते णं सा सुभद्दा सत्थवाही अन्नया कयाइं लवणसमुद्दोत्तरणं च लच्छिविणासं च पोयविणासं च पतिमरणं च अणुचिंतेमाणी २ कालधम्मुणा संजुत्ता (सू० १२) तते णं ते णगरगुत्तिया सुभद्दं सत्थवाहं कालगयं जाणित्ता उज्झियगं दारगं सयाओ गिहाओ निच्छुभंति निच्छुभित्ता तं गिहं अन्नस्स दलयंति, तते णं से उज्झियए दारए सयाओ गिहाओ निच्छूढे समाणे वाणियगामे णगरे सिंघाडग जाव पहेसु जूयखलएसु वेसियाघरेसु पाणागारेसु य सुहंसुहेणं परिवहति, तते णं से उज्झियए दारए अणोहट्टिए अणिवारिए सच्छंदमती सइरप्पयारे मज्जप्पसंगी चोरजूयवेसदारप्पसंगी जाते यावि होत्था, तते णं से उज्झियते अन्नया कयाइं कामज्झयाए गणियाए सद्धिं संपलग्गे जाते यावि होत्था, कामज्झयाए गणियाए सद्धिं विउलाइं उरा-

१ 'मित्त' इत्यत्र यावत्करणादिदं दृश्यं—'णाइणियगसंबंधि'त्ति, तत्र मित्राणि—सुहृदः ज्ञातयः—समानजातयः निजकाः—पितृव्यादयः सम्बन्धिनः—श्वशुरपाक्षिकाः, 'रोयमाणी'त्ति अश्रूणि मुञ्चन्ती 'कंदमाणी'ति आक्रन्दं महाध्वनिं कुर्वाणा 'विलवमाणी'त्ति आर्त्तस्वरं कुर्वन्ती। २ 'अणोहट्टए'त्ति यो बलाद्धस्तादौ गृहीत्वा प्रवर्त्तमानं निवारयति सोऽपघट्टकस्तद्भावादनपघट्टकः, 'अणिवारिए'त्ति निषेधकरहितः, अत एव 'सच्छंदमइ'त्ति स्वच्छन्दा स्ववशेन वा मतिरस्य स्वच्छन्दमतिः, अत एव 'सइरप्पयारे' स्वैरं—अनिवारिततया प्रचारो यस्य स तथा 'वेसदारपसंगी'ति वेश्याप्रसङ्गी कलत्रप्रसङ्गी चेत्यर्थः, अथवा वेश्यारूपा ये दारास्तत्प्रसङ्गीति।

॥ ५२ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

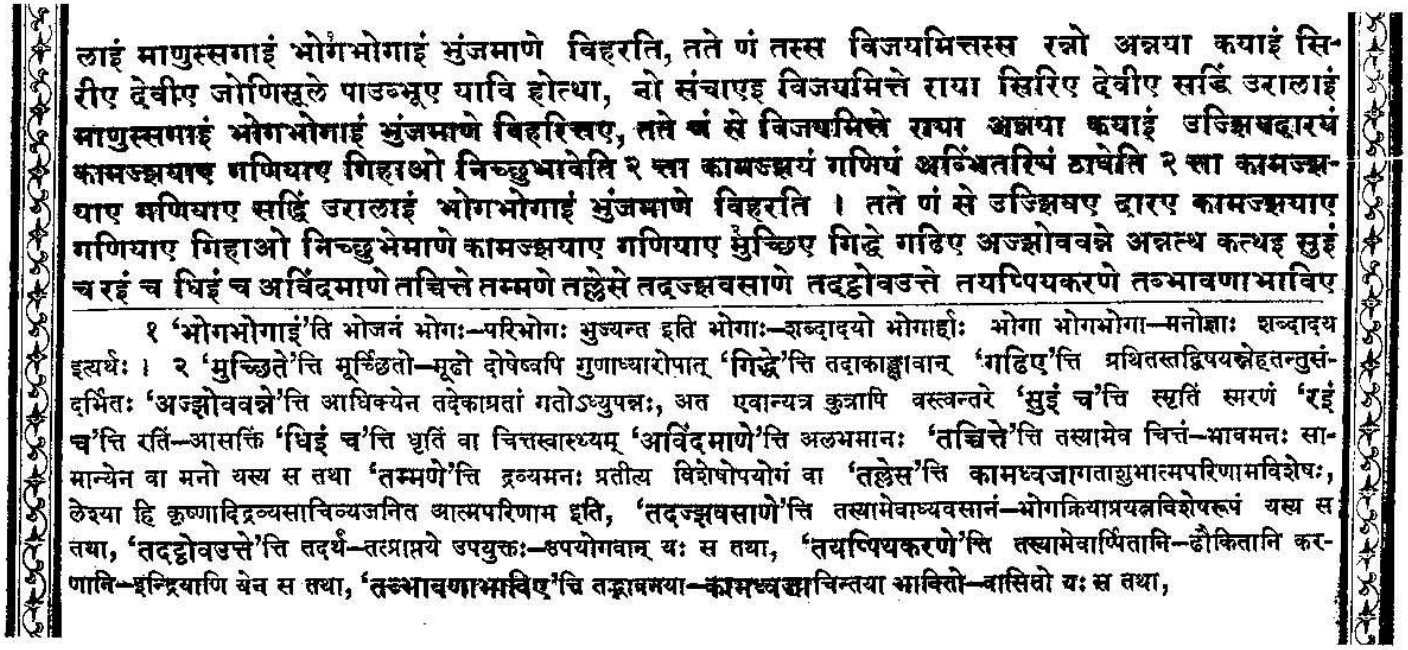

लाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरति, तते णं तस्स विजयमित्तस्स रन्नो अन्नया कयाइं सिरीए देवीए जोणिसूले पाउब्भूए यावि होत्था, नो संचाएइ विजयमित्ते राया सिरिए देवीए सद्धिं उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरित्तए, तते णं से विजयमित्ते रन्ना अन्नया कयाइं उज्झियद्दारयं कामज्झयाए गणियाए गिहाओ निच्छुभावेति २ त्ता कामज्झयं गणियं अब्भिंतरियं ठावेति २ त्ता कामज्झयाए गणियाए सद्धिं उरालाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरति । तते णं से उज्झियए दारए कामज्झयाए गणियाए गिहाओ निच्छुभेमाणे कामज्झयाए गणियाए मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झोववन्ने अन्नत्थ कत्थइ सुइं च रइं च धिइं च अविंदमाणे तच्चित्ते तम्मणे तल्लेसे तदज्झवसाणे तदट्ठोवउत्ते तयप्पियकरणे तब्भावणाभाविए

१ 'भोगभोगाइं'ति भोजनं भोगः–परिभोगः भुज्यन्त इति भोगाः–शब्दादयो भोगार्हाः भोगा भोगभोगा–मनोज्ञाः शब्दादय इत्यर्थः । २ 'मुच्छिते'त्ति मूर्च्छितो–मूढो दोषेष्वपि गुणाध्यारोपात् 'गिद्धे'त्ति तदाकाङ्क्षावान् 'गढिए'त्ति ग्रथितस्तद्विषयस्नेहतन्तुसंदर्भितः 'अज्झोववन्ने'त्ति आधिक्येन तदेकाग्रतां गतोऽध्युपन्नः, अत एवान्यत्र कुत्रापि वस्त्वन्तरे 'सुइं च'त्ति स्मृतिं स्मरणं 'रइं च'त्ति रतिं–आसक्तिं 'धिइं च'त्ति धृतिं वा चित्तस्वास्थ्यम् 'अविंदमाणे'त्ति अलभमानः 'तच्चित्ते'त्ति तस्यामेव चित्तं–भावमनः सामान्येन वा मनो यस्य स तथा 'तम्मणे'त्ति द्रव्यमनः प्रतीत्य विशेषोपयोगं वा 'तल्लेस'त्ति कामध्वजागताशुभात्मपरिणामविशेषः, लेश्या हि कृष्णादिद्रव्यसाचिव्यजनित आत्मपरिणाम इति, 'तदज्झवसाणे'त्ति तस्यामेवाध्यवसानं–भोगक्रियाप्रयत्नविशेषरूपं यस्य स तथा, 'तदट्ठोवउत्ते'त्ति तदर्थं–तत्प्राप्तये उपयुक्तः–उपयोगवान् यः स तथा, 'तयप्पियकरणे'त्ति तस्यामेवार्पितानि–ढौकितानि करणानि–इन्द्रियाणि येन स तथा, 'तब्भावणाभाविए'त्ति तद्भावनया–कामध्वजाचिन्तया भावितो–वासितो यः स तथा,

अनु. ११

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१३]

दीप अनुक्रम [१६]

कामज्झयाए गणियाए बहूणि अंतराणि य छिद्दाणि य विवराणि य पडिजागरमाणे २ विहरति, तते णं से उज्झियए दारए अन्नया कयाइं कामज्झयं गणियं अंतरं लब्भेति, कामज्झयाए गणियाए गिहं रहसियं अणुप्पविसइ २ त्ता कामज्झयाए गणियाए सद्धिं उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरति। इमं च णं मित्ते राया ण्हाते जाव पायच्छित्ते सव्वालंकारविभूसिए मणुस्सवागुरापरिक्खित्ते जेणेव कामज्झयाए गिहे तेणेव उवागच्छति २ त्ता तत्थ णं उज्झियए दारए कामज्झयाए गणियाए सद्धिं उरालाइं भोगभोगाइं जाव विहरमाणं पासति २ त्ता आसुरुत्ते तिवलियभिउडिं निडाले साहट्टु उज्झिययं दारयं पुरिसेहिं गिण्हावेइ

१ कामध्वजाया गणिकाया बहून्यन्तराणि च—राजगमनस्यान्तराणि 'छिद्दाणि य'त्ति छिद्राणि राजपरिवारविरलत्वानि 'विवराणि य'त्ति शेषजनविरहान् 'पडिजागरमाणे'त्ति गवेषयन्निति। २ 'इमं च णं'त्ति इतश्चेत्यर्थः। ३ 'ण्हाए' इत्यत्र यावत्करणादिदं दृश्यं 'कयबलिकम्मे' देवतानां विहितबलिविधानः 'कयकोउयमंगलपायच्छित्ते'त्ति कृतानि—विहितानि कौतुकानि च—मषीपुण्ड्रादीनि मङ्गलानि च—सिद्धार्थकदध्यक्षतादीनि प्रायश्चित्तानीव दुःखप्रादिप्रतिघातहेतुत्वेनावश्यंकरणीयत्वाद्येन स तथा। ४ 'मणुस्सवग्गुरापरिक्खित्ते'त्ति मनुष्या वागुरेव—मृगबन्धनमिव सर्वतो भवनात् तया परिक्षिप्तो यः स तथा। ५ 'आसुरुत्ते'त्ति आशु—शीघ्रं रुष्टः—क्रोधेन विमोहितो यः स आशुरुष्टः आसुरं वा—असुरसत्कं कोपेन दारुणत्वादुक्तं—भणितं यस्य स आसुरोक्तः रुष्टः—रोषवान् 'कुविए'त्ति मनसा कोपवान् 'चंडिक्किए'त्ति चाण्डिक्यितो—दारुणीभूतः 'मिसिमिसीमाणे'त्ति क्रोधज्वालया ज्वलन् 'तिवलियभिउडिं णिडाले साहट्टु'त्ति त्रिवलीकां भृकुटिं लोचनविकारविशेषं ललाटे संहृत्य—विधायेति 'अवउडगबंधणं' अवकोटनेन च—ग्रीवायाः पश्चाद्भागनयनेन बन्धनं यस्य स तथा तं।

॥ ५३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१३]

दीप अनुक्रम [१६]

२ त्ता अट्ठिमुट्ठिजाणुकोप्परपहारसंभग्गमहितगत्तं करेति करेत्ता अवउडगबंधणं करेति २ त्ता एएणं विहाणेणं वज्झं आणावेति, एवं खलु गोयमा! उज्झियते दारए पुरापोराणाणं[1] कम्माणं जाव पच्चणुब्भवमाणे विहरति। (सू० १३) उज्झियए णं भंते! दारए इओ कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिति? कहिं उववज्जिहिति?, गोतमा! उज्झियते दारए पणवीसं वासाइं परमाउयं पालइत्ता अज्जेव तिभागावसेसे दिवसे सूलीभिन्ने कए समाणे कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए णेरइयत्ताए उववज्जिहिति, से णं ततो अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे वेयड्ढगिरिपायमूले वानरकुलंसि वाणरत्ताए उववज्जिहिति, से णं तत्थ उम्मुक्कबालभावे तिरियभोगेसु मुच्छिते गिद्धे गढिते अज्झोववन्ने जाते जाते वानरपेल्लए[2] वहेइ तं एयकम्मे[3] [एयप्पहाणे एयविज्जे एयसमुदायारे] कालमासे कालं किच्चा इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे इंदपुरे णगरे गणियाकुलंसि पुत्तत्ताए पच्चायाहिति, तते णं तं दारयं अम्मापियरो जायमित्तकं वद्धेहिंति[4] नपुंसगकम्मं सिक्खावेहिंति, तते णं तस्स दारयस्स अम्मापियरो णिव्वत्तबारसाहस्स इमं एयारूवं णामधेज्जं करेंति तं०—होऊ णं पियसेणे णामं णपुंसए, तते णं से पियसेणे णपुंसए उम्मुक्कबालभावे

१ 'पुरापोराणाणं' इत्यत्र यावत्करणात् 'दुच्चिन्नाणं दुप्पडिक्कंताणं' इत्यादि दृश्यम्। २ 'वानरपेल्लए'त्ति वानरडिम्भान्। ३ 'तं एयकम्मे'त्ति तदिति—तस्मात् एतत्कर्मा, इहेदमपरं दृश्यम्—'एयप्पहाणे एयविज्जे एयसमुदायारे'त्ति। ४ 'वद्धेहिंति'त्ति वर्द्धितकं करिष्यतः।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जोव्वणगमणुप्पत्ते विण्णयपरिणयमित्ते रूवेण य जोव्वणेण य लावण्णेण य [1]उक्किट्ठे उक्किट्ठसरीरे भविस्सइ, तते णं से पियसेणे णपुंसए इंदपुरे णगरे बहवे राईसर जाव पभिइओ बहूहि य विज्जापओगेहि य मंतचुण्णेहि य [2]हिययउड्डावणाहि य निण्हवणेहि य पण्हवणेहि य वसीकरणेहि य आभिओगिएहि य अभिओगित्ता उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरिस्सति, तते णं से पियसेणे णपुंसए एयकम्मे० सुबहुं पावकम्मं समज्जिणित्ता एक्कवीसं वाससयं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए णेरइयत्ताए उववज्जिहिति, ततो सिरिसिवेसु सुंसुमारे तहेव जहा पढमो जाव पुढवि० से णं तओ

---

१ 'उक्किट्ठे'त्ति उत्कर्षवान्, किमुक्तं भवति?—'उक्किट्ठसरीरे'त्ति । २ विद्यामन्त्रचूर्णप्रयोगैः, किंविधैः? इत्याह—'हिययुड्डावणेहि य'त्ति हृदयोड्डापनैः—शून्यचित्ततांकारकैः 'निण्हवणेहि य'त्ति अदृश्यताकारकैः, किमुक्तं भवति?—अपहृतधनादिरपि परो धनापहारादिकं वैरपहुते—न प्रकाशयति तदपह्नवता अतस्तैः 'पण्हवणेहि य'त्ति प्रस्रवनैः यैः परः प्रस्रुतिं भजते प्रह्वो भवतीत्यर्थः 'वसीकरणेहि य'त्ति वश्यताकारकैः, किमुक्तं भवति?—'आभिओगिएहिं'ति अभियोगः—पारवश्यं स प्रयोजनं येषां ते आभियोगिकाः अतस्तैः, अभियोगश्च द्वेधा, यदाह—"दुविहो खलु अभिओगो दव्वे भावे य होइ नायव्वो । दव्वंमि होंति जोगा विज्जा मंता य भावंमि ॥ १ ॥" [द्विविधः खल्वभियोगो द्रव्ये भावे च भवति ज्ञातव्यः । द्रव्ये भवन्ति योगाः विद्या मन्त्राश्च भावे ॥ १ ॥] 'अभितोगित्त'त्ति वशीकृत्य ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१४] दीप अनुक्रम [१७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

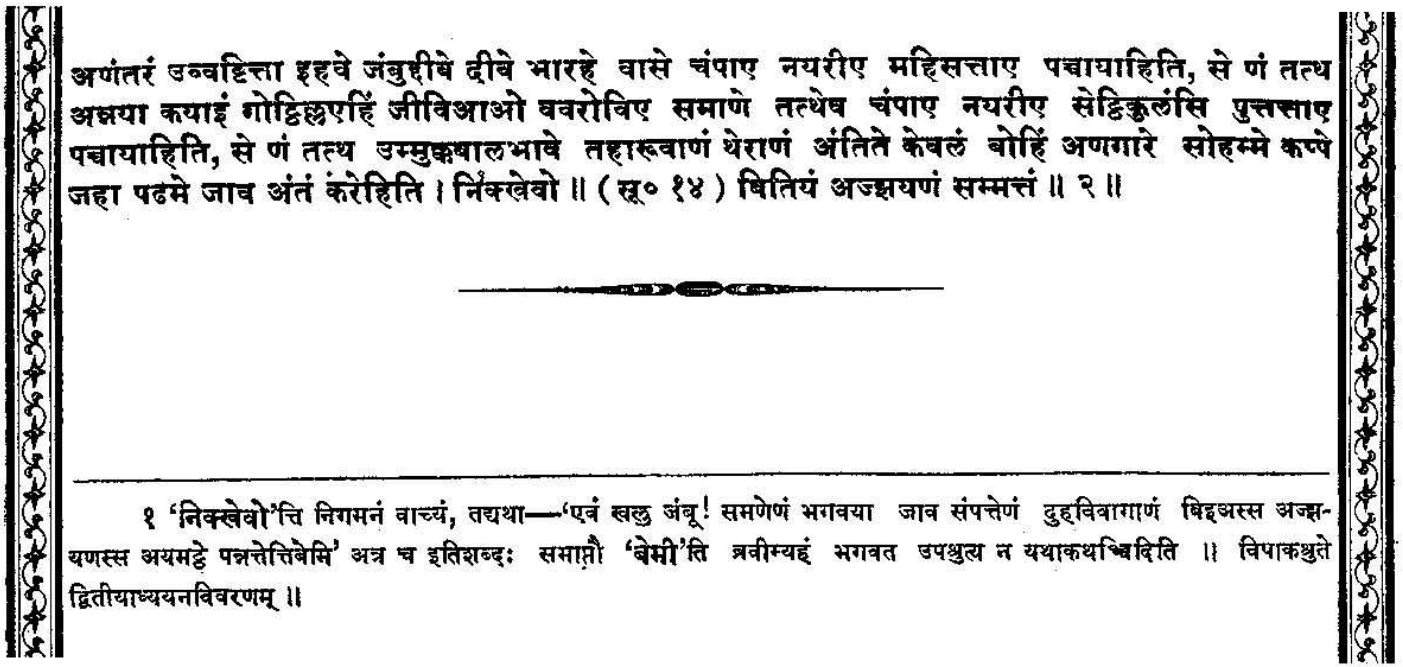

अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे चंपाए नयरीए महिसत्ताए पच्चायाहिति, से णं तत्थ अन्नया कयाइं गोट्ठिल्लएहिं जीविआओ ववरोविए समाणे तत्थेव चंपाए नयरीए सेट्ठिकुलंसि पुत्तत्ताए पच्चायाहिति, से णं तत्थ उम्मुक्कबालभावे तहारूवाणं थेराणं अंतिते केवलं बोहिं अणगारे सोहम्मे कप्पे जहा पढमे जाव अंतं करेहिति । निक्खेवो ॥ (सू० १४) बितियं अज्झयणं सम्मत्तं ॥ २ ॥

१ 'निक्खेवो'त्ति निगमनं वाच्यं, तद्यथा—'एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं दुहविवागाणं बिइअस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्तेत्तिबेमि' अत्र च इतिशब्दः समाप्तौ 'बेमी'ति ब्रवीम्यहं भगवत उपश्रुत्य न यथाकथञ्चिदिति ॥ विपाकश्रुते द्वितीयाध्ययनविवरणम् ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	उज्झितकस्य सिद्धिगमनं

अत्र द्वितीयं अध्ययनं परिसमाप्तं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१५]

दीप अनुक्रम [१८]

अथ तृतीयमभग्नसेनाध्ययनम् ।

अथ तृतीये किञ्चिल्लिख्यते—

तच्चस्स उक्खेवो—एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं पुरिमताले णामं णगरे होत्था, रिद्ध०, तस्स णं पुरिमतालस्स णगरस्स उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए एत्थ णं अमोहदंसणे उज्जाणे तत्थ णं अमोहदंसिस्स जक्खस्स जक्खाययणे होत्था, तत्थ णं पुरिमताले महब्बले नामं राया होत्था, तत्थ णं पुरिमतालस्स नगरस्स उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए देसप्पंते अडवी संठिया, एत्थ णं सालानामं अडवी चोरपल्ली होत्था विसमगिरिकंदरकोलंबसण्णिविट्ठा वंसीकलंकपागारपरिक्खित्ता छिण्णसेलविसमप्पवायफरिहोवगूढा

१ 'तच्चस्स उक्खेवो'त्ति तृतीयाध्ययनस्योत्क्षेपः—प्रस्तावना वाच्या, सा चैवं—'जइ णं भंते! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं दुहविवागाणं दोच्चस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते तच्चस्स णं भंते! के अट्ठे पन्नत्ते।' 'एवं खलु'त्ति 'एवं'वक्ष्यमाणप्रकारेणार्थः प्रज्ञप्तः 'खलु' वाक्यालङ्कारे 'जंबु'त्ति आमन्त्रणं। २ 'देसप्पंते'त्ति मण्डलप्रान्ते। ३ 'विसमगिरिकंदरकोलंबसन्निविट्ठा' विषमं यद्गिरेः कन्दरं—कुहरं तस्य यः कोलम्बः—प्रान्तस्तत्र सन्निविष्टः—सन्निवेशिता या सा तथा, कोलंबो हि लोके अवनतं वृक्षशाखाप्रमुच्यते इहोपचारतः कन्दरप्रान्तः कोलम्बो व्याख्यातः, 'वंसीकलंकपागारपरिक्खित्ता' वंशीकलङ्का—वंशीजालीमयी वृत्तिः सैवप्राकारस्तेन परिक्षिप्ता—वेष्टिता या सा तथा, 'छिन्नसेलविसमप्पवायफरिहोवगूढा' छिन्नो—विभक्तोऽवयवान्तरापेक्षया यः शैलस्तस्य सम्बन्धिनो ये विषमाः प्रपाताः—गर्त्तास्त एव परिखा तयोपगूढा—वेष्टिता या सा तथा,

॥ ५५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ तृतीयं अध्ययनं "अभग्नसेन" आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [१५]

दीप अनुक्रम [१८]

अब्भिंतरपाणीया सुदुल्लभजलपेरंता अणेगखंडीविदितजणदिन्ननिग्गमपवेसा सुबहुयस्सवि कुवियस्स जणस्स दुप्पहंसा यावि होत्था, तत्थ णं सालाडवीए चोरपल्लीए विजए णामं चोरसेणावई परिवसति अहम्मिए जाव (हणछिन्नभिन्नवियत्तए) लोहियपाणी बहुणगरणिग्गयजसे सूरे दढप्पहारे साहसिए सद्दवेही परिवसइ अह-

१ 'अब्भिंतरपाणीये'ति व्यक्तं, 'सुदुल्लभजलपेरंता' सुष्ठु दुर्लभं जलं पर्यन्तेषु यस्याः सा तथा, 'अणेगखंडी' अनेकाऽश्यतां नराणां मार्गभूताः खण्डयः—अपद्वाराणि यस्यां साऽनेकखण्डीति 'विदियजणदिन्ननिग्गमप्पवेसा' विदितानामेव—प्रत्यभिज्ञातानां जनानां दत्तो निर्गमः प्रवेशश्च यस्यां सा तथा, 'सुबहुस्सवि' सुबहोरपि 'कुवियजणस्सवि' मोषव्यावर्त्तकलोकस्य दुष्प्रध्वस्या चाप्यभवत्, २ 'अहम्मिए'त्ति अधर्म्मेण चरतीत्याधर्म्मिकः, यावत्करणात् 'अधम्मिट्ठे' अतिशयेन निर्द्धर्म्मः अधर्म्मिष्ठो निस्तृंशकर्म्मकारित्वात् 'अधम्मक्खाई' अधर्म्ममाख्यातुं शीलं यस्य स तथा 'अधम्माणुए' अधर्म्मकर्त्तव्यम् अनुज्ञा—अनुमोदनं यस्यासावधर्मानुज्ञः अधर्मानुगो वा 'अधम्मप्पलोयई' अधर्म्ममेव प्रलोकयितुं शीलं यस्यासावधर्म्मप्रलोकी 'अधम्मपलज्जणे' अधर्म्मप्रायेषु कर्म्मसु प्रकर्षेण रज्यते इति अधर्म्मप्ररजनः, रलयोरैक्यमिति कृत्वा रस्य स्थाने लकारः, 'अधम्मसीलसमुदायारे' अधर्म्म एव शीलं—स्वभावः समुदाचारश्च—यत्किञ्चनानुष्ठानं यस्य स. तथा 'अधम्मेणं चेव वित्तिं कप्पेमाणे विहरइ' अधर्म्मेण—पापेन सावद्यानुष्ठानेनैव दहनाङ्कननिर्लोञ्छनादिना कर्म्मणा 'वृत्तिं' वर्त्तनं 'कल्पयन्' कुर्वाणो 'विहरती'ति आस्ते स्म, 'हणछिंदभिंदवियत्तए' 'हन' विनाशय 'छिन्धि' द्विधा कुरु 'भिन्द' कुन्तादिना भेदं विधेहीत्येवं परानपि प्रेरयन् प्राणिनो विकृन्ततीति हनछिंदभिन्दविकर्त्तकः, हनेत्यादयः शब्दाः संस्कृतेऽपि न विरुद्धाः अनुकरणरूपत्वादेषां, 'लोहियपाणी' प्राणिविकर्त्तनेन लोहितौ रक्तरक्ततया पाणी—हस्तौ यस्य स तथा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

म्मिए० असिलट्ठिपढममल्ले, से णं तत्थ सालाडवीए चोरपल्लीए पंचण्हं चोरसताणं आहेवच्चं जाव विहरति (सू० १५) तते णं से विजए चोरसेणावई बहूणं चोराण य पारदारियाण य [१]गंठिभेयाण य संधिच्छेयाण य खंडपट्टाण य अन्नेसिं च बहूणं छिन्नभिन्नबाहिराहियाणं कुडंगे यावि होत्था, तते णं से विजए चोरसेणावई पुरिमतालस्स णगरस्स उत्तरपुरच्छिमिल्लं जणवयं बहूहिं गामघातेहि य नगरघातेहि य गोग्गहणेहि य

'बहुणगरणिग्गयजसे' बहुषु नगरेषु निर्गतं–विश्रुतं यशो यस्य स तथा, इतो विशेषणचतुष्कं व्यक्तम्, 'असिलट्ठिपढममल्ले' असियष्टिः–खड्गलता तस्यां प्रथमः–आद्यः प्रधान इत्यर्थः मल्लो–योद्धा यः स तथा, 'आहेवच्चं'ति अधिपतिकर्म्म यावत्करणात् 'पोरेवच्चं सामित्तं भट्टित्तं महत्तरगत्तं आणाईसरसेणावच्चं'ति दृश्यं, व्याख्या च पूर्ववत्।

१ 'गंठिभेयगाण ये'ति घुर्घुरादिना ये ग्रन्थीः छिन्दन्ति ते ग्रन्थिभेदकाः 'संधिच्छेयगाण ये'ति ये भित्तिसन्धीन् भिन्दन्ति ते सन्धिच्छेदकाः 'खंडपट्टाण य'त्ति खण्डः–अपरिपूर्णः पट्टः–परिधानपट्टो येषां मद्यद्यूतादिव्यसनाभिभूततया परिपूर्णपरिधानाप्राप्तेः ते खण्डपट्टाः–द्यूतकारादयः, अन्यायव्यवहारिण इत्यन्ये, धूर्त्ता इत्यपरे, 'खंडपाडियाण'मिति क्वचिदिति, 'छिन्नभिण्णबाहिराहियाणं'ति छिन्ना हस्तादिषु भिन्ना नासिकादिषु 'बाहिराहिय'त्ति नगरादेर्बाह्यकृताः, अथवा 'बाहिर'त्ति बाह्याः स्वाचारपरिभ्रंशाद्विशिष्टजनबहिर्वर्त्तिनः 'अहिय'त्ति अहिता ग्रामादिदाहकत्वाद् अतो द्वन्द्वस्ततस्तेषां 'कुडंगं' वंशादिगहनं तद्वद्यो दुर्गमत्वेन रक्षार्थमाश्रयणीयत्वसाधर्म्यात्स तथा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बंदिग्गहणेहि य पंथकोट्टेहि य खत्तखणणेहि य [1]उवीलेमाणे २ विद्धंसेमाणे तज्जेमाणे तालेमाणे नित्थाणे निद्धणे निक्कणे कप्पायं करेमाणे विहरति, महब्बलस्स रन्नो अभिक्खणं २ कप्पायं गेण्हति, तस्स णं विजयस्स चोरसेणावइस्स खंदसिरिनामं भारिया होत्था [2]अहीण०, तस्स णं विजयचोरसेणावइस्स पुत्ते खंदसिरीए भारियाए अत्तए अभग्गसेणे णामं दारए होत्था अहीणपुन्नपंचेंदियसरीरे विण्णायपरिणयमित्ते जोव्वणगमणुपत्ते। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे पुरिमताले नयरे समोसढे परिसा निग्गया राया निग्गओ धम्मो कहिओ परिसा राया य पडिगओ, तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी गोयमे जाव रायमग्गं समोगाढे, तत्थ णं बहवे हत्थी पासंति बहवे आसे पुरिसे सन्नद्धबद्धकवए तेसिं णं पुरिसाणं मज्झगयं एगं पुरिसं पासंति [3]अवउडय जाव उग्घोसेज्जमाणं, तते णं तं

---

१ 'उवीलेमाणे'त्ति उपपीडयन् 'विहम्मेमाणे'त्ति विधर्म्मयन्—विगतधर्म्मं कुर्वन्, अर्थापहारे हि दानादिधर्म्माभावः स्यादेवेति, 'तज्जमाणे'त्ति तर्जयन् ज्ञास्यसि रे इत्यादि भणनतः 'तालेमाणे'त्ति ताडयन् कषादिघातैः 'णिच्छाणे'त्ति प्राकृतत्वात् निःस्थानं—स्थानवर्जितं 'निद्धणे' निर्द्धनं गोमहिष्यादिरहितं कुर्वन्निति, कल्पः—उचितो य आयः—प्रजातो द्रव्यलाभः स कल्पायोऽतस्तम्। २ 'अहीण' इत्यत्र 'अहीणपुन्नपंचेंदियसरीरा लक्खणवंजणगुणोववेए'त्यादि द्रष्टव्यम्। ३ 'अवउडय' इत्यत्र यावत्करणात् 'अवउडगबंधणबद्धं उक्खत्तकन्ननासं नेहुत्तुप्पियगत्तं' इत्यादि द्रष्टव्यं व्याख्या च प्राग्वदिति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विपाके श्रुत० १ ॥ ५७ ॥

पुरिसं रायपुरिसा पढमंमि चच्चरंसि निसियावेंति निसियावेत्ता अट्ठ चुल्लप्पियए अग्गओ घाएंति अग्गओ घाएत्ता कसप्पहारेहिं तालेमाणा २ कलुणं काकणिमंसाइं खावेंति खावेत्ता रुहिरपाणीयं च पायंति तदाणंतरं च णं दोच्चंसि चच्चरंसि अट्ठ चुल्लमाउयाओ अग्गओ घायंति एवं तच्चे चच्चरे अट्ठ महापिउए चउत्थे अट्ठ महामाउयाओ पंचमे पुत्ते छट्ठे सुण्हा सत्तमे जामाउया अट्ठमे धूयाओ णवमे णत्तुया दसमे णत्तुईओ एक्कारसमे णत्तुयावई बारसमे णत्तुइणीओ तेरसमे पिउस्सियपतिया चोद्दसमे पिउसियाओ पण्णरसमे

१ 'पढमंमि चच्चरंसि' प्रथमे चत्वरे–स्थानविशेषे 'निसियावेंति'त्ति निवेशयन्ति, 'अट्ठ चुल्लपिउए'त्ति अष्टौ लघुपितॄन्–पितुर्लघुभ्रातॄन् इत्यर्थः । २ 'कलुणं'ति करुणं–करुणास्पदं तं पुरुषं, क्रियाविशेषणं चेदं, 'काकणिमंसाइं'ति मांसश्लक्ष्णखण्डानि । ३ 'दोच्चंसि चच्चरंसि'त्ति द्वितीये चत्वरे 'चुल्लमाउयातो'त्ति पितृलघुभ्रातृजायाः अथवा मातुर्लघुसपत्नीः । ४ 'एवं तच्च'त्ति तृतीये चत्वरे 'अट्ठ महापिउए'त्ति अष्टौ महापितॄन्–पितुर्ज्येष्ठभ्रातॄन्, एवं यावत्करणात् 'अग्गओ घायेंती'ति वाच्यम्, 'चउत्थे'त्ति चतुर्थे चत्वरे 'अट्ठ महामाउयाओ'त्ति पितुर्ज्येष्ठभ्रातृजायाः, अथवा मातुर्ज्येष्ठाः सपत्नीः, पञ्चमे चत्वरे पुत्रानप्रतो घातयन्ति, षष्ठे 'स्नुषाः' वधूः सप्तमे 'जामातृकान्' दुहितुर्भर्तॄन् अष्टमे 'धूयाओ'त्ति दुहितॄः नवमे 'नत्तुए'त्ति नप्तॄन्–पौत्रान् दौहित्रान् वा दशमे 'नत्तुईओ'त्ति नप्तॄः–पौत्रीर्दौहित्रीर्वा एकादशे 'नत्तुयावइ'त्ति नप्तृकापतीन् द्वादशे 'नत्तुइणीओ'त्ति नप्तृकिनीः पौत्रदौहित्रभार्याः, त्रयोदशे 'पिउसियपइय'त्ति पितृष्वसापतिकान् तत्र पितुः स्वसारो–भगिन्यस्तासां पतय एव पतिका–भर्तारः 'चउद्दसे पिउसियाओ'त्ति पितृष्वसॄः–जनकभगिनीः पञ्चदशे

३ अभग्नसेनाध्य. अभग्नसेनस्यापराधः फलं च सू० १६

॥ ५७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१६]

दीप अनुक्रम [१९]

मासियापतिया सोलसमे माउस्सियाओ सत्तरसमे मासियाओ अट्ठारसमे अवसेसं मित्तनाइनियगसयणसंबंधिपरियणं अग्गओ घातेंति २ त्ता कसप्पहारेहिं तालेमाणे २ कलुणं काकणिमंसाइं खावेंति रुहिरपाणीयं च पाएंति। (सू० १६) तते णं से भगवं गोयमे तं पुरिसं पासेइ २ त्ता इमे एयारूवे अज्झत्थिए पत्थिए समुप्पन्ने जाव तहेव निग्गते एवं वयासि—एवं खलु अहन्नं भंते! तं चेव जाव से णं भंते! पुरिसे पुव्वभवे के आसी? जाव विहरति, एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे पुरिमताले नाम नगरे होत्था रिद्ध०, तत्थ णं पुरिमताले नगरे उदिओदिए नामं राया होत्था महया०, तत्थ णं पुरिमताले निन्नए नामं अंडयवाणियए होत्था अड्ढे जाव अपरिभूते अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे, तस्स णं णिण्णयस्स अंडयवाणियगस्स बहवे पुरिसा दिण्णभतिभत्तवेयणा कल्लाकल्लिं कोद्दालियाओ य

१ 'माउसियापइय'त्ति मातृष्वसुःपतिकान्—जननीभगिनीभर्तॄन् षोडशे 'माउसियाओ'त्ति मातृष्वसॄः—जननीभगिनीः सप्तदशे 'मासियाओ'त्ति मातुलभार्याः, अष्टादशे अवशेषं 'मित्तणाइणियगसंबंधिपरियणं'ति मित्राणि—सुहृदः ज्ञातयः—समानजातीयाः निजकाः—स्वजनाः मातुलपुत्रादयः सम्बन्धिनः—श्वशुरशालकादयः परिजनो—दासीदासादिः, ततो द्वन्द्वोऽतस्तत्। २ 'अड्ढे' इह यावत्करणात् 'दित्ते विच्छड्डियविउलभत्तपाणे' इत्यादि 'बहुजणस्स अपरिभूते' इत्येतदन्तं दृश्यम्। ३ 'दिण्णभइभत्तवेयण'त्ति दत्तं भृतिभक्तरूपं वेतनं—मूल्यं येषां ते तथा, तत्र भृतिः—द्रम्मादिवर्त्तनं भक्तं तु घृतकणादि 'कल्लाकल्लिं'ति कल्ये च कल्ये च कल्याकल्यि—अनुदिनमित्यर्थः 'कुद्दालिकाः' भूखनित्रविशेषाः।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अभग्नसेनस्य पूर्वभव:

प्रत सूत्रांक [१७]

दीप अनुक्रम [२०]

पत्थियापिडए गेण्हंति, पुरिमतालस्स णगरस्स परिपेरंतेसु बहवे काइअंडए य घूघूअंडए य पारेवइ० टिट्टिभिअंडए य खग्गिअ०मैयूरि०कुक्कुडिअंडए य अण्णेसिं च बहूणं जलयरथलयरखहयरमाईणं अंडाइं गेण्हंति गेण्हेत्ता पत्थियपिडगाइं भरेंति जेणेव निन्नयए अंडवाणियए तेणामेव उवागच्छइ २ निन्नयगस्स अंडवाणियस्स उवणेंति, तते णं से तस्स निन्नयस्स अंडवाणियस्स बहवे पुरिसा दिण्णभति० बहवे काइअंडए य जाव कुक्कुडिअंडए य अन्नेसिं च बहूणं जलयरथलयरखहयरमाईणं अंडयए तवएसु य कवल्लीसु य कंडुएसु य भज्जणएसु य इंगालेसु य तलिंति भज्जेंति सोल्लिंति तलेंता भज्जंता सोल्लेंता रायमग्गे अंतरावणंसि अंडयएहि य पणिगएणं वित्तिं कप्पेमाणा विहरंति, अप्पणावि य णं से निन्नयए अंडवाणियए तेहिं बहूहिं काइय-अंडएहि य जाव कुक्कुडिअंडएहि य सोल्लेहि य तलिएहि य भज्जेहि य सुरं च आसाएमाणे विसाएमाणे

१ 'पत्थिकापिटकानि' च वंशमयभाजनविशेषाः, काकी घूकी टिट्टिभी बकी मयूरी कुर्कुटी च प्रसिद्धा, अण्डकानि च प्रतीतान्येवेति। २ 'तवएसु य'त्ति तवकानि–सुकुमारिकादितलनभाजनानि 'कवल्लीसु य'त्ति कवल्यो–गुडादिपाकभाजनानि 'कंडुसु'त्ति कन्दवो–मण्डकादिपचनभाजनानि, 'भज्जणएसु य'त्ति भर्जनकानि कर्पराणि धानापाकभाजनानि, अङ्गाराश्च प्रतीताः; 'तलिंति' अग्नौ स्नेहेन, भर्जन्ति–धानावत्पचन्ति 'सोल्लिंति य'त्ति ओदनमिव राध्यन्ति खण्डशो वा कुर्वन्ति 'अन्तरावणंसि'त्ति राजमार्गमध्यभागवर्त्तिहट्टे 'अंडयपणिएणं'ति अण्डकपण्येन। ३ ५ 'सुरं चे'त्यादि प्राग्वत्।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१७]

दीप अनुक्रम [२०]

विहरति, तते णं से निन्नए अंडवाणियए एयकम्मे ४ सुबहुं पावकम्मं समज्जिणित्ता एगं वाससहस्सं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा तच्चाए पुढवीए उक्कोससत्तसागरोवमठितीएसु णेरइएसु णेरइयत्ताए उववन्ने (सू० १७) से णं तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव सालाडवीए चोरपल्लीए विजयस्स चोरसेणावइस्स खंदसिरीए भारियाए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववन्ने, तते णं तीसे खंदसिरीए भारियाए अन्नया कयाइं तिण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं इमे एयारूवे दोहले पाउब्भूए–धण्णाओ णं ताओ अम्मयाओ जाओ णं बहूहिं मित्तणाइणियगसयणसंबंधिपरियणमहिलाहिं अण्णाहि य चोरमहिलाहिं सद्धिं संपरिवुडा ण्हाया कयबलिकम्मा जाव पायच्छित्ता सव्वालंकारविभूसिया विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं सुरं च आसाएमाणी विसाएमाणी विहरंति जिमियभुत्तुत्तरागयाओ[1] पुरिसनेवत्थिया[2] सन्नद्धबद्ध[3] जाव पहरणावरणा भरिएहि य फलिएहिं णिक्किट्ठाहिं असीहिं अंसागतेहिं तोणेहिं सजीवेहिं धणूहिं समुक्खित्तेहिं सरेहिं समुल्लालियाहि य

१ 'जिमियभुत्तुत्तरागयाओ'त्ति जेमिताः–कृतभोजनाः भुक्तोत्तरं–भोजनानन्तरमागता उचितस्थाने यास्तास्तथा। २ 'पुरिसनेवत्थिज्ज'त्ति कृतपुरुषनेपथ्याः। ३ 'सन्नद्ध' इत्यत्र यावत्करणादिदं दृश्यं–सन्नद्धबद्धवम्मियकवइया उप्पीलियसरासणपट्टिया पिणद्धगेविज्जा विमलवरचिंधपट्टा गहियाउहपहरणावरण'त्ति व्याख्या तु प्रागिवेति, 'भरिएहिं'ति हस्तपाशितैः 'फलिएहिं'ति स्फटिकैः 'निक्किट्ठाहिं'ति कोशकादाकृष्टैः 'असीहिं'ति खड्गैः 'अंसागएहिं'ति स्कन्धमागतैः पृष्ठदेशे बन्धनात् 'तोणेहिं'ति शरधीभिः 'सजीवेहिं'ति सजीवैः–कोट्यारोपितप्रत्यञ्चैः 'धणूहिं'ति कोदण्डकैः 'समुक्खित्तेहिं सरेहिं'ति निसर्गार्थमुत्क्षिप्तैर्बाणैः 'समुल्लासियाहिं'ति समुल्लासिताभिः

अनु. १२

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दामाहिं लंबियाहि य ओसारियाहिं ऊरुघंटाहिं छिप्पतूरेणं वज्जमाणेणं २ महया उक्किट्ठ जाव समुद्दरव-भूयंपिव करेमाणीओ सालाडवीए चोरपल्लीए सव्वओ समंता ओलोएमाणीओ २ आहिंडमाणीओ २ दोहलं विणेंति, तं जइ णं अहंपि जाव विणिज्जामित्तिकट्टु तंसि दोहलंसि अविणिज्जमाणंसि जाव झियाति। तते णं से विजए चोरसेणावई खंदसिरिभारियं ओहय जाव पासति, ओहयजावपासित्ता एवं वयासी-किण्णं तुमं देवाणुप्पिया! ओहय जाव झियासि?, तते णं सा खंदसिरी विजयं एवं वयासी—एवं खलु

१ 'दामाहिं'ति पाशकविशेषैः 'दाहाहिं'ति कचित् तत्र प्रहरणविशेषैः दीर्घवंशाग्रन्यस्तदात्ररूपैः 'ओसारियाहिं'ति प्रलम्बिताभिः 'ऊरुघंटाहिं'ति जङ्घाघण्टिकाभिः 'छिप्पतूरेणं वज्जमाणेणं' द्रुततूर्येण वाद्यमानेन, 'महता उक्किट्ठि' इत्यत्र यावत्करणादिदं दृश्यं—'महया उक्किट्ठिसीहनायबोलकलयलरवेणं' तत्र उत्कृष्टिश्च—आनन्दमहाध्वनिः सिंहनादश्च प्रसिद्धः बोलश्च—वर्णव्यक्तिवर्जितो ध्वनिः कलकलश्च व्यक्तवचनः स एव तल्लक्षणो यो रवः स तथा तेन 'समुद्दरवभूयंपिव'त्ति जलधिशब्दप्राप्तमिव तन्मयमिवेत्यर्थः गगनमण्डलमिति गम्यते। २ 'तं जइ अहंपि'त्ति तत्—तस्माद्यद्यहमपि, इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'बहूहिं मित्तणाइणियगसयणसंबंधिपरियणमहिलाहिं अन्नाहि य'त्यादि, 'दोहलं विणिएज्जामी'त्ति दोहदं व्यपनयामित्तिकट्टु—इतिकृत्वा—इतिहेतोः 'तंसि दोहलंसि'त्ति तस्मिन् दोहदे, इह यावत्करणात् 'अविणिज्जमाणंमि सुक्का भुक्खा ओलग्गा' इत्यादि 'अदृज्झाणोवगया झियाइ' इत्येतदन्तं दृश्यमिति। ३ 'तते णं से' विजयश्चौरसेनापतिः स्कन्दश्रियं भार्यामुपहतमनःसंकल्पां भूमिगतदृष्टिकामार्त्तध्यानोपगतां ध्यायन्तीं पश्यति, दृष्ट्वा एवमवादीत्—किं णं त्वं देवानांप्रिये! उपहतमनःसङ्कल्पेत्यादिविशेषणा ध्यायसीति, इदं वाक्यमनुश्रित्य सूत्रं गमनीयम्।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवाणुप्पिया! मम तिण्हं मासाणं जाव झियामि, तते णं से विजए चोरसेणावई खंदसिरीए भारियाए अंतिए एयमट्ठं सोचा जाव निसम्म० खंदभारियं एवं वयासी—अहासुहं देवाणुप्पियत्ति एयमट्ठं पडिसुणेति, तते णं सा खंदसिरिभारिया विजएणं चोरसेणावतिणा अब्भणुण्णाया समाणी हट्ठतुट्ठ० बहूहिं मित्त जाव अण्णाहि य बहूहिं चोरमहिलाहिं सद्धिं संपरिवुडा ण्हाया जाव विभूसिया विपुलं असणं ४ सुरं च आसाएमाणा विसाएमाणा ४ विहरइ जिमियभुत्तुत्तरागया पुरिसनेवत्था सन्नद्धबद्ध जाव आहिंडमाणी दोहलं विणेति, तते णं सा खंद० भारिया संपुन्नदोहला संमाणियदो० विणीयदोहला वोच्छिन्नदोहला संपन्नदोहला तं गब्भं सुहंसुहेणं परिवहति, तते णं सा खंदसिरी चोरसेणावतिणी णवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं दारगं पयाया, तते णं से विजयए चोरसेणावती तस्स दारगस्स महया इड्ढिसक्कारसमुदएणं दसरत्तं ठिइवडियं करेति, तते णं से विजए चोरसेणावई तस्स दारगस्स एक्कारसमे दिवसे विपुलं असणं ४ उवक्खडावेति मित्तणाति० आमंतेति २ जाव तस्सेव मित्तनाइ० पुरओ एवं वयासी—जम्हा णं अम्हं इमंसि दारगंसि गब्भगयंसि समाणंसि इमे एयारूवे दोहले पाउब्भूते तम्हा णं होउ अम्हं दारगे अभग्गसेणे णामेणं,

---

१—'इड्ढिसक्कारसमुदएणं'ति ऋद्ध्या—वस्त्रसुवर्णादिसम्पदा सत्कारः—पूजाविशेषस्तस्य समुदायो यः स तथा तेन, 'दसरत्तं ठिइपडियं'ति दशरात्रं यावत् स्थितिपतितं—कुलक्रमागतं पुत्रजन्मानुष्ठानं तत्तथा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ततेणं से अभग्गसेणे कुमारे पंचधातीए जाव परिवहइ (सू० १८) ततेणं से अभग्गसेणे कुमारे उम्मुक्कबालभावे यावि होत्था अट्ठ दारियाओ जाव अट्ठओ दाओ उप्पिं पासाए भुंजमाणे विहरइ, ततेणं से विजए चोरसेणावई अन्नया कयाई कालधम्मुणा संजुत्ते, ततेणं से अभग्गसेणे कुमारे पंचहिं चोरसतेहिं सद्धिं संपरिवुडे रोयमाणे कंदमाणे विलवमाणे विजयस्स चोरसेणावइस्स महया इड्ढिसक्कारसमुदएणं णीहरणं करेति २त्ता बहूइं लोइयाइं मयकिच्चाइं करेति २ केवइकालेणं अप्पसोए जाए यावि होत्था, ततेणं ते पंच चोरसयाइं अन्नया कयाइं अभग्गसेणं कुमारं सालाडवीए चोरपल्लीए महया २ चोरसेणावइत्ताए अभिसिं-

---

१ 'अट्ठदारियाओ'त्ति, अस्यायमर्थः—'तए णं तस्स अभग्गसेणस्स कुमारस्स अम्मापियरो अभग्गसेणं कुमारं सोहणंसि तिहिकरणणक्खत्तमुहुत्तंसि अट्ठहिं दारियाहिं सद्धिं एगदिवसेणं पाणिं गिण्हाविंसु'त्ति, यावत्करणादिदं दृश्यं—'तए णं तस्स अभग्गसेणस्स कुमारस्स अम्मापियरो इमं एयारूवं पीईदाणं दलयंति'त्ति 'अट्ठओ दाओ'त्ति अष्ट परिमाणमस्येति अष्टको दायो—दानं वाच्य इति शेषः, स चैवम्—'अट्ठ हिरण्णकोडीओ अट्ठ सुवण्णकोडीओ' इत्यादि यावत् 'अट्ठ पेसणकारियाओ अन्नं च विपुलधणकणगरयणमणिमोत्तियसंखसिलप्पवालरत्तरयणमाइयं संतसारसावएज्जं'मिति, 'उप्पिं भुंजइ'त्ति अस्यायमर्थः—'तए णं से अभग्गसेणे कुमारे उप्पिं पासायवरगते फुट्टमाणेहिं मुयंगमत्थएहिं वरतरुणिसंपउत्तेहिं बत्तीसइबद्धेहिं नाडएहिं उवगिज्जमाणे विउले माणुस्सए कामभोगे पच्चणुब्भवमाणे विहरइ'त्ति ।

॥ ६० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१९]

दीप अनुक्रम [२२]

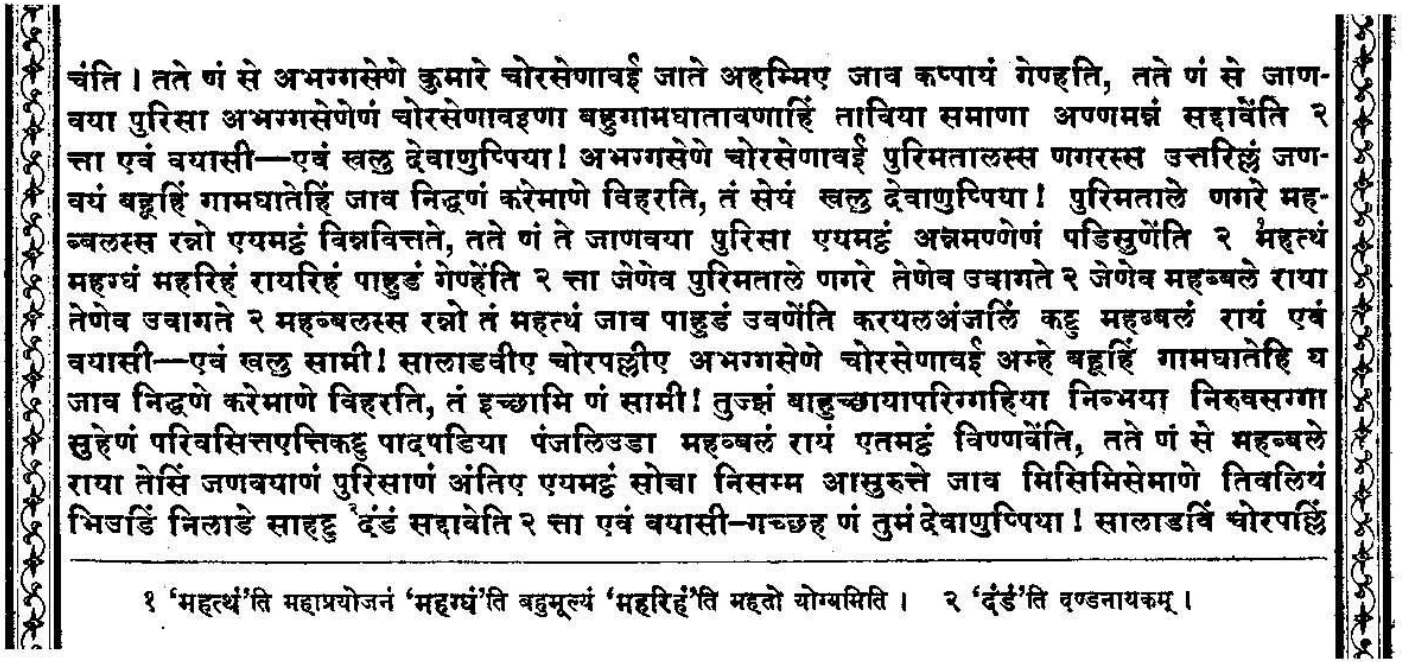

चंति। तते णं से अभग्गसेणे कुमारे चोरसेणावई जाते अहम्मिए जाव कप्पायं गेण्हति, तते णं से जाणवया पुरिसा अभग्गसेणेणं चोरसेणावइणा बहुगामघातावणाहिं ताविया समाणा अण्णमण्णं सद्दावेंति २ त्ता एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिया! अभग्गसेणे चोरसेणावई पुरिमतालस्स णगरस्स उत्तरिल्लं जणवयं बहूहिं गामघातेहिं जाव निद्धणं करेमाणे विहरति, तं सेयं खलु देवाणुप्पिया! पुरिमताले णगरे महब्बलस्स रन्नो एयमट्ठं विन्नवित्तते, तते णं ते जाणवया पुरिसा एयमट्ठं अन्नमण्णेणं पडिसुणेंति २ महत्थं महग्घं महरिहं रायरिहं पाहुडं गेण्हेंति २ त्ता जेणेव पुरिमताले णगरे तेणेव उवागते २ जेणेव महब्बले राया तेणेव उवागते २ महब्बलस्स रन्नो तं महत्थं जाव पाहुडं उवणेंति करयलअंजलिं कट्टु महब्बलं रायं एवं वयासी—एवं खलु सामी! सालाडवीए चोरपल्लीए अभग्गसेणे चोरसेणावई अम्हे बहूहिं गामघातेहि य जाव निद्धणे करेमाणे विहरति, तं इच्छामि णं सामी! तुज्झं बाहुच्छायापरिग्गहिया निब्भया निरुवसग्गा सुहेणं परिवसित्तएत्तिकट्टु पादपडिया पंजलिउडा महब्बलं रायं एतमट्ठं विण्णवेंति, तते णं से महब्बले राया तेसिं जणवयाणं पुरिसाणं अंतिए एयमट्ठं सोचा निसम्म आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे तिवलियं भिउडिं निलाडे साहट्टु [२]दंडं सद्दावेति २ त्ता एवं वयासी—गच्छह णं तुमं देवाणुप्पिया! सालाडविं चोरपल्लिं

१ 'महत्थं'ति महाप्रयोजनं 'महग्घं'ति बहुमूल्यं 'महरिहं'ति महतो योग्यमिति। २ 'दंडं'ति दण्डनायकम्।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१९]

दीप अनुक्रम [२२]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

विलुंपाहि २ अभग्गसेणं चोरसेणावइं जीवग्गाहं गेण्हाहि २ ममं उवणेहि, तते णं से दंडे तहत्ति एयमट्ठं पडिसुणेति, तते णं से दंडे बहूहिं पुरिसेहिं सण्णद्धबद्ध जाव पहरणेहिं सद्धिं संपरिवुडे मग्गइतेहिं फलएहिं जाव छिप्पतूरेणं वज्जमाणेणं महया जाव उक्किट्ठिं जाव करेमाणे पुरिमतालं णगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छति २ त्ता जेणेव सालाडवीए चोरपल्लीए तेणेव पहारेत्थ गमणाते, तते णं तस्स अभग्गसेणस्स चोरसेणावतियस्स चारपुरिसा इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणा जेणेव सालाडवी चोरपल्ली जेणेव अभग्गसेणे चोरसेणावई तेणेव उवागच्छंति २ त्ता करयल जाव एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिया ! पुरिमताले णगरे महब्बलेणं रन्ना महाभडचडगरेणं डंडे आणत्ते–गच्छह णं तुमे देवाणुप्पिया! सालाडविं चोरपल्लिं विलुंपाहि अभग्गसेणं चोरसेणावतिं जीवग्गाहं गेण्हाहि २ त्ता मम उवणेहि, तते णं से दंडे महया [2]भडचडगरेणं जेणेव सालाडवी चोरपल्ली तेणेव पहारेत्थ गमणाए, तते णं से अभग्गसेणे चोरसेणावई तेसिं चारपुरिसाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म पंच चोरसताइं सद्दावेति सद्दावेत्ता एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिया! पुरिमताले णगरे महब्बले जाव तेणेव पहारेत्थ गमणाए आगते, तते णं से अभग्गसेणे ताइं पंच चोरसताइं एवं वयासी—तं सेयं खलु देवाणुप्पिया! अम्हं तं दंडं सालाडविं चोरपल्लिं असंपत्ते अंतरा चेव प-

१ 'जीवग्गाहं गेण्हाहि'त्ति जीवन्तं गृहाणेत्यर्थः । २ 'भडचडगरेणं'ति योधवृन्देन ।

॥ ६१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

डिसेहित्तए, तए णं ताइं पंच चोरसताइं अभग्गसेणस्स चोरसेणावइस्स तहत्ति जाव पडिसुणेंति, तते णं से अभग्गसेणे चोरसेणावई विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेति २ त्ता पंचहिं चोरसएहिं सद्धिं ण्हाते जाव पायच्छित्ते भोयणमंडवंसि तं विपुलं असणं ४ सुरं च ६ आसाएमाणा ४ विहरति, जिमियभुत्तुत्तरागतेवि अ णं समाणे आयंते चोक्खे परमसुइभूए पंचहिं चोरसएहिं सद्धिं अल्लं चम्मं दुरूहति अल्लं चम्मं दुरूहइत्ता सण्णद्धबद्ध जाव पहरणेहिं [1]मग्गइएहिं जाव रवेणं पुव्वावरण्हकालसमयंसि सालाडवीओ चोरपल्लीओ णिग्गच्छइ चोरपल्लीओ णिगच्छइत्ता विसमदुग्गगहणं [2]ठिते गहियभत्तपाणे तं दंडं पडिवालेमाणे चिट्ठति, तते णं से दंडे जेणेव अभग्गसेणे चोरसेणावई तेणेव उवागच्छति तेणेव उवागच्छित्ता अभग्गसेणेणं चोरसेणावतिणा सद्धिं संपलग्गे [3]यावि होत्था, तते णं से अभग्गसेणे चोरसेणावई तं दंडं खिप्पामेव [4]हयमहिय जाव पडिसेहिए, तते णं से दंडे अभग्गसेणेण चोरसेणावइणा हय जाव पडिसेहिए स-

१ 'मग्गइतेहिं' हस्तपाशितैः, यावत्करणात् 'फलिएहीं'त्यादि दृश्यम्। २ 'विसमदुग्गगहणं'ति विषमं—निम्नोन्नतं दुर्गं—दुष्प्रवेशं गहनं—वृक्षगह्वरम्। ३ 'संपलग्गे'त्ति योद्धुं समारब्धः। ४ 'हयमहिय'त्ति यावत्करणादेवं दृश्यम्—'हयमहियपवरवीरघाइयविवडियचिंधधयपडागं' हतः सैन्यस्य हतत्वात् मथितो मानस्य मथनात् प्रवरवीराः—सुभटाः घातिताः—विनाशिता यस्य स तथा, विपतिताः चिह्नयुक्तकेतवः पताकाश्च यस्य स तथा, ततः पदचतुष्टयस्य कर्म्मधारयः, 'दिसोदिसिं विप्पडिसेहिति'त्ति सर्वतो रणान् निवर्त्तयति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विपाके श्रुत० १ ॥ ६२ ॥

माणे अथामे अबले अवीरिए अपुरिसक्कारपरक्कमे अधारणिज्जमितिकट्टु जेणेव पुरिमताले नगरे जेणेव महब्बले राया तेणेव उवागच्छति २ करयल० एवं वयासी—एवं खलु सामी! अभग्गसेणे चोरसेणावई विसमदुग्गगहणं ठिते गहितभत्तपाणीते नो खलु से सक्का केणति सुबहुएणावि आसबलेण वा हत्थिबलेण वा जोहबलेण वा रहबलेण वा चाउरिंगिणीपि० उरंउरेणं गिण्हित्तए ताहे सामेण य भेदेण य उवप्पदाणेण य विसंभमाणे उपयते यावि होत्था, जेवि य से अब्भिंतरगा सीसगभमा मित्तनातिणियगसयणसंबंधिपरियणं च विपुलधणकणगरयणसंतसारसावइज्जेणं भिंदति अभग्गसेणस्स य चोरसेणावइस्स अभिक्खणं २

१ 'अथामे'त्ति तथाविधस्थामवर्जितः 'अबले'त्ति शारीरबलवर्जितः 'अवीरिय'त्ति जीववीर्यरहितः 'अपुरिसक्कारपरक्कमे'त्ति पुरुषकारः—पौरुषाभिमानः स एव निष्पादितस्वप्रयोजनः पराक्रमः तयोर्निषेधादपुरुषकारपराक्रमः 'अधारणिज्जमितिकट्टु'त्ति अधारणीयं—धारयितुमशक्यं स्यातुं वाऽशक्यमितिकृत्वा—हेतोः। २ 'उरंउरेणं'ति साक्षादित्यर्थः। ३ 'सामेण य'त्ति साम—प्रेमोत्पादकं वचनं 'भेदेण य'त्ति भेदः—स्वामिनः पदातीनां च स्वामिन्यविश्वासोत्पादनम् 'उवप्पयाणेण य'त्ति उपप्रदानं—अभिमतार्थदानं। ४ 'जेवि य से अब्भिंतरगा सीसगभम'त्ति येऽपि च 'से' तस्याभग्नसेनस्याभ्यन्तरकाः—आसन्ना मन्त्रिप्रभृतयः, किंभूताः?—'सीसगभम'त्ति शिष्या एव शिष्यकास्तेषां भ्रमा—भ्रान्तिर्येषु ते शिष्यकभ्रमाः, विनीततया शिष्यतुल्या इत्यर्थः, अथवा शीर्षकं—शिर एव शिरःकवचं वा तस्य भ्रमः—अव्यभिचारितया शरीररक्षत्वेन वा ते शीर्षभ्रमाः, इह तानिति शेषः, भिनत्तीति योगः। ५ तथा 'मित्तनाइणियगे'त्यादि पूर्ववत् 'भिंदइ'त्ति चोरसेनापतौ स्नेहं भिनत्ति, आत्मनि प्रतिबद्धान् करोतीत्यर्थः।

३ अभग्नसेनाध्य. अभग्नसेनस्य पल्लीपतिता सू० १९ ॥ ६२ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महत्थाइं महग्घाइं महरिहाइं पाहुडाइं पेसेइ अभग्गसेणं चोरसेणावतिं विसंभमाणेति (सू० १९) तते णं से महब्बले राया अन्नया कयाइं पुरिमतालेणगरे एगं महं महतिमहालियं कूडागारसालं करेति अणेगखंभसयसन्निविट्ठे पासाइए दरसणिज्जे, तते णं से महब्बले राया अन्नया कयाइं पुरिमतालेणगरे उस्सुक्कं जाव

१ 'महत्थाइं'ति महाप्रयोजनानि 'महग्घाइं'ति महामूल्यानि 'महरिहाइं'ति महतां योग्यानि महं वा–पूजामर्हन्ति महान् बाऽर्हः –पूज्यो येषां तानि तथा, एवंविधानि च कानिचित्केषाञ्चिद्योग्यानि भवन्तीत्यत आह–('रायारिहाइं'ति राज्ञामुचितानि)। २ 'महं महइमहालियं कूडागारसालं'ति महती–प्रशस्ता महती चासौ अतिमहालिका च–गुर्वी महातिमहालिका ताम्, अत्यन्तगुरुकामित्यर्थः 'कूडागारसालं'ति कूटस्येव–पर्वतशिखरस्येवाकारो यस्याः सा तथा स चासौ शाला चेति समासोऽतस्ताम्, 'अणेगखंभसयसन्निविट्ठं पासाईयं दरसणिज्जं अभिरूवं पडिरूवं'ति व्याख्या प्राग्वत्। ३ 'उस्सुक्कं'ति अविद्यमानशुल्कग्रहणं, यावत्करणादिदं दृश्यम्–'उक्करं' क्षेत्रगवादि प्रति अविद्यमानराजदेयद्रव्यम् 'अभडप्पवेसं' कौटुम्बिकगेहेषु राजवर्णवतां भटानामविद्यमानप्रवेशम् 'अडंडिमकुदंडिमं' दण्डो–निग्रहस्तेन निर्वृत्तं राजदेयतया व्यवस्थापितं दण्डिमं कुदण्डः–असम्यग्निग्रहस्तेन निर्वृत्तं द्रव्यं कुदंडिमं ते अविद्यमाने यत्र प्रमोदेऽसावदण्डिमकुदण्डिमोऽतस्तम् 'अधरिमं'ति अविद्यमानं धरिमं–ऋणद्रव्यं यत्र स तथा तम् 'अधारणिज्जं' अविद्यमानाधमर्णम् 'अणुद्धुयमुइंगं' अनुद्धूता–आनुरूप्येण वादनार्थमुत्क्षिप्ता अनुद्धूता वा–वादनार्थमेव वादकैरत्यक्ता मृदङ्गा यत्र स तथा 'अमिलायमल्लदामं' अम्लानपुष्पमालं 'गणियावरनाडइज्जकलियं' गणिकावरैर्नाटकीयैः–नाटकपात्रैः कलितो यः स तथा तम् 'अणेगतालाचराणुचरियं' अनेकैः प्रेक्षाकारिभिरासेवितमित्यर्थः, 'पमुइयपक्कीलियाभिरामं' प्रमुदितैः प्रक्रीडितैश्च जनैरभिरमणीयं 'जहारिहं'ति यथायोग्यम्।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दसरत्तं पमोयं घोसावेति २ कोडुंबियपुरिसं सद्दावेति २ एवं वयासी–गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! सालाडवीए चोरपल्लीए तत्थ णं तुम्हे अभग्गसेणं चोरसेणावइं करयल जाव एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिया! पुरिमताले णयरे महाबलस्स रन्नो उस्सुक्के जाव दसरत्ते पमोदे उग्घोसेति तं किन्नं देवाणुप्पिया! विउलं असणं ४ पुप्फवत्थमल्लालङ्कारं ते इहं हव्वमाणिज्जउ उदाहु सयमेव गच्छित्ता?, तते णं कोडुंबियपुरिसा महब्बलस्स रन्नो करयल जाव पडिसुणेंति २ पुरिमतालाओ णगराओ पडि० णातिविकिट्ठेहिं अद्धाणेहिं सुहेहिं वसहिं पायरासेहिं जेणेव सालाडवी चोरपल्ली तेणेव उवागच्छंति अभग्गसेणं चोरसेनापतिं करयल जाव एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिया! पुरिमताले नगरे महब्बलस्स रन्नो उस्सुक्के जाव उदाहु सयमेव गच्छित्ता?, तते णं से अभग्गसेणे चोरसेणावई ते कोडुंबियपुरिसे एवं वयासी—अहन्नं देवाणुप्पिया! पुरिमतालनगरं सयमेव गच्छामि, ते कोडुंबियपुरिसे सक्कारेति पडिविसज्जेति, तते णं से अभग्गसेणे चोर० बहूहिं मित्त जाव परिवुडे ण्हाते जाव पायच्छित्ते सव्वालंकारविभूसिए सालाडवीओ चोरपल्लीओ पडिनिक्खमति २ त्ता जेणेव पुरिमताले नगरे जेणेव महब्बले राया तेणेव उवागच्छति २ त्ता कर-

१ 'उदाहु सयमेव गच्छित्ता' उताहो स्वयमेव गमिष्यसीत्यर्थः। २ 'नाइविगिट्ठेहिं'ति अनत्यन्तदीर्घैः 'अद्धाणेहिं'ति प्रयाणकैः 'सुहेहिं'ति सुखैः–सुखहेतुभिः, 'वसहिपायरासेहिं'ति वासिकप्रातर्भोजनैः।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२०]

दीप अनुक्रम [२३]

यल० महब्बलं रायं जएणं विजएणं वद्धावेंति २ त्ता महत्थं जाव पाहुडं उवणेंति। तते णं से महब्बले राया अभग्गसेणस्स चोरसेणावइस्स तं महत्थं जाव पडिच्छति, अभग्गसेणं चोरसेणावतिं सक्कारेति सम्माणेति पडिविसज्जेति कूडागारसालं च से आवसहं दलयति, तते णं अभग्गसेणे चोरसेणावती महब्बलेणं रन्ना विसज्जिए समाणे जेणेव कूडागारसाला तेणेव उवागच्छइ, तते णं से महब्बले राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेति २ त्ता एवं वयासी—गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेह २ तं विउलं असणं ४ सुरं च ६ सुबहुं पुप्फगंधमल्लालंकारं च अभग्गसेणस्स चोरसेणावइस्स कूडागारसालं उवणेह तते णं ते कोडुंबियपुरिसा करयल जाव उवणेंति, तते णं से अभग्गसेणे चोरसेणावई बहूहिं मित्तनाइ सद्धिं संपरिवुडे ण्हाते जाव सव्वालंकारविभूसिए तं विउलं असणं ४ सुरं च ६ आसाएमाणा पमत्ते विहरंति, तते णं से महब्बले राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेति २ एवं वयासी—गच्छह णं तुम्हे देवाणुप्पिया! पुरिमतालस्स णगरस्स दुवाराइं पिहेह अभग्गसेणं चोरसेणावतिं जीवगाहं गिण्हह ममं उवणेह, तते णं ते कोडुंबियपुरिसा करयल जाव पडिसुणेंति २ पुरिमतालस्स णगरस्स दुवाराइं पिहेंति अभग्गसेणं चोरसेणावइं जीवगाहं गिण्हंति महब्बलस्स रण्णो उवणेंति, तते णं से महब्बले राया अभग्गसेणं चोरसे० एतेणं विहाणेणं वज्झं आणवेति, एवं खलु गोतमा! अभग्गसेणे चोरसेणावई पुरापुराणाणं जाव विहरति।

१ 'जएणं विजएणं वद्धावेइ'त्ति जयेन विजयेन च रिपूणां वर्द्धस्वेत्येवमाशिषं प्रयुङ्क्ते इत्यर्थः।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अभग्गसेणे णं भंते! चोरसेणावई कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिति? कहिं उववज्जिहिति?, गोयमा! अभग्गसेणे चोरसेणावई सत्तत्तीसं वासाइं परमाउयं पालइत्ता अज्जेव तिभागावसेसे दिवसे सूलभिन्ने कए समाणे कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उक्कोसनेरइएसु उववज्जिहिति, से णं ततो अणंतरं उव्वट्टित्ता एवं संसारो जहा पढमो जाव पुढवीए, ततो उव्वट्टित्ता वाणारसीए नयरीए सूयरत्ताए पच्चायाहिति, से णं तत्थ सूयरिएहिं जीवियाओ ववरोविए समाणे तत्थेव वाणारसीए नयरीए सेट्ठिकुलंसि पुत्तत्ताए पच्चायाहिति, से णं तत्थ उम्मुक्कबालभावे एवं जहा पढमे जाव अंतं काहिति। निक्खेवो ॥ (सू० २०)

॥ ततियं अज्झयणं सम्मत्तं ॥ ३ ॥

---

१ ननु तीर्थकरा यत्र विहरन्ति तत्र देशे पञ्चविंशतेर्योजनानामादेशान्तरेण द्वादशानां मध्ये तीर्थकरातिशयात् न वैरादयोऽनर्था भवन्ति, यदाह—"पुव्वुप्पन्ना रोगा पसमंति इइवेरमारीओ । अइवुट्ठी अणावुट्ठी न होइ दुब्भिक्ख डमरं च ॥ १ ॥" इति [पूर्वोत्पन्ना रोगाः प्रशाम्यन्ति इतिवैरमार्यः । अतिवृष्टिरनावृष्टिर्न भवति दुर्भिक्षं डमरं च ॥ १ ॥] तत्कथं श्रीमन्महावीरे भगवति पुरिमतालेनगरे व्यवस्थित एवाभग्नसेनस्य पूर्ववर्णितो व्यतिकरः संपन्नः? इति, अत्रोच्यते, सर्वमिदमनर्थानर्थजातं प्राणिनां स्वकृतकर्मणः सकाशादुपजायते, कर्म्म च द्वेधा—सोपक्रमं १ निरुपक्रमं च २, तत्र यानि वैरादीनि सोपक्रमकर्मसंपाद्यानि तान्येव जिनातिशयादुपशाम्यन्ति सदौषधात् साध्यव्याधिवत्, यानि तु निरुपक्रमकर्म्मसंपाद्यानि तानि अवश्यं विपाकतो वेद्यानि नोपक्रमकारणविषयाणि असाध्यव्याधिवत्, अत एव सर्वातिशयसम्पत्समन्वितानां जिनानामप्यनुपशान्तवैरभावा गोशालकादय उपसर्गान् विहितवन्तः ॥

इति विपाकश्रुते अभङ्गसेनाख्यतृतीयाध्ययनविवरणम् ॥ ३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अभग्नसेनस्य आगामिभवाः एवं सिध्धिगमनं

अत्र तृतीयं अध्ययनं परिसमाप्तं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२१]

दीप अनुक्रम [२४]

अथ चतुर्थं शटकाख्यमध्ययनम् ।

अथ चतुर्थे किञ्चिल्लिख्यते—

जइ णं भंते! चउत्थस्स उक्खेवो, एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं साहंजनीनामं नयरी होत्था रिद्धत्थिमियसमिद्धा, तीसे णं साहंजणीए बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए देवरमणे णामं उज्जाणे होत्था, तत्थ णं अमोहस्स जक्खस्स जक्खाययणे होत्था पुराणे, तत्थ णं साहंजणीए णयरीए महचंदे नामं राया होत्था महया०, तस्स णं महचंदस्स रन्नो सुसेणे नामं अमचे होत्था सामभेयदंड० निग्गहकुसले, तत्थ णं

१ 'जइ णं भंते! चउत्थस्स उक्खेवउ'त्ति 'जइ णं भंते!' इत्यादि चतुर्थाध्ययनस्योत्क्षेपकः—प्रस्तावना वाच्या इति गम्यं, स चायं—'जइ णं भंते! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं दुहविवागाणं तइयस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते चउत्थस्स णं भंते! के अट्ठे पन्नत्ते?'त्ति, 'महता' इत्यनेन 'महताहिमवतमहंतमलयमंदरमहिंदसारे' इत्यादि राजवर्णको दृश्यः, 'साम १ भेद २ दण्ड ३' इत्येतत्पदमेवं दृश्यं, 'सामभेददंडउवप्पयाणनीईसुपउत्तनयविहन्नू' सामः—प्रियवचनं १ भेदः—नायकसेवकयोश्चित्तभेदकरणं २ दण्डः—शरीरधनयोरपहारः ३ उपप्रदानं—अभिमतार्थदानम् ४ एतान्येव नीतयः सुप्रयुक्ता येन स तथा अत एव नयेषु विधाज्ञः—प्रकारवेदिता य इत्यादिरग्रिमवर्णको दृश्यः ।

अनु. १६

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ चतुर्थं अध्ययनं "शकट" आरभ्यते

*** अत्र शीर्षक स्थाने एक मुद्रण-दोषः दृश्यते– "शकट" स्थाने 'शटक' इति मुद्रितं

साहंजणीए नयरीए सुदंसणाणामं गणिया होत्था वन्नओ, तत्थ णं साहंजणीए नयरीए सुभद्दे नामं सत्थवाहे परिवसइ अड्ढे०, तस्स णं सुभद्दस्स सत्थवाहस्स भद्दानामं भारिया होत्था अहीण०, तस्स णं सुभद्दसत्थ० पुत्ते भद्दाए भारियाए अत्तए सगडे नामं दारए होत्था अहीण०, तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे समोसरणं परिसा राया य निग्गए धम्मो कहिओ परिसा पडिगया, तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स० जेट्ठे अंतेवासी जाव रायमग्गमोगाढे तत्थ णं हत्थी आसे पुरिसे तेसिं च णं पुरिसाणं मज्झगए पासति एगं सइत्थीयं पुरिसं अवउडगबंधणं उक्खित्त जाव घोसेणं चिंता तहेव जाव भगवं वागरेति, एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे छगलपुरे नामं णगरे होत्था, तत्थ सीहगिरिनामं राया होत्था महया०, तत्थ णं छगलपुरे णगरे छणिए नामं छगलीए परिवसति अड्ढे० अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे, तस्स णं छणियस्स छगलियस्स बहवे अयाण य एलाण य रोज्झाण य वसभाण य ससयाण य सूयराण य पसयाण य सिंघाण य हरिणाण य मयूराण य महिसाण य सतबद्धाण य सहस्सबद्धाण य जूहाणि वाडगंसि सन्निरुद्धाइं चिट्ठंति, अन्ने य तत्थ बहवे पुरिसा दिन्नभइभत्तवेयणा बहवे य अए जाव महिसे य सारक्खमाणा संगोवेमाणा चिट्ठंति, अण्णे य से बहवे पुरिसा अयाण य जाव गिहंसि निरुद्धा चिट्ठंति, अन्ने य से बहवे पुरिसा दिन्नभइ० बहवे सयए य सहस्से य जीवियाओ ववरोविंति मंसाइं कप्पिणीकप्पियाइं करेंति छणीयस्स छगलीयस्स उवणेंति, अन्ने य से बहवे पुरिसा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल संपादने शीर्षक-स्थाने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते– यत् सू० २१ स्थाने सू० १८ इति क्रम मुद्रितं

ताइं बहूयाइं अयमंसाइं जाव महिसमंसाइं तवएसु य कवल्लीसु य कंदूएसु य भज्जणेसु य इंगालेसु य तलंति य भज्जेंति य सोल्लयंति य २ ततो रायमग्गंसि वित्तिं कप्पेमाणा विहरंति, अप्पणावि य णं से छन्नियए छागलीए तेहिं बहुविह० मंसेहिं जाव महिसमंसेहिं सोल्लेहि य तलेहि य भज्जेहि य सुरं च ६ आसाएमाणे विहरति, तते णं से छन्नीए य छगलीए एयकम्मे प० वि० स० सुबहुं पावकम्मं कलिकलुसं समज्जिणित्ता सत्तवाससयाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा चोत्थीए पुढवीए उक्कोसेणं दससागरोवमठिइएसु नेरइयत्ताए उववन्ने (सू० २१) तते णं तस्स सुभद्दसत्थवाहस्स भद्दा भारिया जाव निंदुया यावि होत्था, जाया जाया दारगा विनिहायमावज्जंति, तते णं से छन्नीए छागले चोत्थीए पुढवीए अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव साहंजणीए नयरीए सुभद्दस्स सत्थवाहस्स भद्दाए भारियाए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववन्ने, तते णं सा भद्दा सत्थवाही अन्नया कयाइं नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं दारगं पयाया, तए णं तं दारगं अम्मापियरो जायमेत्तं चेव सगडस्स हेट्ठातो ठावेंति दोच्चंपि गिण्हावेंति अणुपुव्वेणं सारक्खंति संगोवेंति संवड्ढेंति जहा उज्झियए जाव जम्हा णं अम्हं इमे दारए जायमेत्ते चेव सगडस्स हेट्ठा ठाविए तम्हा णं होऊ णं अम्हं एस दारए सगडे नामेणं, सेसं जहा उज्झियते, [1]सुभद्दे लवणसमुद्दे कालगते मायावि कालगया, सेऽवि सयाओ गिहाओ नि-

१ 'सुभद्दे लवणे काल'त्ति अयमर्थः—'सुभद्दे सत्थवाहे लवणसमुद्दे कालधम्मुणा संजुत्ते यावि होत्थ'त्ति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२२]

दीप अनुक्रम [२५]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

च्छूढे तते णं से सगडे दारए सयातो गिहाओ निच्छूढे समाणे संघाडगतहेव जाव सुदरिसणाए गणियाए सद्धिं संपलग्गे यावि होत्था, तते णं से सुसेणे अमचे तं सगडं दारगं अन्नया कयाइं सुदरिसणाए गणियाए गिहाओ निच्छुभावेति सुदंसणियं गणियं अब्भितरियं ठावेति २ सुदरिसणाए गणियाए सद्धिं उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरति, तते णं से सगडे दारए सुदरिसणाओ गिहाओ निच्छूढे समाणे अन्नत्थ कत्थवि सुतिं वा अलभ० अन्नया कयाइं रहसियं सुदरिसणागेहं अणुप्पविसइ २ सुदरिसिणाए सद्धिं उरालाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ, इमं च णं सुसेणे अमचे पहाते जाव विभूसाए मणुस्सवग्गुराए जेणेव सुदरिसणागणियाए गेहे तेणेव उवागच्छति तेणेव उवागच्छइत्ता सगडं दारयं सुदंसणाए गणियाए सद्धिं उरालाइं भोगभोगाइं भुंजमाणं पासइ २ आसुरुत्ते जाव मिसमिसेमाणे तिवलियं भिउडिं निडाले साइटु सगडं दारयं पुरिसेहिं गिण्हावेति अट्ठि जाव महियं करेति अवउडगबंधणगं करेति २ जेणेव महचंदे राया तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता करयलजाव एवं वयासी--एवं खलु सामी! सगडे दारए मम अंतेपुरंसि अवरद्धे, तते णं से महचंदे राया सुसेणं अमचं एवं वयासी--तुमं चेव णं देवाणुप्पिया! सगडस्स दारगस्स दंडं वत्तेहि, तए णं से सुसेणे अमचे महचंदेणं रन्ना अब्भणुन्नाए समाणे सगडं दारयं सुदरिसणं च गणियं एएणं विहाणेणं वज्झं आणवेति, तं एवं खलु गोयमा! सगडे दारगे पोराणाणं पावाणं कम्माणं पावगं फलवित्तिविसेसं पच्चणुब्भवमाणे विहरति (सू० २२) सगडे णं भंते! दारए कालगए कहिं गच्छिहिति? कहिं उव-

॥ ६६ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल संपादने शीर्षक-स्थाने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते– यत् सू० २२ स्थाने सू० १९ इति क्रम मुद्रितं

प्रत सूत्रांक [२३]

दीप अनुक्रम [२६]

वज्जिहिइ?, सगडे णं दारए गोयमा! सत्तावण्णं वासाइं परमाउयं पालइत्ता अज्जेव तिभागावसेसे दिवसे एगं महं अओमयं तत्तसमजोइभूयं इत्थिपडिमं अवयासाविते समाणे कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए णेरइयत्ताए उववज्जिहिति, से णं ततो अणंतरं उव्वट्टित्ता रायगिहे णगरे मातंगकुलंसि जुगलत्ताए पच्चायाहिति, तते णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो णिवत्तबारसगस्स इमं एयारूवं गोण्णं नामधेज्जं करिस्संति, तं होऊ णं दारगं सगडे नामेणं होऊ णं दारिया सुदरिसणानामेणं, तते णं से सगडे दारए उम्मुक्कबालभावे जोव्वण [गमणुपत्ते०] भविस्सइ, तए णं सा सुदरिसणावि दारिया उम्मुक्कबालभावा (विण्णय) जोव्वणगमणुप्पत्ता रूवेण य जोव्वणेण य लावण्णेण य उक्किट्ठा उक्किट्ठसरीरा यावि भविस्सइ, तए णं से सगडे दारए सुदरिसणाए रूवेण य जोव्वणेण य लावण्णेण य मुच्छिए सुदरिसणाए सद्धिं उरालाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरिस्सति, तते णं से सगडे दारए अन्नया कयाइं सयमेव कूडगाहित्तं उवसंपज्जित्ताणं विहरिस्सति, तते णं से सगडे दारए कूडगाहे भविस्सइ अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे एय-

---

१ 'अओमयं' ति अयोमयीं 'तत्तं' तप्तां, कथम्? इत्याह 'समजोइभूयं'ति समा–तुल्या ज्योतिषा–वह्निना भूता या सा तथा ताम्। 'अवयासाविए'त्ति अवयासितः–आलिङ्गितः। २ 'जोव्वण० भविस्सइ'त्ति 'जोव्वणगमणुप्पत्ते अलं भोगसमत्थे यावि भविस्सति' इत्येवं द्रष्टव्यम्। ३ 'त स'त्ति 'तए णं सा' इत्येवं दृश्यम्। 'विन्नय'त्ति एतदेवं दृश्यं—'विण्णयपरिणयमेत्ता'।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२३]

दीप अनुक्रम [२६]

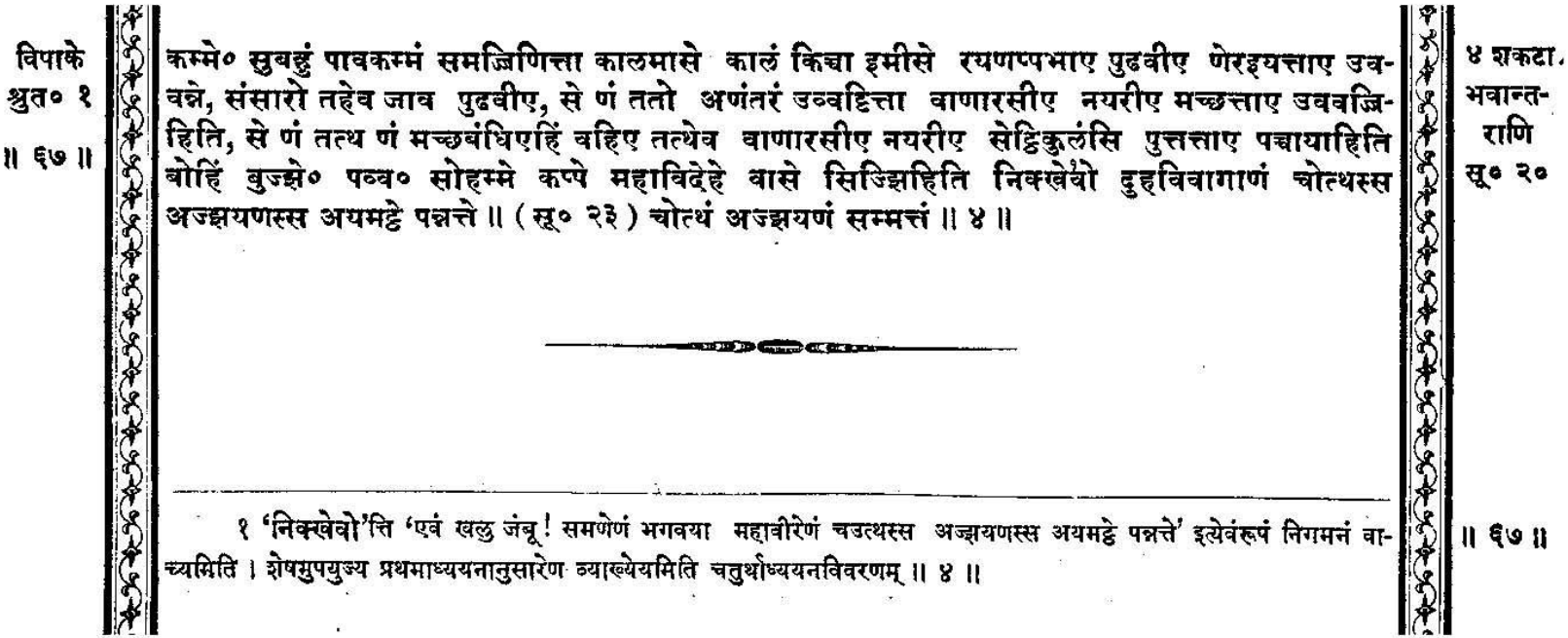

विपाके श्रुत० १ ॥ ६७ ॥

कम्मे० सुबद्धं पावकम्मं समज्जिणित्ता कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए णेरइयत्ताए उववन्ने, संसारो तहेव जाव पुढवीए, से णं ततो अणंतरं उव्वट्टित्ता वाणारसीए नयरीए मच्छत्ताए उववज्जिहिति, से णं तत्थ णं मच्छबंधिएहिं वहिए तत्थेव वाणारसीए नयरीए सेट्ठिकुलंसि पुत्तत्ताए पच्चायाहिति बोहिं बुज्झे० पव्व० सोहम्मे कप्पे महाविदेहे वासे सिज्झिहिति निक्खेवो दुहविवागाणं चोत्थस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते ॥ (सू० २३) चोत्थं अज्झयणं सम्मत्तं ॥ ४ ॥

४ शकटा. भवान्त-राणि सू० २०

१ 'निक्खेवो'त्ति 'एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं चउत्थस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते' इत्येवंरूपं निगमनं वाच्यमिति । शेषमुपयुज्य प्रथमाध्ययनानुसारेण व्याख्येयमिति चतुर्थाध्ययनविवरणम् ॥ ४ ॥

॥ ६७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल संपादने शीर्षक-स्थाने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते– यत् सू० २३ स्थाने सू० २० इति क्रम मुद्रितं

अत्र चतुर्थं अध्ययनं परिसमाप्तं

प्रत सूत्रांक [२४]

दीप अनुक्रम [२७]

अथ बृहस्पतिदत्ताख्यं पञ्चममध्ययनम् ।

अथ पञ्चमे किञ्चिल्लिख्यते—

जइ णं भंते! पंचमस्स अज्झयणस्स उक्खेवो, एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं कोसंबीनामं नयरी होत्था रिद्धत्थिमिय० बाहिं चंदोतरणे उज्जाणे सेयभद्दे जक्खे, तत्थ णं कोसंबीए नयरीए सयाणीए नामं राया होत्था महता मियावती देवी, तस्स णं सयाणीयस्स पुत्ते मियादेवीए अत्तए उदायणे णामं कुमारे होत्था अहीण० जुवराया, तस्स णं उदायणस्स कुमारस्स पउमावतीनामं देवी होत्था, तस्स णं सयाणीयस्स सोमदत्ते नामं पुरोहिए होत्था रिउवेय०, तस्स णं सोमदत्तस्स पुरोहियस्स वसुदत्ता नामं भारिया होत्था, तस्स णं सोमदत्तस्स पुत्ते वसुदत्ताए अत्तए बहस्सतिदत्ते नामं दारए होत्था अहीण०, तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे समोसरणं, तेणं कालेणं तेणं समएणं भगवं गोयमे तहेव जाव रायमग्गमोगाढे तहेव पासइ हत्थी आसे पुरिसमज्झे पुरिसं चिंता तहेव पुच्छति पुव्वभवं भगवं! वागरेति, एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे सव्वतोभद्दे नामं नयरे होत्था रिद्धत्थिमियसमिद्धे, तत्थ णं सव्वतोभद्दे नगरे जियसत्तू नामं राया, तस्स णं जियसत्तुस्स रन्नो महेसरदत्ते नामं पुरो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ पंचमं अध्ययनं "बृहस्पतिदत्त" आरभ्यते

हिए होत्था रिउव्वेय ४ जाव अथव्वणकुसले आवि होत्था, तते णं से महेसरदत्ते पुरोहिए जियसत्तुस्स रन्नो रज्जबलविवद्धणअट्ठाए कल्लाकल्लिं एगमेगं माहणदारयं एगमेगं खत्तियदारयं एगमेगं वइस्सदारयं एगमेगं सुद्दारगं गिण्हावेति २ तेसिं जीवंतगाणं चेव हियउंडए[1] गिण्हावेति जियसत्तुस्स रन्नो संतिहोमं करेति, तए णं से महेसरदत्ते पुरोहिए अट्ठमीचोद्दसीसु दुवे माहण १ खत्तिय २ वेस ३ सुद्दे ४ चोण्हं मासाणं चत्तारि २ छण्हं मासाणं अट्ठ २ संवच्छरस्स सोलस २ जाहे जाहेऽविय णं जियसत्तू राया परबलेणं अभिजुंजइ ताहे ताहेविय णं से महेसरदत्ते पुरोहिए अट्ठसयं माहणदारगाणं अट्ठसयं खत्तियदारगाणं अट्ठसयं सुद्दारगाणं अट्ठसयं वेसदारगाणं पुरिसे गिण्हावेति गिण्हावेत्ता तेसिं जीवंताणं चेव हियउंडीओ[2] गिण्हावेति २ जियसत्तुस्स रण्णो संतिहोमं करेति, तते णं से परबले खिप्पामेव विद्धंसिज्जइ वा पडिसेहिज्जइ वा (सू० २४) तते णं से महेसरदत्ते पुरोहिए एयकम्मे० सुबहुं पावकम्मं समज्जिणित्ता तीसं वाससयं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा पंचमाए पुढवीए उक्कोसेणं सत्तरससागरोवमट्ठिइएसु नरगेसु उववन्ने, से णं ततो अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव कोसंबीए नयरीए सोमदत्तस्स पुरोहियस्स वसुदत्ताए पुत्तत्ताए उववन्ने, तते णं तस्स

५ बृहस्पति.महेश्वरभवः सू० २१

॥ ६८ ॥

१ 'रिउव्वेय'त्ति एतेनेदं दृश्यं—'रिउव्वेयजजुव्वेयसामवेयअथव्वणवेयकुसले'त्ति दृश्यं व्यक्तं च। २ 'हिययउंडीओ'त्ति हृदयमांसपिण्डान्।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल संपादने शीर्षक-स्थाने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते– यत् सू० २४ स्थाने सू० २१ इति क्रम मुद्रितं

दारगस्स अम्मापियरो निव्वत्तबारसाहस्स इमं एयारूवं नामधेज्जं करेंति, जम्हा णं अम्हं इमे दारए सोमदत्तस्स पुरोहियस्स पुत्ते वसुदत्ताए अत्तए तम्हा णं होउ अम्हं दारए वहस्सइदत्ते नामेणं, तते णं से वहस्सतिदत्ते दारए पंचधातिपरिग्गहिए जाव परिवड्ढइ, तते णं से वहस्सति० उम्मुक्कबालभावे जुव्वण० विण्णय० होत्था से णं उदायणस्स कुमारस्स पियबालवयस्सए यावि होत्था सहजायए सहवड्ढीयए सहपंसुकीलियए, तते णं से सयाणीए राया अन्नया कयाइं कालधम्मुणा संजुत्ते, तते णं से उदायणकुमारे बहुराईसर जाव सत्थवाहप्पभिईहिं सद्धिं संपरिवुडे रोयमाणे कंदमाणे विलवमाणे सयाणीयस्स रन्नो महया इड्ढीसक्कारसमुदएणं नीहरणं करेति, बहूइं लोइयाइं मयकिच्चाइं करेंति, तते णं ते बहवे राईसर जाव सत्थवाह० उदायणं कुमारं महया रायाभिसेएणं अभिसिंचइ, तते णं से उदायणे कुमारे राया जाते महया०, तते णं से वहस्सतिदत्ते दारए उदायणस्स रन्नो पुरोहियकम्मं करेमाणे सव्वट्ठाणेसु सव्वभूमियासु अंतेउरे य दिन्नवियारे जाए यावि होत्था, तते णं से वहस्सतीदत्ते पुरोहिए उदायणस्स रण्णो अंतेउरंसि वेलासु य अवेलासु य काले य अकाले य राओ य वियाले य पविसमाणे अन्नया कयाइं पउमावईए देवीए सद्धिं

---

१ 'वेलासु'त्ति अवसरेषु–भोजनशयनादिकालेष्वित्यर्थः 'अवेलासु'त्ति अनवसरेषु 'काले' तृतीयप्रथमप्रहरादौ 'अकाले च' मध्याह्नादौ, अकालं विशेषेणाह—'राओ'त्ति रात्रौ 'वियाले'त्ति सन्ध्यायां 'संपलग्गो'त्ति आसक्तः ॥ पञ्चमाध्ययनं बृहस्पतिदत्तस्येति ॥५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संपलग्गे यावि होत्था पउमावईए देवीए सद्धिं उरालाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ, इमं च णं उदायणे राया ण्हाए जाव विभूसिए जेणेव पउमावई देवी तेणेव उवागच्छइ, बहस्सतिदत्तं पुरोहियं पउमावतीदेवीए सद्धिं उरालाइं भोगभोगाइं भुंजमाणं पासति आसुरुत्ते तिवलिं भिउडिं साहट्टुबहस्सतिदत्तं पुरोहियं पुरिसेहिं गिण्हावेति जाव एएणं विहाणेणं वज्झं आणाविए, एवं खलु गोयमा! बहस्सतिदत्ते पुरोहिए पुरापोराणाणं जाव विहरइ। बहस्सतिदत्ते णं भंते! दारए इओ कालगए समाणे कहिं गच्छिहिति कहिं उववज्जिहिति?, गोयमा! बहस्सतिदत्ते णं दारए पुरोहिए चोसट्ठिं वासाइं परमाउयं पालइत्ता अज्जेव तिभागावसेसे दिवसे सूलीयभिन्ने कए समाणे कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए संसारो तहेव पुढवी, ततो हत्थिणाउरे नगरे मिगत्ताए पच्चायाइस्सति, से णं तत्थ वाउरितेहिं वहिए समाणे तत्थेव हत्थिणाउरे नगरे सेट्ठिकुलंसि पुत्तत्ताए०, बोहिं० सोहम्मे कप्पे विमाणे० महाविदेहे वासे सिज्झिहिति निक्खेवो। (सू० २५) ॥ पंचमं अज्झयणं सम्मत्तं ॥ ५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल संपादने शीर्षक-स्थाने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते– यत् सू० २५ स्थाने सू० २२ इति क्रम मुद्रितं

अत्र पंचमं अध्ययनं परिसमाप्तं

प्रत सूत्रांक [२६]

दीप अनुक्रम [२९]

॥ अथ नन्दिवर्धनाख्यं षष्ठमध्ययनम् ॥

अथ षष्ठे किञ्चिल्लिख्यते—

जइ णं भंते! छट्ठस्स उक्खेवो, एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं मद्दुरा नाम नयरी, भंडीरे उज्जाणे सुदंसणे जक्खे सिरीदामे राया बंधुसिरी भारिया पुत्ते णंदिवद्धणे कुमारे अहीणे जुवराया, तस्स सिरीदामस्स सुबन्धु नामं अमचे होत्था सामदंड०, तस्स णं सुबन्धुस्स अमचस्स बहुमित्तपुत्ते नामं दारए होत्था अहीण०, तस्स णं सिरिदामस्स रण्णो चित्ते नामं अलंकारिए होत्था, सिरिदामस्स रन्नो चित्तं बहुविहं अलंकारियकम्मं करेमाणे सव्वट्ठाणेसु य सव्वभूमियासु य अंतेउरे य दिन्नवियारे यावि होत्था, तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे परिसा निग्गया रायावि निग्गओ जाव परिसा पडिगया, तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स जेट्ठे जाव रायमग्गं ओगाढे तहेव हत्थी आसे पुरिसे, तेसिं च णं पुरिसाणं

१ 'चित्तं बहुविहं'ति आश्चर्यभूतं बहुप्रकारं चेत्यर्थः 'अलंकारियकम्मं'ति क्षुरकर्म्म 'सव्वट्ठाणेसु'त्ति शय्यास्थानभोजनस्थानसभास्थानादिषु आयस्थानेषु वा शुल्कादिषु 'सव्वभूमियासु'त्ति प्रासादभूमिकासु सप्तमभूमिकावसानासु पदेषु वा—अमात्यादिषु ।
२ 'दिन्नवियारे'त्ति राज्ञाऽनुज्ञातसंचरणः अनुज्ञातविचारणो वा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ षष्ठं अध्ययनं "नन्दिवर्धन" आरभ्यते

मज्झगयं एगं पुरिसं पासंति जाव नरनारिसंपरिवुडं, तते णं तं पुरिसं रायपुरिसा चत्तरंसि तत्तंसि अयोमयंसि समजोईभूयंसिहासणंसि निविसावेंति, तयाणंतरं च णं पुरिसाणं मज्झगयं बहुविहं अयकलसेहिं तत्तेहिं समजोइभूएहिं अप्पेगइया तंबभरिएहिं अप्पेगइया तउयभरिएहिं अप्पेग० सीसगभरिएहिं अप्पेग० [1]कलकलभरिएहिं अप्पेग० खारतेल्लभरिएहिं महया२रायाभिसेएणं अभिसिंचिते, तयाणंतरं च णं तत्तं अयोमयं समजोइभूयं अयोमयसंडासएणं गहाय [2]हारं पिणद्धंति तयाणंतरं च णं [3]अद्धहारं जाव पट्टं मउडं चिंता तहेव जाव वागरेति, एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे सीहपुरे नामं

१ 'कलकलभरिएहिं'ति कलकलायत इति कलकलं–चूर्णादिमिश्रजलं तद्भृतैः, तप्तं अयोमयमित्यादि विशेषणम् । २ 'हारं पिणद्धंति'त्ति परिधापयन्ति, किं कृत्वा ? इत्याह–अयोमयं संदंशकं गृहीत्वेति, तत्र हारः अष्टादशसरिकः । ३ 'अद्धहारं'ति नवसरिकः, यावत्करणात् 'तिसरियं पिणद्धंति पालंबं पिणद्धंति कडिसुत्तयं पिणद्धंति' इत्यादि, त्रिसरिकं प्रतीतं प्रालम्बो–झुम्बनकं कटीसूत्रं व्यक्तं 'पट्टं'ति ललाटाभरणं मुकुटं–शेखरकः 'चिंता तहेव'त्ति तं पुरुषं दृष्ट्वा गौतमस्य विकल्पस्तथैवाभूत् यथा हि प्रथमेऽध्ययने, तथाहि— 'न मे दिट्ठा नरया वा नेरइया वा, अयं पुण पुरिसे निरयपडिरूवियं वेयणं वेएइ'त्ति, यावत्करणादेवं दृश्यम्—'अहापज्जत्तं भत्तपाणं पडिगाहेति २ जेणेव समणं भगवं तेणेव उवागच्छइ' इत्यादि वाच्यं 'वागरेति'त्ति कोऽसौ जन्मान्तरे आसीदित्येवं गौतमः पृच्छति भगवांस्तु व्याकरोति–कथयति ।

॥ ७० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल संपादने शीर्षक-स्थाने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते– यत् सू० २६ स्थाने सू० २३ इति क्रम मुद्रितं

नगरे होत्था रिद्ध०, तत्थ णं सीहपुरे नयरे सीहरहे नामं राया होत्था, तस्स णं सीहरहस्स रन्नो दुज्जोहणे नामे [1]चारगपालए होत्था अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे, तस्स णं दुज्जोहणस्स चारगपालगस्स इमेयारूवे [2]चारगभंडे होत्था बहवे अयकुंडीओ अप्पेगइयाओ तंबभरियाओ अप्पेगइयाओ तउयभरियाओ अप्पेग० सीसगभरियाओ अप्पेग० कलकलभरियाओ अप्पेग० खारतेल्लभरियाओ अगणिकायंसि अहिया चिट्ठंति, तस्स णं दुज्जोहण० चारग० बहवे उट्टियाओ आसमुत्तभरियाओ अप्पेग० हत्थिमुत्तभरिआओ अप्पेग० गोमुत्तभरियाओ अप्पेग० महिसमुत्तभरियाओ अप्पेग० उट्टमुत्तभरियाओ अप्पेग० अयमुत्तभरियाओ अप्पेग० एलमुत्तभरियाओ बहुपडिपुन्नाओ चिट्ठंति। तस्स णं दुज्जोहण० चारगपालगस्स बहवे [3]हत्थुंडुयाण य पायंदुयाण य हडीण य नियलाण य संकलाण य पुंजा निगरा य सन्निक्खित्ता चिट्ठंति, तस्स णं दुज्जोहण० चारग० स्स बहवे [4]वेणुलयाण य वेत्तलयाण य चिञ्चालयाण य छियाणं कसाण य वायरासीण य पुंजा णिगरा

---

१ 'चारगपाले'त्ति गुप्तिपालकः। २ 'चारगभंडे'त्ति गुप्त्युपकरणम्। ३ 'हत्थुंडुयाण'त्ति अण्डूनि–काष्ठादिमयबन्धनविशेषाः, एवं पादान्दुकान्यपि, 'हडीण य'त्ति हडयः–खोटकाः 'पुंज'त्ति सशिखरो राशिः 'निगर'त्ति राशिमात्रम्। ४ 'वेणुलयाण य'त्ति स्थूलवंशलतानां 'वेत्तलयाण य'त्ति जलजवंशलतानां 'चिंच'त्ति चिञ्चालतानाम् अम्बिलिकाकम्बानां 'छियाण'त्ति श्लक्ष्णचर्मकशानां 'कसाण य'त्ति चर्म्मयष्टिकानां 'वायरासीणं'ति वल्करश्मयो वटादित्वग्मयसिंदुराणि ताडनप्रयोजनानि तेषां पुञ्जास्तिष्ठन्तीति योगः।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नन्दिवर्धनस्य पूर्वभवः

प्रत सूत्रांक [२६]

दीप अनुक्रम [२९]

चिट्ठंति, तस्स णं दुज्झोहण० चारग०स्स बहवे सिलाण य लउडाण य मोग्गराण य कनंगराण य पुंजा णिगरा चिट्ठंति, तस्स णं (तए णं से) दुज्झोहण० चारग०स्स बहवे तंताण य वरत्ताण य वागरजाण य वालयसुत्तरज्जूण य पुंजा निगरा त चिट्ठंति, तस्स णं दुज्झोहण० चारग० स्स बहवे असिपत्ताण य करपत्ताण य खुरपत्ताण य कलंबचीरपत्ताण य पुंजा णिगरा चिट्ठंति, तस्स णं दुज्झोहण० चारग०स्स बहवे लोहखीलाण य कडगसक्कराण य चम्मपट्टाण य अल्लपल्लाण य पुंजा निगरा चिट्ठंति, तस्स णं दुज्झोहण० चारग०स्स बहवे सूतीण य डंभणाण य कोट्टिल्लाण य पुंजा निगरा चिट्ठंति, तस्स णं दुज्झोहण० चारगस्स बहवे सत्थ(पच्छा)ण य पिप्पलाण य कुहाडाण य नहच्छेयणाण य दब्भतिणाण य पुंजा निगरा चिट्ठंति, तते णं से दुज्झोहणे

१ 'सिलाण य'त्ति दृषदां 'लउडाण य'त्ति लगुडानां 'मुग्गराण य'त्ति व्यक्तं 'कनंगराण य'त्ति काय–पानीयाय नङ्गराः–बोधित्थनिश्चलीकरणपाषाणास्ते कनङ्गराः कानंगरा वा–ईषन्नंगरा इत्यर्थः। 'तए णं से'त्ति एतस्य स्थाने 'तस्स णं'ति मन्यामहे एतस्यैव सङ्गतत्वात् पुस्तकान्तरे दर्शनाचेति। २ 'असिपत्ताण य'त्ति असीनां 'करपत्ताण य'त्ति क्रकचानां 'खुरपत्ताण य'त्ति क्षुराणां 'कलंबचीरपत्ताण य'त्ति कडु(ल)म्बचीरः–शस्त्रविशेषः। ३ 'कडि(कडग)सक्कराण य' वंशशलाकानां 'चम्मपट्टाण य'त्ति वर्द्धीणाम् 'अल्लपल्लाण य'त्ति अलीनां–वृश्चिकपुच्छाकृतीनां 'डंभणाण य'त्ति यैरग्निप्रतापितैर्लोहशलाकादिभिः परशरीरेऽङ्क उत्पाद्यते तानि दम्भकानि 'कोट्टिल्लाणं'ति ह्रस्वमुद्गरविशेषाणां। ४ 'पच्छाण य'त्ति प्रच्छनकानां 'पिप्पलाण य'त्ति ह्रस्वक्षुराणां कुठारा नखछेदनकानि दर्भाश्च प्रतीताः।

॥ ७१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२६]

दीप अनुक्रम [२९]

चारगपाले सीहरथस्स रन्नो बहवे चोरे य पारदारिए य गंठिभेदे य रायावकारी य अणधारए य बालघातए य विसंभघाते य जुतिकरे य खंडपट्टे य पुरिसेहिं गिण्हावेति २ त्ता उत्ताणए पाडिति लोहदंडेणं मुहं विहाडेइ अप्पेगतिए तत्ततंबं पज्जेति अप्पेगतिया तउयं पज्जेति अप्पेगतिए सीसगं प० अप्पेग० कल० २ अप्पे० खारतेल्लं अप्पेगइयाणं तेणं चेव अभिसेयगं करेति, अप्पे० उत्ताणए पाडेति आसमु० पज्जेति अप्पे० हत्थिमुत्तं पज्जेति जाव एलमुत्तं पज्जेति, अप्पेगतिए हेट्ठामुहे पाडेति, छडछडस्स वम्मावेति, अप्पेग० तेणं चेव उवीलं दलयति अप्पे० हत्थुड्डयाइं बंधावेति अप्पे० पायंदुडियं बंधावेति अप्पे० हडिबंधणं करेति अप्पे० नियडबंधणं करेति अप्पे० संकोडियमोडियं करेति अप्पेग० संकलबंधणं करेति अप्पेग० हत्थछिन्नए करेति जाव सत्थोवाडियं करेति अप्पेग० वेणुलयाहि य जाव वायरासीहि य हणावेति अप्पेग० उत्ता-

---

१ 'अणहारए य'त्ति ऋणधारकान् 'संडपट्टे य'त्ति धूर्त्तान् । २ 'अप्पेगइय'त्ति अप्येककान् कांश्चिदपीत्यर्थः 'पज्जेति'त्ति पाययति 'अप्पेगइयाणं तेणं चेव ओवीलं दलयति' तेनैव अवपीडं–शेखरं मस्तके तत्सारोपणात् उपपीडां वा–वेदनां दलयति–करोति 'संकोडियमोडिए'त्ति सङ्कोटिताश्च–सङ्कोचिताङ्गा मोटिताश्च–चलिताङ्गाः इति द्वन्द्वोऽतस्तान् 'अप्पेगइए हत्थच्छिन्नए करेति' इत्यत्र यावत्करणादिदं दृश्यं—'पायच्छिन्नए एवं नक्कउट्ठजिब्भसीसछिन्नए' इत्यादि, 'सत्थोवाडियए'त्ति शस्त्रावपाटितान्–खड्गादिना विदारितान् 'अप्पेगइया वेणुलयाहिं' इत्यत्र यावत्करणात् 'वेत्तलयाहि य चिंचलयाहिं' इत्यादि दृश्यम्,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णए कारवेति उरे सिलं दलावेति तओ लउलं छुभावेइ २ पुरिसेहिं उक्कंपावेति अप्पेग० तंतीहि य जाव सुत्तरज्जूहि य हत्थेसु पाएसु य बंधावेति अगडंसि ओचूलयालगं पज्जेति अप्पेग० असिपत्तेहि य जाव कलंबचीरपत्तेहि य पच्छावेंति खारतेल्लेणं अब्भिंगावेति अप्पे० निलाडेसु य अवदूसु य कोप्परेसु य जाणुसु य खलुएसु अ लोहकीलए य कडसक्कराओ य दवावेति अलए भंजावेंति अप्पेग० सुतीओ य दंभणाणि य हत्थंगुलियासु य पायंगुलियासु य कोट्टिल्लएहिं आउडावेति २ भूमिं कंडूयावेति अप्पेग० सत्थेहि य जाव नहच्छेदणेहि य अंगं पच्छावेइ दब्भेहि य कुसेहि य उल्लवद्धेहि य वेढावेति आयवंसि दलयति सुक्के समाणे चडचडस्स उप्पाडेंति। तते णं से दुज्जोहणे चारगपालए एयकम्मे सुबहुं पावकम्मं समज्जिणित्ता एगतीसं

१ 'उरे सिलं दलावे' इत्यादि, उरसि पाषाणं दापयति तदुपरि लगुडं दापयति ततस्तं पुरुषाभ्यां लगुडोभयप्रान्तनिविष्टाभ्यां लगुडमुत्कम्पयति--अतीव चलयति यथाऽपराधिनोऽस्थीनि दल्यन्त इति भावः। 'तंतीहि य' इत्यत्र यावत्करणादिदं दृश्यं—'वरत्ताहि य वागरज्जूहिं' इत्यादि, 'अगडंसि'त्ति कूपे 'उचूलयालगं'ति अधःशिरस उपरि पादस्य कूपजले बोलणाकर्षणं 'पज्जेइ'त्ति पाययति खादयतीत्यादिलौकिकीभाषा कारयतीति तु भावार्थः, 'अवदूसु य'त्ति कूकाटिकासु 'खलुएसु'त्ति पादमणिबन्धेषु 'अलिए भंजावेइ'त्ति वृश्चिककण्टकान् शरीरे प्रवेशयतीत्यर्थः 'सूईओ'त्ति सूचीः 'डंभणाणि य'त्ति सूचीप्रायाणि डम्भकानि हस्ताङ्गुल्यादिषु 'कोट्टिल्लएहिं'ति मुद्गरकैः 'आओडावेइ'त्ति आखोटयति प्रवेशयतीत्यर्थः 'भूमिं कंडुयावेइ'त्ति अङ्गुलीप्रवेशितसूचीकैः हस्तैः भूमिं कण्डूयते, महादुःखमुत्पद्यते इतिकृत्वा भूमिकण्डूयनं कारयतीति। 'दब्भेहि य'त्ति दर्भाः—समूलाः 'कुसेहि य'त्ति कुशाः—निर्मूलाः।

॥ ७२ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वाससयाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा छट्ठीए पुढवीए उक्कोसेणं बावीससागरोवमठितीएसु णेरइत्ताए उववन्ने (सू० २६) से णं ततो अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव महुराए णगरीए सिरीदामस्स रण्णो बंधुसिरीए देवीए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववन्ने, तते णं बंधुसिरी णवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं जाव दारगं पयाया, तते णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो निव्वत्तबारसाहे इमं एयाणुरूवं नामधेज्जं करेंति होऊ णं अम्हं दारगाणं नंदिसेणे नामेणं, तते णं से नंदिसेणे कुमारे पंचधातीपरिवुडे जाव परिवड्ढइ, तते णं से नंदिसेणे कुमारे उम्मुक्कबालभावे जाव विहरति जोव्व० जुवराया जाते यावि होत्था, तते णं से णंदिसेणे कुमारे रज्जे य जाव अंतेउरे य मुच्छिते इच्छति सिरिदामं रायं जीवियातो ववरोवित्तए सयमेव रज्जसिरिं कारेमाणे पालेमाणे विहरित्तए, तते णं से णंदिसेणे कुमारे[1] सिरीदामस्स रन्नो बहूणि अंतराणि[2] य छिद्दाणि य विवराणि य पडिजागरमाणे विहरति, तते णं से नंदिसेणे कुमारे सिरीदामस्स रन्नो अंतरं अलभमाणे अन्नया कयाइं चित्तं अलंकारियं सद्दावेति २ एवं वयासी—तुम्हे णं देवाणुप्पिया! सिरीदामस्स रन्नो सव्वट्ठाणेसु य सव्वभूमीसु य अंतेउरे दिण्णवियारे सिरीदामस्स रन्नो अभिक्खणं २ अलंकारियं कम्मं करेमाणे विहरसि, तण्णं तुम्हं देवाणुप्पिया! सिरीदामस्स रन्नो अलंकारियं कम्मं करेमाणे गीवाए खुरं निवेसेहि तो णं अहं तुम्हं अद्धरज्जयं करेस्सामि तुम्हं अम्हेहिं सद्धिं उरालाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरिस्ससि,

१ 'कुमारे'त्ति कुमारः। २ 'अंतराणि य'त्ति अवसरान् 'छिद्दाणि य'त्ति अल्पपरिवारत्वानि, 'विरहाणि य'त्ति विजनत्वानि।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नन्दिवर्धनस्य आगामि-भवाः

प्रत सूत्रांक [२७]

दीप अनुक्रम [३०]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

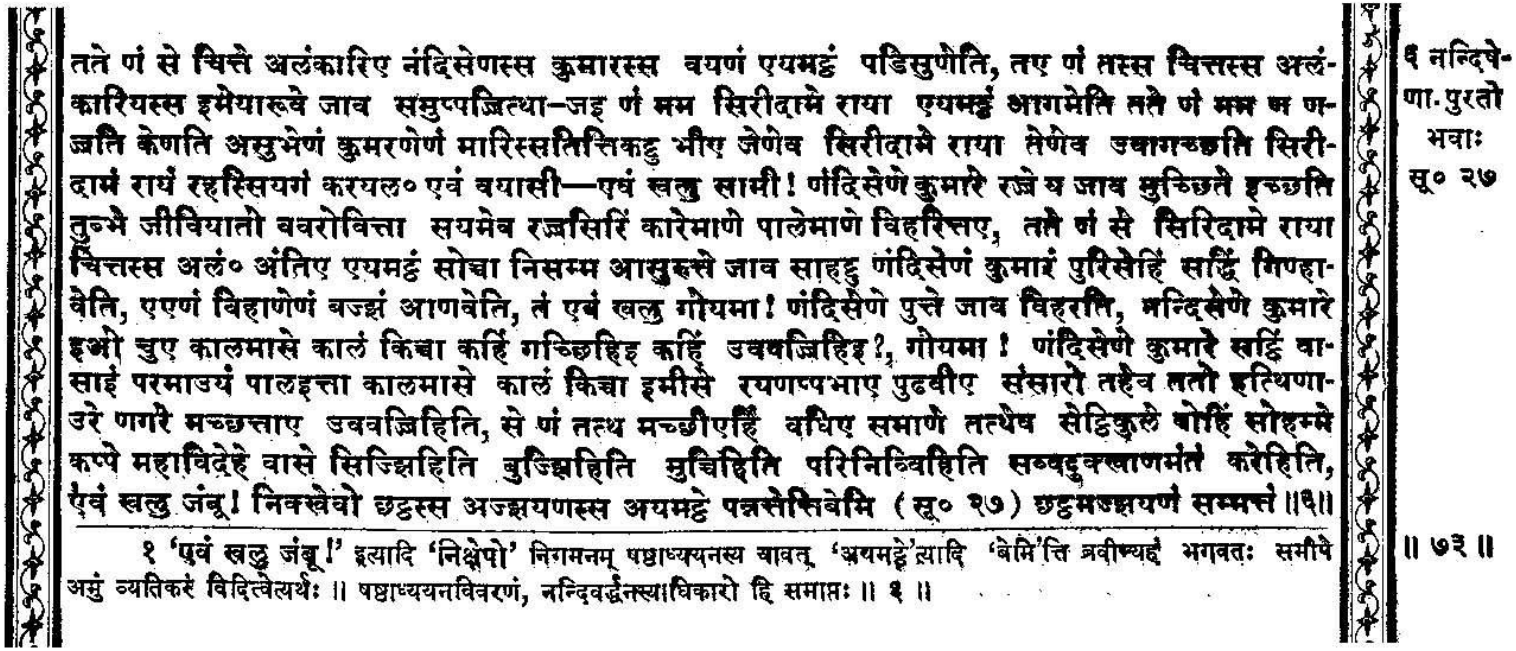

विपाके श्रुत० १ ॥ ७३ ॥

ततेणं से चित्ते अलंकारिए नंदिसेणस्स कुमारस्स वयणं एयमट्ठं पडिसुणेति, तए णं तस्स चित्तस्स अलंकारियस्स इमेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था–जइ णं मम सिरीदामे राया एयमट्ठं आगमेति ततो णं मम न णज्जति केणति असुभेणं कुमरणेणं मारिस्सतित्तिकट्टु भीए जेणेव सिरीदामे राया तेणेव उवागच्छति सिरीदामं रायं रहस्सियगं करयल० एवं वयासी—एवं खलु सामी! णंदिसेणे कुमारे रज्जे य जाव मुच्छिते इच्छति तुब्भे जीवियातो ववरोवित्ता सयमेव रज्जसिरिं कारेमाणे पालेमाणे विहरित्तए, तते णं से सिरिदामे राया चित्तस्स अलं० अंतिए एयमट्ठं सोचा निसम्म आसुरुत्ते जाव साहट्टु णंदिसेणं कुमारं पुरिसेहिं सद्धिं गिण्हावेति, एएणं विहाणेणं वज्झं आणवेति, तं एवं खलु गोयमा! णंदिसेणे पुत्ते जाव विहरति, नन्दिसेणे कुमारे इओ चुए कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिइ कहिं उववज्जिहिइ?, गोयमा! णंदिसेणे कुमारे सट्ठिं वासाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए संसारो तहेव ततो इत्थिणाउरे णगरे मच्छत्ताए उववज्जिहिति, से णं तत्थ मच्छीएहिं वधिए समाणे तत्थेव सेट्ठिकुले बोहिं सोहम्मे कप्पे महाविदेहे वासे सिज्झिहिति बुज्झिहिति मुच्चिहिति परिनिव्विहिति सव्वदुक्खाणमंतं करेहिति, एवं खलु जंबू! निक्खेवो छट्ठस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्तेत्तिबेमि (सू० २७) छट्ठमज्झयणं सम्मत्तं ॥६॥

१ 'एवं खलु जंबू!' इत्यादि 'निक्षेपो' निगमनम् षष्ठाध्ययनस्य यावत् 'अयमट्ठे'त्यादि 'बेमि'त्ति ब्रवीम्यहं भगवतः समीपे अमुं व्यतिकरं विदित्वेत्यर्थः ॥ षष्ठाध्ययनविवरणं, नन्दिवर्द्धनस्याधिकारो हि समाप्तः ॥ १ ॥

६ नन्दिषेणा. पुरतो भवाः सू० २७

॥ ७३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र षष्ठं अध्ययनं परिसमाप्तं

प्रत सूत्रांक [२८]

दीप अनुक्रम [३१]

अथ सप्तममुम्बरदत्ताख्यमध्ययनम् ।

अथ सप्तमे किञ्चिल्लिख्यते—

जति णं भंते! उक्खेवो सत्तमस्स एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं पाडलसंडे णगरे वणसंडे नाम उज्जाणे उंबरदत्तो जक्खो, तत्थ णं पाडलसंडे णगरे सिद्धत्थे राया तत्थ णं पाडलसंडे णगरे सागरदत्ते सत्थवाहे होत्था अड्ढे० गंगदत्ता भारिया, तस्स णं सागरदत्तस्स पुत्ते गंगदत्ताए भारियाए अत्तए उंबरदत्ते नामं दारए होत्था अहीण० जाव पंचिंदियसरीरे, तेणं कालेणं तेणं स० समोसरणं जाव परिसा पडिगया, तेणं कालेणं तेणं सम० भगवं गोयमे तहेव जेणेव पाडलसंडे णगरे तेणेव उवागच्छति पाडलसंडं नगरं पुरत्थिमिल्लेणं दुवारेणं अणुप्पविसति तत्थ णं पासति एगं पुरिसं कच्छुल्लं कोढियं दोउयरियं भगंदरियं अरिसिल्लं कासिल्लं सासिल्लं सोगिलं सुयमुहसुयहत्थं सुयपायं सुयहत्थंगुलियं सडियपायंगुलियं सडियक-

१ 'जइ णं भंते!' इत्यादिरुत्क्षेपः सप्तमस्याध्ययनस्य वाच्य इति । २ 'कच्छुल्लं'ति कण्डूमन्तं 'दोउ, यरियं'ति जलोदरिकं 'भगंदलियं'ति भगन्दरवन्तं 'सोगिल'न्ति शोफवन्तं, एतदेव सविशेषमाह—'सुयमुहसुयहत्थं'ति शूनमुखशूनहस्तं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ सप्तमं अध्ययनं "उम्बरदत्त" आरभ्यते

उम्बरदत्तस्य पूर्वभवः

प्रत सूत्रांक [२८]

दीप अनुक्रम [३१]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

ननासियं रसीयाए वा पूईएण य थिविथिविंतवणमुहकिमिउत्तयंतपगलंतपूयरुहिरं लालापगलंतकन्ननासं अभिक्खणं २ पूयकवले य रुहिरकवले य किमियकवले य वममाणं कट्ठाइं कलुणाइं विसराइं कुवमाणं मच्छियाचडगरपहकरेणं अण्णिज्जमाणमग्गं फुट्टहडाहडसीसं दंडिखंडवसणं खंडमल्लगखंडघडहत्थगयं गेहे देहबलियाए वित्तिं कप्पेमाणं पासति, तदा भगवं गोयमं उच्चनीय जाव अडति अहापज्जत्तं गिण्हति पाड० पडिनिक्खमति जेणेव समणे भगवं० भत्तपाणं आलोएति भत्तपाणं पडिदंसेति समणेणं अब्भणु-

१ 'थिविथिविंत'त्ति अनुकरणशब्दोऽयं 'वणमुहकिमिउत्तयंतपगलंतपूयरुहिरं'ति व्रणमुखानि कृमिभिरुत्तुद्यमानानि—ऊर्द्ध-व्यध्यमानानि प्रगलत्पूयरुधिराणि च यस्य स तथा तम्। २ 'लालापगलंतकन्ननासं'ति लालाभिः—क्लेदतन्तुभिः प्रगलन्तौ कर्णौ नासा च यस्य स तथा तम्, 'अभिक्खणं'ति पुनः पुनः 'कट्ठाइं'ति क्लेशहेतुकानि 'कलुणाइं'ति करुणोत्पादकानि 'वीसराइं'ति विरूपध्वनीनीति गम्यते, 'कूयमाणं'ति कूजन्तम्—अव्यक्तं भणन्तं, शेषं सर्वं प्रथमाध्ययनवत् नवरं 'देहबलियाए' देहबलिमित्यस्याभिधानं प्राकृतशैल्या देहंबलिया तीए देहंबलियाए 'पाड'त्ति पाडलिसंडाओ नगराओ 'पडिणि'त्ति पडिनिक्खमइ'त्ति दृश्यं, 'जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणामेव उवागच्छति २ गमणागमणाए पडिक्कमई' ईर्यापथिकीं प्रतिक्रामतीत्यर्थः 'भत्तपाणं आलोएइ २ भत्तपाणं पडिदंसेइ २ समणेणं भगवया अब्भणुन्नाए' यावत्करणात् 'समाणे' इत्यादि दृश्यं,

॥ ७४ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञाए समाणे जाव बिलमिव पन्नगभूते (अप्पाणेणं) संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति। तते णं से भगवं गोयमे दोच्चंपि छट्ठक्खमणपारणगंसि पढमाए पोरसीए सज्झाए जाव पाडलिसंडं नगरं दाहिणिल्लेणं दुवारेणं अणुप्पविसति तंचेव पुरिसं पासति कच्छुल्लं तहेव जाव संजमेणं तवसा विहरति, तते णं से गोयमे तच्च० छट्ठ० तहेव जाव पच्चत्थिमिल्लेणं दुवारेणं अणुपविसमाणे तंचेव पुरिसं कच्छुल्लं पासति चोत्थछट्ठ० उत्तरेणं० इमीसे अज्झत्थिए समुप्पन्ने अहो णं इमे पुरिसे पुरापोराणाणं जाव एवं वयासी—एवं खलु अहं भंते! छट्ठस्स पारण० जाव रीयंते जेणेव पाडलसंडे नगरे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता पाडलि० पुरच्छिमिल्लेणं दुवारेणं पविट्ठे, तत्थ णं एगं पुरिसं पासामि कच्छुल्लं जाव कप्पेमाणं तं अहं दोच्चछट्ठपारणगंसि दाहिणिल्लेणं दुवारेणं तच्चछट्ठक्खमण० पच्चत्थिमेणं तहेव तं अहं चोत्थछट्ठ० उत्तरदुवारेण अणुप्पविसामि तं चेव पुरिसं पासामि कच्छुल्लं जाव वित्तिं कप्पेमाणे विहरति चिंता मम पुव्वभवपुच्छा वागरेति। एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समं० इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे विजयपुरे नाम नगरे होत्था रिद्ध०, तत्थ णं विजयपुरे णगरे कणगरहे नामं राया हो०, तस्स णं कणगरहस्स रन्नो धन्नंतरी नामं विज्जे

१ 'बिलमिव पन्नगभूए अप्पाणेणं आहारमाहारेइ'त्ति आत्मना आहारयति, किंभूतः सन्? इत्याह—'पन्नगभूतः' नागकल्पो भगवान् आहारस्य रसोपलम्भार्थमचर्वणात्, कथम्भूतमाहारम्?—बिलमिव असंस्पर्शनात्, नागो हि बिलमसंस्पृशन् आत्मानं तत्र प्रवेशयति, एवं भगवानप्याहारमसंस्पृशन् रसोपलम्भानपेक्षः सन्नाहारयतीति। २ 'दोच्चंपि'त्ति द्विरपि द्वितीयां वाराम्।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२८]

दीप अनुक्रम [३१]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

॥ ७५ ॥

हो०, अट्ठंगाउव्वेयपाढए, तंजहा–कुमारभिच्चं १ सालागे २ सल्लकहत्ते ३ कायतिगिच्छा ४ जंगोले ५ भूयविज्जे ६ रसायणे ७ वाजीकरणे ८ सिवहत्थे सुहहत्थे लहुहत्थे, तते णं से धन्नंतरी विज्जे विजयपुरे णगरे कणगरहस्स रन्नो

१ 'अट्ठंगाउव्वेयपाढए'त्ति आयुर्वेदो–वैद्यकशास्त्रं 'कुमारभिच्चं'ति कुमाराणां–बालकानां भृतौ–पोषणे साधु कुमारभृत्यं, तद्धि शास्त्रं कुमारभरणस्य–क्षीरस्य दोषाणां संशोधनार्थं दुष्टस्तन्यनिमित्तानां व्याधीनामुपशमनार्थं चेति १ 'सलाग'त्ति शलाकायाः कर्म शालाक्यं तत्प्रतिपादकं तन्त्रमपि शालाक्यं, तद्धि ऊर्द्ध्वजन्तुगतानां रोगाणां श्रवणवदनादिसंश्रितानामुपशमनार्थमिति २ 'सल्लहत्ते'ति शल्यस्य हत्या हननमुद्धार इत्यर्थः शल्यहत्या तत्प्रतिपादकं शास्त्रं शल्यहत्यमिति ३ 'कायतिगिच्छि'ति कायस्य–ज्वरादिरोगग्रस्तशरीरस्य चिकित्सा–रोगप्रतिक्रिया यत्राभिधीयते तत्कायचिकित्सैव, तत्तन्त्रं हि मध्याङ्गसमाश्रितानां ज्वरातीसारादीनां शमनार्थमिति ४ 'जंगोले'त्ति विषघातक्रियाऽभिधायकं जङ्गोलं–अगदं तत्तन्त्रं तद्धि सर्पकीटलूतादष्टविनाशार्थं विविधविषसंयोगोपशमनार्थं चेति ५ 'भूयवेज्ज'त्ति भूतानां निग्रहार्था विद्या–शास्त्रं भूतविद्या, सा हि देवासुरगन्धर्व्वयक्षराक्षसाद्युपसृष्टचेतसां शान्तिकर्म्मबलिकरणादिभिर्ग्रहोपशमनार्था ६ 'रसायणे'त्ति रसः–अमृतरसस्तस्यायनं–प्राप्तिः रसायनं तद्विधयः–स्थापनमायुर्मेधाकरं रोगोपहरणसमर्थं च तदभिधायकं तन्त्रमपि रसायनम् ७ 'वाईकरणे'त्ति अवाजिनो वाजिनः करणं वाजीकरणं–शुक्रवर्द्धनेनाश्वस्येव करणमित्यर्थः तदभिधायकं शास्त्रम्, अल्पक्षीणविशुष्करेतसामाप्यायनप्रसादोपजननिमित्तं प्रहर्षजननार्थं चेति ८। 'सिवहत्थे'त्ति आरोग्यकरहस्तः 'सुहहत्थे'त्ति शुभहस्तः–प्रशस्तकरः सुखहेतुहस्तो वा 'लहुहत्थे'त्ति दक्षहस्तः।

॥ ७५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंतेउरे य अन्नेसिं च बहूणं राईसर जाव सत्थवाहाणं अन्नेसिं च बहूणं दुब्बलाण य १ गिलाणाण य २ वाहियाण य रोगियाण य अणाहाण य सणाहाण य समणाण य माहणाण य भिक्खागाण य करोडियाण य कप्पडियाण य आउराण य अप्पेगतियाणं मच्छमंसाइं उवदंसेति अप्पे० कच्छपमंसाइं अप्पे० गाहामं अप्पे० मगरमं० अ० सुंसुमारमं० अप्पे० अयमंसाइं एवं एलारोज्झसुयरमिगससयगोमंसमहिसमंसाइं अप्पे० तित्तरमंसाइं अप्पे० वट्ट० कलाव० कपोत० कुक्कुड०मयूर० अन्नेसिं च बहूणं जलयरथलयरखहयरमादीणं मंसाइं उवदंसेति अप्पणा-वि य णं से धन्नंतरीविज्जे तेहिं बहूहिं मच्छमंसेहि य जाव मयूरमंसेहि य अन्नेहि य बहूहिं जलयरथलयर-

१ 'राईसर' इत्यत्र यावत्करणात् 'तलवरमाडंबियकोडुंबियसेट्ठी'ति दृश्यं, 'दुब्बलाण य'त्ति कृशानां हीनबलानां वा 'गिलाणाण य'त्ति क्षीणहर्षाणां शोकजनितपीडानामित्यर्थः 'वाहियाण य'त्ति व्याधिः—चिरस्थायी कुष्ठादिरूपः स संजातो येषां ते व्याधिता व्यथिता वा—उष्णादिभिरभिभूता अतस्तेषां 'रोगियाणं'ति संजाताचिरस्थायिज्वरादिदोषाणां, केषामेवंविधानाम्? इत्याह—'सणाहाण य'त्ति सस्वामिनाम् 'अणाहाण य'त्ति निःस्वामिनां 'समणाण य'त्ति गैरिकादीनां 'भिक्खगाण य'त्ति तदन्येषां 'करोडियाण य'त्ति कापालिकानाम् 'आउराणं'ति चिकित्साया अविषयभूतानाम् 'अप्पेगइयाणं मच्छमंसाइं उवइसति' इत्येतस्य वाक्यस्यानुसारेणात्रेतनानि वाक्यानि ऊह्यानि, मत्स्याः कच्छपा ग्राहाः मकराः सुंसुमाराः अजाः एलकाः रोज्झाः शूकराः मृगाः शशकाः गावः महिषाः तित्तिराः वर्त्तकाः लावकाः कपोताः कुर्कुटाः मयूराश्च प्रतीताः ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

खहयरमंसेहि य सोल्लेहि य तलेहि य भिज्जेहिं सुरं च ६ आसाएमाणे विसाएमाणे विहरति। तते णं से धन्नंतरी विज्जे एयकम्मे सुबहुं पावं कम्मं समज्जिणित्ता बत्तीसं वाससयाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा छट्ठीए पुढवीए उक्कोसेणं बावीससागरोवमा० उववण्णे। तते णं गंगदत्ता भारिया जायणिंदुया यावि होत्था जाया जाया दारगा विनिघायमावज्जंति, तते णं तीसे गंगदत्ताए सत्थवाहीए अन्नया कयाइं पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि कुडुंबजागरियं जागरमा० अयं अज्झत्थिए० समुप्पन्ने–एवं खलु अहं सागरदत्तेणं सत्थवाहेणं सद्धिं बहूइं वासाइं उरालाइं मणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणी विहरामि, णो चेव णं अहं दारगं वा दारियं वा पयामि, तं धण्णाओ णं ताओ अम्मयाओ सपुन्नाओ कयत्थाओ कयलक्खणाओ सुलद्धे णं तासिं अम्मयाणं माणुस्सए जम्मजीवियफले जासिं मन्ने नियगकुच्छिसंभूगाइं थणदुद्धलुद्धगाइं महुरसमुल्लावगाइं मम्मणं पयंपियाइं थणमूलकक्खदेसभागं अतिसरमाणगातिं मुद्धगाइं पुणो य कोमलकमलोवमेहि य हत्थेहिं गिण्हेऊण उच्छंगं निवेसियातिं दिंति समुल्लावए सुमहुरे पुणो २ मंजुलप्पभ-

१ 'मन्ने'त्ति अहमेवं मन्ये 'नियगकुच्छिसंभूताई'ति निजापत्यानीत्यर्थः, स्तनदुग्धे लुब्धकानि यानि तानि तथा, मधुरसमुल्लापकानि–मन्मनप्रजल्पितानि स्तनमूलात् कक्षादेशभागमभिसरन्ति मुग्धकानीति, पुनश्च कोमलं यत्कमलं तेनोपमा ययोस्तौ तथा ताभ्यां हस्ताभ्यां गृहीत्वा उत्सङ्गनिवेशितानि ददति समुल्लापकान् सुमधुरान् शब्दतः पुनः पुनर्मञ्जुलप्रभणितान्–मञ्जुलानि-कोमलानि प्रभणितानि–भणनारम्भा येषु ते तथा तान्,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णिते, अहं णं अधन्ना अपुन्ना अकयपुन्ना एत्तो एगमवि न पत्ता, तं सेयं खलु मम कल्लं जाव जलंते सागरदत्तं सत्थवाहं आपुच्छित्ता सुबहुं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारं गहाय बहुमित्तणाइणियगसयणसंबंधिपरिजनमहिलाहिं सद्धिं पाडलसंडाओ णगराओ पडिनिक्खमित्ता बहिया जेणेव उंबरदत्तस्स जक्खस्स जक्खायतणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता तत्थ णं उंबरदत्तस्स जक्खस्स महारिहं पुप्फचणं करेइत्ता जाणुपायवडियाए ओयाचित्तए—जति णं अहं देवाणुप्पिया ! दारगं वा दारियं वा पयामि तो णं अहं तुब्भं जायं च दायं च भायं च अक्खयणिहिं च अणुवड्ढइस्सामित्तिकट्टु ओवाइयं ओवाइणित्तए, एवं संपेहेइ २ त्ता कल्लं जाव जलंते जेणेव सागरदत्ते सत्थवाहे तेणेव उवागच्छति २ त्ता सागरदत्तं सत्थवाहं एवं वयासी—एवं खलु अहं देवाणु-

१ 'अपुन्न'त्ति अविद्यमानपुण्या यतः 'अकयपुन्न'त्ति अविहितपुण्या अथवा 'अपुन्न'त्ति अपूर्णमनोरथत्वात् 'एत्तो'त्ति एतेषां बालकचेष्टितानाम् 'एगयरमवि' एकतरमपि—अन्यतरदपीति, 'कल्लं' इत्यत्र यावत्करणात् 'पाउप्पभायाए रयणीए फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलिए अहपंडुरे पभाए' इत्यादि दृश्यम् 'उट्ठिए सहस्सरस्सिमि दिणयरे तेयसा जलंते' इत्येतदन्तं, तत्र प्रादुः प्रभातायां—प्रकाशेन प्रभातायां फुल्लं—विकसितं यदुत्पलं—पद्मं तस्य कमलस्य च—हरिणस्य कोमलं—अकठोरम् उन्मीलितं—दलानां नयनयोश्चोन्मेषो यत्र तत्तथा तत्र, शेषं व्यक्तम् । २ 'जायं च'त्ति यागं पूजां यात्रां वा 'दायं च' दानं 'भायं च' लाभस्यांशम् 'अक्खयणिहिं च'त्ति देवभाण्डागारम् 'अणुवड्ढिस्सामि'त्ति वृद्धिं नेष्यामि, 'इतिकट्टु' एवं कृत्वा 'ओवाइयं'ति उपयाचितम् ।

अनु. १५

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्पिया! तुब्भेहिं सद्धिं जाव न पत्ता, तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया जाव उंवाइणित्तए, तए णं से सागरदत्ते गंगदत्तं भारियं एवं वयासी—ममंपि णं देवाणु० एस चेव मणोरहे, कहं णं तुमं दारगं वा दारियं वा पयाएज्जसि?, गंगदत्ताए भारियाए एयमट्ठं अणुजाणति, तते णं सा गंगदत्ता भारिया सागरदत्तसत्थवाहेणं एयमट्ठं अब्भणुन्नाया समाणी सुबहुं पुप्फ जाव महिलाहिं सद्धिं सयाओ गिहाओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमइत्ता पाडलसंडं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छति २ जेणेव पुक्खरिणी तेणेव उवागच्छति २ पुक्खरिणीए तीरे सुबहुं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारं उवणेति २ पुक्खरिणीं ओगाहेति २ जलमज्जणं करेति २ जलकीडं करेमाणी ण्हाया कयकोउयमंगलपायच्छित्ता उल्लपडसाडिया पुक्खरिणीओ पच्चुत्तरति २ तं पुप्फ० गिण्हति २ जेणेव उंबरदत्तस्स जक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवागच्छति २ उंबरदत्तस्स जक्खस्स आलोए पणामं करेति २ लोमहत्थं परामुसति २ उंबरदत्तं जक्खं लोमहत्थेणं पमज्जति २ दगधाराए अब्भोक्खेति २ पम्हल० गायलट्ठी ओलूहेति २ सेयातिं वत्थाइं परिहेति महरिहं पुप्फारुहणं वत्थारुहणं मल्लारुहणं गंधारुहणं चुन्नारुहणं करेति २ धूवं डहति जाणुपायवडिया एवं वयति—जइ णं अहं देवाणु-

१ 'उवाइणित्तए'त्ति उपयाचितुमिति, 'कयकोउयमंगल'त्ति कौतुकानि—मषीपुण्ड्रकादीनि मङ्गलानि—दध्यक्षतादीनि 'उल्लपडसाडिय'त्ति पटः—प्रावरणं साटको—निवसनं 'पम्हल'त्ति 'पम्हलसुकुमालगंधकासाइयाए गायलट्ठी ओलूहइ'त्ति द्रष्टव्यम् 'एवं व'त्ति एवं वयासीत्यर्थः ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२८]

दीप अनुक्रम [३१]

प्पिया! दारगं वा दारियं वा पयामि ते णं जाव उवातिणंति २त्ता जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया। तते णं से धन्नंतरी विज्जे ताओ नरयाओ अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव जंबुद्दीवे २ पाडलसंडे नगरे गंगदत्ताए भारियाए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववन्ने, तते णं तीसे गंगदत्ताए भारियाए तिण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं अयमेयारूवे दोहले पाउब्भूते—धन्नाओ णं ताओ जाव फले जाओ णं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेंति २ बहूहिं जाव परिवुडाओ तं विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं सुरं च ६ पुप्फ जाव गहाय पाडलसंडं नगरं मज्झंमज्झेणं पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता जेणेव पुक्खरिणी तेणेव उवागच्छंति तेणेव उवागच्छित्ता पुक्खरणीं ओगाहिंति ण्हाता जाव पायच्छित्ताओ तं विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं बहूहिं मित्तणाइ जाव सद्धिं आसादेंति दोहलं विणयेंति, एवं संपेहेइ २ कल्लं जाव जलंते जेणेव सागरदत्ते सत्थवाहे तेणेव उवागच्छति २ सागरदत्तं सत्थवाहं एवं वयासी—धन्नाओ णं ताओ जाव विणेंति तं इच्छामि णं जाव विणित्तए, तते णं से सागरदत्ते सत्थवाहे गंगदत्ताए भारियाए एयमट्ठं अणुजाणति, तते णं सा गंगदत्ता सागरदत्तेणं सत्थवाहेणं अब्भणुन्नाया समाणी विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेति तं विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं सुरं च ६ सुबहुं पुप्फ० परिगिण्हावेइ बहूहिं जाव ण्हाया कयबलिकम्मा जेणेव उंबरदत्तस्स जक्खाययणे जाव धूवं डहइ जेणेव पुक्खरणी तेणेव उवागच्छति, तते णं तातो मित्त जाव महिलाओ गंगदत्तं सत्थवाहं सव्वालंकारविभूसियं करेंति, तते णं सा गंगदत्ता भा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रिया ताहिं मित्तनाईहिं अन्नाहिं बहूहिं णगरमहिलाहिं सद्धिं तं विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं सुरं च ६ दोहलं विणेंति २ जामेव दिसिं पाउब्भूता तामेव दिसिं पडिगया, सा गंगदत्ता सत्थवाही पसत्थदोहला तं गब्भं सुहंसुहेणं परिवहति, तते णं सा गंगदत्ता भारिया णवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं जाव पयाया ठिइ० या जाव जम्हा णं इमे दारए उंबरदत्तस्स जक्खस्स उववातियलद्धते तं होऊ णं दारए उंबरदत्ते नामेणं, तते णं से उंबरदत्ते दारए पंचधातिपरिग्गहिए परिवड्ढइ, तते णं से सागरदत्ते सत्थवाहे जहा विजयमित्ते जाव कालमासे कालं किच्चा, गंगदत्तावि, उंबरदत्ते निच्छूढे जहा उज्झियते, तते णं तस्स उंबरदत्तस्स दारयस्स अन्नया कयावि सरीरगंसि जमगसमगमेव सोलस रोगायंका पाउब्भूया, तंजहा—सासे खासे जाव कोढे, तते णं से उंबरदत्ते दारए सोलसहिं रोगायंकेहिं अभिभूए समाणे सडियहत्थं जाव विहरति, एवं खलु गोयमा! उंबरदत्ते पुरा पोराणाणं जाव पच्चणुब्भवमाणे विहरति, तते णं से उंबरदत्ते दारए कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिति कहिं उववज्जिहिति?, गोयमा! उंबरदत्ते दारए बावत्तरिं वासाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए णेरइयत्ताए उववन्ने संसारो तहेव जाव पुढवी, ततो हत्थिणाउरे णगरे कुक्कुडत्ताए पच्चायायाहिति गोट्ठिवहिए तहेव हत्थिणाउरे णगरे सेट्ठिकुलंसि उववज्जिहिति बोहिं सोहम्मे कप्पे महाविदेहे वासे सिज्झिहिति निक्खेवो॥ (सू०२८) सत्तमं अज्झयणं सम्मत्तं॥७॥

१ सप्तमाध्ययनस्य विवरणं उंबरदत्ताख्यस्य ॥ ७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र सप्तमं अध्ययनं परिसमाप्तं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२९]

दीप अनुक्रम [३२]

॥ अथ नन्दिवर्धनाख्यं अष्टममध्ययनम् ॥

अथाष्टमे किञ्चिल्लिख्यते—

जइ णं भंते! अट्ठमस्स उक्खेवो, एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं सम० सोरियपुरं णगरं सोरियवडेंसगं उज्जाणं सोरियो जक्खो सोरियदत्तो राया, तस्स णं सोरियपुरस्स णगरस्स बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभागे एत्थ णं एगे मच्छंधवाडए होत्था, तत्थ णं समुद्दत्ते नामं मच्छंधे[1] परिवसति अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे, तस्स णं समुद्दत्तस्स समुद्दत्ता नामं भारिया होत्था अहीण० पंचेंदियसरीरे, तस्स णं समुद्दत्तस्स पुत्ते समुद्दत्ताभारियाए अत्तए सोरियदत्ते नामं दारए होत्था, अहीण०, तेणं कालेणं तेणं सम० सामी समोसढे जाव परिसा पडिगया, तेणं कालेणं तेणं सम० जेट्ठे सीसे जाव सोरियपुरे णगरे उच्चनीयमज्झिमकुलाइं अडमाणे अहापज्जत्तं समुदाणं गहाय सोरियपुराओ नगराओ पडिनिक्खमति, तस्स मच्छंधपाडगस्स अदूरसामंतेणं वीईवयमाणे महतिमहालियाए मणुस्सपरिसाए मज्झगयं पासति एगं पुरिसं सुक्कं भुक्खं निम्मंसं अट्ठिचम्मावणद्धं किडिकिडीभूयं णीलसाडगणियच्छं मच्छकंटएणं गलए अणुलग्गेणं कट्ठाइं कलुणाइं

१ 'मच्छंधे'त्ति मत्स्यबन्धः ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ अष्टमं अध्ययनं "सौर्यदत्त" आरभ्यते

***अत्र शीर्षकस्थाने अध्ययनस्य नाम्नः विषये कश्चित् स्खलना संभाव्यते– यत् "सौर्यदत्त" स्थाने 'नन्दिवर्धन' इति मुद्रितं

विसराइं कूवेमाणं अभिक्खणं अभिक्खणं पूयकवले य रुहिरकवले य किमिकवले य वममाणं पासति, इमे अज्झत्थिए ५ पुरा पोराणाणं जाव विहरति, एवं संपेहेति जेणेव समणे भगवं जाव पुव्वभवपुच्छा जाव वागरणं, एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे नंदिपुरे नामं णगरे होत्था मित्ते राया, तस्स णं मित्तस्स रन्नो सिरीए नामं महाणसिए होत्था अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे, तस्स णं सिरीयस्स महाणसियस्स बहवे मच्छिया य वागुरिया य साउणिया य दिन्नभति० कल्लाकल्लिं बहवे सण्हमच्छा य जाव पडागातिपडागे य अए य जाव महिसे य तित्तिरे य जाव मयूरे य जीवियाओ ववरोवेंति सिरीयस्स महाणसियस्स उवणेंति, अन्ने य से बहवे तित्तिरा य जाव मयूरा य पंजरंसि संनिरुद्धा चिट्ठंति, अन्ने य बहवे पुरिसे दिन्नभति० ते बहवे तित्तिरे य जाव मयूरे य जीवियाओ चेव निप्पक्खेंति सिरीयस्स महाणसियस्स उवणेंति, तते णं से सिरीए महाणसिए बहूणं जलयरथलयरखहयराणं मंसाइं

---

१ 'सण्हमच्छा' इत्यत्र यावत्करणात् 'खवल्लमच्छा विज्झिडिमच्छा हलिमच्छा' इत्यादि 'लंभणमच्छा पडागा' इत्येतदन्तं दृश्यं, मत्स्यभेदाश्चैते रूढिगम्याः। 'अए य अह' यावत्करणात् 'एलए य रोज्झे य सूयरे य मिगे य' इति दृश्यम्। 'तित्तिरे य' इत्यत्र यावत्करणात् 'वट्टए य लावए य कुक्कुडे य' इति दृश्यम्।

॥ ७९ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२९]

दीप अनुक्रम [३२]

कप्पणीयकप्पियाइं करेंति, तंजहा—सण्हखंडियाणि य वट्ट० दीह० रहस्स० हिमपक्काणि य जम्मघम्म(वेग)-मारुयपक्काणि य कालाणि य हेरंगाणि य महिट्ठाणि य आमलरसियाणि य मुद्दिया० कविट्ठ० दालिमरसिया० मच्छरसि० तलियाणि य भज्जिय० सोल्लिय० उवक्खडावेंति अन्ने य बहवे मच्छरसे य एणेज्जरसे य तित्ति-ररसे य जाव मयूररसे य अन्नं विउलं हरियसागं उवक्खडावेंति २ त्ता मित्तस्स रन्नो भोयणमंडवंसि भोय-णवेलाए उवणेंति अप्पणावि य णं से सिरिए महाणसिते तेसिं च बहूहिं जाव ज० थ० ख० सेहिं च रसतेहि य हरियसागेहि य सोल्लेहि य तलेहि य भिज्जेहि य सुरं च ६ आसाएमाणे ४ विहरति, तते णं से सिरिए महाणसिते एयकम्मे० सुबहुं पावकम्मं समज्जिणित्ता तेत्तीसं वाससयाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं

१ 'सण्हखंडियाणि य' सूक्ष्मखण्डीकृतानि 'वट्ट'त्ति वृत्तखण्डितानि च 'दीह'त्ति दीर्घखण्डितानि च 'रहस्स'त्ति ह्रस्वख-ण्डितानि च। 'हिमपक्काणि य'त्ति शीतपक्वानि 'जम्मपक्वानि वेगपक्वानि य'त्ति रूढिगम्यं, 'मारुयपक्काणि य'त्ति वायुपक्वानि 'का-लाणि य'त्ति 'हेरंगाणि य'त्ति रूढिगम्यं, 'महिट्ठाणि य'त्ति तक्रसंसृष्टानि 'आमलरसियाणि य' आमलकरससंसृष्टानि 'मुद्दियार-सियाणि य'त्ति मृद्वीकारससंसृष्टानि एवं कपित्थरसिकानि दाडिमरसिकानि मच्छरसिकानि तलितानि—तैलादिनाऽग्नौ संस्कृतानि 'भ-ज्जियाणि य'त्ति अग्निना भ्रष्टानि 'सोल्लियाणि य'त्ति शूले पक्वानि 'मच्छरसए'त्ति मत्स्यमांसरसस्य सम्बन्धिनो रसान् 'एणिज्जरस-ए य'त्ति मृगमांसरसान् 'तित्तिर'त्ति तित्तिरसत्करसान् यावत्करणात् 'वट्टयरसए य लावयरसए य' इत्यादि दृश्यं, 'हरियसागं'ति पत्रशाकं 'ज'इत्यस्यायमर्थः—जलयरमंसेहिं थलयरमंसेहिं खहयरमंसेहिं 'तलिं भज्जिं च' अयमर्थः—'तलिएहिं भज्जिएहिं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२९]

दीप अनुक्रम [३२]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

किंचा छट्ठीए पुढवीए उववन्नो।तते णं सा समुद्दत्ता भारिया निंदू यावि होत्था जाया २ दारगा विणिहाय-मावज्जंति जह गंगदत्ताए चिंता आपुच्छणा उवातियं दोहला जाव दारगं पयाता, जाव जम्हा णं अम्हं इमे दारए सोरियस्स जक्खस्स उवाइयलद्धे तम्हा णं होउ अम्हं दारए सोरियदत्ते नामेणं, तए णं से सोरि-यदत्ते दारए पंचधाइ जाव उम्मुक्कबालभावे विण्णयपरिणयमित्ते जोव्वण० होत्था, तते णं से समुद्दत्ते अन्नया कयाइं कालधम्मुणा संजुत्ते, तते णं से सोरियदत्ते बहूहिं मित्तणाइ० रोयमाणे समुद्दत्तस्स णीह-रणं करेंति लोइयमयाइं किच्चाइं करेंति, अन्नया कयाइं सयमेव मच्छंधमहत्तरगत्तं उवसंपज्जित्ताणं विहरति, तए णं से सोरियए दारए मच्छंधे जाते अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे, तते णं तस्स सोरियमच्छंधस्स ब-हवे पुरिसा दिन्नभति० कल्लाकल्लं एगट्ठियाहिं जउणामहानदीं ओगाहिंति बहूहिं दहगालणाहि य दहम-

१ 'चिंत'त्ति मनोरथोत्पत्तिर्वाच्या, 'धण्णाओ णं ताओ अम्मयाओ कयत्थाओ' इत्यादिरूपा यथा गङ्गदत्तायाः सप्तमाध्यय-नोक्तायाः, 'आपुच्छण'त्ति भर्तुरापृच्छा 'तं इच्छामि णं तुब्भेहिं अब्भणुन्नाया' इत्यादिका, 'ओवाइयं'ति उपयाचितं वाच्यं, दोह-दोऽपि गङ्गदत्ताया इव वाच्य इति । 'एगट्ठियाहिं'ति नौभिः 'दहगलणेहि ये'त्यादि एगट्ठियं भरेंतीत्येतदन्तं रूढिगम्यं, तथाऽपि किञ्चिल्लिख्यते—ह्रदगलनं—ह्रदस्य मध्ये मत्स्यादिग्रहणार्थं भ्रमणं जलनिःसारणं वा ह्रदमलनं—ह्रदस्य मध्ये पौनःपुन्येन परिभ्रमणं जले वा निःसारिते पङ्कमर्दनं शोहरादिप्रक्षेपेण ह्रदजलस्य विक्रियाकरणं ह्रदमथनं—ह्रदजलस्य तरुशाखाभिर्विलोडनं ह्रदवहनं—स्वत एव ह्रदाज्जलनिर्गमः ह्रदप्रवहणं—ह्रदजलस्य प्रकृष्टं वहनं प्रपञ्चपुलादयो मत्स्यबन्धनविशेषाः गलानि—वडिशानि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२९]

दीप अनुक्रम [३२]

लणेहि य दहमहणेहिं दहवहणेहिं दहपवहणेहि य अयंपुलेहि य पंचपुलेहि य मच्छंधलेहि य मच्छपुच्छेहि य जंभाहि य तिसिराहि य भिसिराहि य धिसराहि य विसिराहि य हिल्लीरिहि य झिल्लिरीहि य जालेहि य गलेहि य कूडपासेहि य वक्कबंधेहि[1] य सुत्तबंधणेहि य वालबंधणेहि य बहवे सण्हमच्छे य जाव पडागातिपडागे य गिण्हंति एगट्ठियाओ नावा भरंति कूलं गाहंति मच्छखलए करेंति आयवंसि दलयंति, अन्ने य से बहवे पुरिसा दिन्नभइभत्तवेयणा आयवतत्तएहिं सोलेहि य तलेहि य भज्जेहि य रायमग्गंसि विक्तिं कप्पेमाणा विहरंति, अप्पणावि य णं से सोरियदत्ते बहूहिं सण्हमच्छेहि य जाव पडाग० सोल्लेहि य भज्जेहि य सुरं च ६ आसाएमाणे ४ विहरति, तते णं तस्स सोरियदत्तस्स मच्छंधस्स अन्नया कयाइं ते मच्छसोल्ले तले भज्जे आहारेमाणस्स मच्छकंटए गलए लग्गे आवि होत्था, तए णं से सोरियमच्छंधे महयाए वेयणाए अभिभूते समाणे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेति २ एवं वयासी-गच्छह णं तुम्हे देवाणुप्पिया! सोरियपुरे नगरे संघाडग जाव पहेसु य महया २ सद्देणं उग्घोसेमाणा २ एवं वयह-एवं खलु देवाणुप्पिया! सोरियस्स मच्छकंटए गले लग्गे तं जो णं इच्छति विज्जो वा ६ सोरियमच्छियस्स मच्छकंटयं गलाओ निहरित्तते तस्स णं सोरिय० विउलं अत्थसंपयाणं दलयति, तते णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव उग्घोसंतिं, तए णं ते बहवे विज्जा य ६ इमेयारूवं उग्घोसणं उग्घोसिज्जमाणं निसामेंति २ जे० सोरिय० गेहे जे० सोरियमच्छंधे तेणेव उवाग-

१ 'वक्कबंधेहि य'त्ति वल्कबन्धनैः-सूत्रबन्धनैर्वालबन्धनैश्चेति व्यक्तं, 'मच्छखलए करेंति'त्ति स्थण्डिलेषु मत्स्यपुञ्जान् कुर्वन्ति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

च्छंति बहूहिं उप्पत्तियाहिं ४ बुद्धीहि य परिणममाणा वमणेहि य छड्डुणेहि य उवीलणेहि य कवलग्गाहेहि य सल्लुद्धरणेहि य विसल्लकरणेहि य इच्छंति सोरियमच्छंधे मच्छकंटयं गलाओ नीहरित्तए, नो चेव णं संचाएंति नीहरित्तए वा विसोहित्तए वा, तते णं बहवे विज्जा य ६ जाहे नो संचाएंति सोरियस्स मच्छकंटगं गलाओ नीहरित्तए ताहे संता जाव जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया, तते णं से सोरिय० मच्छ० विज्ज० पडियारनिविण्णे तेणं दुक्खेणं महया अभिभूते सुक्के जाव विहरति, एवं खलु गोयमा! सोरियदत्ते पुरा-पोराणाणं जाव विहरति, सोरिए णं भंते! मच्छंधे इओ य कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिति? कहिं उवव०?, गोयमा! सत्तरि वासाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए संसारो तहेव पुढवीओ हत्थिणाउरे णगरे मच्छत्ताए उववन्ने, से णं ततो मच्छिएहिं जीवियाओ ववरोविए तत्थेव सेट्ठिकुलंसि बोहिं सोहम्मे कप्पे महाविदेहे वासे सिज्झिहिति। निक्खेवो॥ (सू० २९) अट्ठमं अज्झयणं सोरियदत्तस्स सम्मत्तं॥ ८॥

१ 'वमणेहि य'त्ति वमनं स्वतः संभूतं 'छड्डुणेहि य'त्ति छर्दनं च वातादिद्रव्यप्रयोगकृतम्, 'उवीलणेहि य'त्ति अवपीडनं, कवल-ग्राहः—गलकण्टकापनोदाय स्थूलकवलग्रहणं मुखविमर्दनार्थं वा दंष्ट्राधः काष्ठखण्डदानं, शल्योद्धरणं—यन्त्रप्रयोगकः कण्टकोद्धारः विशल्यकरणं औषधसामर्थ्यादिति 'नीहरित्तए'त्ति निष्काशयितुं 'विसोहित्तए'त्ति पूयाद्यपनेतुम्। अष्टमाध्ययनस्य विवरणं शौरिकमात्स्यिकस्य समाप्तम्॥८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टमं अध्ययनं परिसमाप्तं

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३३]

अथ बृहस्पतिदत्ताख्यं नवममध्ययनम् ।

अथ नवमे किञ्चिल्लिख्यते—

जइ णं भंते! उक्खेवो णवमस्स, एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं रोहीडए नामं नगरे होत्था रिद्ध०, पुढवीवडेंसए उज्जाणे धरणो जक्खो वेसमणदत्तो राया सिरी देवी पूसनंदी कुमारे जुवराया, तत्थ णं रोहीडए नगरे दत्ते णामं गाहावती परिवसति अड्ढे० कण्हसिरी भारिया, तस्स णं दत्तस्स धूया कण्हसिरीए अत्तया देवदत्ता नामं दारिया होत्था अहीण० जाव उक्किट्ठा उक्किट्ठसरीरा, तेणं काले० तेणं समo सामी समोसढे जाव परिसा निग्गया, तेणं का० तेणं समएणं जेट्ठे अंतेवासी छट्ठक्खमण तहेव जाव रायमग्गं ओगाढे हत्थी आसे पुरिसे पासति, तेसिं पुरिसाणं मज्झगयं पासति एगं इत्थियं अवउडगबंधणं उक्खित्तकन्ननासं जाव सूले भिज्जमाणं पासति, इमे अज्झत्थिए तहेव निग्गए जाव एवं वयासी—एसा णं भंते! इत्थिया पुव्वभवे का आसी?, एवं खलु गोयमा! तेणं का० तेणं स० इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे सुपइट्ठे नामं नगरे होत्था रिद्ध०, महसेणे राया, तस्स णं महासेणस्स रन्नो धारणीपामोक्खाणं देवीसहस्सं ओरोहे यावि होत्था, तस्स णं महासेणस्स रन्नो पुत्ते धारणीए देवीए अत्तए सीहसेणे नामं कुमारे होत्था अ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ नवमं अध्ययनं "देवदत्ता" आरभ्यते

***अत्र शीर्षकस्थाने अध्ययनस्य नाम्नः विषये कश्चित् स्खलना संभाव्यते– यत् "देवदत्ता" स्थाने 'बृहस्पतिदत्त' इति मुद्रितं

*** अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते– यत् सू० ३० स्थाने सू० ३१ इति क्रम मुद्रितं , [मूल संपादनमें भूलसे सूत्र का क्रम ३० के बजाय ३१ छप गया है| इसिलिए हमे भी सूत्रक्रम- ३१ लिखना पडा है|

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३३]

विपाके श्रुत० १ ॥ ८२ ॥

हीण० जुवराया, तते णं तस्स सीहसेणस्स कुमारस्स अम्मापियरो अन्नया कयाइं पंच पासायवडिंसयसयाइं करेंति, [1]अब्भुग्गत०, तए णं तस्स सीहसेणस्स कुमारस्स अन्नया कयावि सामापामोक्खाणं पंचण्हं रायवरकन्नगसयाणं एगदिवसे पाणिं गिण्हावेंसु [2]पंचसयओ दाओ, तते णं से सीहसेणे कुमारे सामापामोक्खाहिं पंचहिं सयाहिं देवीहिं सद्धिं उप्पिं जाव विहरति, तते णं से महसेणे राया अन्नया कयाइ कालधम्मुणा संजुत्ते नीहरणं राया जाए [3]महता०, तए णं से सीहसेणे राया सामाए देवीए मुच्छिते ४ अवसेसाओ देवीओ नो आढाति नो परिजाणाति अणाढाइज्जमाणे अप० विहरति, तते णं तासिं एगूणगाणं पंचण्हं देवीसयाणं एगूणाइं पंचमा [धाई]सयाइं इमीसे कहाए लद्धट्ठाइं समाणाइं एवं खलु सामी! सीहसेणे राया सामाए देवीए मुच्छिए ४ अम्हं धूयाओ नो आढायंति नो परिजाणंति अणा० अप० विहरति, तं सेयं खलु अम्हं सामं देविं अग्गिपओगेण वा विसप्पओगेण वा सत्थप्पओगेण वा जीवियातो ववरोवित्तए,

१ 'अब्भुग्गय'त्ति इदमेवम्—'अब्भुग्गयमूसियपहसिए चेव' अभ्युद्गतोच्छ्रितानि—अत्यन्तोच्चानि प्रहसितानि च—हसितुमारब्धानि चेत्यर्थः, 'मणिकणगरयणचित्ते' इत्यादि, 'एगं च णं महं भवणं करिंति अणेगखंभसयसन्निविट्ठं' मित्यादि भवनवर्णकसूत्रं दृश्यम्। २ 'पंचसयओ दाओ'त्ति हिरण्यकोटिसुवर्णकोटिप्रभृतीनां प्रेषणकारिकान्तानां पदार्थानां पञ्चपञ्चशतानि सिंहसेनकुमाराय पितरौ दत्तवन्तावित्यर्थः, स च प्रत्येकं स्वजायाभ्यो दत्तवानिति। ३ 'महया' इत्यनेन 'महयाहिमवंतमहंतमलयमंदरमहिंदसारे' इत्यादि राजवर्णको दृश्यः।

९ बृहस्पतिदत्ताध्य. बृहस्पतिदत्तभवत्यागुत्तरभवाः सू० ३०

॥ ८२ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते– यत् सू० ३० स्थाने सू० ३१ इति क्रम मुद्रितं, [मूल संपादनमें भूलसे सूत्र का क्रम ३० के बजाय ३१ छप गया है| इसिलिए हमे भी सूत्रक्रम- ३१ लिखना पडा है|

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३३]

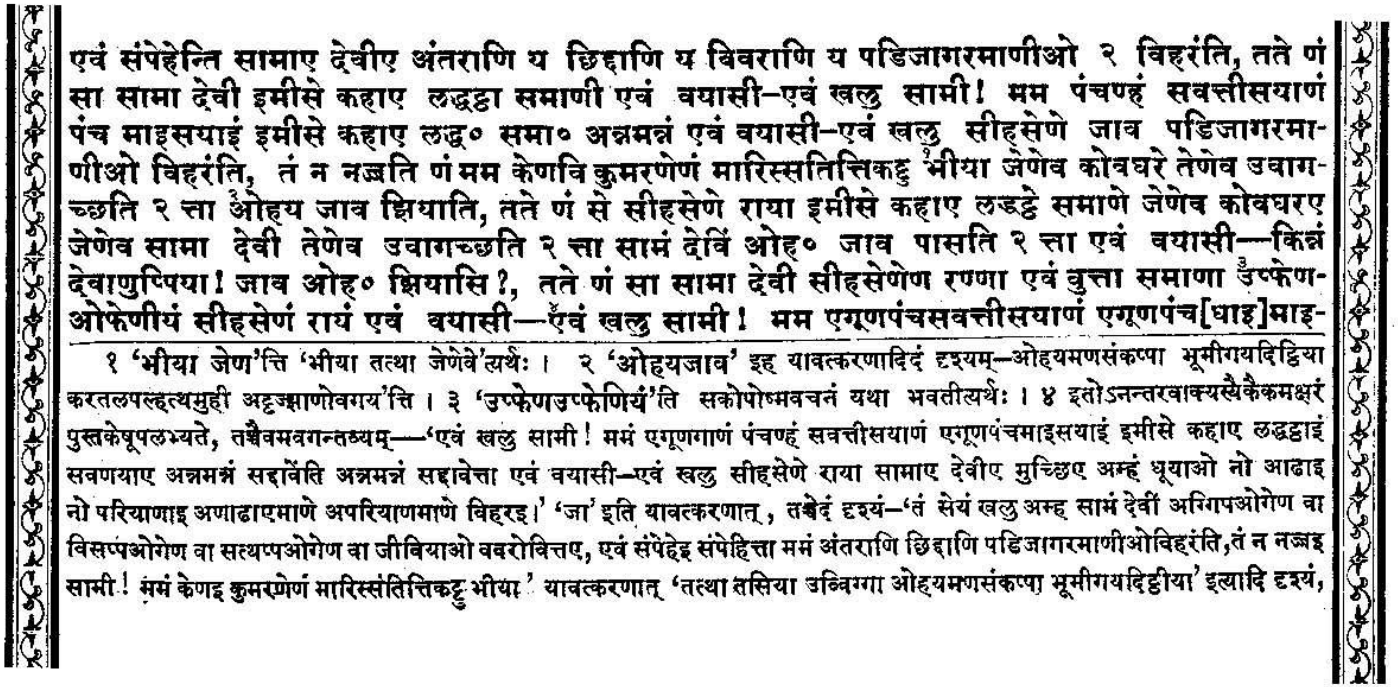

एवं संपेहेन्ति सामाए देवीए अंतराणि य छिद्दाणि य विवराणि य पडिजागरमाणीओ २ विहरंति, तते णं सा सामा देवी इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणी एवं वयासी–एवं खलु सामी! मम पंचण्हं सवत्तीसयाणं पंच माइसयाइं इमीसे कहाए लद्ध० समा० अन्नमन्नं एवं वयासी–एवं खलु सीहसेणे जाव पडिजागरमाणीओ विहरंति, तं न नज्जति णं मम केणवि कुमरणेणं मारिस्सतित्तिकट्टु[1] भीया जेणेव कोवघरे तेणेव उवागच्छति २ त्ता ओहय[2] जाव झियाति, तते णं से सीहसेणे राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे जेणेव कोवघरए जेणेव सामा देवी तेणेव उवागच्छति २ त्ता सामं देविं ओह० जाव पासति २ त्ता एवं वयासी—किन्नं देवाणुप्पिया! जाव ओह० झियासि?, तते णं सा सामा देवी सीहसेणेण रण्णा एवं वुत्ता समाणा उप्फेण-[3] ओफेणीयं[4] सीहसेणं रायं एवं वयासी—एवं[5] खलु सामी! मम एगूणपंचसवत्तीसयाणं एगूणपंच[धाइ]माइ-

अनु. १६

१ 'भीया जेण'त्ति 'भीया तत्था जेणेवे'त्यर्थः । २ 'ओहयजाव' इह यावत्करणादिदं दृश्यम्–ओहयमणसंकप्पा भूमीगयदिट्ठिया करतलपल्हत्थमुही अट्टज्झाणोवगय'त्ति । ३ 'उप्फेणउप्फेणियं'ति सकोपोष्मवचनं यथा भवतीत्यर्थः । ४ इतोऽनन्तरवाक्यस्यैकैकमक्षरं पुस्तकेषूपलभ्यते, तच्चैवमवगन्तव्यम्—'एवं खलु सामी! ममं एगूणगाणं पंचण्हं सवत्तीसयाणं एगूणपंचमाइसयाइं इमीसे कहाए लद्धट्ठाइं सवणयाए अन्नमन्नं सद्दावेंति अन्नमन्नं सद्दावेत्ता एवं वयासी–एवं खलु सीहसेणे राया सामाए देवीए मुच्छिए अम्हं धूयाओ नो आढाइ नो परियाणाइ अणाढाएमाणे अपरियाणमाणे विहरइ।' 'जा' इति यावत्करणात्, तच्चेदं दृश्यं–'तं सेयं खलु अम्ह सामं देवीं अग्गिपओगेण वा विसप्पओगेण वा सत्थप्पओगेण वा जीवियाओ ववरोवित्तए, एवं संपेहेइ संपेहित्ता ममं अंतराणि छिद्दाणि पडिजागरमाणीओविहरंति,तं न नज्जइ सामी! ममं केणइ कुमरणेणं मारिस्संतित्तिकट्टु भीया' यावत्करणात् 'तत्था तसिया उव्विग्गा ओहयमणसंकप्पा भूमीगयदिट्ठीया' इत्यादि दृश्यं,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते– यत् सू० ३० स्थाने सू० ३१ इति क्रम मुद्रितं, [मूल संपादनमें भूलसे सूत्र का क्रम ३० के बजाय ३१ छप गया है| इसिलिए हमे भी सूत्रक्रम- ३१ लिखना पडा है|

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३३]

सयाणं इमीसे कहाए लद्ध० समा० अन्नमन्ने सद्दावेंति २ एवं वयासी—एवं खलु सीहसेणे राया सामाए देवीए उवरि मुच्छिए अम्हा णं धूआ णो आढाति जाव अंतराणि अ छिद्दाणि० पडिजागरमाणीओ विहरंति तं न नज्जति० भीया जाव झियामि, तते णं से सीहसेणे राया सामं देविं एवं वयासी—मा णं तुमं देवाणुप्पिया! ओह० जाव झियाइसि, अहन्नं तह घत्तिहामि जहा णं तव णत्थि कत्तोवि सरीरस्स आबाहे वा पबाहे वा भविस्सतित्तिकट्टु ताहिं इट्ठाहिं ६ समासेति, ततो पडिनिक्खमति २ त्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी—गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! सुपइट्ठस्स णगरस्स बहिया एगं महं कूडागारसालं करेह अणेगक्खंभसयसन्निविट्ठं० पासा० ४ करेह २ मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह, तते णं ते कोडुंबियपुरिसा करयल जाव पडिसुणेंति २ सुपइट्ठनगरस्स बहिया पच्चत्थिमे दिसीविभाए एगं महं कूडागारसालं जाव करेंति अणेगक्खंभस० पासा० ४ जेणेव सीहसेणे राया तेणेव उवागच्छंति २ त्ता तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति, तते णं से सीहसेणे राया अन्नया कयाति एगूणगाणं पंचण्हं देवीसयाणं एगूणाइं पंचमाइसयाइं आमंतेति, तते णं तासिं एगूणापंचदेवीसयाणं एगूणपंचमाइसयाइं सीहसेणेणं रन्ना आमं-

१ 'घत्तिहामि'त्ति यतिष्ये 'नत्थि'त्ति न भवत्ययं पक्षो यदुत 'कत्तोइ'त्ति कुतश्चिदपि शरीरकस्य आबाधा वा भविष्यति, तत्र आबाधः—ईषत्पीडा प्रबाधः—प्रकृष्टा पीडैव 'इतिकट्टु'त्ति एवमभिधाय। २ 'अणेगक्खंभिय'त्ति अनेकस्तम्भशतसन्निविष्टामित्यर्थः, 'पासा' इत्यनेन 'पासाईयं दरिसणिज्जं अभिरूवं पडिरूवं'मिति दृश्यम्।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते– यत् सू० ३० स्थाने सू० ३१ इति क्रम मुद्रितं, [मूल संपादनमें भूलसे सूत्र का क्रम ३० के बजाय ३१ छप गया है| इसिलिए हमे भी सूत्रक्रम- ३१ लिखना पडा है|

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३३]

तियाइं समाणाइं सव्वालंकारविभूसियाइं जहाविभवेणं जेणेव सुपइट्ठे णगरे जेणेव सीहसेणे राया तेणेव उवागच्छंति, तते णं से सीहसेणे राया एगूणपंचदेवीसयाणं एगूणगाणं पंचण्ह माइसयाणं कूडागारसालं आवासे दलयति, तते णं से सीहसेणे राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेति २त्ता एवं वयासी—गच्छह णं तुम्हे देवाणुप्पिया! विउलं असणं ४ उवणेह सुबहुं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारं च कूडागारसालं साहरह य, तते णं ते कोडुंबियपुरिसा तहेव जाव साहरंति, तते णं तासिं एगूणगाणं पंचण्हं देवीसयाणं एगूणपंचमाइसयाइं सव्वालंकारविभूसियाइं करेंति २ तं विउलं असणं ४ सुरं च ६ आसाएमाणाइं ४ गंधव्वेहि य नाडएहि य उवगीयमाणाइं २ विहरंति, त० से सीह० राया अद्धरत्तकालसमयंसि बहूहिं पुरिसेहिं सद्धिं संपरिवुडे जेणेव कूडागारसाला तेणेव उवागच्छति २ त्ता कूडागारसालाए दुवाराइं पिहेति कूडागारसालाए सव्वओ समंता अगणिकायं दलयति, तते णं तासिं एगूणगाणं पंचण्हं देवीसयाणं एगूणगाइं पंच [धाइ]माइसयाइं सीहरण्णा आलीवियाइं समाणाइं रोयमाणाइं ३ अत्ताणाइं असरणाइं कालधम्मुणा संजुत्ताइं, तते णं से सीहसेणे राया एयकम्मे ४ सुबहुं पावकम्मं समज्जिणित्ता चोत्तीसं वाससयाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा छट्ठीए पुढवीए उक्कोसेणं बावीससागरोवमाइं ठितिएसु उववन्ने, से णं तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव रोहीडए नगरे दत्तस्स सत्थवाहस्स कन्नसिरिए भारियाए कुच्छिंसि दारियत्ताए उववन्ने, तते णं सा कन्नसिरी नवण्हं मासाणं जाव दारियं पयाया सुकुमाल० सुरूवं, तते णं तीसे दारियाए अम्मापियरो नि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते– यत् सू० ३० स्थाने सू० ३१ इति क्रम मुद्रितं, [मूल संपादनमें भूलसे सूत्र का क्रम ३० के बजाय ३१ छप गया है| इसिलिए हमे भी सूत्रक्रम- ३१ लिखना पडा है|

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३३]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

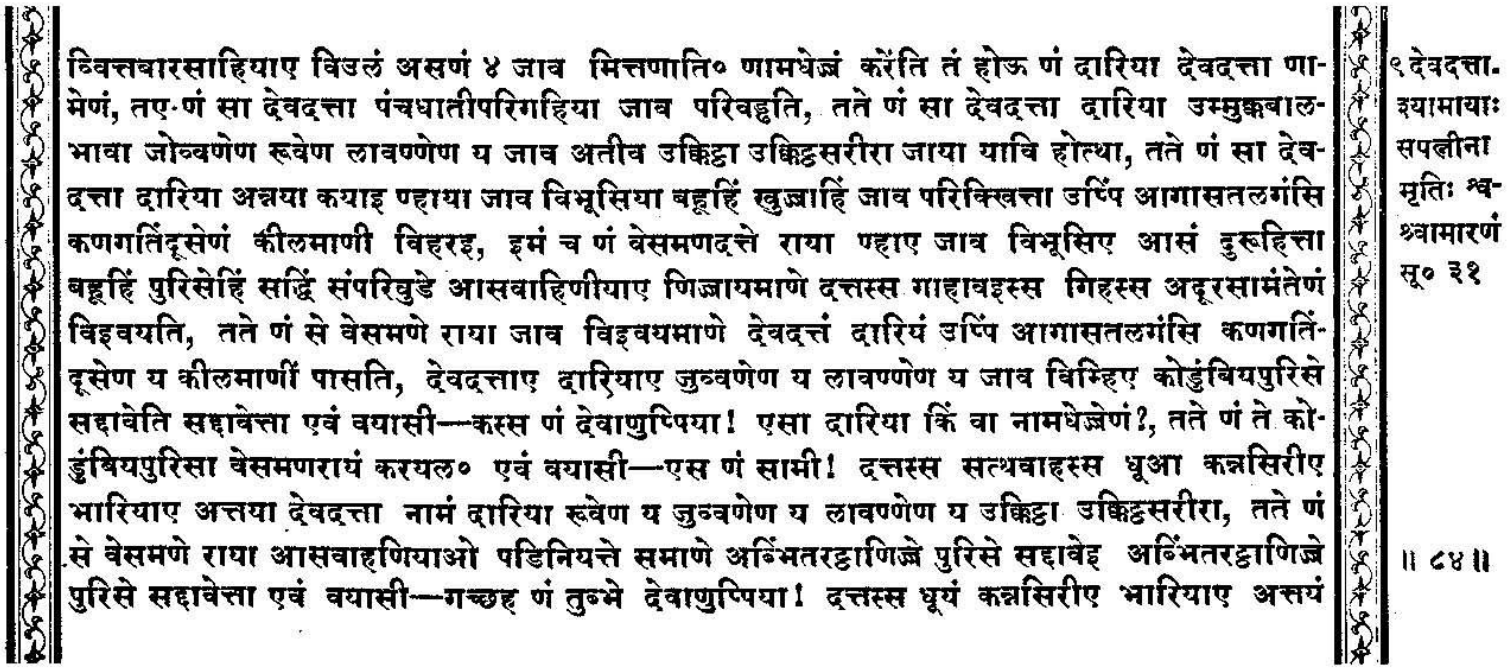

विपाके श्रुत० १ ॥ ८४ ॥

ध्वित्तचारसाहियाए विउलं असणं ४ जाव मित्तणाति० णामधेज्जं करेंति तं होऊ णं दारिया देवदत्ता णामेणं, तए णं सा देवदत्ता पंचधातीपरिगहिया जाव परिवड्ढति, तते णं सा देवदत्ता दारिया उम्मुक्कबालभावा जोव्वणेण रूवेण लावण्णेण य जाव अतीव उक्किट्ठा उक्किट्ठसरीरा जाया यावि होत्था, तते णं सा देवदत्ता दारिया अन्नया कयाइ ण्हाया जाव विभूसिया बहूहिं खुज्जाहिं जाव परिक्खित्ता उप्पिं आगासतलगंसि कणगतिंदूसेणं कीलमाणी विहरइ, इमं च णं वेसमणदत्ते राया ण्हाए जाव विभूसिए आसं दुरूहित्ता बहूहिं पुरिसेहिं सद्धिं संपरिवुडे आसवाहिणीयाए णिज्जायमाणे दत्तस्स गाहावइस्स गिहस्स अदूरसामंतेणं विइवयति, तते णं से वेसमणे राया जाव विइवयमाणे देवदत्तं दारियं उप्पिं आगासतलगंसि कणगतिंदूसेण य कीलमाणीं पासति, देवदत्ताए दारियाए जुव्वणेण य लावण्णेण य जाव विम्हिए कोडुंबियपुरिसे सद्दावेति सद्दावेत्ता एवं वयासी—कस्स णं देवाणुप्पिया! एसा दारिया किं वा नामधेज्जेणं?, तते णं ते कोडुंबियपुरिसा वेसमणरायं करयल० एवं वयासी—एस णं सामी! दत्तस्स सत्थवाहस्स धूआ कन्नसिरीए भारियाए अत्तया देवदत्ता नामं दारिया रूवेण य जुव्वणेण य लावण्णेण य उक्किट्ठा उक्किट्ठसरीरा, तते णं से वेसमणे राया आसवाहणियाओ पडिनियत्ते समाणे अब्भिंतरट्ठाणिज्जे पुरिसे सद्दावेइ अब्भिंतरट्ठाणिज्जे पुरिसे सद्दावेत्ता एवं वयासी—गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! दत्तस्स धूयं कन्नसिरीए भारियाए अत्तयं

९ देवदत्ता. श्यामायाः सपत्नीना मृतिः श्वश्वश्रूमारणं सू० ३१

॥ ८४ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते– यत् सू० ३० स्थाने सू० ३१ इति क्रम मुद्रितं, [मूल संपादनमें भूलसे सूत्र का क्रम ३० के बजाय ३१ छप गया है| इसिलिए हमे भी सूत्रक्रम- ३१ लिखना पडा है|

देवदत्तं दारियं पूसणंदस्स जुवरन्नो भारियत्ताए वरेह, जतिवि सा सयंरज्जसुक्का, तते णं ते अब्भिंतरट्ठाणिज्जा पुरिसा वेसमणेणं रन्ना एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठा करयल जाव पडिसुणेंति २ ण्हाया जाव सुद्धप्पावेसाइं संपरिवुडा जेणेव दत्तस्स गिहे तेणेव उवागच्छित्था, तते णं से दत्ते सत्थवाहे ते पुरिसे एज्जमाणे पासति ते पुरिसे एज्जमाणे पासित्ता हट्ठतुट्ठ० आसणाओ अब्भुट्ठेइ आसणाओ अब्भुट्ठित्ता सत्तट्ठपयाइं पच्चुग्गते आसणेणं उवनिमंतेति २ ते पुरिसे आसत्थे वीसत्थे सुहासणवरगए एवं वयासी—संदिसंतु णं देवाणुप्पिया! किं आगमणप्पओयणं?, तते णं ते रायपुरिसा दत्तं सत्थवाहं एवं वयासी—अम्हे णं देवाणु० तव धूयं कण्हसिरीए अत्तयं देवदत्तं दारियं पूसनंदिस्स जुवरण्णो भारियत्ताते वरेमो, तं जइ णं जाणासि देवा० जुत्तं वा पत्तं वा सलाहणिज्जं वा सरिसो वा संजोगो दिज्जउ णं देवदत्ता भारिया पूसणंदिस्स जुवरण्णो, भण देवाणुप्पिया! किं दलयामो सुक्कं?, तते णं से दत्ते अब्भिंतरट्ठाणिज्जे पुरिसे एवं वयासी—एवं चेव णं देवाणुप्पिया! मम सुक्कं जन्नं वेसमणे राया मम दारियानिमित्तेणं अणुगिण्हति, ते ठाणेज्जपुरिसे विपुलेणं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारेणं सक्कारेति २ पडिविसज्जेति, तते णं ते ठाणिज्जपुरिसा जेणेव वेसमणे राया तेणेव उवाग-

१ 'जइवि [य] सा सयं रज्जसुक्क'त्ति यद्यपि सा स्वकीयराज्यशुल्का—स्वकीयराज्यलभ्येत्यर्थः। २ 'जुत्तं व'त्ति सङ्गतं 'पत्तं व'त्ति पात्रं वा 'सलाहणिज्जं व'त्ति श्लाघ्यमिदं 'सरिसो व'त्ति उचितसंयोगो वधूवरयोः।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते– यत् सू० ३० स्थाने सू० ३१ इति क्रम मुद्रितं, [मूल संपादनमें भूलसे सूत्र का क्रम ३० के बजाय ३१ छप गया है| इसिलिए हमे भी सूत्रक्रम- ३१ लिखना पडा है|

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

च्छति २ त्ता वेसमणस्स रन्नो एयमट्ठं निवेदेंति, तते णं से दत्ते गाहावती अन्नया कयावि सोभणंसि तिहिकरण-दिवसनक्खत्तमुहुत्तंसि विपुलं असणं ४ उवक्खडावेइ २ त्ता मित्तनाति० आमंतेति पेहाते जाव पायच्छित्ते सुहासणवरगते तेणं मित्त० सद्धिं संपरिवुडे तं विउलं असणं ४ आसाएमाणा ४ विहरति जिमियभुत्तु-त्तरागया० आयंते ३ तं मित्तनाइनियग० विउलगंधपुप्फजावअलंकारेणं सक्कारेति स० २ देवदत्तं दारियं ण्हायं विभूसियसरीरं पुरिससहस्सवाहिणीयं सीयं दुरूहति २ सुबहुमित्त जाव सद्धिं संपरिवुडा सव्विड्ढीए जाव नाइयरवेणं रोहीडं नगरं मज्झंमज्झेणं जेणेव वेसमणरण्णो गिहे जेणेव वेसमणे राया तेणेव उ-वागच्छंति २ त्ता करयल जाव वद्धावेंति २ त्ता वेसमणस्स रन्नो देवदत्तं भारियं उवणेंति, तते णं से वेसमणे राया देवदत्तं दारियं उवणियं पासति उवणियं पासित्ता हट्ठतुट्ठ० विउलं असणं ४ उवक्खडावेति २ मित्त-नाति० आमंतेति जाव सक्कारेति २ पूसणंदिकुमारं देवदत्तं च दारियं पट्टयं दुरूहेति २ त्ता सियापीतेहिं कलसेहिं मज्जावेति २ त्ता वरनेवत्थाइं करेति २ त्ता अग्गिहोमं करेति पूसणंदीकुमारिं देवदत्ताए दारियाते

१ 'आयंते'त्ति आचान्तो जलग्रहणात् 'चोक्खे'त्ति चोक्षः सिक्थलेपाद्यपनयनात्, किमुक्तं भवति?—'परमसुईभूए'त्ति अत्यन्तं शुचीभूत इति। २ 'ण्हायं' यावत्करणादिदं दृश्यं—'कयबलिकम्मं कयकोउयमंगलपायच्छित्तं सव्वालंकारे'त्ति। ३ 'सुबहुमित्त' इत्यत्र यावत्करणात् 'णियगसयणसंबंधिपरिजणेण'त्ति दृश्यम्।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३३]

*** अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते– यत् सू० ३० स्थाने सू० ३१ इति क्रम मुद्रितं, [मूल संपादनमें भूलसे सूत्र का क्रम ३० के बजाय ३१ छप गया है| इसिलिए हमे भी सूत्रक्रम- ३१ लिखना पडा है|

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३३]

पाणिं गिण्हावेंति, तते णं से वेसमणे राया पूसनंदिकुमारस्स देवदत्तं दारियं सव्वइड्ढीए जाव रवेणं महया इड्ढीसक्कारसमुदएणं पाणिग्गहणं कारेति देवदत्ताए दारियाए अम्मापियरो मित्त जाव परियणं च विउलेण असण ४ वत्थगंधमल्लालंकारेण य सक्कारेंति सम्माणेंति जाव पडिविसज्जेंति, तए णं से पूसनंदीकुमारे देवदत्ताए सद्धिं उप्पिं पासाय० फुट्टेहिं मुइंगमत्थेहिं बत्तीसं० उवगिज्ज० जाव विहरति, तते णं से वेसमणे राया अन्नया कयाइं कालधम्मुणा संजुत्ते नीहरणं जाव राया जाते, तए णं से पूसनंदी राया सिरीए[3] देवीए मायभत्तिते

---

१ 'सव्विड्ढिए' इत्यत्र यावत्करणादिदं दृश्यं—'सव्वजुईए' सर्वद्युत्या—आभरणादिसम्बन्धिन्या सर्वयुक्त्या वा उचितेषु वस्तुघटनालक्षणया सर्वबलेन—सर्वसैन्येन सर्वसमुदायेन—पौरादिमीलनेन सर्वादरेण—सर्वोचितकृत्यकरणरूपेण 'सव्वविभूईए' सर्वसम्पदा 'सव्वविभूसाए' समस्तशोभया 'सव्वसंभमेणं' प्रमोदकृतौत्सुक्येन 'सव्वपुप्फगंधमल्लालंकारेण सव्वतूरसद्दसंनिनाएणं' सर्वतूर्यशब्दानां मीलने यः संगतो नितरां नादो—महान् घोषस्तेनेत्यर्थः, अल्पेष्वपि ऋद्ध्यादिषु सर्वशब्दप्रवृत्तिर्दृष्टा अत आह—'महता इड्ढीए' महता जुईए महता बलेणं महता समुदएणं महता वरतुरियजमगसमगपवाइएणं' 'जमगसमग'त्ति युगपत्, एतदेव विशेषेणाह—'संखपणवपडहभेरिझल्लरिखरमुहिहुडुक्कमुरवमुइंगदुंदुहिनिग्घोसनाइयरवेणं' तत्र शङ्खादीनां नितरां घोषो निर्घोषो—महाप्रयत्नोत्पादितः शब्दः नादितं—ध्वनिमात्रं एतद्द्वयलक्षणो यो रवः स तथा तेनेति। २ 'सेयापीएहिं'ति रजतसुवर्णमयैरित्यर्थः। ३ 'सिरीए देवीए मायाभत्ते यावि हुत्थ'त्ति श्रिया देव्या मातेतिबहुमानबुद्ध्या भक्तो मातृभक्तश्चाप्यभूत्,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते– यत् सू० ३० स्थाने सू० ३१ इति क्रम मुद्रितं, [मूल संपादनमें भूलसे सूत्र का क्रम ३० के बजाय ३१ छप गया है| इसिलिए हमे भी सूत्रक्रम- ३१ लिखना पडा है|

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३३]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

यावि होत्था, कल्लाकल्लिं जेणेव सिरी देवी तेणेव उवागच्छति २ त्ता सिरीए देवीए पायवडणं करेति सयपागसहस्सपागेहिं तेल्लेहिं अब्भिंगावेति अट्ठिसुहाते मंस० तया० चम्मसुहाए रोमसुहाए चोक्खिहाए संवाहणाए संवाहावेति सुरभिणा गंधवट्टएणं उवट्टावेति तिहिं उदएहिं मज्जावेति तंजहा—उसिणोदएणं सीओदएणं गंधोदएणं, विउलं असणं ४ भोयावेति सिरीए देवीए ण्हाताए जाव पायच्छित्ताए जिमियभुत्तुत्तरागयाए तते णं पच्छा ण्हाति वा भुंजति वा उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरति। तते णं तीसे देवदत्ताए देवीए अन्नया कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि कुडुंबजागरियं जागरमाणीइ इमेयारूवे अब्भत्थिए ५ समुप्पन्ने—एवं खलु पूसनंदी राया सिरीए देवीए माइभत्ते जाव विहरति तं एएणं वक्खेवेणं नो संचाएमि अहं पूसनंदीणा रण्णा सद्धिं उरालाइं० भुंजमाणीए विहरित्तए तं सेयं खलु मम सिरीदेवीं अग्गिपओगेण सत्थ० विस० मंतप्पओगेण वा जीवियाओ ववरोवेत्तए २ पूसनंदिरन्ना सद्धिं उरालाइं भोगभोगाइं भुंजमाणीए विहरित्तए, एवं संपेहेइ २ त्ता सिरीए देवीए अंतराणि य ३ पडिजागरमाणी

१ 'कल्लाकल्लिं'ति प्रातः प्रातः। २ 'गंधवट्टएणं'ति गन्धचूर्णेन। ३ 'जिमियभुत्तुत्तरागयाए'त्ति जेमितायां—कृतभोजनायां तथा भुक्त्वोत्तरमागतायां स्वस्थानमिति भावार्थः, उदारान्—मनोज्ञान् भोगान् भुञ्जानो विहरति। ४ 'पुव्वरत्तावरत्ते'ति पूर्वरात्रापररात्रकालसमये, रात्रेः पूर्वभागे पश्चाद्भागे वेत्यर्थः।

॥ ८६ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते– यत् सू० ३० स्थाने सू० ३१ इति क्रम मुद्रितं, [मूल संपादनमें भूलसे सूत्र का क्रम ३० के बजाय ३१ छप गया है| इसिलिए हमे भी सूत्रक्रम- ३१ लिखना पडा है|

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३३]

विहरति, तते णं सा सिरीदेवी अन्नया कयावि [1]मज्जाइया विरहियसयणिज्जंसि सुहपसत्ता जाया यावि होत्था, इमं च णं देवदत्ता देवी जेणेव सिरीदेवी तेणेव उवागच्छति २ त्ता सिरीदेवीं मज्जाइयं विरहित-सयणिज्जंसि सुहपसुत्तं पासति २ दिसालोयं करेति २ जेणेव भत्तघरे तेणेव उवागच्छति २ त्ता लोहदंडं [2]परामुसति २ लोहदंडं तावेति तत्तं [3]समजोइभूयं फुल्लकिंसुयसमाणं संडासएणं गहाय जेणेव सिरीदेवी तेणेव उवागच्छति २ त्ता सिरीए देवीए अवाणंसि पक्खिवेति, तते णं सा सिरीदेवी महया २ सद्देणं आरसित्ता कालधम्मुणा संजुत्ता, तते णं तीसे सिरीए देवीए दासचेडीओ आरसियसद्दं सोच्चा नि-सम्म जेणेव सिरीदेवी तेणेव उवागच्छंति देवदत्तं देवीं ततो अवक्कममाणिं पासंति २ जेणेव सिरीदेवी तेणेव उवागच्छंति सिरीदेवीं निप्पाणं निच्चिट्ठं जीवियविप्पजढं पासंति २ हा हा अहो अकज्जमितिकट्टु रोयमा० कंदमा० विलव० जेणेव पूसनंदी राया तेणेव उवागच्छंति २ त्ता पूसनंदीं रायं एवं वयासी–एवं खलु सामी! सिरीदेवी देवदत्ताए देवीए अकाले चेव जीवियाओ ववरोविया, तते णं से पूसनंदी राया तासिं दासचेडीणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म महया मातिसोएणं अप्फुण्णे समाणे परसुनियत्तेविव

१ 'मज्जाइय'त्ति पीतमद्या, 'विरहियसयणिज्जंसि'त्ति विरहिते विजनस्थाने शयनीयं तत्र। २ 'परामुसइ'त्ति गृह्णाति। ३ 'समजोइभूयं'ति समः–तुल्यो ज्योतिषा–अग्निना भूतो–जातो यः स तथा तम्। ४ 'रोयमाणीओ'त्ति अश्रुविमोचनात्, इहान्यदपि पदद्वयमध्येयं, तद्यथा—'कंदमाणीओ' आक्रन्दशब्दं कुर्वत्यः 'विलवमाणीओ'त्ति विलापान् कुर्वत्यः।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते– यत् सू० ३० स्थाने सू० ३१ इति क्रम मुद्रितं, [मूल संपादनमें भूलसे सूत्र का क्रम ३० के बजाय ३१ छप गया है| इसिलिए हमे भी सूत्रक्रम- ३१ लिखना पडा है|

चंपगवरपायवे धसत्ति धरणीतलंसि सव्वंगेहिं सन्निपडिते, तते णं से पूसनंदी राया मुहुत्तंतरेण आसत्थे वीसत्थे समाणे बहूहिं राईसर जाव सत्थवाहेहिं मित्तजाव परियणेण य सद्धिं रोयमाणे ३ सिरीए देवीए मयहरिया इट्ठीए नीहरणं करेति २ त्ता [1]आसुरुत्ते ४ देवदत्तं देविं पुरिसेहिं गिण्हावेति तेणं विहाणेणं वज्झं आणवेति, तं एवं खलु गोयमा! देवदत्ता देवी पुरापुराणाणं विहरति । देवदत्ता णं भंते! देवी इओ कालमासे कालं किच्चा कहिं गमिहिति? कहिं उववज्जिहिति?, गोयमा! असीइं वासाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए णेरइयत्ताए उववज्जे संसारो वणस्सति, ततो अणंतरं उव्वट्टित्ता गंगपुरे नगरे हंसत्ताए पच्चायाहिति, से णं तत्थ साउणिएहिं वधिए समाणे तत्थेव गंगपुरे णगरे सेट्ठिकुल० बोहिं सोहम्मे महाविदेहे वासे सिज्झिहिति, णिक्खेवो (सू० ३१) दुहविवागस्स नवमं अज्झयणं-तिबेमि ॥ ९ ॥

१ 'आसुरुत्ते'त्ति आशु-शीघ्रं रुष्टः-कोपेन विमोहितः, इहान्यदपि पदचतुष्कं दृश्यं, तद्यथा—'रुट्ठे'त्ति उदितरोषः 'कुविए'त्ति प्रवृद्धकोपोदयः 'चंडक्किए'त्ति प्रकटितरौद्ररूपः, 'मिसिमिसिमाणे'त्ति कोपाग्निना दीप्यमान इव ॥ देवदत्तायाः नवमाध्ययनस्य विवरणं ॥ ९ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

*** अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते– यत् सू० ३० स्थाने सू० ३१ इति क्रम मुद्रितं, [मूल संपादनमें भूलसे सूत्र का क्रम ३० के बजाय ३१ छप गया है| इसिलिए हमे भी सूत्रक्रम- ३१ लिखना पडा है|

अत्र नवमं अध्ययनं परिसमाप्तं

प्रत सूत्रांक [३२]

दीप अनुक्रम [३४]

अथ दशममुम्बरदत्ताख्यमध्ययनम् ।

अथ दशमे किञ्चिल्लिख्यते—

जति णं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं दसमस्स उक्खेवो, एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं वद्धमाणपुरे णाम णगरे होत्था, विजयवद्धमाणे उज्जाणे माणिभद्दे जक्खे विजयमित्ते राया, तत्थ णं धणदेवे नामं सत्थवाहे होत्था अड्ढे०, पियंगुनामभारिया अंजू दारिया जाव सरीरा, समोसरणं परिसा जाव पडिगया, तेणं कालेणं तेणं समएणं जेट्ठे जाव अडमाणे जाव विजयमित्तस्स रन्नो गिहस्स असोगवणियाए अदूरसामंतेणं वितिवयमाणे पासति एगं इत्थियं सुक्कं भुक्खं निम्मंसं किडिकिडीभूयं अट्ठिचम्मावणद्धं नीलसाडगनियत्थं कट्ठाइं कलुणाइं विसराइं कूवमाणं पासति २ चिंता तहेव जाव एवं वयासी—सा णं भंते! इत्थिया पुव्वभवे के आसि?, वागरणं, एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे इंदपुरे णामं णगरे होत्था, तत्थ णं इंददत्ते राया पुढवीसिरी नामं गणिया होत्था वण्णओ, तते णं सा पुढवीसिरी गणिया इंदपुरे णगरे बहवे राईसर जावप्पभियओ बहूहिं चुन्नप्पओगेहि य जाव आभिओगेत्ता उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरति, तते णं सा पुढवीसिरी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ दशमं अध्ययनं "अंजू" आरभ्यते

***अत्र शीर्षकस्थाने अध्ययनस्य नाम्नः विषये कश्चित् स्खलना संभाव्यते– यत् "अंजू" स्थाने 'उम्बरदत्त' इति मुद्रितं

गणिया एयकम्मा ४ सुबहुं समज्जिणित्ता पणतीसं वाससयाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा छट्ठीए पुढवीए उक्कोसेणं णेरइयत्ताए उववन्ना, सा णं तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव वद्धमाणपुरे णगरे धणदेवस्स सत्थवाहस्स पियंगुभारियाते कुच्छिंसि दारियत्ताए उववन्ना, तते णं सा पियंगुभारिया णवण्हं मासाणं दारियं पयाया, नामं अंजूसिरी, सेसं जहा देवदत्ताए । तते णं से विजए राया आसवाह० जहा वेसमणदत्ते तहा अंजूं पासइ णवरं अप्पणो अट्ठाए वरेति जहा तेतली जाव अंजूए दारियाते सद्धिं उप्पिं जाव विहरति, तते णं तीसे अंजूते देवीते अन्नया कयावि जोणिसूले पाउब्भूते यावि होत्था, तते णं विजये राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेति २ एवं वयासी–गच्छह णं देवाणुप्पिया! वद्धमाणे पुरे णगरे सिंघाडग जाव एवं वदह–एवं खलु देवाणुप्पिया! विजय० अंजूए देवीए जोणिसूले पाउब्भूते जो णं इत्थ विज्जो वा ६ जाव उग्घोसेंति, तते णं ते बहवे विज्जा वा ६ इमं एयारूवं सोच्चा निसम्म जेणेव विजए राया तेणेव उवागच्छंति २ त्ता अंजूते बहवे उप्पत्तियाहिं ४ परिणामेमाणा इच्छंति अंजूते देवीए जोणिसूलं उवसामित्तते, नो संचाएंति उवसामित्तए, तते णं ते बहवे विज्जा य ६ जाहे नो संचाएंति अंजूदेवि० जोणिसूलं उवसामित्तते

१ 'जहा तेयलि'त्ति ज्ञाताधर्मकथायां यथा तेतलिसुतनामा अमात्यः पोट्टिलाभिधानां कलादमूषिकारश्रेष्ठिसुतामात्मार्थं याचयित्वा आत्मनैव परिणीतवान् एवमयमपीति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ताहे संता तंता परितंता जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया, तते णं सा अंजूदेवी ताए वेयणाए अभिभूता समाणा सुक्का भुक्खा निम्मंसा कट्ठाइं कलुणाइं विसराइं विलवति, एवं खलु गोयमा! अंजूदेवी पुरापोराणाणं जाव विहरति । अंजू णं भंते! देवी इओ कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिति? कहिं उववज्जिहिति?, गोयमा! अंजू णं देवी नउइं वासाइं परमाउयं पालित्ता कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए नेरइयत्ताए उववज्जिहिइ, एवं संसारो जहा पढमे तहा नेयव्वं जाव वणस्सति०, सा णं ततो अणंतरं उव्वट्टित्ता सव्वतोभद्दे नगरे मयूरत्ताए पच्चायाहिति, से णं तत्थ साउणिएहिं वधिए समाणे तत्थेव सव्वतोभद्दे नगरे सेट्ठिकुलंसि पुत्तत्ताए पच्चायाहिति, से णं तत्थ उम्मुक्कबालभावे तहारूवाणं थेराणं केवलं बोहिं बुज्झिहिति पव्वज्जा सोहम्मे, से णं ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं कहिं गच्छिहिति? कहिं उववज्जिहिति?, गोयमा! महाविदेहे जहा पढमे जाव सिज्झिहिइ जाव अंतं काहिति । एवं खलु जंबू! समणेणं जाव संपत्तेणं दुहविवागाणं दसमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते, सेवं भंते २। (सू० ३२) दुहविवागो दससु अज्झयणेसु ॥ पढमो सुयक्खंधो सम्मत्तो ॥ १ ॥

॥ अञ्जूसार्थवाहसुतायाः दशमाध्ययनस्य विवरणम् ॥ १० ॥ तत्समाप्तौ च समाप्तं प्रथमश्रुतस्कन्धविवरणमिति ॥ १ ॥

अनु. १७

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र दशमं अध्ययनं परिसमाप्तं तत् परिसमाप्ते **प्रथम-श्रुतस्कन्धः** अपि परिसमाप्तः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३३]

दीप अनुक्रम [३५-३७]

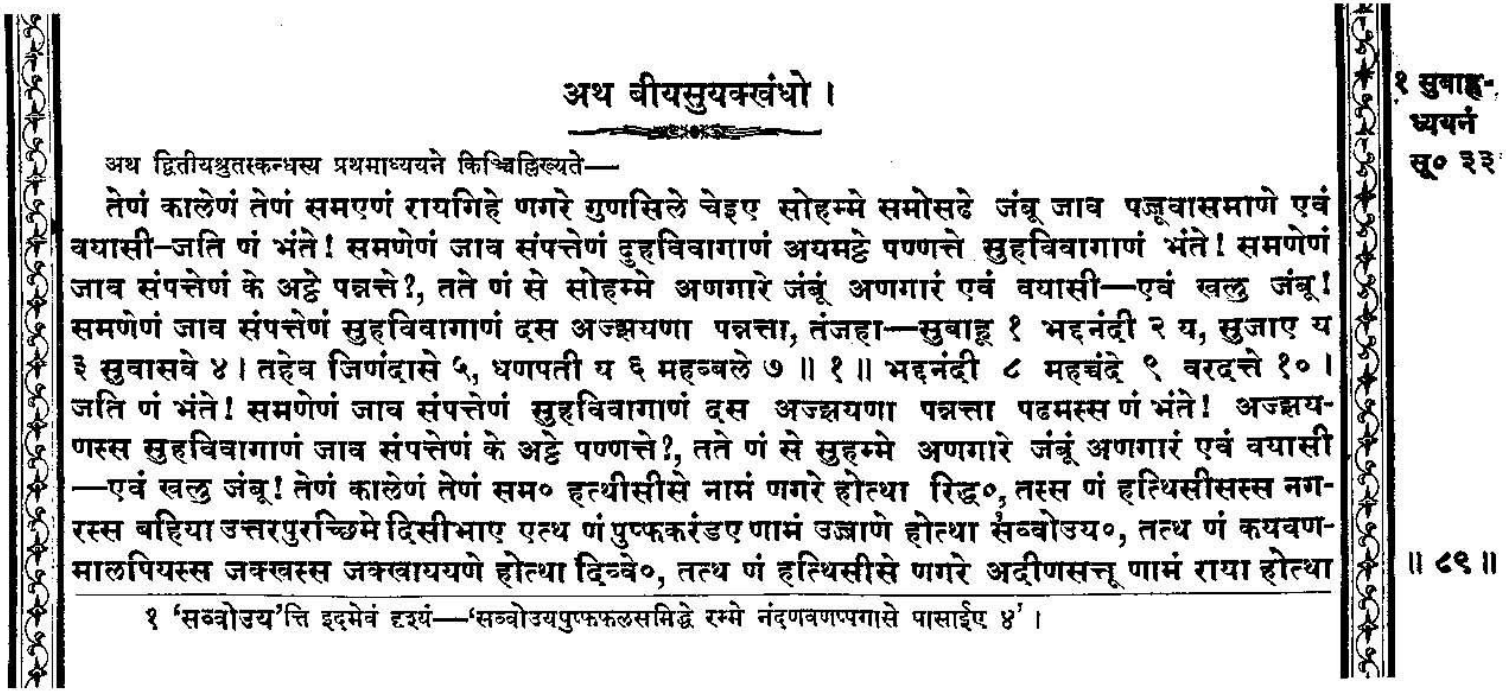

विपाके श्रुत० २

॥ ८९ ॥

अथ बीयसुयक्खंधो ।

अथ द्वितीयश्रुतस्कन्धस्य प्रथमाध्ययने किञ्चिल्लिख्यते—

तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णगरे गुणसिले चेइए सोहम्मे समोसढे जंबू जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी–जति णं भंते! समणेणं जाव संपत्तेणं दुहविवागाणं अयमट्ठे पण्णत्ते सुहविवागाणं भंते! समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पन्नत्ते?, तते णं से सोहम्मे अणगारे जंबूं अणगारं एवं वयासी—एवं खलु जंबू! समणेणं जाव संपत्तेणं सुहविवागाणं दस अज्झयणा पन्नत्ता, तंजहा—सुबाहू १ भद्दनंदी २ य, सुजाए य ३ सुवासवे ४। तहेव जिणदासे ५, धणपती य ६ महब्बले ७ ॥ १ ॥ भद्दनंदी ८ महचंदे ९ वरदत्ते १०। जति णं भंते! समणेणं जाव संपत्तेणं सुहविवागाणं दस अज्झयणा पन्नत्ता पढमस्स णं भंते! अज्झयणस्स सुहविवागाणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते?, तते णं से सुहम्मे अणगारे जंबूं अणगारं एवं वयासी—एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं सम० हत्थीसीसे नामं णगरे होत्था रिद्ध०, तस्स णं हत्थिसीसस्स नगरस्स बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए एत्थ णं पुप्फकरंडए णामं उज्जाणे होत्था सव्वोउय०, तत्थ णं कयवणमालपियस्स जक्खस्स जक्खाययणे होत्था दिव्वे०, तत्थ णं हत्थिसीसे णगरे अदीणसत्तू णामं राया होत्था

१ 'सव्वोउय'त्ति इदमेवं दृश्यं—'सव्वोउयपुप्फफलसमिद्धे रम्मे नंदणवणप्पगासे पासाईए ४'।

१ सुबाहु-ध्ययनं सू० ३३

॥ ८९ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र द्वितीय-श्रुतस्कंधः आरब्धः

अथ प्रथमं अध्ययनं "सुबाहु" आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [३३]

दीप अनुक्रम [३५-३७]

महता०, तस्स णं अदीणसत्तुस्स रन्नो धारणीपामोक्खा देवीसहस्सं ओरोहे यावि होत्था, तते णं सा धारणी देवी अन्नया कयाइ तंसि[1] तारिसगंसि वासघरंसि सीहं सुमिणे पासति जहा मेहस्स जम्मणं तहा भाणियव्वं जाव सुबाहुकुमारे अलं भोगसमत्थं वा जाणंति, अम्मापियरो पंच पासायवडिंसगसयाइं करावेंति अब्भुग्गय० भवणं एवं जहा महाबलस्स रन्नो णवरं पुप्फचूलापामोक्खाणं पंचण्हं रायवरकन्नयसयाणं एगदि-

१ 'तंसि तारिसगंसि वासभवणंसी'ति तस्मिन् तादृशे-राजलोकोचिते वासगृहे इत्यर्थः। २ 'जहा मेघस्स जम्मणं' ति ज्ञाताधर्मकथायां प्रथमाध्ययने यथा मेघकुमारस्य जन्मवक्तव्यतोक्ता एवमत्रापि सा वाच्येति, नवरमकालमेघदोहदवक्तव्यता नास्तीह। 'सुबाहुकुमार' इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'बावत्तरीकलापंडिए नवंगसुत्तपडिबोहिए' नवाङ्गानि—श्रोत्र २ चक्षु ४ घ्राण ६ रसना ७—त्वग् ८ मनो ९ लक्षणानि सन्ति सुप्रानि प्रतिबोधितानि यौवनेन यस्य स तथा, 'अट्ठारसदेसीभासाविसारए' इत्यादि 'जाव अलं भोगसमत्थे जाए यावि हुत्था, तए णं तस्स सुबाहुस्स अम्मापियरो सुबाहुं कुमारं बावत्तरीकलापंडियं जाव अलं भोगसमत्थं साहस्सियं वियालचारिं जाणंति जाणित्ता पञ्च प्रासादावतंसकशतानि कारयन्ति, किंभूतानि? इत्याह—'अब्भुग्गय'त्ति 'अब्भुग्गयभूसियपहसिए' इत्यादि, 'भवणं'ति एकं च भवनं कारयंति, अथ प्रासादभवनयोः कः प्रतिविशेषः?, उच्यते, प्रासादः स्वगतायामापेक्षया द्विगुणोच्छ्रयः भवनं त्वायामापेक्षया पादोनसमुच्छ्रयमेवेति, इह च प्रासादा वधूनिमित्तं भवनं च कुमाराय, 'एवं जहा महाबलस्स'त्ति भवनवर्णको विवाहवक्तव्यता च यथा भगवत्यां महाबलस्योक्ता एवमस्यापि वाच्या, केवलं तत्र कमलश्रीप्रमुखानामित्युक्तं इह पुष्पचूडाप्रमुखानामिति वाच्यम्, एतदेव दर्शयन्नाह—'नवर'मित्यादि।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३३]

दीप अनुक्रम [३५-३७]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

वसेणं पाणिं गिण्हावेंति, तहेव पंचसतिओ जाव उप्पिं पासायवरगते फुट्ट जाव विहरति, तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे समोसढे परिसा निग्गया अदीणसत्तू जहा कोणिओ निग्गतो सुबाहुवि जहा जमाली तहा रहेणं निग्गते जाव धम्मो कहिओ रायपरिसा गया, तते णं से सुबाहुकुमारे

१ सुबाहु-अध्ययनं सू० ३३

१ 'तहेव'त्ति यथा महाबलस्येत्यर्थः, **'पंचसइओ दाओ'**त्ति 'पंचसयाइं हिरन्नकोडीणं पंचसयाइं सुवण्णकोडीणं' इत्यादि दानं वाच्यम्, इह यावत्करणादेवं दृश्यं—'तए णं सुबाहुकुमारे एगमेगाए भारियाए एगमेगं हिरण्णकोडिं दलयइ' इत्यादि वाच्यं यावत् 'अन्नं च विपुलं धणकणगरयणमणिमोत्तियसंखसिलप्पवालमाइयं दलयति, तए णं से सुबाहुकुमारे'त्ति, 'उप्पिं पासायवरगए' प्रासादवरस्य उपरिस्थित इत्यर्थः, **'फुट्ट'** इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'फुट्टमाणेहिं मुइंगमत्थएहिं' स्फुटद्भिर्मृदङ्गमुखपुटैरतिरभसास्फालनादित्यर्थः, **'वरतरुणीसंपउत्तेहिं'**वरतरुणीसंप्रयुक्तैः **'बत्तीसइबद्धेहिं नाडएहिं'** द्वात्रिंशद्भिर्भक्तिनिबद्धैः द्वात्रिंशत्पात्रनिबद्धैरित्यन्ये 'उवगिज्जमाणे उवलालिज्जमाणे माणुस्सए कामभोगे पच्चणुब्भवमाणे'त्ति, **'जहा कूणिए'**त्ति यथा **औपपातिके कोणिक**राजो भगवद्वन्दनाय निर्गच्छन् वर्णित एवमयमपि वर्णयितव्य इति भावः। **'सुबाहूवि** जहा जमालि **तहा रहेण निग्गउ'**त्ति, अयमर्थः—येन **भगवती**-वर्णितप्रकारेण **जमाली** भगवद्भागिनेयो भगवद्वन्दनाय रथेन निर्गतोऽयमपि तेनैव प्रकारेण निर्गत इति, इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'समणस्स भगवओ महावीरस्स छत्ताइच्छत्तं पडागाइपडागं विज्जाचारणे जंभए य देवे ओवयमाणे उप्पयमाणे य पासति पासित्ता रहाओ पच्चोरुहइ २ त्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता'

॥ ९० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३३]

दीप अनुक्रम [३५-३७]

समणस्स भगवओ० अंतिए धम्मं सोचा निसम्म हट्ठतुट्ठे उट्ठाए उट्ठेति जाव एवं वयासी-सद्दहामि णं भंते! निग्गंथं पावयणं जहा णं देवाणुप्पियाणं अंतिए बहवे राईसर जाव नो खलु अहण्णं देवाणुप्पियाणं अंतिए० पंचअणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं गिहिधम्मं पडिवज्जामि, अहासुहं मा पडिबंधं करेह, तते णं से सुबाहू समणस्स० पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं गिहिधम्मं पडिवज्जति २ तमेव० दुरूहति जामेव० तेणं कालेणं तेणं स० जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई जाव एवं वयासी—अहो णं भंते! सुबाहुकुमारे इट्ठे इट्ठरूवे कंते कंतरूवे पिए २

१ 'हट्ठ'त्ति हृष्टः अतीव हृष्टः 'उट्ठाए'त्ति उत्थाय उत्तिष्ठेइ, इह यावत्करणात् इदं दृश्यं—'उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता 'सद्दहामि णं भंते! निग्गंथं' इत्यादि यत्सूत्रपुस्तके दृश्यते तद्वक्ष्यमाणवाक्यानुसारेणावगन्तव्यं, तथाहि—'सद्दहामि णं भंते! निग्गंथं पावयणं पत्तियामि णं भंते! निग्गंथं पावयणं देवाणुप्पियाणं अंतिए बहवे राईसरतलवरमाडंबियकोडुंबियसेट्ठिसत्थवाहपहियओ मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वयंति नो खलु अहं तहा संचाएमि पव्वइत्तए, अहन्नं देवाणुप्पियाणं अंतिए पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावयं गिहिधम्मं पडिवज्जामि, अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेह'त्ति भगवद्वचनं, 'तमेव' इदमेवं दृश्यं—'तमेव चाउग्घंटं आसरहं', 'जामेव' इत्यादि त्वेवं दृश्यं 'जामेव दिसं पाउब्भूते तामेव दिसिं पडिगए'त्ति। 'इंदभूई' इत्यत्र यावत्करणात् 'नामं अणगारे गोयमगोत्तेणं' मित्यादि दृश्यं, 'इट्ठे'त्ति इष्यते इतीष्टः स च तत्कृतविवक्षितकृत्यापेक्षयाऽपि स्यादित्याह—इष्टरूपः इष्टस्वरूप इत्यर्थः इष्टः इष्टरूपो वा कारणवशादपि स्यात् इत्याह—कान्तः—कमनीयः कान्तरूपः—कमनीयस्वरूपः, शोभनः शोभनस्वभावश्चेत्यर्थः, एवंविधः कश्चित् कर्मदोषात्परेषां प्रीतिं नोत्पादयेदित्यत आह—प्रियः—प्रेमोत्पादकः प्रियरूपः—प्रीतकारिस्वरूपः, एवंविधश्च लोकरूढितोऽपि स्यादित्यत आह—मनोज्ञः मनसा—अन्तःसंवेदनेन शोभनतया ज्ञायत इति मनोज्ञः, एवं मनोज्ञरूपः, एवंविधश्चैकदाऽपि स्यादित्यत आह—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३३]

दीप अनुक्रम [३५-३७]

मणुन्ने २ मणामे २ सोमे २ सुभगे २ पियदंसणे सुरूवे, बहुजणस्सवि य णं भंते! सुबाहुकुमारे इट्ठे ५ सोमे ४ साहुजणस्सवि य णं भंते! सुबाहुकुमारे इट्ठे इट्ठरूवे ५ जाव सुरूवे सुबाहुणा भंते! कुमारेणं इमा एयारूवा उराला माणुस्सरिद्धी किन्ना लद्धा किण्णा पत्ता किण्णा अभिसमन्नागया के वा एस आसि पुव्वभवे?, एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं सम० इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे हत्थिणाउरे णामं णगरे होत्था रिद्ध० तत्थ णं हत्थिणाउरे णगरे सुमुहे नामं गाहावई परिवसइ अड्ढे०, तेणं कालेणं तेणं समएणं धम्मघोसा

१ 'मणामे'त्ति मनसा अम्यते—गम्यते पुनः पुनः संस्मरणतो यः स मनोऽमः, एवं मनोऽमरूपः, एतदेव प्रपञ्चयन्नाह —'सोमे'त्ति अरौद्रः सुभगो—वल्लभः 'पियदंसणे'त्ति प्रेमजनकाकारः, किमुक्तं भवति?—'सुरूवे'त्ति शोभनाकारः सुखभावश्चेति, एवंविधश्चैकजनापेक्षयाऽपि स्यादित्यत आह—'बहुजणस्सवी'त्यादि, एवंविधश्च प्राकृतजनापेक्षयाऽपि स्यादित्यत आह—'साहुजणस्सवी'त्यादि । २ 'इमा एयारूव'त्ति इयं प्रत्यक्षा एतद्रूपा—उपलभ्यमानस्वरूपैव, अकृत्रिमेत्यर्थः 'किण्णा लद्ध'त्ति केन हेतुनोपार्जिता, 'किन्ना पत्त'त्ति केन हेतुना प्राप्ता उपार्जिता सती प्राप्तिमुपगता, 'किण्णा अभिसमन्नागय'त्ति प्राप्ताऽपि सती केन हेतुना आभिमुख्येन साङ्गत्येन च उपार्जनस्य च पश्चाद्भोग्यतामुपगतेति । 'को वा एस आसि पुव्वभवे' इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'किंनामए वा किं वा गोएणं कयरंसि वा गामंसि वा सन्निवेसंसि वा किं वा दच्चा किं वा भोच्चा किं वा समायरित्ता कस्स वा तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिते एगमवि आयरियं सुवयणं सोच्चा निसम्म सुबाहुणा कुमारेण इमा एयारूवा उराला माणुस्सिड्ढी लद्धा पत्ता अभिसमन्नागय'त्ति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुबाहुकुमारस्य पूर्वभवः -- "सुमुख" एवं सुमुखस्य धर्म-आराधना

प्रत सूत्रांक [३३]

दीप अनुक्रम [३५-३७]

णामं थेरा जातिसंपन्ना जाव पंचहिं समणसएहिं सद्धिं संपरिवुडा पुव्वाणुपुव्विं चरमाणा गामाणुगामं दूइज्जमाणा जेणेव हत्थिणाउरे णगरे जेणेव सहस्संबवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता णं संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरन्ति, तेणं कालेणं तेणं समएणं धम्मघोसाणं थेराणं अंतेवासी सुदत्ते णामं अणगारे उराले जाव लेस्से मासंमासेणं खममाणे विहरति, त० से सुदत्ते अणगारे मासक्खमणपारणगंसि पढमाए पोरिसीए सज्झायं करेति जहा गोयमसामी तहेव धम्मघोसे (सुधम्मे) थेरे आपुच्छति जाव अडमाणे सुमुहस्स गाहावतिस्स गेहे अणुप्पविट्ठे, तए णं से सुमुहे गाहावती सुदत्तं अणगारं एज्जमाणं पासति २ त्ता हट्ठतुट्ठे आसणातो अब्भुट्ठेति २ पायपीढाओ पच्चोरुहति २ पाउयातो ओमुयति २ एगसाडियं उत्तरासंगं करेति २ सुदत्तं अणगारं सत्तट्ठ पयाइं अणुगच्छति २ त्ता तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ २ त्ता वंदति णमंसति २ जेणेव भत्तघरे तेणेव उवागच्छति २ त्ता सयहत्थेणं विउलेणं

---

१ 'जाइसंपन्ना' इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'कुलसंपन्ना बलसंपन्ना, एवं विणयणाणदंसणचरित्तलज्जालाघवसंपन्ना ओयंसी तेयंसी वच्चंसी जसंसी'त्यादि। 'दूइज्ज'त्ति 'गामाणुगामं दूइज्जमाणा' इति दृश्यं, द्रवन्तो—गच्छन्त इत्यर्थः। २ 'जहा गोयमसामी'त्ति द्वितीयाध्ययने दर्शितगौतमस्वामिभिक्षाचर्यान्यायेनायमपि भिक्षाटनसामाचारीं प्रयुङ्क्ते इत्यर्थः। ३ 'सुहम्मे थेरे'त्ति धर्मघोषस्यविरानित्यर्थः, धर्मशब्दसाम्याच्छब्दद्वयस्याप्येकार्थत्वात्,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३३]

दीप अनुक्रम [३५-३७]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

असणपाणेणं ४ पडिलाभेस्सामीति तुट्ठे, तते णं तस्स सुमुहस्स गाहावइस्स तेणं दव्वसुद्धेणं [दायगसुद्धेणं पडिगाहगसुद्धेणं] तिविहेणं तिकरणसुद्धेणं सुदत्ते अणगारे पडिलाभिए समाणे संसारे परित्तीकते मणुस्साउते निबद्धे गेहंसि य से इमाइं पंच दिव्वाइं पाउब्भूयाइं तं०—वसुहारा वुट्ठा दसद्धवन्ने कुसुमे निवातिते चेलुक्खेवे कए आहयाओ देवदुंदुहीओ अंतरावि य णं आकासे अहो दानमहो दानं घुट्ठे य हत्थिणाउरे सिंघाडग जाव पहेसु बहुजणो अन्नमन्नस्स एवं आइक्खति ४–धन्ने णं देवाणुप्पिए! सुमुहे गाहावई ५ [सुकयपुन्ने

१ 'पडिलाभिस्सामीति तुट्ठे' इहेदं द्रष्टव्यं —'पडिलाभेमाणेवि तुट्ठे पडिलाभिएवि तुट्ठे'त्ति। 'तस्स सुहम्म(मुह)स्स'त्ति विभक्तिपरिणामात् 'तेन सुहुमे(मुहे)ने'ति द्रष्टव्यं, तेनेति अशनादिदानेन, 'दव्वसुद्धेणं'ति द्रव्यतः शुद्धेन प्रासुकादिनेत्यर्थः, इहान्यदपि 'गाहगसुद्धेणं दायगसुद्धेणं'ति दृश्यं, तत्र ग्राहकशुद्धं यत्र गृहीता चारित्रगुणयुक्तः दायकशुद्धं तु यत्र दाता औदार्यादिगुणान्वितः, अत एवाह—'तिविहेणं'ति उक्तलक्षणप्रकारत्रययुक्तेनेति 'तिकरणसुद्धेणं'ति मनोवाक्कायलक्षणकरणत्रयस्य दायकसम्बन्धिनो विशुद्धतयेत्यर्थः, 'एवं आइक्खइ'त्ति सामान्येनाचष्टे, इह चान्यदपि पदत्रयं द्रष्टव्यम् 'एवं भासइ'त्ति विशेषत आचष्टे 'एवं पन्नवेति एवं परूवेति' एतच्च पूर्वोक्तरूपपदद्वयस्यैव क्रमेण व्याख्यापनार्थं पदद्वयमवगन्तव्यम्, अथवा आख्यातीति तथैव भाषते तु व्यक्तवचनैः प्रज्ञापयतीति युक्तिभिर्बोधयति प्ररूपयति तु भेदतः कथयतीति। २ 'धन्ने णं देवाणुप्पिया! सुहुमे(मुहे)गाहावई' इत्यत्र यावत्करणादिदं दृश्यं—'पुन्ने णं देवाणुप्पिया! सुमुहे गाहावई एवं कयत्थे णं कयलक्खणे णं सुद्धे णं सुहुमस्स (सुहस्स)गाहावइस्स जम्मजीवियफले जस्स णं इमा एयारूवा उराला माणुस्सद्धी लद्धा पत्ता अभिसमन्नागय'त्ति 'तं धन्ने णं देवाणुप्पिया! सुहुमे गाहावई एवं कयत्थे णं' इत्यादि पूर्वैःप्रदर्शितमेवेह पदपञ्चकं निगमनतयाऽवसेयम्।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३३]

दीप अनुक्रम [३५-३७]

कयलक्खणे सुलद्धे णं मणुस्सजम्मे सुकयत्थ] जाव तं धन्ने णं देवाणुप्पिया! सुमुहे गाहावई । तते णं से सुमुहे गाहावई बहूइं वाससताइं आउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा इहेव हत्थिसीसे णगरे अदीणसत्तुस्स रन्नो धारणीए देवीए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववन्ने, तते णं सा धारणी देवी सयणिज्जंसि सुत्तजागरा २ ओहीरमाणी २ तहेव सीहं पासति सेसं तं चेव जाव उप्पिं पासाए विहरति, तं एयं खलु गोयमा! सुबाहुणा इमा एयारूवा माणुस्सरिद्धी लद्धा पत्ता अभिसमन्नागया, पभू णं भंते! सुबाहुकुमारे देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए?, हंता पभू, तते णं से भगवं गोयमे समणं भगवं० वंदति नमंसति २ संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति, तते णं से समणे भगवं महावीरे अन्नया कयाइ हत्थिसीसाओ णगराओ पुप्फगउज्जाणाओ कयवणमालजक्खाययणाओ पडिणिक्खमति २त्ता बहिया जणवयविहारं विहरति, तते णं से सुबाहुकुमारे समणोवासए जाते [1]अभिगयजीवाजीवे जाव पडिलाभेमाणे विहरति। तते णं से सुबाहुकुमारे अन्नया कयाइं [2]चाउद्दसट्ठमुद्दिट्ठपुण्णमासिणीसु जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छति २ त्ता पोसहसालं पमज्जति २ त्ता उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहति २ त्ता दब्भसंथारगं संथरति २दब्भसंथारं दुरूहइ दुरूहित्ता अट्ठमभत्तं पगिण्हइ पगिण्हेत्ता पोसहसालाए पोसहिते अट्ठमभत्तिए पोसहं

१ 'अभिगयजीवाजीवे' इह यावत्करणात् 'उवलद्धपुन्नपावे' इत्यादिकम् 'अहापडिग्गहिएहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ' एतदन्तं दृश्यम्। २ 'चाउद्दसट्ठमुद्दिट्ठपुण्णमासिणीसु'त्ति अत्रोद्दिष्टा–अमावास्या।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३३]

दीप अनुक्रम [३५-३७]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

पडिजागरमाणे विहरति, तए णं तस्स सुबाहुस्स कुमारस्स पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि धम्मजागरियं जागरमाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए ५ धण्णा णं ते गामागरणगरजाव सन्निवेसा जत्थ णं समणे भगवं महावीरे जाव विहरति, धन्ना णं ते राईसरतलवर[2] जे णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए मुंडा[3] जाव पव्वयंति, धन्ना णं ते राईसरतलवर जे णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए पंचाणुव्वइयं जाव गिहिधम्मं पडिवज्जंति, धन्ना णं ते राईसर जाव जे णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सुणेंति, तं जति णं समणे भगवं महावीरे पुव्वाणुपुव्विं[4] चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे इहमागच्छिज्जा जाव विहरिज्जा तते णं अहं समणस्स भगवतो अंतिए मुंडे भवित्ता जाव पव्वएज्जा, तते णं समणे भगवं महावीरे सुबाहुस्स कुमारस्स इमं एयारूवं अज्झत्थियं जाव वियाणित्ता पुव्वाणुपुव्विं जाव दूइज्जमाणे जेणेव हत्थिसीसे णगरे जेणेव पुप्फगउज्जाणे जेणेव कयवणमालपियस्स जक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता अहापडिरूवं उग्गहं गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति परिसा राया निग्गया।

१ 'गामागर' इह यावत्करणात् 'नगरकब्बडमडंबखेडदोणमुहपट्टणनिगमआसमसंवाहसन्निवेसा' इति दृश्यम्। २ 'राईसर' इहैवं दृश्यं—'राईसरतलवरमाडंबियकोडुंबियसेट्ठिसत्थवाहपभियओ'त्ति। ३ 'मुंडा' इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'भवित्ता अगाराओ अणगारियं'ति। ४ 'पुव्वाणुपुव्विं' इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'चरमाणे गामाणुगामं'ति।

॥ ९३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३३]

दीप अनुक्रम [३५-३७]

ततेणं तस्स सुबाहुयस्स कुमार० तं महया [1]जहा पढमं तहा निग्गओ धम्मो कहिओ परिसा राया पडिगया, ततेणं से सुबाहुकुमारे समणस्स भगवतो महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ जहा मेहे तहा अम्मापियरो आपुच्छति णिक्खमणाभिसेओ तहेव जाव अणगारे जाते ईरियासमिए[2] जाव बंभयारी, ततेणं से सुबाहू अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जति २ बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठम० तवोविहाणेहिं अप्पाणं भावित्ता बहूइं वासाइं सामन्नपरियागं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे देवत्ताए उववन्ने, से णं ततो देवलोगाओ [3]आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता माणुस्सं विग्गहं लभिहिइ २ केवलं बोहिं बुज्झिहिति २ तहारूवाणं थेराणं

१ 'जहा पढमं'ति यथेहैवाध्ययने प्रथमं जमालीनिदर्शनेन निर्गतोऽयमुक्तस्तथा द्वितीयनिर्गमेऽयं नगराद्विनिर्गत इति वाच्यम्, उभयत्र समानो वर्णकग्रन्थ इति भावः। २ 'ईरियासमिए' इत्यत्र यावत्करणादिदं दृश्यं—'भासासमिए ४ एवं मणगुत्ते ३ गुत्तिंदिए गुत्तत्ति—गुप्तबंभयारी'। ३ 'आउक्खएणं'ति आयुःकर्मद्रव्यनिर्जरणेन 'भवक्खएणं'ति देवगतिबन्धनदेवगत्यादिकर्मद्रव्यनिर्जरणेन 'ठिइक्खएणं'ति आयुष्कादिकर्म्मस्थितिविगमेन 'अणंतरं चयं चइत्त'त्ति देवसम्बन्धिनं देहं त्यक्त्वेत्यर्थः, अथवाऽनन्तरं—आयुःक्षयाद्यनन्तरं च्यवनं 'चइत्त'त्ति च्युत्वा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंतिए मुंडे जाव पव्वइस्सति, से णं तत्थ बहूइं वासाइं सामण्णं पाउणिहिइ आलोइयपडिक्कंते समाहि० कालगते सणंकुमारे कप्पे देवत्ताए उववन्ने, से णं ताओ देवलोयाओ ततो माणुस्सं पव्वज्जा बंभलोए माणुस्सं ततो महासुक्के ततो माणुस्सं आणते देवे ततो माणुस्सं ततो आरणे देवे ततो माणुस्सं सव्वट्ठसिद्धे, से णं ततो अणंतरं उव्वट्टित्ता महाविदेहे वासे जाव अड्ढाइं जहा दढपइन्ने सिज्झिहिति, एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं सुहविवागाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते (सू० ३३) ॥ इति पढमं अज्झयणं सम्मत्तं ॥ १ ॥

बितियस्स णं उक्खेवो—एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं उसभपुरे णगरे धूभकरंडउज्जाणे धन्नो जक्खो धणावहो राया सरस्सई देवी सुमिणदंसणं कहणं जम्मणं बालत्तणं कलाओ य जुव्वणे पाणिग्गहणं दाओ पासाद० भोगा य जहा सुबाहुयस्स नवरं भद्दनंदी कुमारे सिरिदेवीपामोक्खाणं पंचसया सामीसमोसरणं सावगधम्मं पुव्वभवपुच्छा महाविदेहे वासे पुंडरीकिणी णगरी विजयते कुमारे जुगबाहू तित्थयरे पडिलाभिए माणुस्साउए निबद्धे इहं उप्पन्ने सेसं जहा सुबाहुयस्स जाव महाविदेहे वासे सिज्झिहिति बुज्झिहिति मुच्चिहिति परिनिव्वाहिति सव्वदुक्खाणमंतं करेहिति ॥ बितियं अज्झयणं सम्मत्तं ॥ २ ॥ तच्चस्स

१ 'महाविदेहे' इह यावत्करणात् 'वासे जाइं इमाइं कुलाइं भवंति—अड्ढाइं दित्ताइं अपरिभूयाइं' इत्यादि दृश्यमिति ॥ द्वितीयश्रुतस्कन्धप्रथमाध्ययनस्य विवरणं सुबाहोः राजर्षेः ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र प्रथमं अध्ययनं परिसमाप्तं

अथ द्वितियम् अध्ययनं "भद्रनन्दी" आरब्धः एवं परिसमाप्तः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३४]

दीप अनुक्रम [३८-४७]

अनु. १८

उक्खेवो, वीरपुरं णगरं मणोरमं उज्जाणं वीरकण्हमित्ते राया सिरी देवी सुजाए कुमारे बलसिरीपामोक्खा पंचसयकन्ना सामीसमोसरणं पुव्वभवपुच्छा उसुयारे नयरे उसभदत्ते गाहावई पुप्फदत्ते अणगारे पडिलाभे० मणुस्साउए निबद्धे इह उप्पन्ने जाव महाविदेहे वासे सिज्झिहिति ॥ सुहविवागे तइयं अज्झयणं सम्मत्तं ॥ ३ ॥ चोत्थस्स उक्खेवो—विजयपुरं णगरं णंदणवणं [मणोरमं] उज्जाणं असोगो जक्खो वासवदत्ते राया कण्हा देवी सुवासवे कुमारे भद्दापामोक्खाणं पंचसया जाव पुव्वभवे कोसंबी णगरी धणपाले राया वेसमणभद्दे अणगारे पडिलाभिते इह जाव सिद्धे ॥ चोत्थं अज्झयणं सम्मत्तं ॥ ४ ॥ पंचमस्स उक्खेवओ—सोगंधिया णगरी नीलासोए उज्जाणे सुकालो जक्खो अप्पडिहओ राया सुकन्ना देवी महचंदे कुमारे तस्स अरहदत्ता भारिया जिणदासो पुत्तो तित्थयरागमणं जिणदासपुव्वभवो मज्झमिया णगरी मेहरहो राया सुधम्मे अणगारे पडिलाभिए जाव सिद्धे ॥ पंचमं अज्झयणं सम्मत्तं ॥ ५ ॥ छट्ठस्स उक्खेवओ—कणगपुरं णगरं सेयासोयं उज्जाणं वीरभद्दो जक्खो पियचंदो राया सुभद्दा देवी वेसमणे कुमारे जुवराया सिरीदेवीपामोक्खा पंचसया कन्ना पाणिग्गहणं तित्थयरागमणं धनवती जुवरायापुत्ते जाव पुव्वभवो मणिवया नगरी मित्तो राया संभूतिविजए अणगारे पडिलाभिते जाव सिद्धे ॥ छट्ठं अज्झयणं सम्मत्तं ॥ ६ ॥ सत्तमस्स उक्खेवो, महापुरं णगरं रत्तासोगं उज्जाणं रत्तपाओ जक्खो बले राया सुभद्दा देवी महब्बले कुमारे रत्तवईपामोक्खाओ पंचसया कन्ना पाणिग्गहणं तित्थयरागमणं जाव पुव्वभवो मणिपुरं णगरं णागदत्ते गाहावती

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ तृतीयं अध्ययनात् आरभ्य दशमं अध्ययनं पर्यन्तानि अष्ट-अध्ययनानि अत्र परिकथयतानि

प्रत सूत्रांक [३४]

दीप अनुक्रम [३८-४७]

इंदपुरे अणगारे पडिलाभिते जाव सिद्धे ॥ सत्तमं अज्झयणं सम्मत्तं ॥७॥ अट्ठमस्स उक्खेवो—सुघोसं णगरं देवरमणं उज्जाणं वीरसेणो जक्खो अज्जुण्णो राया तत्तवती देवी भद्दनंदी कुमारे सिरीदेवीपामोक्खा पंचसया जाव पुव्वभवे महाघोसे णगरे धम्मघोसे गाहावती धम्मसीहे अणगारे पडिलाभिए जाव सिद्धे ॥ अट्ठमं अज्झयणं सम्मत्तं ॥ ८ ॥ णवमस्स उक्खेवो—चंपा णगरी पुन्नभद्दे उज्जाणे पुन्नभद्दो जक्खो दत्ते राया रत्तवई देवी महचंदे कुमारे जुवराया सिरिकंतापामोक्खाणं पंचसया कन्ना जाव पुव्वभवो तिगिच्छी णगरी जियसत्तू राया धम्मवीरिये अणगारे पडिलाभिए जाव सिद्धे ॥ नवमं अज्झयणं सम्मत्तं ॥९॥ जति णं दसमस्स उक्खेवो, एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं सायेयं णामे णगरे होत्था उत्तरकुरुउज्जाणे पासमिओ जक्खो मित्तनंदी राया सिरिकंता देवी वरदत्ते कुमारे वरसेणपामोक्खा णं पंच देवीसया तित्थयरागमणं सावगधम्मं पुव्वभवो पुच्छा मणुस्साउए निबद्धे सतदुवारे नगरे विमलवाहणे राया धम्मरुचिनामं अणगारं एज्जमाणं पासति २ पडिलाभिते समाणे मणुस्साउते निबद्धे इहं उप्पन्ने सेसं जहा सुबाहुयस्स कुमारस्स चिंता जाव पव्वज्जा कप्पंतरिओ जाव सव्वट्ठसिद्धे ततो महाविदेहे जहा दढपइन्नो जाव सिज्झहिति बुज्झिहिति० सव्वदुक्खाणमंतं करेति ॥ एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं सुहविवागाणं दसमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते, सेवं भंते! सेवं भंते!। सुहविवागा (सू० ३४) एक्कारसमं अंगं सम्मत्तं ॥ १० ॥ नमो सुयदेवयाए—विवागसुयस्स दो सुयक्खंधा दुहविवागो य सुहविवागो य, तत्थ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ तृतीयं अध्ययनात् आरभ्य दशमं अध्ययनं पर्यन्तानि अष्ट-अध्ययनानि अत्र परिकथयतानि

अत्र द्वितिय-श्रुतस्कन्धः परिसमाप्तः

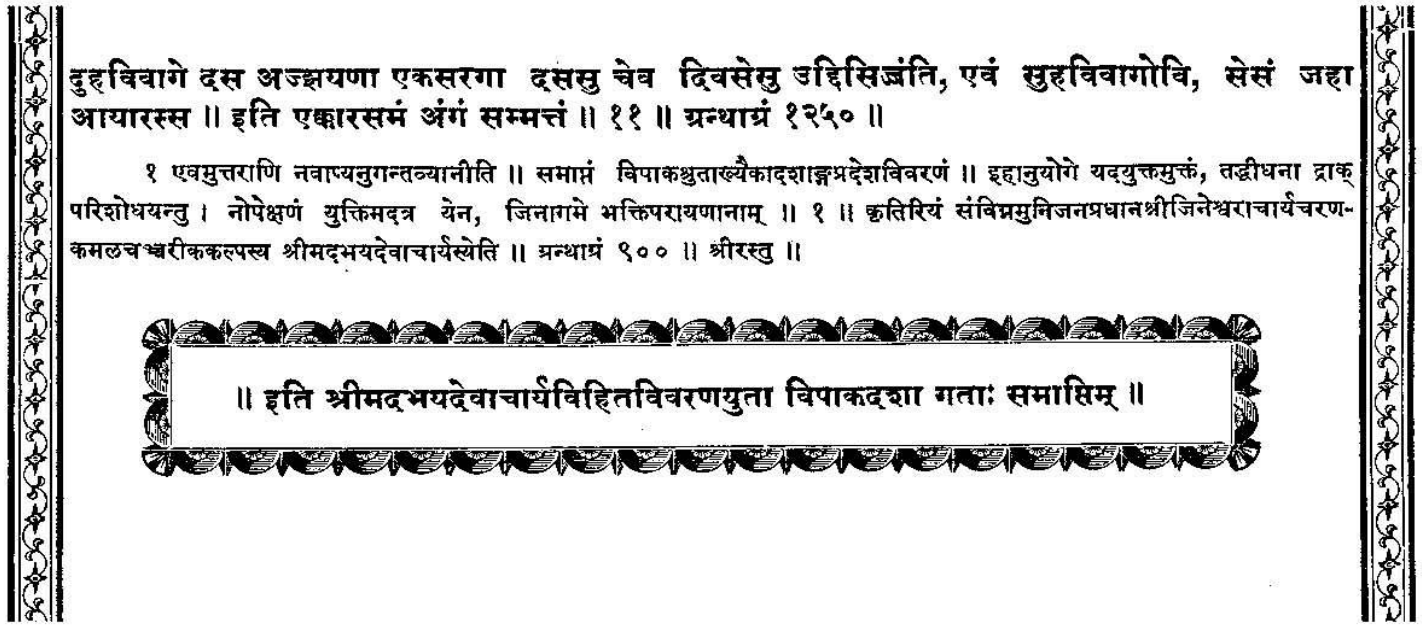

दुहविवागे दस अज्झयणा एकसरगा दससु चेव दिवसेसु उद्दिसिज्जंति, एवं सुहविवागोवि, सेसं जहा आयारस्स ॥ इति एक्कारसमं अंगं सम्मत्तं ॥ ११ ॥ ग्रन्थाग्रं १२५० ॥

१ एवमुत्तराणि नवाप्यनुगन्तव्यानीति ॥ समाप्तं विपाकश्रुताख्यैकादशाङ्गप्रदेशविवरणं ॥ इहानुयोगे यदयुक्तमुक्तं, तद्धीधना द्राक् परिशोधयन्तु । नोपेक्षणं युक्तिमदत्र येन, जिनागमे भक्तिपरायणानाम् ॥ १ ॥ कृतिरियं संविग्नमुनिजनप्रधानश्रीजिनेश्वराचार्यचरण-कमलचञ्चरीककल्पस्य श्रीमदभयदेवाचार्यस्येति ॥ ग्रन्थाग्रं ९०० ॥ श्रीरस्तु ॥

॥ इति श्रीमदभयदेवाचार्यविहितविवरणयुता विपाकदशा गताः समाप्तिम् ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भाग 14	विपाकश्रुत-अंगसूत्र- [११] मूलं एवं अभयदेवसूरिजी रचिता टीका परिसमाप्ता: मूल संशोधकः सम्पादकश्च पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब किंचित् वैशिष्ट्य समर्पितेन सह पुनः संकलनकर्ता मुनि दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

प्रत सूत्रांक [–] दीप अनुक्रम [–]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [१२], उपांगसूत्र- [१] “औपपातिक” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचित वृत्ति:

॥ अर्हम् ॥

श्रीचतुर्दशपूर्वधरश्रुतस्थविरप्रणीतं

चन्द्रकुलीनश्रीमदभयदेवसूरिविहितश्रीमद्द्रोणाचार्यशोधितवृत्तियुतं

श्रीमदौपपातिकसूत्रम् ।

मुद्रयिता झव्हेरीनथलचन्दउदेचन्दवधूनन्दकोराख्यायुताऽमरचन्द्रात्मजहर्षचन्द्र–
पुत्रीरत्नायुततैजस्याख्याकृतद्रव्यसाहाय्येन
आगमोदयसमितिकार्यवाहकः शाह–वेणीचन्द्रः सूरचन्द्रात्मजः

मुद्रितं मोहमय्यां निर्णयसागरमुद्रणयन्त्रे रा० रा० रामचन्द्र येसू शेडगेद्वारा

वीरसंवत्. २४४२ विक्रमसंवत्. १९७२ क्राइष्ट. १९१६

प्रथमसंस्करणे प्रतयः पञ्चशती ५०० पण्यं द्वादशाणकाः ०–१२–०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

औपपातिक(उपांग)सूत्रस्य मूल “टाइटल पेज”

आगम [१२] "औपपातिक" मूलं एवं वृत्तिः

इस प्रकाशन की विकास-गाथा

यह प्रत सबसे पहले "औपपातिक सूत्रम्" के नामसे सन १९१६ (विक्रम संवत १९७२) में आगमोदय समिति द्वारा प्रकाशित हुई, इस के संपादक-महोदय थे पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी (सागरानंदसूरिजी) महाराज साहेब |

✤ हमारा ये प्रयास क्यों? ✤ आगम की सेवा करने के हमें तो बहोत अवसर मिले, ४५-आगम सटीक भी हमने ३० भागोमे १२५०० से ज्यादा पृष्ठोमें प्रकाशित करवाए है, किन्तु लोगो की पूज्य श्री सागरानंदसूरीश्वरजी के प्रति श्रद्धा तथा प्रत स्वरुप प्राचीन प्रथा का आदर देखकर हमने इसी प्रत को स्केन करवाई, उसके बाद एक स्पेशियल फोरमेट बनवाया, जिसमे बीचमे पूज्यश्री संपादित प्रत ज्यों की त्यों रख दी, ऊपर शीर्षस्थानमे आगम का नाम, फिर विषय और मूलसूत्र के क्रमांक लिख दिए, ताँकि पढ़नेवाले को प्रत्येक पेज पर कौनसा विषय एवं मूलसूत्र चल रहे है उसका सरलता से ज्ञान हो शके, बायीं तरफ आगम का क्रम और इसी प्रत का सूत्रक्रम दिया है, उसके साथ वहाँ 'दीप अनुक्रम' भी दिया है, जिससे हमारे प्राकृत, संस्कृत, हिंदी गुजराती, इंग्लिश आदि सभी आगम प्रकाशनोमें प्रवेश कर शके | हमारे अनुक्रम तो प्रत्येक प्रकाशनोमें एक सामान और क्रमशः आगे बढते हुए ही है, इसीलिए सिर्फ क्रम नंबर दिए है, मगर प्रत में गाथा और सूत्रों के नंबर अलग-अलग होने से हमने जहां सूत्र है वहाँ कौंस [-] दिए है और जहां गाथा है वहाँ ||-|| ऐसी दो लाइन खींची है या फिर गाथा शब्द लिख दिया है |

हमने एक अनुक्रमणिका भी बनायी है, जिसमे प्रत्येक विषय आदि लिख दिये है और साथमें इस सम्पादन के पृष्ठांक भी दे दिए है, जिससे अभ्यासक व्यक्ति अपने चहिते विषय तक आसानी से पहुँच शकता है | अनेक पृष्ठ के नीचे विशिष्ठ फूटनोट भी लिखी है, जिसमे उस पृष्ठ पर चल रहे ख़ास विषयवस्तु की, मूल प्रतमें रही हुई कोई-कोई मुद्रण-भूल की या क्रमांकन सम्बन्धी जानकारी प्राप्त होती है |

शासनप्रभावक पूज्य आचार्यश्री हर्षसागरसूरिजी म०सा० की प्रेरणासे और श्री वर्धमान जैन आगममंदिर, पालिताणा की संपूर्ण द्रव्य सहाय से ये 'सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि' भाग-१४ का मुद्रण हुआ है, हम उन के प्रति हमारा आभार व्यक्त करते है |

.....मुनि दीपरत्नसागर.

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१]

दीप अनुक्रम [१]

॥ अर्हम् ॥

चतुर्दशपूर्वधरश्रुतस्थविरसंकलितं ।

श्रीमदभयदेवसूरिसंदृब्धविवरणयुतं ।

श्रीऔपपातिकसूत्रम् ।

॥ ऐँ ॥ श्रीवर्द्धमानमानम्य, प्रायोऽन्यग्रन्थवीक्षिता । औपपातिकशास्त्रस्य, व्याख्या काचिद्विधीयते ॥ १ ॥ अथौपपातिकमिति कः शब्दार्थः ?, उच्यते, उपपतनमुपपातो–देवनारकजन्म सिद्धिगमनं च, अतस्तमधिकृत्य कृतमध्ययनमौपपातिकम् । इदं चोपाङ्गं वर्त्तते, आचाराङ्गस्य हि प्रथममध्ययनं शास्त्रपरिज्ञा, तस्याद्योद्देशके सूत्रमिदम्–"एव [1]मेगेसिं नो नायं भवइ–अत्थि वा मे आया उववाइए, नत्थि वा मे आया उववाइए, के वा अहं आसी ? के वा इह (अहं) च्चुए (इओ चुओ) पेच्चा इह भविस्सामी" त्यादि, इह च सूत्रे यदौपपातिकत्वमात्मनो निर्दिष्टं तदिह प्रपञ्चयत इत्यर्थतोऽङ्गस्य समीपभावेनेदमुपाङ्गम् । अस्य चोपोद्घातग्रन्थोऽयम्—

तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा नाम नयरी होत्था, रिद्धत्थिमियसमिद्धा पमुइयजणजाणवया आइण्ण-

१ आचाराङ्गवृत्तिकाराभिप्रायेण 'एवेत्यादिर्भवइपर्यन्तः पाठो द्वितीयसूत्रोपसंहारवाक्यरूपः ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

औपपातिक सूत्रे अत्र "समवसरण-पदं" आरभ्यते

***चंपानगर्याः वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१]

दीप अनुक्रम [१]

जणमणुस्सा हलसयसहस्ससंकिट्ठविकिट्ठलट्ठपण्णत्तसेउसीमा कुक्कुडसंडेअगामपउरा उच्छुजवसालिकलिया गोमहिसगवेलगप्पभूता आयारवंतचेइयजुवइविविहसण्णिविट्ठबहुला उक्कोडियगायगंठिभेयभडतक्करखंडरक्खरहिया खेमा णिरुवद्दवा सुभिक्खा वीसत्थसुहावासा अणेगकोडिकुडुंबियाइण्णणिव्वुयसुहा णडणट्टगजल्लमल्लमुट्ठियवेलंबयकहगपवगलासगआइक्खगलंखमंखतूणइल्लतुंबवीणियअणेगतालायराणुचरिया आरामुज्जाणअगडतलागदीहियवप्पिणिगुणोववेया नंदणवणसन्निभप्पगासा

इह च बहवो वाचनाभेदा दृश्यन्ते, तेषु च यमेवावभोत्स्यामहे तमेव व्याख्यास्यामः, शेषास्तु मतिमता स्वयमूह्याः। तत्र योऽयं णंशब्दः स वाक्यालङ्कारार्थः, 'ते' इत्यत्र च य एकारः स प्राकृतशैलीप्रभवो, यथा 'करेमि भंते!' इत्यादिषु, ततोऽयं वाक्यार्थो जातः–तस्मिन् काले तस्मिन् समये यस्मिन्नसौ नगरी बभूवेति, अधिकरणे चेयं सप्तमी। अथ कालसमययोः कः प्रतिविशेषः ?, उच्यते, काल इति सामान्यकालो वर्त्तमानावसर्पिण्याश्चतुर्थविभागलक्षणः, समयस्तु तद्विशेषो यत्र सा नगरी स राजा वर्द्धमानस्वामी च बभूव। अथवा–तृतीयैवेयं, ततश्च तेन कालेन अवसर्पिणीचतुर्थारकलक्षणेन हेतुभूतेन तेन समयेन तद्विशेषभूतेन हेतुना चम्पा नाम नगरी 'होत्थत्ति' अभवद्, आसीदित्यर्थः। ननु चेदानीमपि साऽस्ति किं पुनरधिकृतग्रन्थकरणकाले ? तत्कथमुक्तमासीदिति ?, उच्यते, अवसर्पिणीत्वात्कालस्य वर्णकग्रन्थवर्णितविभूतियुक्ता सा तदानीं नास्तीति। 'रिद्धत्थिमियसमिद्धा' ऋद्धा–भवनादिभिर्वृद्धिमुपगता, स्तिमिता–भयवर्जितत्वेन स्थिरा, समृद्धा–धनधान्यादियुक्ता, ततः पदत्रयस्य कर्मधारयः। 'पमुइयजणजाणवया' प्रमुदिताः–हृष्टाः

॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चंपानगर्याः वर्णनं

प्रत सूत्रांक [१] दीप अनुक्रम [१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

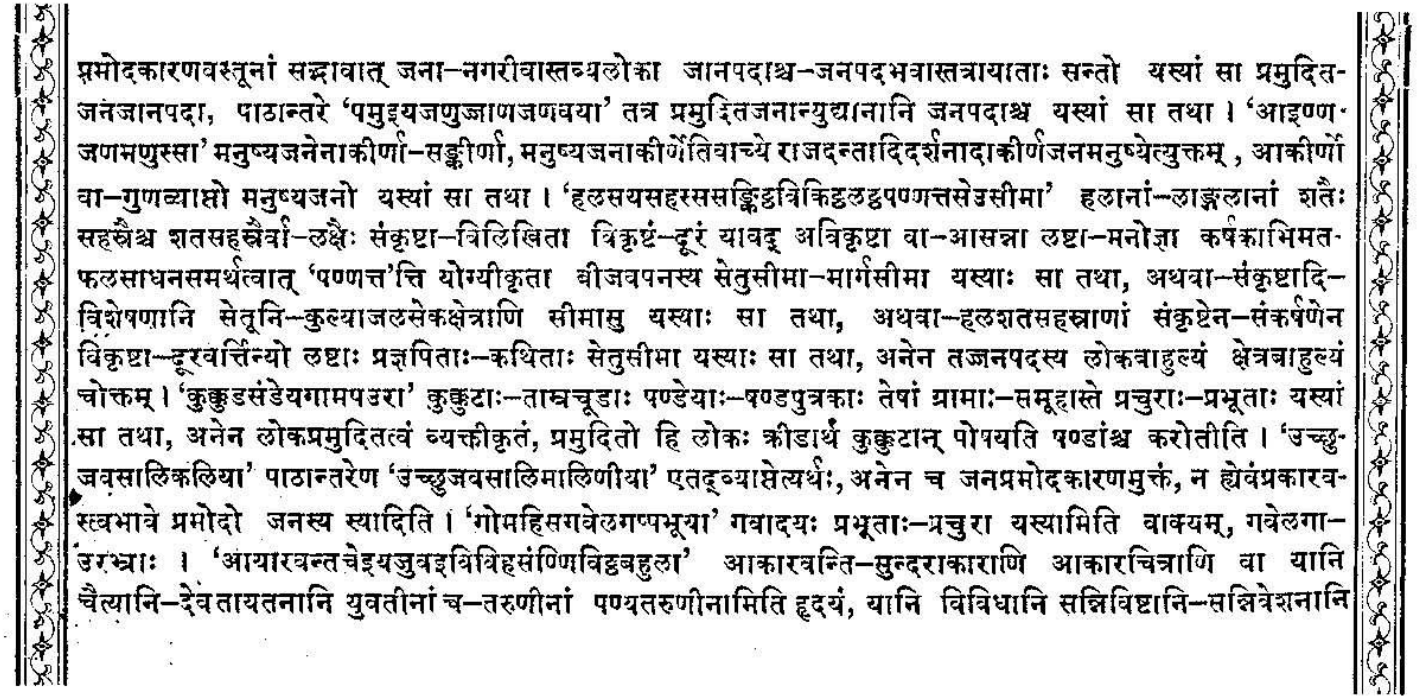

प्रमोदकारणवस्तूनां सद्भावात् जना–नगरीवास्तव्यलोका जानपदाश्च–जनपदभवास्तत्रायाताः सन्तो यस्यां सा प्रमुदितजनजानपदा, पाठान्तरे 'पमुइयजणुज्जाणजणवया' तत्र प्रमुदितजनान्युद्यानानि जनपदाश्च यस्यां सा तथा। 'आइण्णजणमणुस्सा' मनुष्यजनेनाकीर्णा–सङ्कीर्णा, मनुष्यजनाकीर्णेतिवाच्ये राजदन्तादिदर्शनादाकीर्णजनमनुष्येत्युक्तम्, आकीर्णो वा–गुणव्याप्तो मनुष्यजनो यस्यां सा तथा। 'हलसयसहस्ससङ्किट्ठविकिट्ठलट्ठपण्णत्तसेउसीमा' हलानां–लाङ्गलानां शतैः सहस्रैश्च शतसहस्रैर्वा–लक्षैः संकृष्टा–विलिखिता विकृष्टं–दूरं यावद् अविकृष्टा वा–आसन्ना लष्टा–मनोज्ञा कर्षकाभिमतफलसाधनसमर्थत्वात् 'पण्णत्त'त्ति योग्यीकृता बीजवपनस्य सेतुसीमा–मार्गसीमा यस्याः सा तथा, अथवा–संकृष्टादिविशेषणानि सेतूनि–कुल्याजलसेकक्षेत्राणि सीमासु यस्याः सा तथा, अथवा–हलशतसहस्राणां संकृष्टेन–संकर्षणेन विकृष्टा–दूरवर्त्तिन्यो लष्टाः प्रज्ञपिताः–कथिताः सेतुसीमा यस्याः सा तथा, अनेन तज्जनपदस्य लोकबाहुल्यं क्षेत्रबाहुल्यं चोक्तम्। 'कुक्कुडसंडेयगामपउरा' कुक्कुटाः–ताम्रचूडाः पण्डेयाः–षण्डपुत्रकाः तेषां ग्रामाः–समूहास्ते प्रचुराः–प्रभूताः यस्यां सा तथा, अनेन लोकप्रमुदितत्वं व्यक्तीकृतं, प्रमुदितो हि लोकः क्रीडार्थं कुक्कुटान् पोषयति षण्डांश्च करोतीति। 'उच्छुजवसालिकलिया' पाठान्तरेण 'उच्छुजवसालिमालिणीया' एतद्व्याख्येत्यर्थः, अनेन च जनप्रमोदकारणमुक्तं, न ह्येवंप्रकारवस्त्वभावे प्रमोदो जनस्य स्यादिति। 'गोमहिसगवेलगप्पभूया' गवादयः प्रभूताः–प्रचुरा यस्यामिति वाक्यम्, गवेलगा–उरभ्राः। 'आयारवन्तचेइयजुवइविविहसंण्णिविट्ठबहुला' आकारवन्ति–सुन्दराकाराणि आकारचित्राणि वा यानि चैत्यानि–देवतायतनानि युवतीनां च–तरुणीनां पण्यतरुणीनामिति हृदयं, यानि विविधानि सन्निविष्टानि–सन्निवेशनानि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	चंपानगर्याः वर्णनं

पाटकास्तानि बहुलानि बहूनि यस्यां सा तथा, 'अरिहन्तचेईयजणवयविसण्णिविट्ठबहुले'ति पाठान्तरं, तत्रार्हच्चैत्यानां जनानां व्रतिनां च विविधानि यानि सन्निविष्टानि–पाटकास्तैर्बहुलेति विग्रहः, 'सुयागचित्तचेईयजूयसण्णिविट्ठबहुला' इति च पाठान्तरम्, तत्र च सुयागाः–शोभनयज्ञाः चित्रचैत्यानि–प्रतीतानि यूपचितयो–यज्ञेषु यूपचयनानि द्यूतानि वा क्रीडाविशेषाश्चितयः तेषां सन्निविष्टानि–निवेशास्तैर्बहुला या सा तथा, 'उक्कोडियगायगंठिभेयभडतक्करखंडरक्खरहिया' उत्कोटा–उत्कोचा लञ्चेत्यर्थस्तया ये व्यवहरन्ति ते औत्कोटिकाः गात्रात्–मनुष्यशरीरावयवविशेषात् कव्यादेः सकाशात् ग्रन्थि–कार्षापणादिपुट्टलिकां भिन्दन्ति–आच्छिन्दन्तीति गात्रग्रन्थिभेदका, 'उक्कोडियगाहगंठिभेय' इति च पाठान्तरं व्यक्तं, भटाः–चारभटाः बलात्कारप्रवृत्तयः तस्कराः–तदेव–चौर्यं कुर्वन्तीत्येवंशीलाः खण्डरक्षा–दण्डपाशिकाः शुल्कपाला वा एभी रहिता या सा तथा, अनेन तत्रोपद्रवकारिणामभावमाह । 'खेमा' अशिवाभावात् । 'णिरुवद्दवा' निरुपद्रवा, अविद्यमानराजादिकृतोपद्रवेत्यर्थः । 'सुभिक्खा' सुष्ठु–मनोज्ञाः प्रचुरा भिक्षा भिक्षुकाणां यस्यां सा सुभिक्षा । अत एव पाषण्डिनां गृहस्थानां च 'वीसत्थसुहावासा' विश्वस्तानां–निर्भयानामनुत्सुकानां वा सुखः–सुखस्वरूपः शुभो वा आवासो यस्यां सा तथा । 'अणेगकोडिकुडुम्बियाइण्णनिव्वुयसुहा' अनेकाः कोटयो द्रव्यसङ्ख्यानां स्वरूपपरिमाणे वा येषां ते अनेककोटयः तै :कौटुम्बिकैः–कुटुम्बिभिराकीर्णा–सङ्कुला या सा तथा, सा चासौ निर्वृता च–सन्तुष्टजनयोगात्सन्तोषवतीति कर्म्मधारयः, अत एव सा चासौ सुखा च शुभा वेति कर्म्मधारयः । 'नडनट्टगजल्लमल्लमुट्ठियवेलम्बयकहगपवगलासगआइक्खगलंखमंखतूणइल्लतुम्बवीणियअणेगतालायराणुचरिया' नटाः–नाटकानां नाटयितारो नर्त्तका ये नृत्यन्ति,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चंपानगर्याः वर्णनं

प्रत सूत्रांक [१] दीप अनुक्रम [१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

अङ्किल्ला इत्येके, जल्ला–वरत्राखेलकाः, राज्ञः स्तोत्रपाठका इत्यन्ये, मल्लाः–प्रतीताः मौष्टिका–मल्ला एव ये मुष्टिभिः प्रहरन्ति, विडम्बकाः–विदूषकाः, कथकाः–प्रतीताः, प्लवका–ये उत्प्लवन्ते नद्यादिकं वा तरन्ति, लासका–ये रासकान् गायन्ति, जयशब्दप्रयोक्तारो वा, भाण्डा इत्यर्थः, आख्यायका–ये शुभाशुभमाख्यान्ति, लङ्घा–महावंशाग्रखेलकाः, मङ्खाः–चित्रफलकहस्ता भिक्षुकाः, तूणइल्ला–तूणाभिधानवाद्यविशेषवन्तः, तुम्बवीणिका–वीणावादकाः, अनेके च ये तालाचराः–तालादानेन प्रेक्षाकारिणस्तैरनुचरिता–आसेविता या सा तथा। 'आरामुज्जाणअगडतलायदीहियवप्पिणिगुणोववेया' आरमन्ति–येषु माधवीलतागृहादिषु दम्पत्यादीनि क्रीडन्ति, आरामाः, उद्यानानि–पुष्पादिमद्वृक्षसङ्कुलान्युत्सवादौ बहुजनभोग्यानि, 'अगडत्ति' अवटाः–कूपाः, तडागानि–प्रतीतानि, दीर्घिका–सारणी, 'वप्पिणि'त्ति केदाराः, एतेषां ये गुणा–रम्यतादयस्तैरुपपेता–युक्ता या सा तथा, उप अप इत इत्येतस्य शब्दत्रयस्य स्थाने शकन्ध्वादिदर्शनादकारलोपे उपपेतेति भवति। क्वचित्पठ्यते 'नन्दणवणसन्निभप्पगासा' नन्दनवनं–मेरोर्द्वितीयवनं तत्प्रकाशसन्निभः प्रकाशो यस्यां सा तथा, इह चैकस्य प्रकाशशब्दस्य लोपः उष्ट्रमुख इत्यादाविवेति।

उव्विद्धविउलगंभीरखायफलिहा चक्कगयसुसंढिओरोहसयग्घिजमलकवाडघणदुप्पवेसा धणुकुडिलवंकपागारपरिक्खित्ता कविसीसयवट्टरइयसंठियविरायमाणा अट्टालयचरियदारगोपुरतोरणउण्णयसुविभत्तरायमग्गा छेयायरियरइयदढफलिहइंदकीला

'उविद्धविउलगम्भीरखायफलिहा' उद्विद्धं–ऊर्द्धं विपुलं–विस्तीर्णं गम्भीरम्–अलब्धमध्यं खातम्–उपरिविस्तीर्णम्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	चंपानगर्याः वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१]

दीप अनुक्रम [१]

अधःसङ्कटं परिखा च–अध उपरि च समखातरूपा यस्यां सा तथा । 'चक्कगयमुसुंढिओरोहसयग्घिजमलकवाडघणदुप्पवेसा' चक्राणि–रथाङ्गानि अरघट्टाङ्गानि वा, गदाः–प्रहरणविशेषाः, मुसुण्ढयोऽप्येवम्, अवरोधः–प्रतोलिद्वारेष्ववान्तरप्राकारः सम्भाव्यते, शतघ्न्यो–महायष्टयो महाशिला वा या उपरिष्टात्पातिताः सत्यः शतानि पुरुषाणां घ्नन्तीति, यमलानि–समसंस्थितद्वयरूपाणि यानि कपाटानि घनानि च निश्छिद्राणि तैर्दुष्प्रवेशा या सा तथा । 'धणुकुडिलवंकपागारपरिक्खित्ता' धनुःकुटिलं–कुटिलधनुस्ततोऽपि वक्रेण प्राकारेण परिक्षिप्ता या सा तथा । 'कविसीसयवट्टरइयसंठियविरायमाणा' कपिशीर्षकैर्वृत्तरचितैः–वर्त्तुलकृतैः संस्थितैः–विशिष्टसंस्थानवद्भिर्विराजमाना–शोभमाना या सा तथा । 'अट्टालयचरियदारगोपुरतोरणउण्णयसुविभत्तरायमग्गा' अट्टालकाः–प्राकारोपरिवर्त्याश्रयविशेषाः, चरिका–अष्टहस्तप्रमाणा नगरप्राकारान्तरालमार्गाः, द्वाराणि–प्राकारद्वारिकाः, गोपुराणि–पुरद्वाराणि, तोरणानि–प्रतीतानि, उन्नतानि–गुणवन्ति उच्चानि च यस्यां सा तथा, सुविभक्ताः–विविक्ता राजमार्गा यस्यां सा तथा, ततः पदद्वयस्य कर्म्मधारयः । 'छेयायरियरइयदढफलिहइंदकीला' छेकेन–निपुणेनाचार्येण–शिल्पिना रचितो दृढो–बलवान् परिघः–अर्गला इन्द्रकीलश्च–गोपुरावयवविशेषो यस्यां सा तथा ।

विवणिवणिच्छेत्तसिप्पियाइण्णणिव्वुयसुहा सिंघाडगतिगचउक्कचच्चरपणियावणविविहवत्थुपरिमंडिया सुरम्मा नरवइपविइण्णमहिवइपहा अणेगवरतुरगमत्तकुंजररहपहकरसीयसंदमाणीयाइण्णजाणजुग्गा विम-

॥ ३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चंपानगर्याः वर्णनं

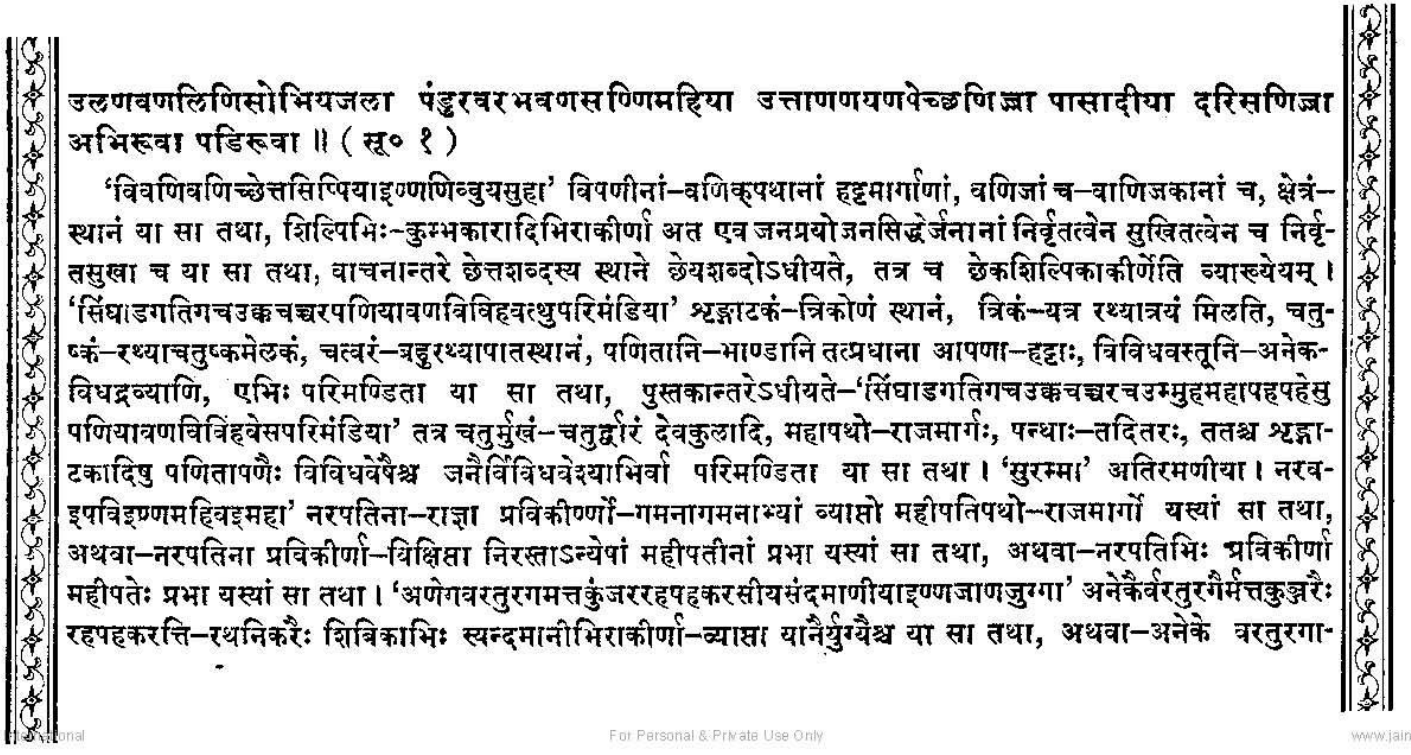

उल्लणवणलिणिसोभियजला पंडुरवरभवणसण्णिमहिया उत्ताणणयणपेच्छणिज्जा पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा ॥ (सू० १)

'विवणिवणिच्छेत्तसिप्पियाइण्णणिव्वुयसुहा' विपणीनां–वणिक्पथानां हट्टमार्गाणां, वणिजां च–वाणिजकानां च, क्षेत्रं–स्थानं या सा तथा, शिल्पिभिः–कुम्भकारादिभिराकीर्णा अत एव जनप्रयोजनसिद्धेर्जनानां निर्वृतत्वेन सुखितत्वेन च निर्वृतसुखा च या सा तथा, वाचनान्तरे छेत्तशब्दस्य स्थाने छेयशब्दोऽधीयते, तत्र च छेकशिल्पिकाकीर्णेति व्याख्येयम् । 'सिंघाडगतिगचउक्कचच्चरपणियावणविविहवत्थुपरिमंडिया' शृङ्गाटकं–त्रिकोणं स्थानं, त्रिकं–यत्र रथ्यात्रयं मिलति, चतुष्कं–रथ्याचतुष्कमेलकं, चत्वरं–बहुरथ्यापातस्थानं, पणितानि–भाण्डानि तत्प्रधाना आपणा–हट्टाः, विविधवस्तूनि–अनेकविधद्रव्याणि, एभिः परिमण्डिता या सा तथा, पुस्तकान्तरेऽधीयते–'सिंघाडगतिगचउक्कचच्चरचउम्मुहमहापहपहेसु पणियावणविविहवेसपरिमंडिया' तत्र चतुर्मुखं–चतुर्द्वारं देवकुलादि, महापथो–राजमार्गः, पन्थाः–तदितरः, ततश्च शृङ्गाटकादिषु पणितापणैः विविधवेषैश्च जनैर्विविधवेश्याभिर्वा परिमण्डिता या सा तथा । 'सुरम्मा' अतिरमणीया । नरवइपविइण्णमहिवइमहा' नरपतिना–राज्ञा प्रविकीर्णो–गमनागमनाभ्यां व्याप्तो महीपतिपथो–राजमार्गो यस्यां सा तथा, अथवा–नरपतिना प्रविकीर्णा–विक्षिप्ता निरस्ताऽन्येषां महीपतीनां प्रभा यस्यां सा तथा, अथवा–नरपतिभिः प्रविकीर्णा महीपतेः प्रभा यस्यां सा तथा । 'अणेगवरतुरगमत्तकुंजररहपहकरसीयसंदमाणीयाइण्णजाणजुग्गा' अनेकैर्वरतुरगैर्मत्तकुञ्जरैः रहपहकरत्ति–रथनिकरैः शिबिकाभिः स्यन्दमानीभिराकीर्णा–व्याप्ता यानैर्युग्यैश्च या सा तथा, अथवा–अनेके वरतुरगा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	चंपानगर्याः वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१]

दीप अनुक्रम [१]

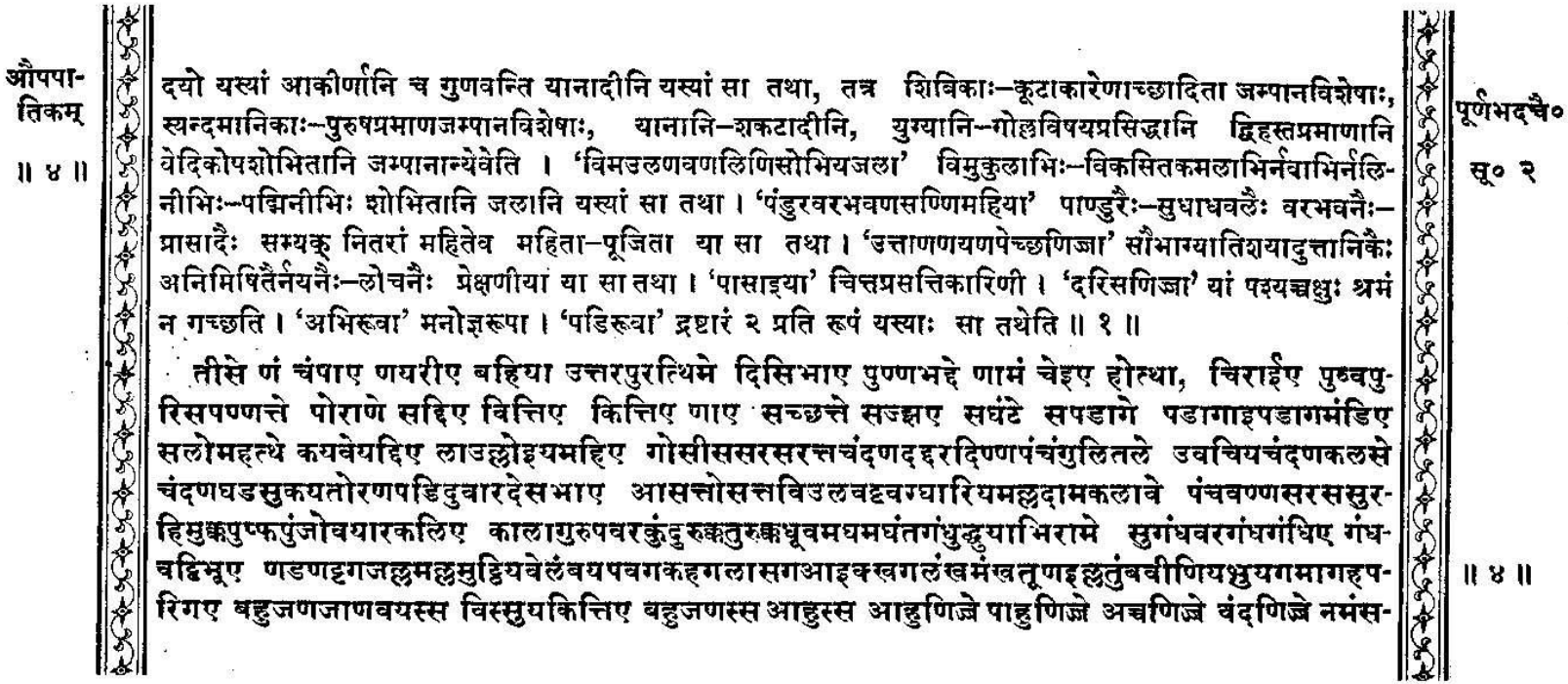

औपपातिकम् ॥ ४ ॥

दयो यस्यां आकीर्णानि च गुणवन्ति यानादीनि यस्यां सा तथा, तत्र शिविकाः–कूटाकारेणाच्छादिता जम्पानविशेषाः, स्यन्दमानिकाः–पुरुषप्रमाणजम्पानविशेषाः, यानानि–शकटादीनि, युग्यानि–गोल्लविषयप्रसिद्धानि द्विहस्तप्रमाणानि वेदिकोपशोभितानि जम्पानान्येवेति । 'विमउलणवणलिणिसोभियजला' विमुकुलाभिः–विकसितकमलाभिर्नवाभिर्नलिनीभिः–पद्मिनीभिः शोभितानि जलानि यस्यां सा तथा । 'पंडुरवरभवणसण्णिमहिया' पाण्डुरैः–सुधाधवलैः वरभवनैः–प्रासादैः सम्यक् नितरां महितेव महिता–पूजिता या सा तथा । 'उत्ताणणयणपेच्छणिज्जा' सौभाग्यातिशयादुत्तानिकैः अनिमिषितैर्नयनैः–लोचनैः प्रेक्षणीया या सा तथा । 'पासाइया' चित्तप्रसत्तिकारिणी । 'दरिसणिज्जा' यां पश्यच्चक्षुः श्रमं न गच्छति । 'अभिरूवा' मनोज्ञरूपा । 'पडिरूवा' द्रष्टारं २ प्रति रूपं यस्याः सा तथेति ॥ १ ॥

तीसे णं चंपाए णयरीए बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए पुण्णभद्दे णामं चेइए होत्था, चिराईए पुव्वपुरिसपण्णत्ते पोराणे सद्दिए वित्तिए कित्तिए णाए सच्छत्ते सज्झए सघंटे सपडागे पडागाइपडागमंडिए सलोमहत्थे कयवेयद्दिए लाउल्लोइयमहिए गोसीससरसरत्तचंदणदद्दरदिण्णपंचंगुलितले उवचियचंदणकलसे चंदणघडसुकयतोरणपडिदुवारदेसभाए आसत्तोसत्तविउलवट्टवग्घारियमल्लदामकलावे पंचवण्णसरससुरहिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलिए कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामे सुगंधवरगंधगंधिए गंधवट्टिभूए णडणट्टगजल्लमल्लमुट्ठियवेलंबयपवगकहगलासगआइक्खगलंखमंखतूणइल्लतुंबवीणियभुयगमागहपरिगए बहुजणजाणवयस्स विस्सुयकित्तिए बहुजणस्स आहुस्स आहुणिज्जे पाहुणिज्जे अच्चणिज्जे वंदणिज्जे नमंस-

पूर्णभद्रचै० सू० २

॥ ४ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चंपानगर्याः वर्णनं, पूर्णभद्रचैत्यस्य वर्णनं

प्रत सूत्रांक [२]

दीप अनुक्रम [२]

णिज्जे पूयणिज्जे सक्कारणिज्जे सम्माणणिज्जे कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं विणएणं पज्जुवासणिज्जे दिव्वे सच्चे सच्चोवाए सण्णिहियपाडिहेरे जागसहस्सभागपडिच्छए बहुजणो अच्चेइ आगम्म पुण्णभद्दं चेइयं २ (सू० २)॥

'तीसे'त्ति तस्यां 'ण'मित्यलङ्कारे चम्पायां नगर्यां 'उत्तरपुरत्थिमे'त्ति उत्तरपौरस्त्ये–उत्तरपूर्वायामित्यर्थः, 'दिसिभाए'त्ति दिग्भागे, पूर्णभद्रं नाम चैत्यं–व्यन्तरायतनं, 'होत्थे'ति अभवत्। 'चिराईए पुव्वपुरिसपण्णत्ते' चिरम्–चिरकाल आदिः–निवेशो यस्य तच्चिरादिकम्, अत एव पूर्वपुरुषैः–अतीतनरैः प्रज्ञप्तम्–उपादेयतया प्रकाशितं पूर्वपुरुषप्रज्ञप्तं। 'पोराणे'त्ति चिरादिकत्वात्पुरातनं। 'सद्दिए'त्ति शब्दः–प्रसिद्धिः स सञ्जातो यस्य तच्छब्दितं। 'वित्तिए'त्ति वित्तं–द्रव्यं तदस्ति यस्य तद्वित्तिकं, वृत्तिं वाऽऽश्रितलोकानां ददाति यत्तद्वृत्तिदं। 'कित्तिए'त्ति पाठान्तरं, तत्र कीर्त्तितं–जनेन समुत्कीर्त्तितं कीर्त्तिदं वा। 'णाए'त्ति न्यायनिर्णायकत्वात् न्यायः ज्ञातं वा–ज्ञातसामर्थ्यमनुभूततत्प्रसादेन लोकेनेति। सच्छत्रं सध्वजं सघण्टमिति व्यक्तं। 'सपडागाइपडागमंडिए' सह पताकया वर्त्तत इति सपताकं तच्च तदेकां पताकामतिक्रम्य या पताका सा अतिपताका तया मण्डितं यत्तत्तथा, वाचनान्तरे–'सपडाए पडागाइपडागमंडिए'त्ति। 'सलोमहत्थे' लोममयप्रमार्जनकयुक्तं। 'कयवेयद्दिए' कृतवितर्दिकं–रचितवेदिकं। 'लाउल्लोइयमहिए' लाइयं–यद्भूमेश्छगणादिनोपलेपनम्, उल्लोइयं–कुड्यमालानां सेटिकादिभिः संमृष्टीकरणं, ततस्ताभ्यां महितमिव महितं–पूजितं यत्तत्तथा। 'गोसीससरसरत्तचंदणदद्दर-दिन्नपंचंगुलितले' गोशीर्षेण–सरसरक्तचन्दनेन च दर्दरेण–त्वहलेन चपेटाप्रकारेण वा दत्ताः पञ्चाङ्गुलयः तला–हस्तका

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूर्णभद्रचैत्यस्य वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२]

दीप अनुक्रम [२]

यत्र तत्तथा । 'उवचियचन्दणकलसे' उपचिता–निवेशिताः चन्दनकलशा–माङ्गल्यघटा यत्र तत्तथा । 'चंदणघडसुकयतोरणपडिदुवारदेसभाए' चन्दनघटाश्च सुष्ठु कृततोरणानि च द्वारदेशभागं २ प्रति यस्मिंस्तच्चन्दनघटसुकृततोरणप्रतिद्वारदेशभागं, देशभागाश्च देशा एव । 'आसत्तोसत्तविउलवट्टवग्घारियमल्लदामकलावे' आसक्तो–भूमौ संबद्धः उत्सक्त–उपरिसंबद्धः विपुलो–विस्तीर्णः वृत्तो–वर्त्तुलः 'वग्घारिओ'त्ति प्रलम्बमानः माल्यदामकलापः–पुष्पमालासमूहो यत्र तत्तथेति । 'पञ्चवण्णसरससुरभिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलिए' पञ्चवर्णेन सरसेन सुरभिणा मुक्तेन–क्षिप्तेन पुष्पपुञ्जलक्षणेनोपचारेण–पूजया कलितं यत्तत्तथा । 'कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवमघमघन्तगन्धुद्धुयाभिरामे' कालागुरुप्रभृतीनां धूपानां यो मघमघायमानो गन्धः उद्धुत–उद्भूतस्तेनाभिरामं यत्तत्तथा, तत्र 'कुंदुरुक्कं'ति चीडा 'तुरुक्कं'ति च सिल्हकं । 'सुगन्धवरगंधगंधिए' सुगन्धा ये वरगन्धाः–प्रवरवासास्तेषां गन्धो यत्रास्ति तत्तथा । 'गन्धवट्टिभूए' सौरभ्यातिशयाद्गन्धद्रव्यगुटिकाकल्पमित्यर्थः । 'नडनट्टे' त्यादि पूर्ववन्नवरमिह भुयगा–भुजङ्गा भोगिन इत्यर्थः, भोजका वा–तदर्चकाः 'मागधा' भट्टा इति । 'बहुजणजाणवयस्स विस्सुयकित्तिए' बहोर्जनस्य–पौरस्य जानपदस्य च–जनपदभवलोकस्य विश्रुतकीर्तिकं–प्रतीतख्यातिकं । 'बहुजणस्स आहुस्स'त्ति आहोतुः–दातुः, क्वचिदिदं न दृश्यते, 'आहुणिज्जे'त्ति आहवनीयं–सम्प्रदानभूतं । 'पाहुणिज्जे'त्ति प्रकर्षेण आहवनीयं । 'अच्चणिज्जे' चन्दनगन्धादिभिः । 'वन्दणिज्जे' स्तुतिभिः । 'नमंसणिज्जे' प्रणामतः । 'पूयणिज्जे' पुष्पैः । 'सक्कारणिज्जे' वस्त्रैः । 'सम्माणणिज्जे' बहुमानविषयतया । 'कल्लाणं मङ्गलं देवयं चेइयं विणएणं पज्जुवासणिज्जे' कल्याणमित्यादिबुद्ध्या विनयेन पर्युपासनीयं, तत्र 'कल्याणम्' अर्थहेतुः 'मङ्गलम्' अनर्थप्रतिहतिहेतुः 'दैवतं'

॥ ५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूर्णभद्रचैत्यस्य वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२]

दीप अनुक्रम [२]

देवः 'चैत्यम्' इष्टदेवताप्रतिमा 'दिव्वे' दिव्यं प्रधानं । 'सच्चे' सत्यं सत्यादेशत्वात् । 'सच्चोवाए' सत्यावपातं । 'सत्यसेवं' सेवायाः सफलीकरणात् । 'सण्णिहियपाडिहेरे' विहितदेवताप्रातिहार्यं । 'जागसहस्सभागपडिच्छए' यागाः–पूजाविशेषाः ब्राह्मणप्रसिद्धाः तत्सहस्राणां भागम्–अंशं प्रतीच्छति आभाव्यत्वात् यत्तत्तथा, वाचनान्तरे 'यागभागदायसहस्सपडिच्छए' यागाः–पूजाविशेषाः भागा–विंशतिभागादयो दायाः–सामान्यदानान्येषां सहस्राणि प्रतीच्छति यत्तत्तथा । 'बहुजणो' इत्यादि सुगमं, नवरं 'पुण्णभद्दचेइयं २' इति अत्र द्विर्वचनं भक्तिसम्भ्रमविवक्षयेति ॥ २ ॥

से णं पुण्णभद्दे चेइए एक्केणं महया वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, से णं वणसंडे किण्हे किण्होभासे नीले नीलोभासे हरिए हरिओभासे सीए सीओभासे णिद्धे णिद्धोभासे तिव्वे तिव्वोभासे किण्हे किण्हच्छाए नीले नीलच्छाए हरिए हरियच्छाए सीए सीयच्छाए णिद्धे णिद्धच्छाए तिव्वे तिव्वच्छाए घणकडिअकडिच्छाए रम्मे महामेहणिकुरंबभूए ।

'सवओ समन्ता' इति सर्वतः–सर्वदिक्षु समन्तात्–विदिक्षु । 'किण्हे'त्ति कालवर्णः । 'किण्होभासे'त्ति कृष्णावभासः कृष्णप्रभः, कृष्ण एवावभासत इति कृष्णावभासः । एवं 'नीले नीलोभासे' प्रदेशान्तरे, 'हरिए हरिओभासे' प्रदेशान्तरे एव, तत्र नीलो–मयूरगलवत्, हरितस्तु शुकपुच्छवत्, हरितालाभ इति वृद्धाः । 'सीए'त्ति शीतः स्पर्शापेक्षया, बल्याद्याक्रान्तत्वात् इति वृद्धाः । 'णिद्धे'त्ति स्निग्धो न तु रूक्षः । 'तिव्वे'त्ति तीव्रो वर्णादिगुणप्रकर्षवान् । 'किण्हे किण्हच्छाए'त्ति, इह कृष्णशब्दः कृष्णच्छाय इत्यस्य विशेषणमिति न पुनरुक्तता, तथाहि–कृष्णः सन् कृष्णच्छायः, छाया चादित्यावरण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूर्णभद्रचैत्यस्य वर्णनं, वनखंडस्य वर्णनं

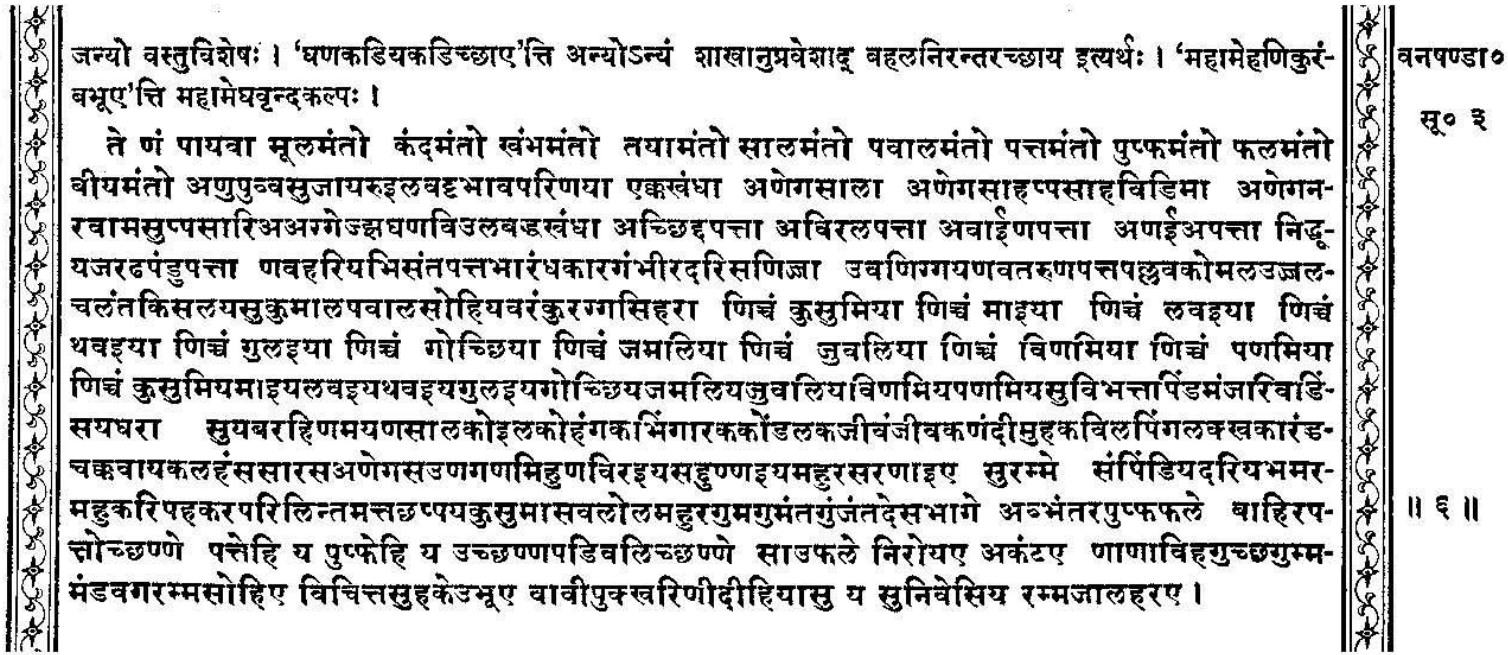

औपपातिकम् ॥ ६ ॥

जन्यो वस्तुविशेषः । 'घणकडियकडिच्छाए'त्ति अन्योऽन्यं शाखानुप्रवेशाद् बहलनिरन्तरच्छाय इत्यर्थः । 'महामेहणिकुरंबभूए'त्ति महामेघवृन्दकल्पः ।

ते णं पायवा मूलमंतो कंदमंतो खंधमंतो तयामंतो सालमंतो पवालमंतो पत्तमंतो पुप्फमंतो फलमंतो बीयमंतो अणुपुव्वसुजायरुइलवट्टभावपरिणया एक्कखंधा अणेगसाला अणेगसाहप्पसाहविडिमा अणेगनरवामसुप्पसारिअअग्गेज्झघणविउलबद्धखंधा अच्छिद्दपत्ता अविरलपत्ता अवाईणपत्ता अणईअपत्ता निद्धूयजरढपंडुपत्ता णवहरियभिसंतपत्तभारंधकारगंभीरदरिसणिज्जा उवणिग्गयणवतरुणपत्तपल्लवकोमलउज्जलचलंतकिसलयसुकुमालपवालसोहियवरंकुरग्गसिहरा णिच्चं कुसुमिया णिच्चं माइया णिच्चं लवइया णिच्चं थवइया णिच्चं गुलइया णिच्चं गोच्छिया णिच्चं जमलिया णिच्चं जुवलिया णिच्चं विणमिया णिच्चं पणमिया णिच्चं कुसुमियमाइयलवइयथवइयगुलइयगोच्छियजमलियजुवलियविणमियपणमियसुविभत्तपिंडमंजरिवडिंसयधरा सुयबरहिणमयणसालकोइलकोहंगकभिंगारककोंडलकजीवंजीवकणंदीमुहकविलपिंगलक्खकारंडचक्कवायकलहंससारसअणेगसउणगणमिहुणविरइयसद्दुण्णइयमहुरसरणाइए सुरम्मे संपिंडियदरियभमरमहुकरिपहकरपरिलिन्तमत्तछप्पयकुसुमासवलोलमहुरगुमगुमंतगुंजंतदेसभागे अब्भंतरपुप्फफले बाहिरपत्तोच्छण्णे पत्तेहि य पुप्फेहि य उच्छण्णपडिवलिच्छण्णे साउफले निरोयए अकंटए णाणाविहगुच्छगुम्ममंडवगरम्मसोहिए विचित्तसुहकेउभूए वावीपुक्खरिणीदीहियासु य सुनिवेसिय रम्मजालहरए ।

वनषण्डा० सू० ३

॥ ६ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वनखंडस्य वर्णनं,

प्रत सूत्रांक [३] दीप अनुक्रम [३]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

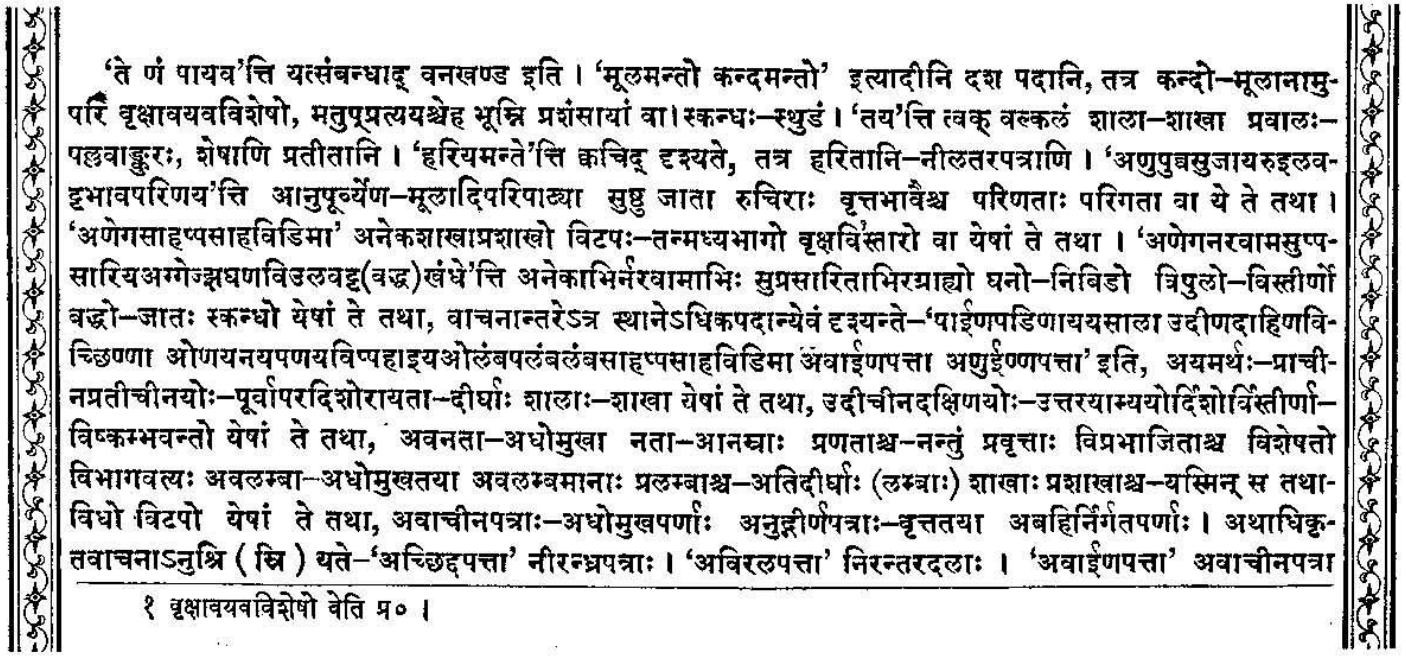

'ते णं पायव'त्ति यत्संबन्धाद् वनखण्ड इति । 'मूलमन्तो कन्दमन्तो' इत्यादीनि दश पदानि, तत्र कन्दो–मूलानामुपरि वृक्षावयवविशेषो, मतुपूप्रत्ययश्चेह भूम्नि प्रशंसायां वा। स्कन्धः–स्थुडं । 'तय'त्ति त्वक् वल्कलं शाला–शाखा प्रवालः–पल्लवाङ्कुरः, शेषाणि प्रतीतानि । 'हरियमन्ते'त्ति क्वचिद् दृश्यते, तत्र हरितानि–नीलतरपत्राणि । 'अणुपुव्वसुजायरुइलवट्टभावपरिणय'त्ति आनुपूर्व्येण–मूलादिपरिपाट्या सुष्ठु जाता रुचिराः वृत्तभावैश्च परिणताः परिगता वा ये ते तथा । 'अणेगसाहप्पसाहविडिमा' अनेकशाखाप्रशाखो विटपः–तन्मध्यभागो वृक्षविस्तारो वा येषां ते तथा । 'अणेगनरवामसुप्पसारियअग्गेज्झघणविउलवट्ट(वद्ध)खंधे'त्ति अनेकाभिर्नरवामाभिः सुप्रसारिताभिरग्राह्यो घनो–निबिडो विपुलो–विस्तीर्णो वद्धो–जातः स्कन्धो येषां ते तथा, वाचनान्तरेऽत्र स्थानेऽधिकपदान्येवं दृश्यन्ते–'पाईणपडिणायतसाला उदीणदाहिणविच्छिण्णा ओणयनयपणयविप्पहाइयओलंबपलंबलंबसाहप्पसाहविडिमा अवाईणपत्ता अणुईण्णपत्ता' इति, अयमर्थः–प्राचीनप्रतीचीनयोः–पूर्वापरदिशोरायता–दीर्घाः शालाः–शाखा येषां ते तथा, उदीचीनदक्षिणयोः–उत्तरयाम्ययोर्दिशोर्विस्तीर्णा–विष्कम्भवन्तो येषां ते तथा, अवनता–अधोमुखा नता–आनम्राः प्रणताश्च–नन्तुं प्रवृत्ताः विप्रभाजिताश्च विशेषतो विभागवत्यः अवलम्बा–अधोमुखतया अवलम्बमानाः प्रलम्बाश्च–अतिदीर्घाः (लम्बाः) शाखाः प्रशाखाश्च–यस्मिन् स तथाविधो विटपो येषां ते तथा, अवाचीनपत्राः–अधोमुखपर्णाः अनुद्गीर्णपत्राः–वृत्ततया अबहिर्निर्गतपर्णाः । अथाधिकृतवाचनाऽनुश्रि (स्रि) यते–'अच्छिद्दपत्ता' नीरन्ध्रपत्राः । 'अविरलपत्ता' निरन्तरदलाः । 'अवाईणपत्ता' अवाचीनपत्रा

१ वृक्षावयवविशेषो वेति प्र० ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	वनखंडस्य वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३]

दीप अनुक्रम [३]

अधोमुखपलाशाः, अवातीनपत्रा वा–अवातोपहतबर्हाः । 'अणईयपत्ता' ईतिविरहितच्छदाः । 'निद्धूयजरढपंडुपत्ता' अपगतपुराणपाण्डुरपत्राः । 'णवहरियभिसंतपत्तभारंधकारगंभीरदरिसणिज्जा' नवेन हरितेन भिसंतत्ति–दीप्यमानेन पत्रभारेण–दलचयेनान्धकारा–अन्धकारवन्तः अत एव गम्भीराश्च दृश्यन्ते ये ते तथा । 'उवणिग्गयणवतरुणपत्तपल्लवकोमलउज्जलचलंतकिसलयसुकुमालपवालसोहियवरंकुरग्गसिहरा' उपनिर्गतैर्नवतरुणपत्रपल्लवैः–अत्यभिनवपत्रगुच्छैः तथा कोमलोज्ज्वलैश्चलद्भिः किशलयैः–पत्रविशेषैः तथा सुकुमारप्रवालैः शोभितानि वराङ्कुराणि अग्रशिखराणि येषां ते तथा । इह च अङ्कुरप्रवालपल्लवकिसलयपत्राणामल्पबहुबहुतरादिकालकृतावस्थाविशेषाद्विशेषः सम्भाव्यत इति । 'णिच्चं कुसुमिया' इत्यादि व्यक्तं, नवरं 'माइय'त्ति मयूरिताः 'लवइय'त्ति पल्लविताः 'थवइय'त्ति स्तबकवन्तः 'गुलइया' गुल्मवन्तः 'गोच्छिया' जातगुच्छाः, यद्यपि च स्तबकगुच्छयोरविशेषो नामकोशेऽधीतस्तथाऽपीह पुष्पपत्रकृतो विशेषो भावनीयः, 'जमलिय'त्ति यमलतया–समश्रेणितया व्यवस्थिताः, 'जुवलिय'त्ति युगलतया स्थिताः, 'विणमिय'त्ति विशेषेण फलपुष्पभारेण नताः, 'पणमिय'त्ति तथैव नन्तुमारब्धाः, प्रशब्दस्यादिकर्म्मार्थत्वात् । 'णिच्चं कुसुमियमाइयलवइयथवइयगुलइयगोच्छियजमलियजुवलियविणमियसुविभत्तपिंडिमंजरिवडिंसयधर'त्ति केचित् कुसुमिताद्येकैकगुणयुक्ताः अपरे तु समस्तगुणयुक्ताः, ततः कुसुमिताश्च ते इत्येवं कर्म्मधारयः, नवरं सुविभक्ताः–सुविविक्ताः सुनिष्पन्नतया पिण्ड्यो–लुम्ब्यो मञ्जर्य्यश्च प्रतीतास्ता एव अवतंसकाः–शेखरकास्ता धारयन्ति ये ते तथा । 'सुयबरहिणमयणसालकोइलकोहंगकभिंगारककोंडलकजीवंजीवकनंदीमुहकविलपिंगलक्खकारंडचक्कवायकलहंससारसअणेगसउणगणमिहुणविरइयसद्दुण्णइयमहुरसर-

॥ ७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वनखंडस्य वर्णनं

प्रत सूत्रांक [३] दीप अनुक्रम [३]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

णाइए' शुकादीनां सारसान्तानामनेकेषां शकुनगणानां मिथनैर्विरचितं शब्दोन्नतिकं च–उन्नतिशब्दकं मधुरस्वरं च नादितं-लपितं यस्मिन् स तथा, वनखण्ड इति प्रकृतम्। 'सुरम्मे' अतिशयरमणीयः। 'संपिंडियदरियभमरमहुकरिपहकरपरिलि-न्तमत्तछप्पयकुसुमासवलोलमहुरगुमगुमंतगुंजंतदेसभागे' संपिण्डिताः दृप्तानां भ्रमरमधुकरीणां वनसत्कानामेव पहक-रचि–निकरा यत्र स तथा, परिलीयमाना–अन्यत आगत्य लयं यान्तो मत्तषट्पदाः कुसुमासवलोलाः–किञ्जल्कलम्पटाः मधुरं गुमगुमायमानाः गुञ्जन्तश्च–शब्दविशेषं विदधानाः देशभागेषु यस्य स तथा, ततः कर्म्मधारयः। 'अब्भन्तरपुप्फ-फले बाहिरपत्तोच्छण्णे पत्तेहि य पुप्फेहि य उच्छण्णपडिवलिच्छण्णे' अत्यन्तमाच्छादित इत्यर्थः, एतानि त्रीण्यपि क्वचि-द्वृक्षाणां विशेषणानि दृश्यन्ते–'साउफले'त्ति मिष्टफलः, 'निरोयए'त्ति रोगवर्जितः, 'अकण्टक' इति। क्वचित् 'णाणाविह-गुच्छगुम्ममंडवगरम्मसोहिए'त्ति तत्र गुच्छा–वृन्ताक्यादयो गुल्मा–नवमालिकादयो मण्डपका–लतामण्डपादयः 'रम्मे'त्ति क्वचिन्न दृश्यते। 'विचित्तसुहकेउभूए' विचित्रान् शुभान् केतून्–ध्वजान् भूतः–प्राप्तः। 'विचित्तसुहसेउकेउबहुले'त्ति पाठान्तरं, तत्र विचित्राः शुभाः सेतवः–पालिबन्धा यत्र केतुबहुलश्च यः स तथा। 'वावीपुक्खरिणीदीहियासु य सुनि-वेसियरम्मजालहरए' वापीषु–चतुरस्रासु पुष्करिणीषु–वृत्तासु पुष्करवतीषु वा दीर्घकासु च–ऋजुसारणीषु सुष्ठु निवेशि-तानि रम्याणि जालगृहकाणि यत्र स तथा।

पिंडिमणीहारिमसुगंधिसुहसुरभिमणहरं च महया गंधद्धणिं मुयंता णाणाविहगुच्छगुम्ममंडवकयरकसु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	वनखंडस्य वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३]

दीप अनुक्रम [३]

हसेउकेउबहला अणेगरहजाणजुग्गसिवियपविमोयणा सुरम्मा पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा (सू० ३)

'पिंडिमणीहारिमसुगंधिसुहसुरभिमणहरं च महया गंधद्धणिं मुयंता' पिण्डिमनिहारिमां–पुञ्जलसमूहरूपां दूरदेशगामिनीं च सुगन्धिं च–सन्निधकां शुभसुरभिभ्यो गन्धान्तरेभ्यः सकाशान्मनोहरा या सा तथा तां च, महता मोचनप्रकारेण विभक्तिव्यत्ययान्महतीं वा गन्ध एव घ्राणिहेतुत्वाच्चृप्तिकारित्वाद्गन्धघ्राणिस्तां मुञ्चन्त इति वृक्षविशेषणम् । एवमितोऽन्यान्यपि 'णाणाविहगुच्छगुम्ममंडवकधरकसुहसेउकेउबहुला' नानाविधा गुच्छाः गुल्मानि मण्डपका गृहकाणि च येषां सन्ति ते तथा, तथा शुभाः सेतवो–मार्गा आलवालपाल्यो वा केतवो–ध्वजा बहुला–बहवो येषां ते तथा, ततः कर्मधारयः । 'अणेगरहजाणजुग्गसिवियपविमोयणा' अनेकेषां रथादीनामधोऽतिविस्तीर्णत्वात् प्रविमोचनं येषु ते तथा । 'सुरम्मा पासाइया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूव'त्ति एतान्येव वृक्षविशेषणानि वनखण्डविशेषणतया वाचनान्तरेऽधीतानि ॥३॥

तस्स णं वणसंडस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एके असोगवरपायवे पण्णत्ते, कुसविकुसविसुद्धरुक्खमूले मूलमंते कंदमंते जाव पविमोयणे सुरम्मे पासादीए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे

'तस्स णं वणसंडस्से'त्यादौ अशोकपादपवर्णके क्वचिदिदमधिकमधीयते–'दूरोवगयकंदमूलवट्टलट्ठसंठियसिलिट्ठघणमसिणणिद्धसुजायनिरुवहउविद्धपवरखंधी' दूरोपगतानि–अत्यर्थं भूम्यामवगाढानि कन्दमूलानि–प्रतीतानि यस्य स तथा,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वनखंडस्य वर्णनं, अशोकवृक्षस्य वर्णनं

प्रत सूत्रांक [४] दीप अनुक्रम [४]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

वृत्तो–वर्तुलो, लष्टो–मनोज्ञः, संस्थितो–विशिष्टसंस्थानः, श्लिष्टः–सङ्गतो, घनो–निबिडो, मसृणः–अपरुषः, स्निग्धः–अरूक्षः, सुजातः–सुजन्मा, निरुपहतो–विकारविरहित, उद्विद्धः अत्यर्थमुच्चः, प्रवरः–प्रधानः, स्कन्धः–स्थुडं यस्य स तथा, इन्प्रत्ययश्च समासान्तः। 'अणेगनरपवरभुयागेज्झो' अनेकनराणां प्रवरभुजैः–प्रलम्बबाहुभिर्वामाभिरित्यर्थः, अग्राह्यः–अनाश्लेष्यो यः स तथा, 'कुसुमभरसमोनमंतपत्तलविसालसालो' कुसुमभरेण समवनमन्त्यः पत्रलाः–पत्रवत्यः विशालाः शाला यस्य स तथा । 'महुकरिभमरगणगुमगुमाइयनिलिंतउद्धिंतसस्सिरीए' मधुकरीभ्रमरगणेन–लोकरूढिगम्येन, 'गुमगुमाइन्त'त्ति कृतगुमगुमेतिशब्देन, नीलीयमानेन–निविशमानेन, उड्डीयमानेन च–उत्पतता सश्रीकः–सशोभो यः स तथा। 'णाणासउणगणमिहुणसुमहुरकण्णसुहपलत्तसद्दमहुरे' नानाविधानां शकुनिगणानां यानि मिथुनानि तेषां सुमधुरः कर्ण सुखश्च यः प्रलपशब्दस्तेन मधुर इव मधुरो–मनोज्ञो यः स तथा । अथाधिकृतवाचना–'कुसविकुसविसुद्धरुक्खमूले' कुशा–दर्भाः विकुशा–वल्व (ल) जादयस्तैर्विशुद्धं–विरहितं वृक्षानुरूपं वृक्षविस्तरप्रमाणमित्यर्थो मूलं–समीपं यस्य स तथा। 'मूलमंते' इत्यादिविशेषणानि पूर्ववद्व्याख्यानि, यावत् पडिरूवे ॥

से णं असोगवरपायवे अण्णेहिं बहूहिं तिलएहिं लउएहिं छत्तोवेहिं सिरीसेहिं सत्तवण्णेहिं दहिवण्णेहिं लोद्धेहिं धवेहिं चंदणेहिं अज्जुणेहिं णीवेहिं कुडएहिं सव्वेहिं फणसेहिं दाडिमेहिं सालेहिं तालेहिं तमालेहिं पियएहिं पियंगूहिं पुरोवगेहिं रायरुक्खेहिं णंदिरुक्खेहिं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, ते णं तिलया लवइया जाव णंदिरुक्खा कुसविकुसविसुद्धरुक्खमूला मूलमंतो कंदमंतो एएसिं वण्णओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अशोकवृक्षस्य वर्णनं

भाणियव्वो जाव सिबियपविमोवणा सुरम्मा पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा, ते णं तिलया जाव णंदिरुक्खा अण्णेहिं बहूहिं पउमलयाहिं णागलयाहिं असोअलयाहिं चंपगलयाहिं चूयलयाहिं वणलयाहिं वासंतियलयाहिं अइमुत्तयलयाहिं कुंदलयाहिं सामलयाहिं सव्वओ समंता संपरिखित्ता, ताओ णं पउमलयाओ णिच्चं कुसुमियाओ जाव वडिंसयधरीओ पासादीयाओ दरिसणिज्जाओ अभिरूवाओ पडिरूवाओ ॥ (सू०४)

सोऽशोकवरपादपः अन्यैर्बहुभिस्तिलकैर्लकुचैश्छत्रोपैः शिरीषैः सप्तपर्णैः–अयुक्छदपर्यायैरयुक्पत्रनामकैः दधिपर्णैः लोध्रैः धवैः चन्दनैः–मलयजपर्यायैरर्जुनैः–ककुरापर्यायैः नीपैः–कदम्बैः कुटजैः–गिरिमल्लिकापर्यायैः सर्ज्जैः पनसैर्दाडिमैः शालैः–सर्जपर्यायैस्तालैः–तृणराजपर्यायैः तमालैः प्रियकैः–असनपर्यायैः प्रियङ्गुभिः–श्यामपर्यायैः पुरोपगैः राजवृक्षैः नन्दिवृक्षैः–रूढिगम्यैः सर्वतः समन्तात् सम्परिक्षिप्त इत्यादि सुगममापद्मलताशब्दादिति । 'पउमलयाहिं'ति पद्मलताः–स्थलकमलिन्यः पद्मकाभिधानवृक्षलता वा, नागादयो वृक्षविशेषास्तेषां लताः–तनुकास्त एव, तत्राशोकः–कङ्केली चूतः–सहकारः वनः–पीलुकः, वासन्तीलता अतिमुक्तकलताश्च यद्यप्येकार्था नामकोशेऽधीतास्तथाऽपीह भेदो रूढितोऽवसेयः, श्यामा–प्रियङ्गुः, शेषलता रूढिगम्याः, इह लतावर्णकानन्तरमशोकवर्णकं पुस्तकान्तरे इदमधिकमधीयते–'तस्स णं असोगवरपायवस्स उवरि बहवे अट्ठअट्ठमंगलगा पण्णत्ता' अष्टावष्टाविति वीप्साकरणात्प्रत्येकं तेऽष्टाविति वृद्धाः, अन्ये त्वष्टाविति सङ्ख्या, अष्टमङ्गलकानीति च संज्ञा । 'तंजहा–सोवत्थिय १ सिरिवच्छ २ नंदियावत्त ३ वद्धमाणग ४ भद्दासण ५ कलस ६ मच्छ ७

॥ ९ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अशोकवृक्षस्य वर्णनं

प्रत सूत्रांक [४] दीप अनुक्रम [४]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

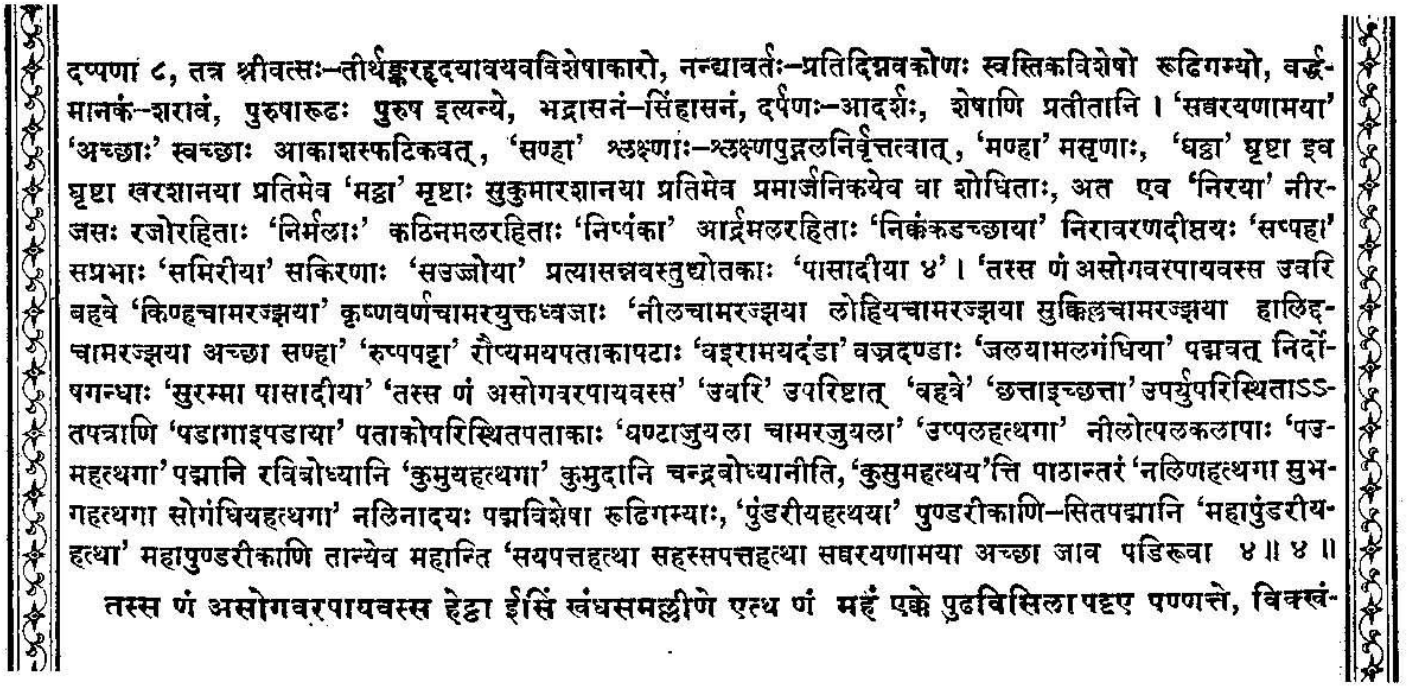

दप्पणा ८, तत्र श्रीवत्सः–तीर्थङ्करहृदयावयवविशेषाकारो, नन्द्यावर्तः–प्रतिदिग्नवकोणः स्वस्तिकविशेषो रूढिगम्यो, वर्द्धमानकं–शरावं, पुरुषारूढः पुरुष इत्यन्ये, भद्रासनं–सिंहासनं, दर्पणः–आदर्शः, शेषाणि प्रतीतानि । 'सवरयणामया' 'अच्छाः' स्वच्छाः आकाशस्फटिकवत्, 'सण्हा' श्लक्ष्णाः–श्लक्ष्णपुद्गलनिर्वृत्तत्वात्, 'मण्हा' मसृणाः, 'घट्ठा' घृष्टा इव घृष्टा खरशानया प्रतिमेव 'मट्ठा' मृष्टाः सुकुमारशानया प्रतिमेव प्रमार्जनिकयेव वा शोधिताः, अत एव 'निरया' नीरजसः रजोरहिताः 'निर्मलाः' कठिनमलरहिताः 'निप्पंका' आर्द्रमलरहिताः 'निक्कंकडच्छाया' निरावरणदीप्तयः 'सप्पहा' सप्रभाः 'समिरीया' सकिरणाः 'सउज्जोया' प्रत्यासन्नवस्तुद्योतकाः 'पासादीया ४' । 'तस्स णं असोगवरपायवस्स उवरि बहवे 'किण्हचामरज्झया' कृष्णवर्णचामरयुक्तध्वजाः 'नीलचामरज्झया लोहियचामरज्झया सुक्किलचामरज्झया हालिद्दचामरज्झया अच्छा सण्हा' 'रुप्पपट्टा' रौप्यमयपताकापटाः 'वइरामयदंडा' वज्रदण्डाः 'जलयामलगंधिया' पद्मवत् निर्दोषगन्धाः 'सुरम्मा पासादीया' 'तस्स णं असोगवरपायवस्स' 'उवरि' उपरिष्टात् 'बहवे' 'छत्ताइच्छत्ता' उपर्युपरिस्थिताऽऽतपत्राणि 'पडागाइपडाया' पताकोपरिस्थितपताकाः 'घण्टाजुयला चामरजुयला' 'उप्पलहत्थगा' नीलोत्पलकलापाः 'पउमहत्थगा' पद्मानि रविबोध्यानि 'कुमुयहत्थगा' कुमुदानि चन्द्रबोध्यानीति, 'कुसुमहत्थय'त्ति पाठान्तरं 'नलिणहत्थगा सुभगहत्थगा सोगंधियहत्थगा' नलिनादयः पद्मविशेषा रूढिगम्याः, 'पुंडरीयहत्थया' पुण्डरीकाणि–सितपद्मानि 'महापुंडरीयहत्था' महापुण्डरीकाणि तान्येव महान्ति 'सयपत्तहत्था सहस्सपत्तहत्था सवरयणामया अच्छा जाव पडिरूवा ४ ॥ ४ ॥

तस्स णं असोगवरपायवस्स हेट्ठा ईसिं खंधसमल्लीणे एत्थ णं महं एक्के पुढविसिलापट्टए पण्णत्ते, विक्खं-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अशोकवृक्षस्य वर्णनं, पृथ्वीशीलापट्टकस्य वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४]

दीप अनुक्रम [४]

भायामउस्सेहसुप्पमाणे किण्हे अंजणघणकिवाणकुवलयहलधरकोसेज्जागासकेसकज्जलंगीखंजणसिंगभेदरिट्ठयजंबूफलअसणकसणबंधणणीलुप्पलपत्तनिकरअयसिकुसुमप्पगासे मरकतमसारकलित्तणयणकीयरासिवण्णे णिद्धघणे अट्ठसिरे आयंसयतलोवमे सुरम्मे ईहामियउसभतुरगनरमगरविहगवालगकिण्णररुरुसरभचमरकुंजरवणलयपउमलयभत्तिचित्ते आईणगरूयबूरणवणीततूलफरिसे सीहासणसंठिए पासादीए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे ॥ (सू० ५)

अथाधिकृतवाचनाऽऽश्रि(स्रि)यते'ईसिं खंध समलीणे' मनाक् स्कन्धासन्न इत्यर्थः । 'एत्थ णं महं एके' इत्यत्र एत्थ णंति शब्दः अशोकवरपादपस्य यदधोऽत्रेत्येवं सम्बन्धनीयः । 'विक्खंभायामउस्सेहसुप्पमाणे' विष्कम्भः–पृथुत्वम्, आयामो–दैर्घ्यम्, उत्सेध उच्चत्वमेषु सुप्रमाण–उचितप्रमाणो यः स तथा । 'किण्हे'त्ति कालः, अत एव 'अंजणकवाणकुवलयहलधरकोसेज्जागासकेसकज्जलंगीखंजणसिंगभेदरिट्ठयजंबूफलअसणकसणबंधणनीलुप्पलपत्तनिकरअयसिकुसुमप्पगासे'नील इत्यर्थः, तत्र अञ्जनको वनस्पतिविशेषः हलधरकोसेज्जं–बलदेववस्त्रं कज्जलाङ्गी–कज्जलगृहं शृङ्गभेदः–महिषादिविषाणच्छेदः रिष्ठकं–रत्नम् अशनको–बीयकाभिधानो वनस्पतिः सनबन्धनं–सनपुष्पवृन्तं । 'मरकयमसारकलित्तणयणकीयरासिवण्णे' मरकतं–रत्नं मसारो–मसृणीकारकः पाषाणविशेषः, स चात्र कषपट्टः सम्भाव्यते, कलित्तंति–कटित्रं कृत्तिविशेषः नयनकीका–नेत्रमध्यतारा तद्वाशिवर्णः काल इत्यर्थः । 'णिद्धघणे' स्निग्धघनः 'अट्ठसिरे' अष्टशिराः अष्टकोण इत्यर्थः । 'आयंसयतलोवमे सुरम्मे ईहामियउसभतुरगनरमगरविहगवालगकिण्णररुरुसरभचमरकुंजरवणलयपउ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पृथ्वीशीलापट्टकस्य वर्णनं

प्रत सूत्रांक [५] दीप अनुक्रम [५]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

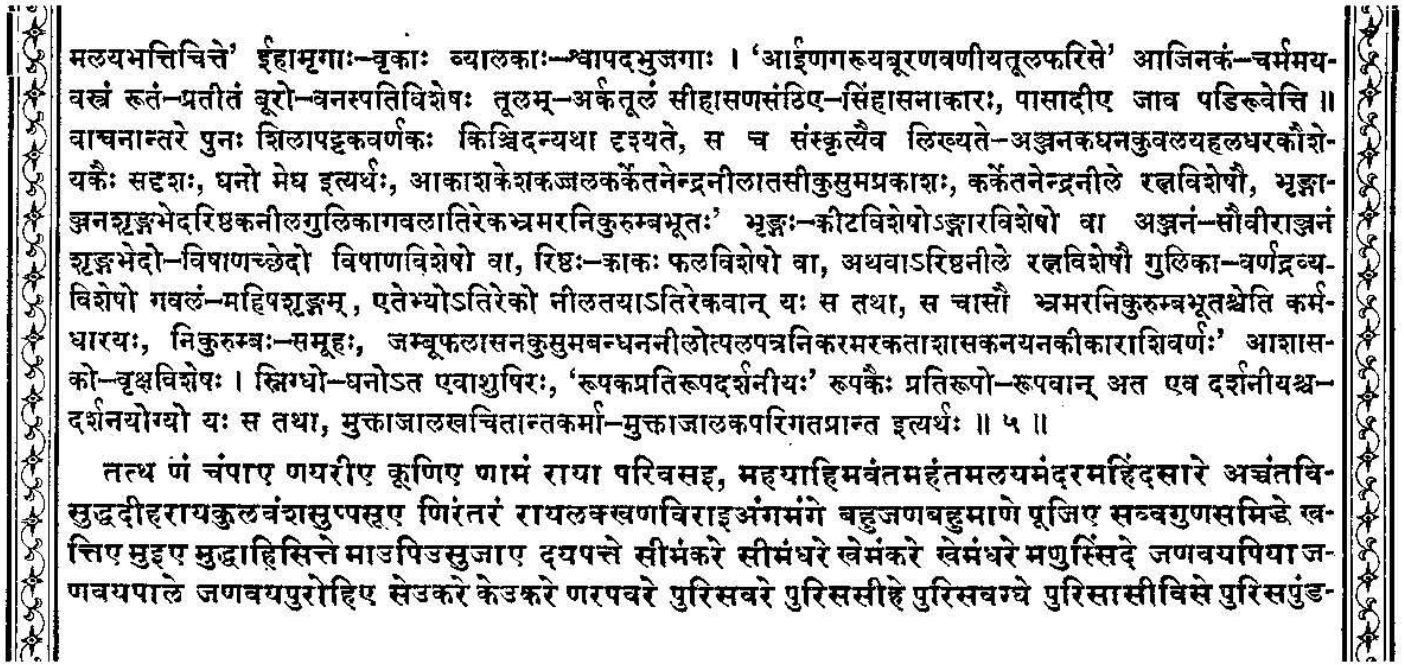

मलयभत्तिचित्ते' ईहामृगाः–वृकाः व्यालकाः–श्वापदभुजगाः । 'आईणगरूयबूरणवणीयतूलफरिसे' आजिनकं–चर्ममयवस्त्रं रूतं–प्रतीतं बूरो–वनस्पतिविशेषः तूलम्–अर्कतूलं सीहासणसंठिए–सिंहासनाकारः, पासादीए जाव पडिरूवेत्ति ॥ वाचनान्तरे पुनः शिलापट्टकवर्णकः किञ्चिदन्यथा दृश्यते, स च संस्कृत्यैव लिख्यते–अञ्जनकधनकुवलयहलधरकौशेयकैः सदृशः, धनो मेघ इत्यर्थः, आकाशकेशकज्जलकर्केतनेन्द्रनीलातसीकुसुमप्रकाशः, कर्केतनेन्द्रनीले रत्नविशेषौ, भृङ्गाञ्जनशृङ्गभेदरिष्ठकनीलगुलिकागवलातिरेकभ्रमरनिकुरुम्बभूतः' भृङ्गः–कीटविशेषोऽङ्गारविशेषो वा अञ्जनं–सौवीराञ्जनं शृङ्गभेदो–विषाणच्छेदो विषाणविशेषो वा, रिष्टः–काकः फलविशेषो वा, अथवाऽरिष्टनीले रत्नविशेषौ गुलिका–वर्णद्रव्यविशेषो गवलं–महिषशृङ्गम्, एतेभ्योऽतिरेको नीलतयाऽतिरेकवान् यः स तथा, स चासौ भ्रमरनिकुरुम्बभूतश्चेति कर्मधारयः, निकुरुम्बः–समूहः, जम्बूफलासनकुसुमबन्धननीलोत्पलपत्रनिकरमरकताशासकनयनकीकाराशिवर्णः' आशासको–वृक्षविशेषः । स्निग्धो–घनोऽत एवाशुषिरः, 'रूपकप्रतिरूपदर्शनीयः' रूपकैः प्रतिरूपो–रूपवान् अत एव दर्शनीयश्च–दर्शनयोग्यो यः स तथा, मुक्ताजालखचितान्तकर्मा–मुक्ताजालकपरिगतप्रान्त इत्यर्थः ॥ ५ ॥

तत्थ णं चंपाए णयरीए कूणिए णामं राया परिवसइ, महयाहिमवंतमहंतमलयमंदरमहिंदसारे अच्चंतविसुद्धदीहरायकुलवंसप्पसूए णिरंतरं रायलक्खणविराइअंगमंगे बहुजणबहुमाणे पूजिए सव्वगुणसमिद्धे खत्तिए मुइए मुद्धाहिसित्ते माउपिउसुजाए दयपत्ते सीमंकरे सीमंधरे खेमंकरे खेमंधरे मणुस्सिंदे जणवयपिया जणवयपाले जणवयपुरोहिए सेउकरे केउकरे णरपवरे पुरिसवरे पुरिससीहे पुरिसवग्घे पुरिसासीविसे पुरिसपुंड-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पृथ्वीशीलापट्टकस्य वर्णनं, कोणिकराज्ञस्य वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [६]

दीप अनुक्रम [६]

रीए पुरिसवरगंधहत्थी अड्ढे दित्ते वित्ते विच्छिण्णविउलभवणसयणासणजाणवाहणाइण्णे बहुधणबहुजायरूवरयते आओगपओगसंपउत्ते विच्छड्डियपउरभत्तपाणे बहुदासीदासगोमहिसगवेलगप्पभूते पडिपुण्णजंतकोसकोट्ठागाराउधागारे बलवं दुब्बलपच्चामित्ते ओहयकंटयं निहयकंटयं मलिअकंटयं उद्धियकंटयं अकंटयं ओहयसत्तुं निहयसत्तुं मलियसत्तुं उद्धिअसत्तुं निज्जियसत्तुं पराइअसत्तुं ववगयदुब्भिक्खं मारिभयविप्पमुक्कं खेमं सिवं सुभिक्खं पसंतडिंबडमरं रज्जं पसासेमाणे विहरइ ॥ (सू० ६)

राजवर्णके लिख्यते–'महयाहिमवंतमहंतमलयमंदरमहिंदसारे' महाहिमवानिव महान् शेषराजपर्वतापेक्षया, तथा मलयः–पर्वतविशेषो मन्दरो–मेरुः महेन्द्रः–पर्वतविशेषः शक्रो वा, तद्वत्सारः–प्रधानो यः स तथा। 'अच्चन्तविसुद्धदीहरायकुलवंससुप्पसूए' अत्यन्तविशुद्धो–निर्दोषो दीर्घः–चिरकालीनो यो राज्ञां कुलरूपो वंशस्तत्र सुष्ठु प्रसूतो यः स तथा। 'णिरंतरं रायलक्खणविराइयंगमंगे' राजलक्षणैः–स्वस्तिकादिभिः विराजितमङ्गमङ्गं–गात्रं यस्य स तथा, मकारस्तु प्राकृतशैलीप्रभवः। 'मुइए'त्ति मुदितः प्रमोदवान्, अथवा निर्दोषमातृको, यदाह–"मुइओ जो होइ जोणिसुद्धो"त्ति। 'मुद्धाहिसित्ते'त्ति पितृपितामहादिभिः राजभिर्वा यो राज्येऽभिषिक्तः। 'माउपिउसुजाए'त्ति पित्रोर्विनीततया सत्पुत्रः। 'दयपत्ते'त्ति प्राप्तकरुणागुणः। 'सीमंकरे'त्ति सीमाकारी, मर्यादाकारीत्यर्थः। 'सीमंधरे'त्ति कृतमर्यादापालकः। एवं 'खेमंकरे खेमंधरे'त्ति क्षेमं पुनरनुपद्रवता। 'मणुस्सिंदे'त्ति मनुजेषु परमेश्वरत्वात्। 'जणवयपिय'त्ति जनपदानां पितेव

१ मुदितो यो भवति योनिशुद्ध इति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिकराज्ञस्य वर्णनं

प्रत सूत्रांक [६] दीप अनुक्रम [६]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

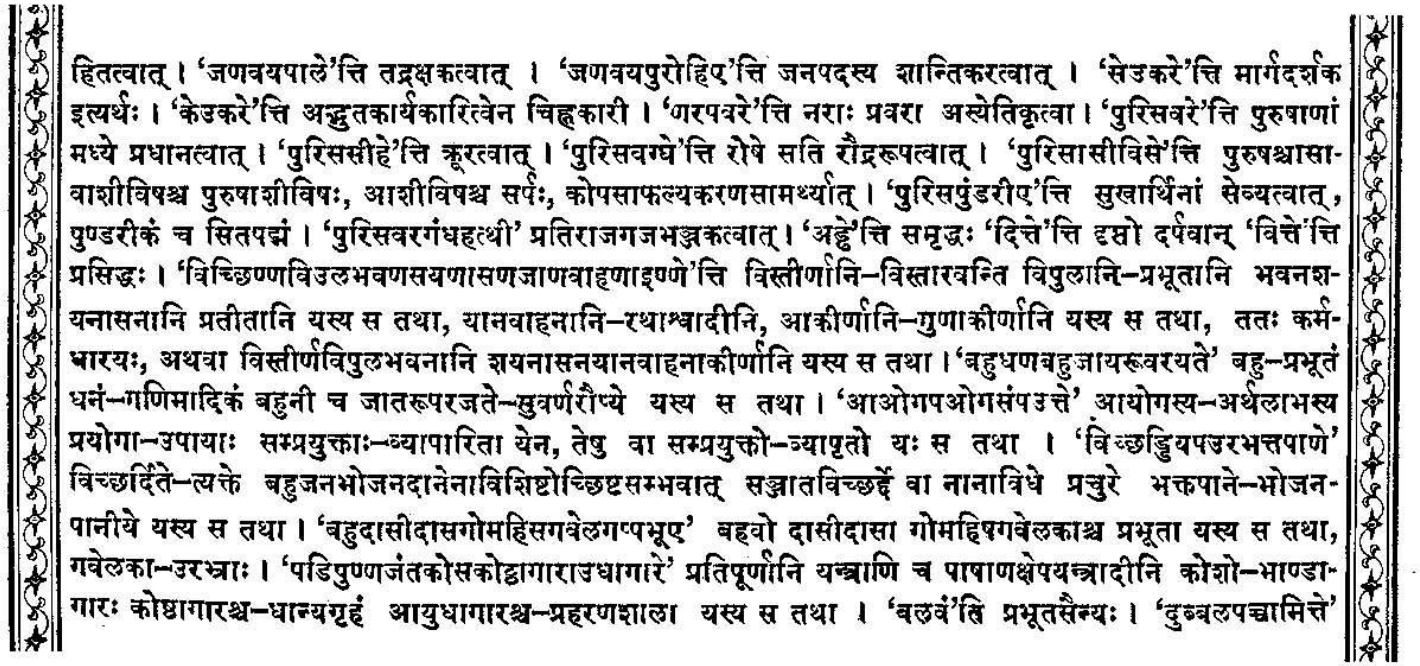

हितत्वात्। 'जणवयपाले'त्ति तद्रक्षकत्वात्। 'जणवयपुरोहिए'त्ति जनपदस्य शान्तिकरत्वात्। 'सेउकरे'त्ति मार्गदर्शक इत्यर्थः। 'केउकरे'त्ति अद्भुतकार्यकारित्वेन चिह्नकारी। 'णरपवरे'त्ति नराः प्रवरा अस्येतिकृत्वा। 'पुरिसवरे'त्ति पुरुषाणां मध्ये प्रधानत्वात्। 'पुरिससीहे'त्ति क्रूरत्वात्। 'पुरिसवग्घे'त्ति रोषे सति रौद्ररूपत्वात्। 'पुरिसासीविसे'त्ति पुरुषश्चासावाशीविषश्च पुरुषाशीविषः, आशीविषश्च सर्पः, कोपसाफल्यकरणसामर्थ्यात्। 'पुरिसपुंडरीए'त्ति सुखार्थिनां सेव्यत्वात्, पुण्डरीकं च सितपद्मं। 'पुरिसवरगंधहत्थी' प्रतिराजगजभञ्जकत्वात्। 'अड्ढे'त्ति समृद्धः 'दित्ते'त्ति दृप्तो दर्पवान् 'वित्ते'त्ति प्रसिद्धः। 'विच्छिण्णविउलभवणसयणासणजाणवाहणाइण्णे'त्ति विस्तीर्णानि–विस्तारवन्ति विपुलानि–प्रभूतानि भवनशयनासनानि प्रतीतानि यस्य स तथा, यानवाहनानि–रथाश्वादीनि, आकीर्णानि–गुणाकीर्णानि यस्य स तथा, ततः कर्मधारयः, अथवा विस्तीर्णविपुलभवनानि शयनासनयानवाहनाकीर्णानि यस्य स तथा। 'बहुधणबहुजायरूवरयते' बहु–प्रभूतं धनं–गणिमादिकं बहुनी च जातरूपरजते–सुवर्णरौप्ये यस्य स तथा। 'आओगपओगसंपउत्ते' आयोगस्य–अर्थलाभस्य प्रयोगा–उपायाः सम्प्रयुक्ताः–व्यापारिता येन, तेषु वा सम्प्रयुक्तो–व्यापृतो यः स तथा। 'विच्छड्डियपउरभत्तपाणे' विच्छर्दिते–त्यक्ते बहुजनभोजनदानेनाविशिष्टोच्छिष्टसम्भवात् सञ्जातविच्छर्दे वा नानाविधे प्रचुरे भक्तपाने–भोजनपानीये यस्य स तथा। 'बहुदासीदासगोमहिसगवेलगप्पभूए' बहवो दासीदासा गोमहिषगवेलकाश्च प्रभूता यस्य स तथा, गवेलका–उरभ्राः। 'पडिपुण्णजंतकोसकोट्ठागाराउधागारे' प्रतिपूर्णानि यन्त्राणि च पाषाणक्षेपयन्त्रादीनि कोशो–भाण्डागारः कोष्ठागारश्च–धान्यगृहं आयुधागारश्च–प्रहरणशाला यस्य स तथा। 'बलवं'ति प्रभूतसैन्यः। 'दुब्बलपच्चामित्ते'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	कोणिकराज्ञस्य वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

दुर्बलाः प्रत्यमित्राः–प्रातिवेश्मिकनृपा यस्य स तथा । 'ओहयकंटयं'ति उपहता–विनाशिताः कण्टकाः–प्रतिस्पर्द्धिगोत्रजा यत्र राज्ये तत्तथा , क्रियाया वा विशेषणमेतत्, एवमन्यान्यपि, नवरं निहताः–कृतसमृद्ध्यपहाराः, मलिताः–कृतमानभङ्गाः, उद्धृता–देशान्निर्वासिताः, अत एवाविद्यमाना इति । तथा शत्रवः–अगोत्रजाः निर्जिताः–स्वसौन्दर्यातिशयेन परिभूताः, पराजितास्तु तद्विधराज्योपार्जने कृतसम्भावनाभङ्गाः, 'ववगयदुब्भिक्खं मारिभयविप्पमुक्कं' मिति व्यक्तम् । 'पसंतडिंबडमरं'ति डिम्बाः–विघ्नाः डमराणि–राजकुमारादिकृतवैराज्यादीनि, 'पसंताहियडमरं'त्ति क्वचित्पाठः, तत्राहितडमरं–शत्रुकृतविद्वरोऽधिकविद्वरो वा । 'रज्जं पसासेमाणे'त्ति प्रशासयन्–पालयन् 'पसाहेमाणे'त्ति क्वचित्पाठः, तत्राप्ययमेवार्थः, 'विहरति' वर्तते ॥ ६ ॥

तस्स णं कोणियस्स रण्णो धारिणी नामं देवी होत्था, सुकुमालपाणिपाया अहीणपडिपुण्णपंचिंदियसरीरा लक्खणवंजणगुणोववेआ माणुम्माणप्पमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुंदरंगी ससिसोमाकारकंतपियदंसणा सुरूवा करयलपरिमिअपसत्थतिवलियवलियमज्झा कुंडलुल्लिहिअगंडलेहा कोमुइरयणियरविमलपडिपुण्णसोमवयणा सिंगारागारचारुवेसा संगयगयहसिअभणिअविहिअविलाससललिअसंलावणिउणजुत्तोवयारकुसला पासादीआ दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा, कोणिएणं रण्णा भंभसारपुत्तेणं सद्धिं अणुरत्ता अविरत्ता इट्ठे सद्दफरिसरसरूवगंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोए पच्चणुब्भवमाणी विहरति ॥ (सू० ७)

राज्ञीवर्णके लिख्यते–'अहीणपडिपुण्णपंचिंदियसरीरा' क्वचित्तु 'अहीणपुण्णपंचिंदियसरीरा' अहीनानि–अन्यूनानि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिकराज्ञस्य वर्णनं, धारिणीराज्ञ्यः वर्णनं

प्रत सूत्रांक [७] दीप अनुक्रम [७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

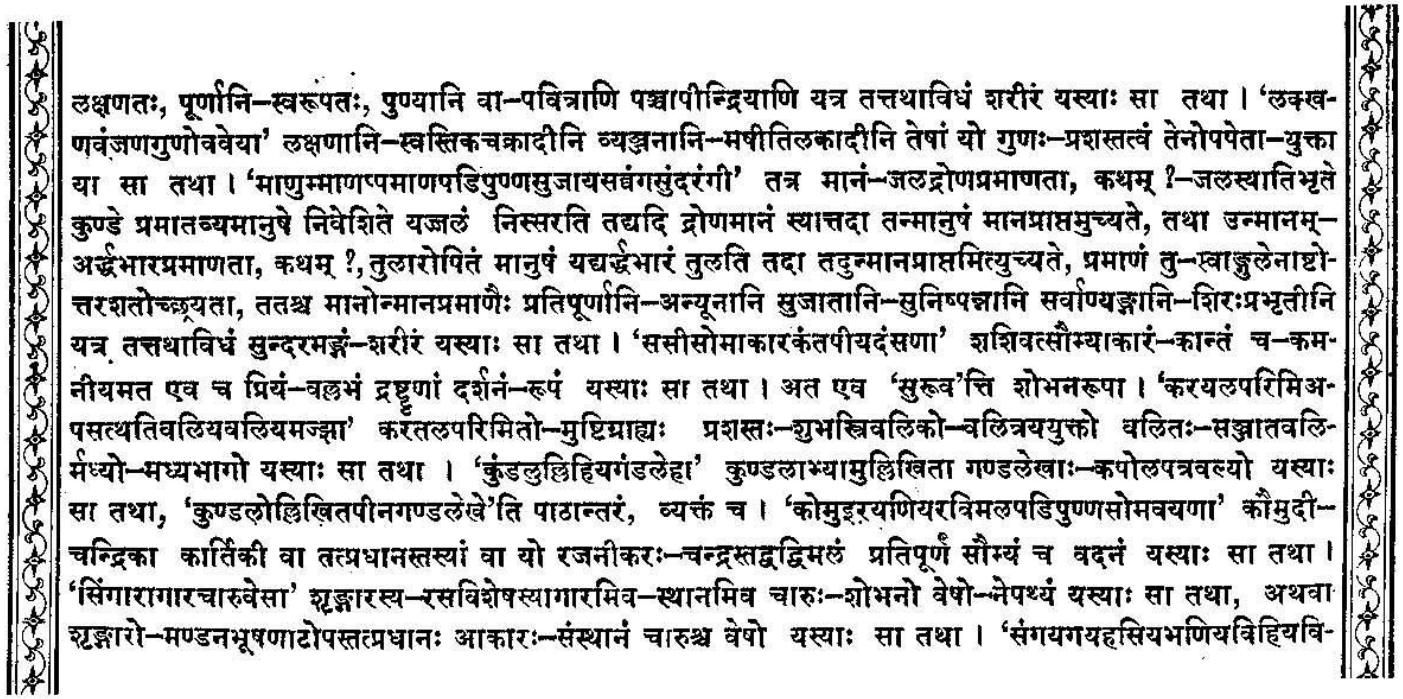

लक्षणतः, पूर्णानि–स्वरूपतः, पुण्यानि वा–पवित्राणि पञ्चापीन्द्रियाणि यत्र तत्तथाविधं शरीरं यस्याः सा तथा । 'लक्खणवंजणगुणोववेया' लक्षणानि–स्वस्तिकचक्रादीनि व्यञ्जनानि–मषीतिलकादीनि तेषां यो गुणः–प्रशस्तत्वं तेनोपपेता–युक्ता या सा तथा । 'माणुम्माणप्पमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुंदरंगी' तत्र मानं–जलद्रोणप्रमाणता, कथम् ?–जलस्थातिभृते कुण्डे प्रमातव्यमानुषे निवेशिते यज्जलं निस्सरति तद्यदि द्रोणमानं स्यात्तदा तन्मानुषं मानप्राप्तमुच्यते, तथा उन्मानम्–अर्द्धभारप्रमाणता, कथम् ?, तुलारोपितं मानुषं यद्यर्द्धभारं तुलति तदा तदुन्मानप्राप्तमित्युच्यते, प्रमाणं तु–स्वाङ्गुलेनाष्टोत्तरशतोच्छ्रयता, ततश्च मानोन्मानप्रमाणैः प्रतिपूर्णानि–अन्यूनानि सुजातानि–सुनिष्पन्नानि सर्वाण्यङ्गानि–शिरःप्रभृतीनि यत्र तत्तथाविधं सुन्दरमङ्गं–शरीरं यस्याः सा तथा । 'ससीसोमाकारकंतपीयदंसणा' शशिवत्सौम्याकारं–कान्तं च–कमनीयमत एव च प्रियं–वल्लभं द्रष्टृणां दर्शनं–रूपं यस्याः सा तथा । अत एव 'सुरूव'त्ति शोभनरूपा । 'करयलपरिमिअपसत्थतिवलियवलियमज्झा' करतलपरिमितो–मुष्टिग्राह्यः प्रशस्तः–शुभस्त्रिवलिको–वलित्रययुक्तो वलितः–सञ्जातवलिर्मध्यो–मध्यभागो यस्याः सा तथा । 'कुंडलुल्लिहियगंडलेहा' कुण्डलाभ्यामुल्लिखिता गण्डलेखाः–कपोलपत्रवल्यो यस्याः सा तथा, 'कुण्डलोल्लिखितपीनगण्डलेखे'ति पाठान्तरं, व्यक्तं च । 'कोमुइरयणियरविमलपडिपुण्णसोमवयणा' कौमुदीचन्द्रिका कार्तिकी वा तत्प्रधानस्तस्यां वा यो रजनीकरः–चन्द्रस्तद्वद्विमलं प्रतिपूर्णं सौम्यं च वदनं यस्याः सा तथा । 'सिंगारागारचारुवेसा' शृङ्गारस्य–रसविशेषस्यागारमिव–स्थानमिव चारुः–शोभनो वेषो–नेपथ्यं यस्याः सा तथा, अथवा शृङ्गारो–मण्डनभूषणाटोपस्तत्प्रधानः आकारः–संस्थानं चारुश्च वेषो यस्याः सा तथा । 'संगयगयहसियभणियविहियवि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	धारिणीराज्ञ्यः वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [७]

दीप अनुक्रम [७]

लाससललियसंलावणिउणजुत्तोवयारकुसला' सङ्गता–उचिता गतहसितभणितविहितविलासा यस्याः सा तथा, तत्र विहितं–चेष्टितं विलासो–नेत्रचेष्टा, तथा सह ललितेन–प्रसन्नतया ये संलापाः–परस्परभाषणलक्षणास्तेषु निपुणा या सा तथा, तथा युक्ताः–सङ्गता ये उपचारा–लोकव्यवहारास्तेषु कुशला या सा तथा, ततः पदत्रयस्य कर्मधारयः, क्वचिदिदमन्यथा दृश्यते–'सुंदरथणजघणवयणकरचरणनयणलावण्णविलासकलिया' व्यक्तमेव, नवरं जघनं–पूर्वकटीभागः लावण्यम्–आकारस्य स्पृहणीयता विलासः–स्त्रीणां चेष्टाविशेषः, आह च—"स्थानासनगमनानां हस्तभ्रूनेत्रकर्मणां चैव । उत्पद्यते विशेषो यः श्लिष्टः स विलासः स्यात् ॥ १॥" इति । तथा 'कोणिएणं रण्णा सद्धिं अणुरत्ता अविरत्ता इट्ठे सद्दफरिसरसरूवगंधे पंचविहए माणुस्सए कामभोए पच्चणुब्भवमाणी विहरति' व्यक्तमेव, नवरं अनुरक्ता–अविरक्ता, अनुरज्य न विप्रियेऽपि विरक्ततां गतेत्यर्थः ॥ ७ ॥

तस्स णं कोणिअस्स रण्णो एक्के पुरिसे विउलकयवित्तिए भगवओ पवित्तिवाउए भगवओ तद्देवसिअं पवित्तिं णिवेएइ, तस्स णं पुरिसस्स बहवे अण्णे पुरिसा दिण्णभतिभत्तवेअणा भगवओ पवित्तिवाउआ भगवओ तद्देवसियं पवित्तिं णिवेदेंति ॥ (सू० ८) ॥

'तस्स ण' मित्यादौ 'विउलकयवित्तिए'त्ति विहितप्रभूतजीविक इत्यर्थः, वृत्तिप्रमाणं चेदम्–अर्द्धत्रयोदशरजतसहस्राणि, यदाह–"[1]मंडलियाण सहस्सा पीईदाणं सयसहस्सा" । 'पवित्तिवाउए'त्ति प्रवृत्तिव्यापृतो–वार्ताव्यापारवान्, वार्तानिवेदक

१ माण्डलिकानां सहस्राणि प्रीतिदानं शतसहस्राणि (आगमने) ।

॥ १३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धारिणीराज्ञ्यः वर्णनं,

इत्यर्थः । 'तद्देवसिअं'ति दिवसे भवा दैवसिकी सा चासौ विवक्षिता–अमुत्र नगरादावागतो विहरति भगवानित्यादि-रूपा, दैवसिकी चेति तद्दैवसिकी, अतस्तां निवेदयति । 'तस्स ण'मित्यादि तत्र 'दिण्णभतिभत्तवेयण'त्ति दत्तं भृतिभक्तरूपं वेतनं–मूल्यं येषां ते तथा, तत्र भृतिः–कार्षापणादिका भक्तं च–भोजनमिति ॥ ८ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं कोणिए राया भंभसारपुत्ते बाहिरियाए उवट्ठाणसालाए अणेगगणनायगदंड-नायगराईसरतलवरमाडंबिअकोडंबिअमंतिमहामंतिगणगदोवारिअअमच्चचेडपीढमद्दनगरनिगमसेट्ठिसेणाव-इसत्थवाहदूतसंधिवाल सद्धिं संपरिवुडे विहरइ ॥ (सू० ९) ॥

'भंभसारपुत्ते'त्ति श्रेणिकराजसूनुः । 'अणेगगणे' त्यादि, अनेके ये गणनायकाः–प्रकृतिमहत्तराः, दण्डनायकाः–तन्त्र-पालाः राजानो–मण्डलिका ईश्वरा–युवराजाः, मतान्तरेणाणिमाद्यैश्वर्ययुक्ताः, तलवराः–परितुष्टनरपतिप्रदत्तपट्टबन्धवि-भूषिताः राजस्थानीयाः, 'माडंबिया' छिन्नमडम्बाधिपाः, 'कोडंबिया' कतिपयकुटुम्बप्रभवोऽवलगकाः मन्त्रिणः प्रतीताः, महामन्त्रिणो–मन्त्रिमण्डलप्रधानाः, हस्तिसाधनोपरिका इति वृद्धाः, गणका–ज्योतिषिकाः, भाण्डागारिका इति वृद्धाः, दौवारिकाः–प्रतीहाराः राजदौवारिका वा, अमात्या–राज्याधिष्ठायकाः, चेटाः–पादमूलिकाः, पीठमर्दाः–आस्थाने आस-नासन्नसेवकाः, वयस्या इत्यर्थः, नगरं–नगरवासिप्रकृतयः, निगमाः–कारणिकाः वणिजो वा, श्रेष्ठिनः–श्रीदेवताध्यासि-तसौवर्णपट्टविभूषितोत्तमाङ्गाः, सेनापतयो–नृपतिनिरूपितचतुरङ्गसैन्यनायकाः, सार्थवाहाः–सार्थवाहकाः, दूता–अन्येषां

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

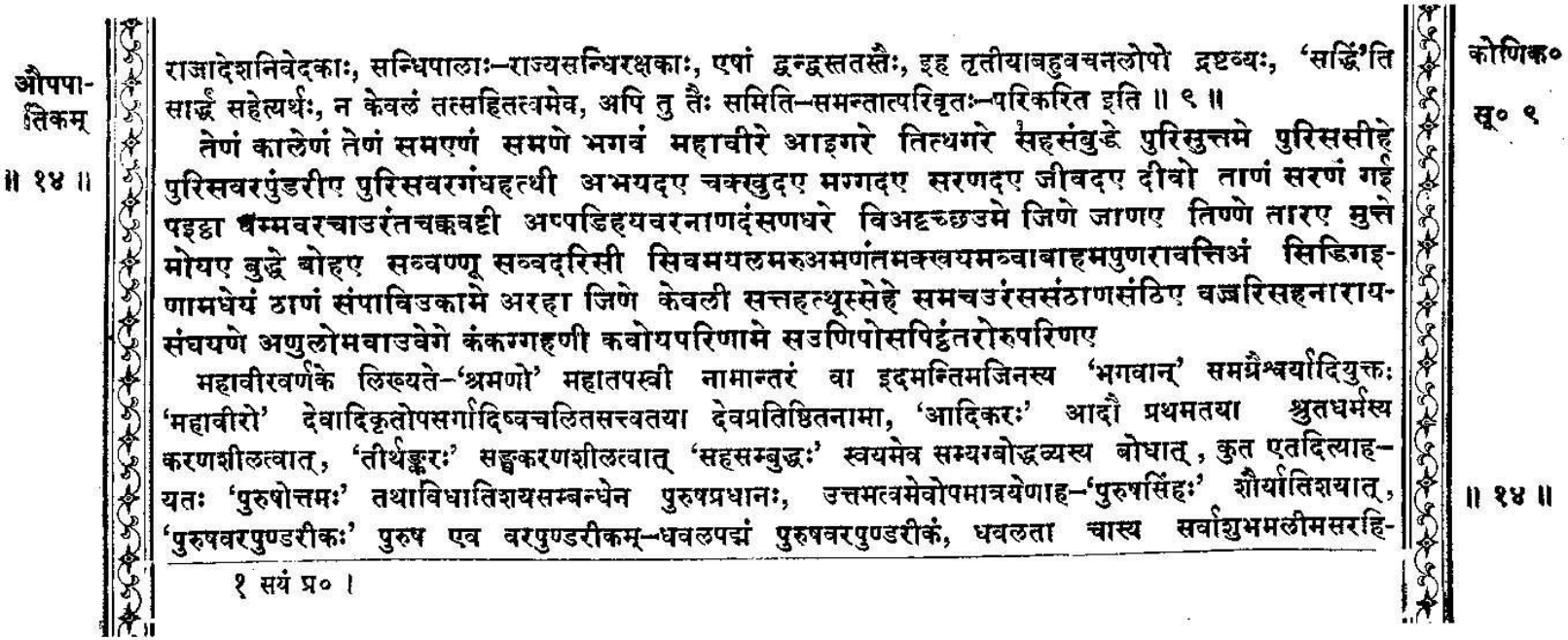

औपपातिकम् ॥ १४ ॥

राजादेशनिवेदकाः, सन्धिपालाः–राज्यसन्धिरक्षकाः, एषां द्वन्द्वस्ततस्तैः, इह तृतीयाबहुवचनलोपो द्रष्टव्यः, 'सद्धिं'ति सार्द्धं सहेत्यर्थः, न केवलं तत्सहितस्त्वमेव, अपि तु तैः समिति–समन्तात्परिवृतः–परिकरित इति ॥ ९ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे आइगरे तित्थगरे सहसंबुद्धे पुरिसुत्तमे पुरिससीहे पुरिसवरपुंडरीए पुरिसवरगंधहत्थी अभयदए चक्खुदए मग्गदए सरणदए जीवदए दीवो ताणं सरणं गई पइट्ठा धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टी अप्पडिहयवरनाणदंसणधरे विअट्टच्छउमे जिणे जाणए तिण्णे तारए मुत्ते मोयए बुद्धे बोहए सव्वण्णू सव्वदरिसी सिवमयलमरुअमणंतमक्खयमव्वाबाहमपुणरावत्तिअं सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपाविउकामे अरहा जिणे केवली सत्तहत्थूस्सेहे समचउरंससंठाणसंठिए वज्जरिसहनारायसंघयणे अणुलोमवाउवेगे कंकग्गहणी कवोयपरिणामे सउणिपोसपिट्ठंतरोरुपरिणए

महावीरवर्णके लिख्यते–'श्रमणो' महातपस्वी नामान्तरं वा इदमन्तिमजिनस्य 'भगवान्' समग्रैश्वर्यादियुक्तः 'महावीरो' देवादिकृतोपसर्गादिष्वचलितसत्त्वतया देवप्रतिष्ठितनामा, 'आदिकरः' आदौ प्रथमतया श्रुतधर्मस्य करणशीलत्वात्, 'तीर्थङ्करः' सङ्घकरणशीलत्वात् 'सहसम्बुद्धः' स्वयमेव सम्यग्बोद्धव्यस्य बोधात्, कुत एतदित्याह–यतः 'पुरुषोत्तमः' तथाविधातिशयसम्बन्धेन पुरुषप्रधानः, उत्तमत्वमेवोपमात्रयेणाह–'पुरुषसिंहः' शौर्यातिशयात्, 'पुरुषवरपुण्डरीकः' पुरुष एव वरपुण्डरीकम्–धवलपद्मं पुरुषवरपुण्डरीकं, धवलता चास्य सर्वाशुभमलीमसरहि-

१ सयं प्र० ।

कोणिक० सू० ९

॥ १४ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	भगवंत-महावीरस्य परिचय:

प्रत सूत्रांक [१०] दीप अनुक्रम [१०]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

तत्वात्, एवं 'पुरुषवरगंधहस्ती' गन्धहस्तिता चास्य सामान्यगजकल्पपरचक्रदुर्भिक्षजनमरकादिदुरितविनाशनात्, तथा न भयं दयते–ददाति प्राणापहारकरणरसिकोपसर्गकारिण्यपि प्राणिनीत्यभयदयः, अभया वा–सर्वप्राणिभयपरिहारवती दया–घृणा यस्य सोऽभयदयः, न केवलमयमनर्थं न करोति अपि त्वर्थं करोतीति दर्शयन्नाह–चक्षुरिव चक्षुः–श्रुतज्ञानं तद्दयते यः स चक्षुर्दयः, यथा हि लोके चक्षुर्दत्त्वा वाञ्छितस्थानमार्गं दर्शयन्महोपकारी भवति इत्येवमिहापीति दर्शयन्नाह–मार्गं–सम्यग्दर्शनादिकं मोक्षपथं दयत इति मार्गदयः, यथा हि लोके चक्षुरुद्घाटनं मार्गदर्शनं च कृत्वा चौरादिविलुप्तधनान्निरुपद्रवं स्थानं प्रापयन् परमोपकारी भवतीत्येवमिहापीति दर्शयन्नाह–'शरणदयो' निरुपद्रवस्थानदायको, निर्वाणहेतुरित्यर्थः, यथा हि लोके चक्षुर्मार्गशरणदानादुःस्थानां जीवनं ददात्येवमिहापीति दर्शयन्नाह–जीवनं जीवो–भावप्राणधारणम्, अमरणधर्मत्वमित्यर्थः, तं दयत इति जीवदयो, जीवेषु वा दया यस्य स जीवदयः, तथा दीप इव समस्तवस्तुप्रकाशकत्वात् द्वीपो वा संसारसागरान्तर्गताङ्गिवर्गस्य नानाविधदुःखकल्लोलाभिघातदुःस्थितस्याश्वासहेतुत्वात्, तथा त्राणम्–अनर्थप्रतिहननं तद्धेतुत्वात्त्राणं, तथा शरणम्–अर्थसम्पादनं तद्धेतुत्वाच्छरणं, तथा 'गइ'त्ति गम्यतेऽभिगम्यते दुःस्थितैः सुस्थतार्थमाश्रीयते इति गतिः, 'पइट्ठ'त्ति प्रतिष्ठन्त्यस्यामिति प्रतिष्ठा–आधारः संसारगर्ते प्रपततः प्राणिवर्गस्येति, तथा त्रयस्समुद्राश्चतुर्थो हिमवानेते चत्वारः पृथिव्या अन्ताः–पर्यन्तास्तेषु स्वामितया भवतीति चातुरन्तः, स चासौ चक्रवर्ती च चातुरन्तचक्रवर्ती, वरश्चासौ चातुरन्तचक्रवर्ती च वरचातुरन्तचक्रवर्ती–सर्वराजातिशायी, धर्मविषये वरचातुरन्तचक्रवर्ती धर्मवरचातुरन्तचक्रवर्ती, सकलधर्मप्रणेतॄणां मध्ये सातिशयत्वादिति, तथा अप्रतिहते–कटादिभिरस्खलिते अविसंवादके

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	भगवंत-महावीरस्य परिचयः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१०]

दीप अनुक्रम [१०]

वा अत एव क्षायिकत्वाद्वा वरे–प्रधाने ज्ञानदर्शने–केवललक्षणे धारयतीति अप्रतिहतवरज्ञानदर्शनधरः, कथमस्यैते इत्यत आह–यतो 'व्यावृत्तच्छद्मा' निवृत्तज्ञानाद्यावरणो निर्मायो वा, एतच्च रागादिजयात्तस्येत्याह–'जिनो' रागादिजेता, रागादिजयश्च रागादिस्वरूपादिज्ञानादित्यत आह–'जाणए'त्ति ज्ञायको–ज्ञाता रागादिभावसम्बन्धिनां स्वरूपकारणफलानामिति, अत एव 'तिण्णो'त्ति तीर्ण इव तीर्णः, संसारसागरमिति गम्यते, अत एव 'तारकः' संसारसागरादुपदेशवर्तिनां भगवानिति, तथा 'मुत्तो' बाह्याभ्यन्तरग्रन्थात् कर्मबन्धनाद्वा, अत एव 'मोचकः' अन्येषामुपदेशवर्तिनां, तथा 'बुद्धे'त्ति बुद्धवान् बोद्धव्यम्, अत एव 'बोधकः' अन्येषामिति, एतावन्ति विशेषणानि भवावस्थामाश्रित्योक्तानि, अथ सिद्धावस्थामाश्रित्योच्यते–'सव्वण्णू सव्वदरिसी'त्ति, इह ज्ञानं–विशेषावबोधः, दर्शनं च–सामान्यावबोधः, सिद्धावस्थायां पुरुषस्य कैश्चित् ज्ञानं नाभ्युपगम्यते प्रकृतिविकारस्य बुद्धेरभावादित्येतन्मतव्यपोहार्थमिदं, तथा 'शिवं' सर्वोपद्रवरहितत्वाद् 'अचलं' स्वाभाविकप्रायोगिकचलनरहितत्वात् 'अरुजं' रोगाभावात् 'अनन्तम्' अनन्तार्थविषयज्ञानस्वरूपत्वात्, 'अक्षयम्' अनाशं, साद्यपर्यवसितत्वात्, अक्षयं वा परिपूर्णत्वात्, 'अव्याबाधम्' अपीडाकारित्वात्, 'अपुनरावर्तकं' पुनर्भवाभावात्, सिद्धिगतिरिति नामधेयं–प्रशस्तं नाम यस्य तत्सिद्धिगतिनामधेयं, तिष्ठन्त्यस्मिन्निति स्थानं–क्षीणकर्मणो जीवस्य स्वरूपं लोकाग्रं वा, जीवस्वरूपविशेषणानि तु लोकाग्रे उपचारादवसेयानीति, 'संपाविउकामे'त्ति संप्राप्तुकामस्तत्राप्राप्त इत्यर्थः, 'जिणे जाणए' इत्यादिविशेषणानि क्वचिन्न दृश्यन्ते, दृश्यन्ते पुनरिमानि–'अरह'त्ति अर्हन्–अशोकादिमहापूजार्हत्वात् अविद्यमानं वा रहः–एकान्तं प्रच्छन्नं सर्वज्ञत्वाद् यस्य सोऽरहाः, जिनः प्राग्वत्, केवलानि–सम्पूर्णानि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवंत-महावीरस्य परिचय:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१०]

दीप अनुक्रम [१०]

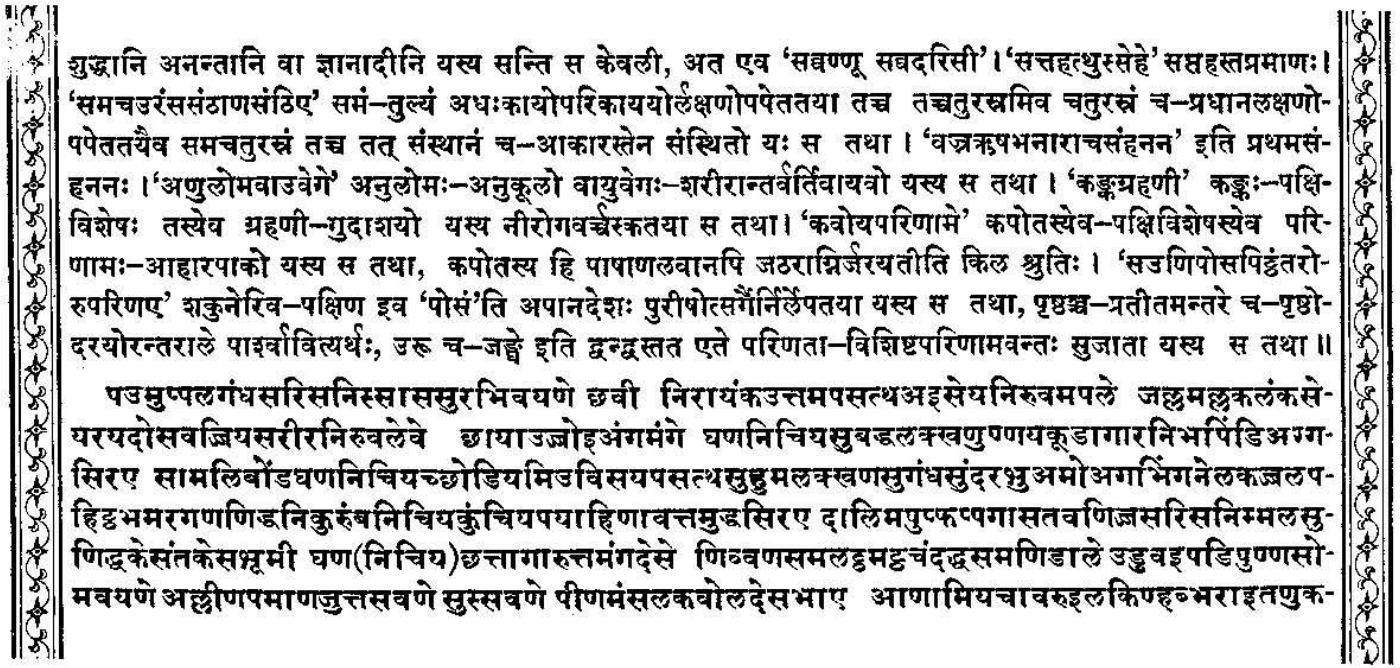

शुद्धानि अनन्तानि वा ज्ञानादीनि यस्य सन्ति स केवली, अत एव 'सवण्णू सवदरिसी'। 'सत्तहत्थुस्सेहे' सप्तहस्तप्रमाणः। 'समचउरंससंठाणसंठिए' समं–तुल्यं अधःकायोपरिकाययोर्लक्षणोपपेततया तच्च तच्चतुरस्रमिव चतुरस्रं च–प्रधानलक्षणोपपेततयैव समचतुरस्रं तच्च तत् संस्थानं च–आकारस्तेन संस्थितो यः स तथा। 'वज्रऋषभनाराचसंहनन' इति प्रथमसंहननः। 'अणुलोमवाउवेगे' अनुलोमः–अनुकूलो वायुवेगः–शरीरान्तर्वर्तिवायवो यस्य स तथा। 'कङ्कग्रहणी' कङ्कः–पक्षिविशेषः तस्येव ग्रहणी–गुदाशयो यस्य नीरोगवर्चस्कतया स तथा। 'कवोयपरिणामे' कपोतस्येव–पक्षिविशेषस्येव परिणामः–आहारपाको यस्य स तथा, कपोतस्य हि पाषाणलवानपि जठराग्निर्जरयतीति किल श्रुतिः। 'सउणिपोसपिट्ठंतरोरुपरिणए' शकुनेरिव–पक्षिण इव 'पोसं'ति अपानदेशः पुरीषोत्सर्गैर्निर्लेपतया यस्य स तथा, पृष्ठञ्च–प्रतीतमन्तरे च–पृष्ठोदरयोरन्तराले पार्श्वावित्यर्थः, उरू च–जङ्घे इति द्वन्द्वस्तत एते परिणता–विशिष्टपरिणामवन्तः सुजाता यस्य स तथा॥

पउमुप्पलगंधसरिसनिस्साससुरभिवयणे छवी निरायंकउत्तमपसत्थअइसेयनिरुवमपले जल्लमल्लकलंकसेयरयदोसवज्जियसरीरनिरुवलेवे छायाउज्जोइअंगमंगे घणनिचियसुबद्धलक्खणुण्णयकूडागारनिभपिंडिअग्गसिरए सामलिबोंडघणनिचियच्छोडियमिउविसयपसत्थसुहुमलक्खणसुगंधसुंदरभुअमोअगभिंगनेलकज्जलपहिट्ठभमरगणणिद्धनिकुरुंबनिचियकुंचियपयाहिणावत्तमुद्धसिरए दालिमपुप्फप्पगासतवणिज्जसरिसनिम्मलसुणिद्धकेसंतकेसभूमी घण(निचिय)छत्तागारुत्तमंगदेसे णिव्वणसमलट्ठमट्ठचंदद्धसमणिडाले उडुवइपडिपुण्णसोमवयणे अल्लीणपमाणजुत्तसवणे सुस्सवणे पीणमंसलकवोलदेसभाए आणामियचावरुइलकिण्हब्भराइतणुक-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवंतमहावीरस्य परिचयः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१०]

दीप अनुक्रम [१०]

सिणणिद्धमुहे अवदालिअपुंडरीयणयणे कोआसिअधवलपत्तलच्छे गरुलायतउज्जुतुंगणासे उवचिअसिलप्पवालबिंबफलसण्णिभाहरोट्ठे पंडुरससिसअलविमलणिम्मलसंखगोक्खीरफेणकुंददगरयमुणालिआधवलदंतसेढी अखंडदंते अप्फुडिअदंते अविरलदंते सुणिद्धदंते सुजायदंते एगदंतसेढीविव अणेगदंते हुयवहणिद्धंतधोयतत्ततवणिज्जरत्ततलतालुजीहे

'पउमुप्पलगंधसरिसनिस्सासंसुरभिवयणे' पद्मं–कमलं उत्पलं च–नीलोत्पलमथवा पद्मं–पद्मकाभिधानं गन्धद्रव्यमुत्पलं च–उत्पलकुष्ठं तयोर्गन्धेन–सौरभ्येण सदृशः–समो यो निःश्वासः–श्वासवायुस्तेन सुरभि–सुगन्धि वदनं–मुखं यस्य स तथा। 'छवी'ति छविमान् उदात्तवर्णः, सुकुमारत्वचा युक्त इत्यर्थः। 'नीरायंकउत्तमपसत्थअइसेयनिरुवमपले' निरातङ्कः–नीरोगमुत्तमं–प्रशस्तमतिश्वेतं निरुपमं च पलं–मांसं, पाठान्तरेण तलं–रूपं यस्य स तथा, पाठान्तरपक्षे 'अतिस्सेय' इति अतिश्रेयः–अत्यन्तप्रशस्यम्। 'जल्लमल्लकलंकसेयरयदोसवज्जियसरीरनिरुवलेवे' याति च लगति चेति यल्लः–स्वल्पप्रयत्नापनेयः स चासौ मल्लश्चेति यल्लमल्लः, स च कलङ्कं च–दुष्टतिलकादिकं स्वेदश्च–प्रस्वेदो रजश्च–रेणुस्तेषां यो दोषो–मालिन्यकरणं तेन वर्जितं शरीरं यस्य स तथा, स चासावत एव निरुपलेपश्चेति कर्मधारयः। 'छायाउज्जोइयंगमंगे' छायया–दीप्त्या उद्योतितं–प्रकाशितं अङ्गमङ्गं यस्य। 'घणनिचियसुबद्धलक्खणुण्णयकूडागारनिभपिंडियग्गसिरए' घननिचितम्–अत्यर्थनिबिडं घनवद्वा–अयोघनवत् निचितं–सुबद्धं सुष्ठु स्नायुबद्धं लक्षणोन्नतं–प्रशस्तलक्षणं कूटस्य–पर्वतशिखरस्य आकारेण–संस्थानेन निभं–सदृशं यत्तत्तथा, पिण्डिकेव–पाषाणपिण्डिकेवाग्रम्–उष्णीषलक्षणं यस्य तत्तथा, तदेवंविधं शिरो यस्य स

॥ १६ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवंत-महावीरस्य परिचयः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्ति:

घननिचितादिविशेषणशिरस्कः। 'सामलिबोंडघणनिचियप्फो(च्छो)डियमिउविसयपसत्थसुहुमलक्खणसुगंधसुंदरभुअमोअग-भिंगनेलकज्जलपहिट्ठभमरगणणिद्धनिकुरुंबनिचियकुंचियपयाहिणावत्तमुद्धसिरए' शाल्मली–वृक्षविशेषः तस्या यद्बोण्डं–फलं घननिचितम्–अतीव निबिडं 'छोटियं'ति छोटितं स्फोटितं तद्वत् मृदवः–सुकुमाराश्च विशदाश्च–व्यक्ताः प्रशस्ताश्च–शुभाः सूक्ष्माश्च–श्लक्ष्णाः लक्षणाश्च–लाक्षणिकाः सुगन्धयश्च–सुरभयः सुन्दराश्च–शोभनाः भुजमोचकवद्–रत्नविशेष इव भृङ्गवत्–कीटविशेषवदङ्गारविशेषवद्वा नैलवत्–नीलीविकारवत् अथवा भृङ्गनेलवत् कज्जलवत्–मषीव प्रहृष्टभ्रमरगणवच्च–निरुज-द्विरेफवृन्दमिव स्निग्धः–कृष्णच्छायो निकुरुम्बः–समूहो येषां ते तथा, ते च निचिताश्च–निबिडाः कुञ्चिताश्च–कुण्डली-भूताः प्रदक्षिणावर्ताश्च–प्रतीताः मूर्द्धनि–मस्तके शिरोजा–बाला यस्य स तथा, अधिकृतवाचनायां भुजमोचकशब्दा-दारभ्य चेदमधीयते न सामलीत्यादीति। 'दालिमपुप्फप्पगासतवणिज्जसरिसनिम्मलसुणिद्धकेसंतकेसभूमी' दाडिमपुष्पप्र-काशा च रक्तेत्यर्थः, तपनीयसदृशी च–रक्तसुवर्णसमवर्णेत्यर्थः, निर्मला च सुस्निग्धा च प्रतीता केशान्ते–बालसमीपे केशभूमिः–केशोत्पत्तिस्थानभूता मस्तकत्वक् यस्य स तथा। 'घणनिचिये'त्यादि प्राग्वत्, छत्राकारोत्तमाङ्गदेशः, उन्नतत्व-साधर्म्यात्। 'णिव्वणसमलट्ठमट्ठचंदद्धसमणिडाले' निर्व्रणं–विस्फोटकादिकृतक्षतरहितं समम्–अविषममत एव लष्टं–मनोज्ञं मृष्टं–शुद्धं चन्द्रार्धसमं–शशधरशकलसदृशं ललाटम्–अलिकं यस्य स तथा। 'उडुवइपडिपुण्णसोमवयणे' इह प्राकृतत्वात् प्रतिपूर्णोडुपतिसौम्यवदन इति दृश्यम्, उडुपतिः–चन्द्रः। 'अल्लीणपमाणजुत्तसवणे' आलीनौ न तु टप्परौ प्रमाण-युक्तौ–स्वप्रमाणोपेतौ श्रवणौ–कर्णौ यस्य स तथा, अत एव 'सुश्रवणः' शोभनश्रोत्रः शोभनश्रवणव्यापारो वा। 'पीणमं-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवंत-महावीरस्य परिचय:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

सलकवोलदेसभाए' पीनौ–अकृशौ यतो मांसलौ–समांसौ कपोलौ–गण्डौ तयोस्तावेव वा मुखस्य देशरूपौ भागौ यस्य स तथा। 'आणामियचावरुइलकिण्हब्भराइतणुकसिणणिद्धभमुहे' आनामितम्–ईषन्नामितं यच्चापं–धनुस्तद्वद्रुचिरे–मनोज्ञे कृष्णाभ्रराजीव–कालिकमेघरेखेव तनुके कृष्णे–काले स्निग्धे च–सुच्छाये भ्रुवौ–नेत्रावयवविशेषौ यस्य स तथा, वाचनान्तरे तु दृश्यते 'आणामियचावरुइलकिण्हब्भराइसंठियसंगयआययसुजायभमुए' आनामितचापवद्रुचिरे कृष्णाभ्रराजीवच्च संस्थिते–तत्संस्थानवत्यौ सङ्गते–उचिते आयते–दीर्घे सुजाते–सुनिष्पन्ने भ्रुवौ यस्य स तथा। 'अवदालियपुंडरीयणयणे' अवदालितं–रविकरैर्विकासितं यत्पुण्डरीकं–सितपद्मं तद्वन्नयने यस्य स तथा, अत एव 'कोआसिअधवलपत्तलच्छे' कोकासियत्ति–पद्मवद्विकसिते धवले च क्वचिद्देशे पत्रले च– पक्ष्मवत्यौ अक्षिणी–लोचने यस्य स तथा। 'गरुलायतउज्जुतुंगणासे' गरुडस्येवायता–दीर्घा ऋज्वी–अवक्रा तुङ्गा–उन्नता नासा–नासिका यस्य स तथा। 'उअचिअसिलप्पवालबिंबफलसण्णिभाहरोट्ठे' उअचिअत्ति–परिकर्मितं यच्छिलारूपं प्रवालं विद्रुममित्यर्थो, बिम्बफलं–गोल्हाफलं तयोः सन्निभः–सदृशो रक्ततया उन्नतमध्यतया च अधरोष्ठः–अधस्तनदन्तच्छदो यस्य स तथा। 'पंडुरससिसअलविमलणिम्मलसंखगोक्खीरफेणकुंददगरयमुणालियाधवलदंतसेढी' पाण्डुरम्–अकलङ्कं यच्छशिशकलं–चन्द्रखण्डं विमलानां मध्ये निर्मलश्च यः शङ्खः गोक्षीरफेने च प्रतीते कुन्दं–पुष्पविशेषः उदकरजश्च–तोयकणा मृणालिका च–बिसिनी तद्वद्धवला दन्तश्रेणिर्यस्य स तथा। 'अखण्डदन्ते' सकलरदनः, 'अप्फुडियदंते' अजर्जरदन्तः, 'अविरलदंते' घनरदनः, 'सुणिद्धदंते'त्ति व्यक्तं, 'सुजायदंते' सम्यग्निष्पन्नदन्तः 'एगदंतसेढीविव अणेगदंते' एकस्य दन्तस्य श्रेणिः–पङ्क्तिर्यस्य स तथा, स इव परस्परानुपल-

॥ १७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवंत-महावीरस्य परिचय:

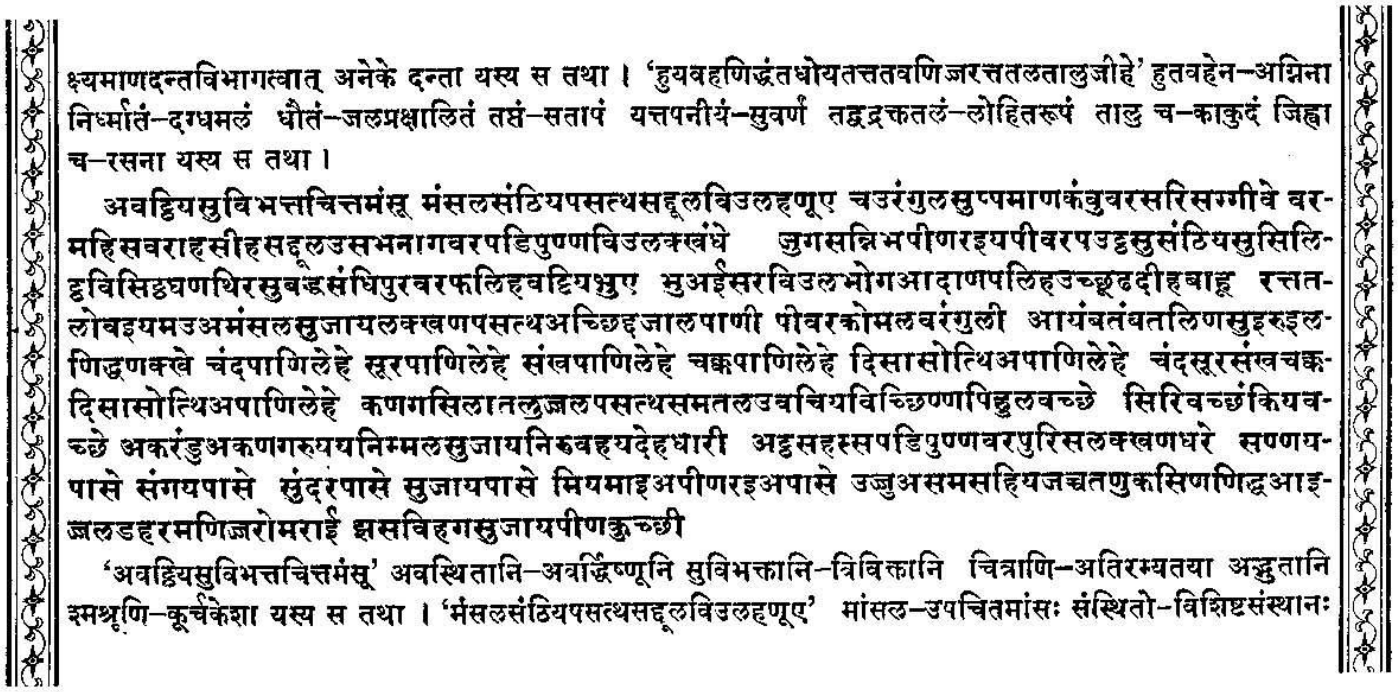

क्ष्यमाणदन्तविभागत्वात् अनेके दन्ता यस्य स तथा । 'हुयवहणिद्धंतधोयतत्ततवणिज्जरत्ततलतालुजीहे' हुतवहेन–अग्निना निर्ध्मातं–दग्धमलं धौतं–जलप्रक्षालितं तप्तं–सतापं यत्तपनीयं–सुवर्णं तद्वद्रक्ततलं–लोहितरूपं तालु च–काकुदं जिह्वा च–रसना यस्य स तथा ।

अवट्ठियसुविभत्तचित्तमंसू मंसलसंठियपसत्थसद्दूलविउलहणूए चउरंगुलसुप्पमाणकंबुवरसरिसग्गीवे वरमहिसवराहसीहसद्दूलउसभनागवरपडिपुण्णविउलक्खंधे जुगसन्निभपीणरइयपीवरपउट्ठसुसंठियसुसिलिट्ठविसिट्ठघणथिरसुबद्धसंधिपुरवरफलिहवट्टियभुए भुअईसरविउलभोगआदाणपलिहउच्छूढदीहबाहू रत्ततलोवइयमउअमंसलसुजायलक्खणपसत्थअच्छिद्दजालपाणी पीवरकोमलवरंगुली आयंबतंबतलिणसुइरुइलणिद्धणक्खे चंदपाणिलेहे सूरपाणिलेहे संखपाणिलेहे चक्कपाणिलेहे दिसासोत्थिअपाणिलेहे चंदसूरसंखचक्कदिसासोत्थिअपाणिलेहे कणगसिलातलुज्जलपसत्थसमतलउवचियविच्छिण्णपिहुलवच्छे सिरिवच्छंकियवच्छे अकरंडुअकणगरुयगनिम्मलसुजायनिरुवहयदेहधारी अट्ठसहस्सपडिपुण्णवरपुरिसलक्खणधरे सण्णयपासे संगयपासे सुंदरपासे सुजायपासे मियमाइअपीणरइअपासे उज्जुअसमसहियजच्चतणुकसिणणिद्धआइज्जलडहरमणिज्जरोमराई झसविहगसुजायपीणकुच्छी

'अवट्ठियसुविभत्तचित्तमंसू' अवस्थितानि–अवर्द्धिष्णूनि सुविभक्तानि–विविक्तानि चित्राणि–अतिरम्यतया अद्भुतानि श्मश्रूणि–कूर्चकेशा यस्य स तथा । 'मंसलसंठियपसत्थसद्दूलविउलहणूए' मांसल–उपचितमांसः संस्थितो–विशिष्टसंस्थानः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रशस्तः–शुभः शार्दूलस्येव–व्याघ्रस्येव विपुलो–विस्तीर्णो हनुः–चिबुकं यस्य स तथा । 'चउरंगुलसुप्पमाणकंबुवरसरिसग्गीवे' चतुरङ्गुललक्षणं सुष्ठु प्रमाणं यस्याः सा तथाविधा कम्बुवरसदृशी च–उन्नततया वलित्रययोगाच्च प्रधानशङ्खसदृशी ग्रीवा–कण्ठो यस्य सं तथा । 'वरमहिसवराहसीहसद्दूलउसभनागवरपडिपुण्णविउलक्खंधे' वरमहिषः–प्रधानः सैरीभेयः वराहः—शूकरः सिंहः–केसरी शार्दूलो–व्याघ्रः ऋषभो–वृषभो नागवरः–प्रधानगजः एषामिव प्रतिपूर्णः–स्वप्रमाणेनाहीनो विपुलो–विस्तीर्णः स्कन्धः–अंशदेशो यस्य स तथा। 'जुगसन्निभपीणरइयपीवरपउट्ठसंठियसुसिलिट्ठविसिट्ठघणथिरसुबद्धसंधिपुरवरफलिहवट्टियभुए' युगसन्निभौ–वृत्तत्वायतत्वाभ्यां यूपतुल्यौ पीनौ–उपचितौ रतिदौ–पश्यतां सुखकरौ पीवरप्रकोष्ठौ–अकृशकलाचिकौ संस्थितौ–विशिष्टसंस्थानौ सुश्लिष्टाः–सङ्गता विशिष्टाः–प्रधानाः घना–निविडाः स्थिराः–नातिश्लथाः सुबद्धाः–सुष्ठु नद्धाः स्नायुभिः सन्धयः–सन्धानानि ययोस्तौ तथा, पुरवरपरिघवत्–नगरार्गलावद्वर्तितौ च बाहू यस्य स तथा, वाचनान्तरे 'पुरवरफलिहवट्टियभुए'इत्येतावदेव भुजविशेषणं दृश्यते । 'भुयईसरविउलभोगआदाणपलिहउच्छूढदीहबाहू'भुजगेश्वरो–नागराजस्तस्य यो विपुलो–महान् भोगो–देहः स तथा, स चासौ आदानार्थम्–ईप्सितार्थग्रहणाय 'पलिहोच्छूढ'त्ति पर्यवक्षिप्तश्च–प्रसारित इति समासः, पाठान्तरे 'आयाणफलिहओच्छूढ'त्ति आदीयते अस्मादित्यादानम्–अर्गलास्थानं तस्माद् 'उच्छूढो'त्ति निष्काशितः 'फलिहो'त्ति अर्गलादण्डः स इव तावि व दीर्घौ बाहू यस्य स तथा, वाचनान्तरे युगसन्निभपीनरतिदपीवरप्रकोष्ठश्चासौ संस्थितोपचितघनस्थिरसुसम्बद्धसुनिगूढपर्वसन्धिश्चेति कर्मधारयपदमिति । 'रत्ततलोवइयमउअमंसलसुजायलक्खणपसत्थअच्छिद्दजालपाणी' रक्ततलौ–लोहिताधोभागौ उपचितौ–उन्नतौ मृदुकौ–कोमलौ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवंत-महावीरस्य परिचयः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१०]

दीप अनुक्रम [१०]

मांसलौ–समांसौ सुजातौ–सुनिष्पन्नौ प्रशस्तलक्षणौ–शुभचिह्नौ अच्छिद्रजालौ–विवक्षिताङ्गुल्यन्तरालसमूहरहितौ पाणी–हस्तौ यस्य स तथा। 'पीवरकोमलवरंगुली' व्यक्तं, नवरं पीवराः–महत्यः, क्वचित्तु दृश्यते 'पीवरवट्टियसुजायकोमलवरंगुली' व्यक्तं च। 'आयंबतंबतलिणसुइरुइलणिद्धणक्खे' 'आयंबतंब'त्ति ताम्रवत् आताम्रा–ईषल्लोहिताः तलिनाः–प्रतलाः शुचयः–पवित्राः रुचिराः–दीप्ताः स्निग्धा–अरूक्षा नखाः–कररुहा यस्य स तथा। 'चंदपाणिलेहे' चन्द्राकाराः पाणौ रेखा यस्य स तथा, एवमन्यान्यपि त्रीणि । 'दिसासोत्थिअपाणिलेहे' दिक्स्वस्तिकः–दक्षिणावर्तस्वस्तिकः, एतदेवानन्तरोक्तं विशेषणपञ्चकं तत्प्रशस्तताप्रकर्षप्रतिपादनाय सङ्ग्रहवचनेनाह–चन्द्रसूर्यशङ्खचक्रदिक्स्वस्तिकपाणिलेखः, अत एव वाचनान्तरेऽधीयते–'रविससिसंखचक्कसोत्थियविभत्तसुविरइयपाणिलेहे' व्यक्तं, नवरं विभक्ता–विभागवत्यः सुविरचिताः–सुष्ठुकृताः स्वकीयकर्मणा। 'अणेगवरलक्खणुत्तिमपसत्थसुइरइयपाणिलेहे' अनेकैर्वरलक्षणैरुत्तमाः प्रशस्ताः शुचयो रतिदाश्च–रम्याः पाणिलेखा यस्य स तथा । अथ प्रकृतवाचनाऽनुश्रीयते–'कणगसिलायलुज्जलपसत्थसमतलउवचियविच्छिन्नपिहुलवच्छे' कनकशिलातलवदुज्ज्वलं प्रशस्तं च–शुभं समतलञ्च–अविषमरूपम् उपचितञ्च–मांसलं विस्तीर्णं पृथुलं च–अतिविशालं च वक्षः–उरो यस्य स तथा। 'सिरिवच्छंकियवच्छे' व्यक्तं, वाचनान्तरे तु वक्षोविशेषणान्येवं दृश्यन्ते–'उवचियपुरवरकवाडविच्छिण्णपिहुलवच्छे' उपचितं पुरवरकपाटवद्विस्तीर्णं पृथुलं च–अतिपृथु वक्षो यस्य स तथा, 'कणयसिलायलुज्जलपसत्थसमतलसिरिवच्छरइयवच्छे' पूर्ववन्नवरं श्रीवत्सेन रतिदं–रम्यमिति विशेषः। 'अकरंडुअकणगरुयनिम्मलसुजायनिरुवहयदेहधारी' अकरण्डुकञ्च–मांसलतयाऽनुपलक्ष्यमाणपृष्ठवंशास्थिकं, कनकस्येव रुचको–रुचिर्यस्य स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवंत-महावीरस्य परिचयः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१०]

दीप अनुक्रम [१०]

तथा, तं च निर्मलं च सुजातं च निरुपहतं च–रोगोपहतिवर्जितं देहं धारयतीत्येवंशीलो यः स तथा। 'अट्ठसहस्सपडिपुण्णवरपुरिसलक्खणधरे'त्ति क्वचिद्दृश्यते, अष्टसहस्रम्–अष्टोत्तरसहस्रं प्रतिपूर्णम्–अन्यूनं वरपुरुषलक्षणानां–स्वस्तिकादीनां धारयति यः स तथा। 'सण्णयपासे' अधोऽधःपार्श्वयोरवनतत्वात् 'संगयपासे' देहप्रमाणोचितपार्श्वः, अत एव 'सुंदरपासे'त्ति व्यक्तं, 'सुजायपासे' सुनिष्पन्नपार्श्वः, 'मियमाइअपीणरइयपासे' मितमात्रिकौ–अत्यर्थं परिमाणवन्तौ पीनौ–उपचितौ रतिदौ–रम्यौ पार्श्वौ–कक्षाधोदेशौ यस्य स तथा। 'उज्जुयसमसंहियजच्चतणुकसिणणिद्धआइज्जलडहरमणिज्जरोमराई' ऋजुकानाम्–अवक्राणां समानाम्–अविषमाणां संहितानां–संहतानां जात्यानां–प्रधानानां तनूनां–सूक्ष्माणां कृष्णानां–कालानां स्निग्धानाम्–अरूक्षाणाम् आदेयानां–उपादेयानां लडहानां–सलावण्यानाम् अत एव रमणीयानां च–रम्याणां रोम्णां–तनूरुहाणां राजिः–पङ्क्तिर्यस्य स तथा। 'झसविहगसुजायपीणकुच्छी' मत्स्यपक्षिणोरिव सुजातौ–सुनिष्पन्नौ पीनौ–उपचितौ कुक्षी–उदरदेशविशेषौ यस्य स तथा।

झसोदरे सुइकरणे पउमविअडणाभे गंगावत्तकपयाहिणावत्ततरंगभंगुररविकिरणतरुणबोहियअकोसायंतपउमगंभीरवियडणाभे साहयसोणंदमुसलदप्पणणिकरियवरकणगच्छरुसरिसवरवइरवलिअमज्झे पमुइयवरतुरगसीहवरवट्टियकडी वरतुरगसुजायसुगुज्झदेसे आइण्णहउव्व णिरुवलेवे वरवारणतुल्लविक्कमविलसियगई गयससणसुजायसन्निभोरु समुग्गणिमग्गगूढजाणू एणीकुरुविंदावत्तवट्टाणुपुव्वजंघे संठियसुसिलिट्ठगूढगुप्फे सुप्पइट्ठियकुम्मचारुचलणे अणुपुव्वसुसंहयंगुलीए उण्णयतणुतंबणिद्धणक्खे रत्तुप्पलपत्तमउअ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवंत-महावीरस्य परिचय:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१०]

दीप अनुक्रम [१०]

सुकुमालकोमलतले अट्ठसहस्सवरपुरिसलक्खणधरे नगनगरमगरसागरचक्कंकवरंकमंगलंकियचलणे विसिट्ठरूवे हुयवहनिद्धूमजलियतडितडियतरुणरविकिरणसरिसतेए अणासवे अममे अकिंचणे छिन्नसोए निरुवलेवे ववगयपेमरागदोसमोहे निग्गंथस्स पवयणस्स देसए

'झसोदरे'त्ति व्यक्तं। 'सुइकरणे' शुचीन्द्रियः। 'झषोदरपद्मविकटनाभि' इति पाठान्तरं। 'गङ्गावत्तकपयाहिणावत्ततरंगभंगुररविकिरणतरुणबोहियअकोसायंतपउमगंभीरवियडणाहे'गङ्गावर्तक इव प्रदक्षिणावर्ततरङ्गैरिव–वीचिभिरिव भङ्गुरा च–भग्ना रविकिरणतरुणत्ति–तरुणरविकिरणैर्बोधितं–स्पृष्टं अकोसायंतत्ति–विकाशीभवद् यत्पद्मं तद्वद्गम्भीरा च विकटा च नाभिर्यस्य स तथा। 'साहयसोणंदमुसलदप्पणणिकरियवरकणगच्छरुसरिसवरवइरवलियमज्झे' साहयत्ति–संहतं संक्षिप्तमध्यं यत्सोणंदं–त्रिकाष्ठिका मुशलं च–प्रतीतं दर्पणकश्च–आदर्शकदण्डो निगरियत्ति–सारीकृतं यद्वरकनकं तस्य यः त्सरुः–खड्गमुष्टिः स चेति द्वन्द्वः, तैः सदृशो वरवज्र इव वलितः–क्षामो मध्यो–मध्यभागो यस्य स तथा। 'पमुइयवरतुरयसीहवरवट्टियकडी' प्रमुदितस्य–रोगशोकाद्यनुपहतस्य वरतुरगस्येव सिंहवरस्येव च प्रतीतस्य वर्तिता–वृत्ता कटी–नितम्बदेशो यस्य स तथा, पाठान्तरे तु 'पमुइयवरतुरगसीहअइरेगवट्टियकडी'त्ति दृश्यते, तत्र प्रमुदितयोर्वरयोस्तुरगसिंहयोः कट्याः सकाशादतिरेकेण–अतिशयेन वर्तिता–वृत्ता कटी यस्य स तथा। 'वरतुरगसुजायगुज्झदेसे' वरतुरगस्येव सुजातः–सङ्गुप्तत्वेन सुनिष्पन्नो गुह्यदेशो यस्य स तथा, वाचनान्तरे तु 'पसत्थवरतुरगगुज्झदेसे' व्यक्तं च। 'आइण्णहउव्व निरुवलेवे' जात्यश्व इव निरुपलेपो–लेपरहितशरीरः, जात्यश्वो हि मूत्रपुरीषाद्यनुपलिप्तगात्रो भवति। 'वरवारण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवंत-महावीरस्य परिचयः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१०]

दीप अनुक्रम [१०]

तुलविक्कमविलसियगई' वरवारणस्य–गजेन्द्रस्य तुल्यः–सदृशो विक्रमः–पराक्रमः विलसिता च–विलासवती गतिः–गमनं यस्य स तथा । 'गयससणसुजायसन्निभोरु' गजश्वसनस्य–हस्तिनासिकायाः सुजातस्य–सुनिष्पन्नस्य सन्निभे–सदृश्यौ ऊरू–जङ्घे यस्य स तथा । 'समुग्गणिमग्गगूढजाणू' समुद्गः–समुद्गकाख्यभाजनविशेषस्तस्य तत्पिधानस्य च सन्धिस्तद्वन्निमग्नगूढे–अत्यन्तनिगूढे मांसलत्वादनुन्नते जानुनी–अष्ठीवती यस्य स तथा । 'एणीकुरुविंदावत्तवट्टाणुपुव्वजंघे' एणी–हरिणी तस्या इव कुरुविन्दः–तृणविशेषः वृत्तं च–सूत्रवलनकं ते इव च वृत्ते–वर्तुले आनुपूर्व्येण तनुके चेति गम्यं, जङ्घे–प्रसृते यस्य स तथा, अन्ये त्वाहुः–एण्यः–स्त्रायवः कुरुविन्दा–कुटिलकाभिधानो रोगविशेषः ताभिरत्यक्ते, शेषं तथैव । 'संठियसुसिलिट्ठगूढगुप्फे' संस्थितौ–संस्थानविशेषवन्तौ सुश्लिष्टौ–सुघटनौ गूढौ–मांसलत्वादनुपलक्ष्यौ गुल्फौ–पादमणिबन्धौ यस्य स तथा । 'सुपइट्ठियकुम्मचारुचलणे' सुप्रतिष्ठितौ–शुभप्रतिष्ठौ कूर्मवत्–कच्छपवच्चारू–उन्नतत्वेन शोभनौ चलनौ–पादौ यस्य स तथा । 'अणुपुव्वसुसंहयंगुलीए' आनुपूर्व्येण–क्रमेण वर्द्धमाना हीयमाना वा इति गम्यं, सुसंहता–सुष्ठु अविरला अङ्गुल्यः–पादाग्रावयवा यस्य स तथा, 'अणुपुव्वसुसाहयपीवरंगुलीए'त्ति क्वचिद् दृश्यते । 'उण्णयतणुतंबणिद्धणहे' उन्नता–अनिम्नाः तनवः–प्रतलाः ताम्रा–अरुणाः स्निग्धाः–कान्ता नखाः–पादाङ्गुल्यवयवा यस्य स तथा । 'रत्तुप्पलपत्तमउयसुकुमालकोमलतले' रक्तं–लोहितमुत्पलपत्रवत्–कमलदलवन्मृदुकम्–अस्तब्धं सुकुमाराणां मध्ये कोमलं पादतलं यस्य स तथा । 'अट्ठसहस्सवरपुरिसलक्खणधरे'त्ति व्याख्यातमेव । वाचनान्तरेऽधीयते–'नगनगरमगरसागरचक्कंकवरंकमंगलंकियचलणे' नगः–पर्वतो नगरं–पत्तनं मकरो–जलचरविशेषः सागरः–समुद्रः चक्रं–रथाङ्गं

॥ २० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवंत-महावीरस्य परिचयः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१०]

दीप अनुक्रम [१०]

एतान्येवाङ्का–लक्षणानि वराङ्काश्च–नगादिव्यतिरिक्तप्रधानलक्षणानि मङ्गलादीनि च–स्वस्तिकादीनीति द्वन्द्वः, तैरङ्कितौ चलनौ यस्य स तथा । 'विसिट्ठरूवे'त्ति व्यक्तं । 'हुयवहनिद्धूमजलियतडितडियतरुणरविकिरणसरिसतेए' हुतवहस्य निर्धूमं यद् ज्वलितं तस्य तटितडितश्च–विस्तारितविद्युतः तरुणरविकिरणानां च–अभिनवादित्यकराणां सदृशं–समं तेजः–प्रभा यस्य स तथा । 'अणासवे' प्राणातिपातादिरहितः ।'अममे' ममेतिशब्दरहितो, निर्लोभत्वात् । 'अकिंचणे' निर्द्रव्यः, परिग्रहसंज्ञारहित्वात् । 'छिन्नसोए' छिन्नश्रोताः त्रुटितभवप्रवाहः, छिन्नशोको वा । 'निरुवलेवे' द्रव्यतो निर्मलदेहो, भावतस्तु कर्मबन्धहेतुलक्षणोपलेपरहितः । पूर्वोक्तमेव विशेषेणाह–'ववगयपेमरागदोसमोहे' व्यपगतं–नष्टं प्रेम च–अभिष्वङ्गलक्षणं रागश्च–विषयानुरागलक्षणो द्वेषश्च–अनिष्टेऽप्रीतिरूपो मोहश्च अज्ञानरूपो वा यस्य स तथा । 'निग्गंथस्स पवयणस्स देसए' निर्ग्रन्थस्य–जैनस्य प्रवचनस्य–शासनस्य देशकः,

सत्थनायगे पइट्ठावए समणगपई समणगविंदपरिअट्टए चउत्तीसबुद्धवयणातिसेसपत्ते पणतीससच्चवयणातिसेसपत्ते आगासगएणं चक्केणं आगासगएणं छत्तेणं आगासियाहिं चामराहिं आगासफलिआमएणं सपायवीढेणं सीहासणेणं धम्मज्झएणं पुरओ पकड्डिज्जमाणेणं (चउद्दसहिं समणसाहस्सीहिं छत्तीसाए अज्जिआसाहस्सीहिं) सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुग्गामं दूइज्जमाणे सुहंसुहेणं विहरमाणे चंपाए णयरीए बहिया उवणगरग्गामं उवागए चंपं नगरिं पुण्णभद्दं चेइअं समोसरिउं कामे॥ (सू० १०)॥

१ आगासगयाहिं सेयवरचामराहिं । २ नैतद्वृद्धव्याख्यानुगतम् ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवंत-महावीरस्य परिचयः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१०]

दीप अनुक्रम [१०]

शास्ता नायकः, तस्यैव नेता स्वामीत्यर्थः । 'पइट्ठावए' तस्यैव प्रतिष्ठापकः, तैस्तैरुपायैर्व्यवस्थापकः । 'समणगपई' श्रमणकपतिः, साधुसङ्घाधिपतिः । 'समणगविंदपरिअट्टए' श्रमणा एव श्रमणकास्तेषां वृन्दस्य परिवर्तको–वृद्धिकारी परिकर्षको वा–अग्रेगामी तेन वा पर्यायकः–परिपूर्णो यः स तथा । 'चउत्तीसबुद्धवयणातिसेसपत्ते' चतुस्त्रिंशत् बुद्धानां–जिनानां वयणत्ति–वचनप्रमुखाः 'सर्वस्वभाषानुगतं वचनं धर्मावबोधकर'मित्यादिनोक्तस्वरूपा येऽतिशेषा–अतिशयास्तान् प्राप्तो यः स तथा । इह च वचनातिशयस्य ग्रहणमत्यन्तोपकारित्वेन प्राधान्यख्यापनार्थम् , अन्यथा देहवैमल्यादयस्ते पठ्यन्ते, यत आह—"देहं विमलसुयंधं आमयपस्सेयवज्जियं अरुयं । रुहिरं गोक्खीराभं निव्वीसं पंडुरं मंसं ॥ १ ॥" इत्यादि । 'पणतीससच्चवयणाइसेसपत्ते' पञ्चत्रिंशत् ये सत्यवचनस्यातिशेषा–अतिशयास्तान् प्राप्तो यः स तथा, ते चामी वचनातिशयाः–तद्यथा–संस्कारवत्त्वम् १ उदात्तत्वम् २ उपचारोपेतत्वं ३ गम्भीरशब्दत्वम् ४ अनुनादित्वं ५ दक्षिणत्वम् ६ उपनीतरागत्वं ७ महार्थत्वम् ८ अव्याहतपौर्वापर्यत्वं ९ शिष्टत्वं १० असन्दिग्धत्वम् ११ अपहतान्योत्तरत्वं १२ हृदयग्राहित्वं १३ देशकालाव्यतीतत्वं १४ तत्त्वानुरूपत्वम् १५ अप्रकीर्णप्रसृतत्वम् १६ अन्योऽन्यप्रगृहीतत्वम् १७ अभिजातत्वम् १८ अतिस्निग्धमधुरत्वम् १९ अपरमर्मवेधित्वम् २० अर्थधर्माभ्यासानपेतत्वम् २१ उदारत्वं २२ परनिन्दात्मोत्कर्षविप्रयुक्तत्वम् २३ उपगतश्लाघ्यत्वम् २४ अपनीतत्वम् २५ उत्पादिताच्छिन्नकौतूहलत्वम् २६ अद्भुतत्वम् २७ अनतिविलम्बित्वं २८ विभ्रमविक्षेपकिलिकिञ्चितादिविप्रयुक्तत्वम् २९ अनेकजातिसंश्रयाद्विचित्रत्वम् ३०

१ देहो विमलः सुगन्ध आमयप्रस्वेदवर्जितः अरुजः । रुधिरं गोक्षीराभं निर्विस्रं पाण्डुरं मांसम् ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवंत-महावीरस्य परिचय:

प्रत सूत्रांक [१०] दीप अनुक्रम [१०]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

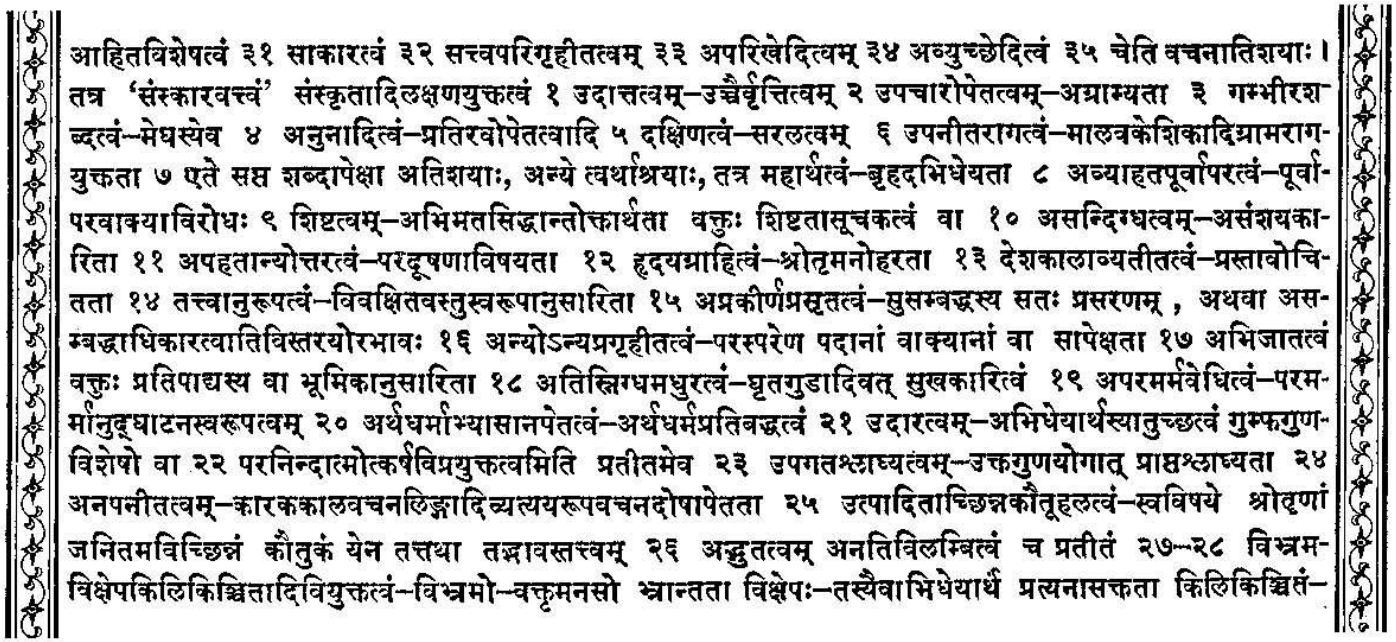

आहितविशेषत्वं ३१ साकारत्वं ३२ सत्त्वपरिगृहीतत्वम् ३३ अपरिखेदित्वम् ३४ अव्युच्छेदित्वं ३५ चेति वचनातिशयाः। तत्र 'संस्कारवत्त्वं' संस्कृतादिलक्षणयुक्तत्वं १ उदात्तत्वम्–उच्चैर्वृत्तित्वम् २ उपचारोपेतत्वम्–अग्राम्यता ३ गम्भीरशब्दत्वं–मेघस्येव ४ अनुनादित्वं–प्रतिरवोपेतत्वादि ५ दक्षिणत्वं–सरलत्वम् ६ उपनीतरागत्वं–मालवकेशिकादिग्रामरागयुक्तता ७ एते सप्त शब्दापेक्षा अतिशयाः, अन्ये त्वर्थाश्रयाः, तत्र महार्थत्वं–बृहदभिधेयता ८ अव्याहतपूर्वापरत्वं–पूर्वापरवाक्याविरोधः ९ शिष्टत्वम्–अभिमतसिद्धान्तोक्तार्थता वक्तुः शिष्टतासूचकत्वं वा १० असन्दिग्धत्वम्–असंशयकारिता ११ अपहतान्योत्तरत्वं–परदूषणाविषयता १२ हृदयग्राहित्वं–श्रोतृमनोहरता १३ देशकालाव्यतीतत्वं–प्रस्तावोचितता १४ तत्त्वानुरूपत्वं–विवक्षितवस्तुस्वरूपानुसारिता १५ अप्रकीर्णप्रसृतत्वं–सुसम्बद्धस्य सतः प्रसरणम् , अथवा असम्बद्धाधिकारत्वातिविस्तरयोरभावः १६ अन्योऽन्यप्रगृहीतत्वं–परस्परेण पदानां वाक्यानां वा सापेक्षता १७ अभिजातत्वं वक्तुः प्रतिपाद्यस्य वा भूमिकानुसारिता १८ अतिस्निग्धमधुरत्वं–घृतगुडादिवत् सुखकारित्वं १९ अपरमर्मवेधित्वं–परमर्मानुद्घाटनस्वरूपत्वम् २० अर्थधर्माभ्यासानपेतत्वं–अर्थधर्मप्रतिबद्धत्वं २१ उदारत्वम्–अभिधेयार्थस्यातुच्छत्वं गुम्फगुणविशेषो वा २२ परनिन्दात्मोत्कर्षविप्रयुक्तत्वमिति प्रतीतमेव २३ उपगतश्लाघ्यत्वम्–उक्तगुणयोगात् प्राप्तश्लाघ्यता २४ अनपनीतत्वम्–कारककालवचनलिङ्गादिव्यत्ययरूपवचनदोषापेतता २५ उत्पादिताच्छिन्नकौतूहलत्वं–स्वविषये श्रोतृणां जनितमविच्छिन्नं कौतुकं येन तत्तथा तद्भावस्तत्त्वम् २६ अद्भुतत्वम् अनतिविलम्बित्वं च प्रतीतं २७–२८ विभ्रमविक्षेपकिलिकिञ्चितादिवियुक्तत्वं–विभ्रमो–वक्तृमनसो भ्रान्तता विक्षेपः–तस्यैवाभिधेयार्थं प्रत्यनासक्तता किलिकिञ्चितं–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	भगवंत-महावीरस्य परिचयः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१०]

दीप अनुक्रम [१०]

रोषभयाभिलाषादिभावानां युगपदसकृत्करणम्, आदिशब्दान्मनोदोषान्तरपरिग्रहः, तैर्विप्रयुक्तं यत्तथा तद्भावस्तत्त्वं २९ अनेकजातिसंश्रयाद्विचित्रत्वम्, इह जातयो वर्णनीयवस्तुस्वरूपवर्णनानि ३० आहितविशेषत्वं–वचनान्तरापेक्षया ढौकितविशेषता ३१ साकारत्वं–विच्छिन्नवर्णपदवाक्यत्वेनाकारप्राप्तत्वं ३२ सत्त्वपरिगृहीतत्वं–साहसोपेतता ३३ अपरिखेदितत्वम्–अनायाससम्भवः ३४ अव्युच्छेदित्वं–विवक्षितार्थसम्यक्सिद्धिं यावद् अव्यवच्छिन्नवचनप्रमेयतेति ३५ ॥ अथ प्रकृतवाचना–'आगासगएणं'ति आकाशवर्तिना 'चक्केण' धर्मचक्रेण 'आगासगएणं छत्तेणं'ति छत्रत्रयेण 'आगासियाहिं'ति आकाशम्–अम्बरमिताभ्यां–प्राप्ताभ्यां आकर्षिताभ्यां वा–आकृष्टाभ्यामुत्पाटिताभ्यामित्यर्थः, 'चामराहिं'ति चामराभ्यां–प्रकीर्णकाभ्यां, प्राकृतत्वाच्च लिङ्गव्यत्ययः, लक्षित इति सर्वत्र गम्यम् । 'आगासफलियामएणं'ति आकाशतुल्यं स्वच्छतया यत् स्फटिकं तन्मयेन, सपादपीठेन सिंहासनेनेति व्यक्तं। 'धम्मज्झएणं'ति धर्मचक्रवर्तित्वसंसूचकेन केतुना–महेन्द्रध्वजेनेत्यर्थः, 'पुरओ'त्ति अग्रतः 'पकढिज्जमाणेणं'ति देवैः प्रकृष्यमाणेनेति, 'सद्धिं' सह 'संपरिवुडे'त्ति सम्यक् परिकरितः–समन्ताद्वेष्टित इत्यर्थः । 'पुव्वाणुपुव्विं'ति पूर्वानुपूर्व्या न पश्चानुपूर्व्या नानानुपूर्व्या वेत्यर्थः, क्रमेणेति हृदयं, 'चरन्' सञ्चरन्, एतदेवाह–'गामाणुग्गामं दूइज्जमाणे'त्ति ग्रामश्च प्रतीतोऽनुग्रामश्च–विवक्षितग्रामानन्तरो ग्रामो ग्रामानुग्रामं तद् 'द्रवन्' गच्छन्,एकस्माद्ग्रामादनन्तरं ग्राममनुलङ्घयन्नित्यर्थः, अनेनाप्रतिबद्धविहारमाह,तत्राप्यौत्सुक्याभावमिति। 'सुहंसुहेणं विहरमाणे'त्ति अत एव सुखंसुखेन–शरीरखेदाभावेन संयमबाधाभावेन च 'विहरन्' स्थानात् स्थानान्तरं गच्छन् ग्रामादिषु वा तिष्ठन् 'बहिय'त्ति बहिस्तात् 'उवणगरग्गामं'ति नगरस्य समीपमुपनगरं तत्र ग्राम उपनगरग्रामस्तमुपागतः ॥१०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवंत-महावीरस्य परिचय:

तए णं से पवित्तिवाउए इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए पीइमणे परमसोमणस्सिए हरिसवसविसप्पमाणहियए ण्हाए कयबलिकम्मे कयकोउअमंगलपायच्छित्ते सुद्धप्पवेसाइं मंगलाइं वत्थाइं पवरपरिहिए अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरे सआओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, सआओ गिहाओ पडिणिक्खमित्ता चंपाए णयरीए मज्झंमज्झेणं जेणेव कोणियस्स रण्णो गिहे जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव कूणिए राया भंभसारपुत्ते तेणेव उवागच्छइ २ करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु जएणं विजएणं वद्धावेइ २ एवं वयासी–जस्स णं देवाणुप्पिया दंसणं कंखंति जस्स णं देवाणुप्पिया दंसणं पीहंति जस्स णं देवाणुप्पिया दंसणं पत्थंति जस्स णं देवाणुप्पिया दंसणं अभिलसंति जस्स णं देवाणुप्पिया णामगोत्तस्सवि सवणयाए हट्ठतुट्ठजावहिअया भवंति, से णं समणे भगवं महावीरे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुग्गामं दूइज्जमाणे चंपाए णयरीए उवणगरगामं उवागए चंपं णगरिं पुण्णभद्दं चेइअं समोसरिउं कामे, तं एअ णं देवाणुप्पियाणं पिअट्ठयाए पिअं णिवेदेमि, पिअं ते भवउ ॥ (सू० ११) ॥

ततोऽनन्तरं, 'ण'मिति वाक्यालङ्कारे, 'से' इति असौ 'पवित्तिवाउए'त्ति प्रवृत्तिव्यापृतो भगवद्वार्ताव्यापारवान् 'इमीसे कहाए'त्ति अस्यां भगवदागमनलक्षणायां वार्तायां 'लद्धट्ठे समाणे'त्ति लब्धार्थः सन्–प्राप्तार्थः सन्, विज्ञः सन्नित्यर्थः, 'हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए'त्ति हृष्टतुष्टम्–अत्यर्थतुष्टं हृष्टं वा–विस्मितं तुष्टं च–तोषवच्चित्तं–मनो यत्र तत्तथा तत् हृष्टतुष्टचित्तं

१ क्रियापदस्याग्रे द्विकलक्षणाङ्केन तस्यैव पूर्वकालकृदन्तता ज्ञेयेति लिखनशैली, कचित्तु अग्रे 'त्ता' इति लिखनमपि,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यथा भवति, एवमानन्दित–ईषन्मुखसौम्यतादिभावैः समृद्धिमुपगतः ततश्च 'णंदिए'त्ति नन्दितः–समृद्धितरतामुपगतः। 'पीइमणे' प्रीतिः–प्रीणनमाप्यायनं मनसि यस्य स तथा, 'परमसोमणस्सिए' परमं सौमनस्यं–सुमनस्कता सञ्जातं यस्य स परमसौमनस्यिकः तद्वाऽस्यास्तीति परमसौमनस्यिकः, 'हरिसवसविसप्पमाणहियए' हर्षवशेन विसर्पत्–विस्तारं व्रजद्धृदयं यस्य स तथा, सर्वाणि चैतानि हृष्टादिपदानि प्राय एकार्थानि, न च दुष्टानि, प्रमोदप्रकर्षप्रतिपत्तिहेतुत्वात् स्तुतिरूपत्वाच्च, यदाह–"वक्ता हर्षभयादिभिराक्षिप्तमनाः स्तुवँस्तथा निन्दन्। यत्पदमसकृद् ब्रूयात्तत्पुनरुक्तं न दोषाय ॥१॥" 'ण्हाएत्ति' व्यक्तं, 'कयबलिकम्मे'त्ति स्नानानन्तरं कृतं बलिकर्म स्वगृहदेवतानां येन स तथा। 'कयकोउअमंगलपायच्छित्ते' कृतानि कौतुकमङ्गलान्येव प्रायश्चित्तानि–दुःस्वप्नादिविघातार्थमवश्यकरणीयत्वाद्येन स तथा, तत्र कौतुकानि–मषीतिलकादीनि मङ्गलानि तु–सिद्धार्थदध्यक्षतदूर्वाङ्कुरादीनि 'सुद्धप्पवेसाइं मंगल्लाइं वत्थाइं पवरपरिहिए' शुद्धात्मा–स्नानेन शुचिकृतदेहः वेश्यानि–वेशे साधूनि अथवा शुद्धानि च तानि प्रवेश्यानि च–राजसभाप्रवेशोचितानि चेति विग्रहः, मङ्गल्यानि–मङ्गलकरणे साधूनि वस्त्राणि व्यक्तं, पवरत्ति–द्वितीयाबहुवचनलोपात् प्रवराणि–प्रधानानि परिहितो–निवसितः अथवा प्रवरश्चासौ परिहितश्चेति समासः। 'अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरे'त्ति व्यक्तं, नवरं अल्पानि–स्तोकानि महार्घाणि–बहुमूल्यानि। 'सआओ'त्ति स्वकात्–स्वकीयात्। 'जेणेव'त्ति यस्मिन्नेव देशे इत्यर्थः। 'बाहिरिय'त्ति अभ्यन्तरिकापेक्षया बाह्या। 'उवट्ठाणसाल'त्ति आस्थानसभेति। 'तेणेव'त्ति तस्मिन्नेव देश इत्यर्थः। 'सिरसावत्तं'ति शिरसामस्तकेनाप्राप्तम्–अस्पृष्टं शिरसि वा आवर्तत इति शिरस्यावर्तोऽतस्तं। 'जएणं विजएणं वद्धावेति'त्ति जयः–सामान्यो

॥ २३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विघ्नादिविषयो विजयः—स एव विशिष्टतरः प्रचण्डप्रतिपन्थादिविषयः वर्धयति—जयेन विजयेन च वर्द्धस्व त्वमित्येवमादिशब्दं प्रयुङ्क्ते स्मेत्यर्थः। 'देवाणुप्पियत्ति सरलस्वभावाः। 'दंसणं'ति अवलोकनं। 'कंखंति'त्ति प्राप्तं सद्विमोक्तुं नेच्छन्ति। 'पीहंति'त्ति स्पृहयन्ति अनवाप्तमवाप्तुमिच्छन्ति। 'पत्थंति'त्ति प्रार्थयन्ति—तथाभूतसहायजनेभ्यः सकाशाद्याचन्ते। 'अभिलसंति'त्ति अभिलषन्ति—आभिमुख्येन कमनीयमिति मन्यन्ते। 'णामगोत्तस्सवि'त्ति नाम च—अभिधानं यथा महावीर इति, गोत्रं च—वंशो यथा काश्यपगोत्र इति, नामगोत्रमिति द्वन्द्वैकत्वमतस्तस्य, अथवा नामाभिधानं गोत्रं च यथार्थं, ततः कर्मधारय इति। 'सवणयाए'त्ति श्रवणानां भावः श्रवणता तया, स्वार्थिको वा ताप्रत्ययः प्राकृतशैलीप्रभव इति ॥११॥

तए णं से कूणिए राया भंभसारपुत्ते तस्स पवित्तिवाउअस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठजावहिअए विअसिअवरकमलणयणवयणे पअलिअवरकडगतुडियकेयूरमउडकुंडलहारविरायंतरइयवच्छे पालंबपलंबमाणघोलंतभूसणधरे ससंभमं तुरियं चवलं नरिंदे सीहासणाउ अब्भुट्ठेइ २ त्ता पायपीढाउ पच्चोरुहइ २ त्ता पाउआओ ओमुअइ २ त्ता अवहट्टु पंच रायककुहाइं तंजहा—खग्गं १ छत्तं २ उप्फेसं ३ वाहणाओ ४ वालवीअणं ५ एक्कसाडियं उत्तरासंगं करेइ २ त्ता आयंते चोक्खे परमसुइभूए अंजलिमउलिअग्गहत्थे तित्थगराभिमुहे सत्तट्ठ पयाइं अणुगच्छति सत्तट्ठ पयाइं अणुगच्छित्ता वामं जाणुं अंचेइ वामं जाणुं अंचेत्ता दाहिणं जाणुं धरणितलंसि साहट्टु तिक्खुत्तो मुद्धाणं धरणितलंसि निवेसेइ २ त्ता ईसिं पच्चुण्णमति पच्चुण्णमित्ता कडगतुडियथंभिआओ भुआओ पडिसाहरति रत्ता करयल जाव कट्टु एवं वयासी—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१२]

दीप अनुक्रम [१२]

'सोच्चा णिसम्म'त्ति श्रुत्वा–श्रोत्रेणाकर्ण्य निशम्य–हृदयेनावधार्य । 'धाराहयनीवसुरभिकुसुमचंचुमालइअउच्छियरोमकूवे' धाराभिः–जलधरवारिधाराभिर्हतं यन्नीपस्य–कदम्बस्य सुरभिकुसुमं तत्तथा, तदिव चंचुमालइयत्ति–पुलकितोऽत एव उच्छ्रितरोमकूपश्च यः स तथा, इदं च विशेषणं क्वचिदेव दृश्यते । 'विअसियवरकमलणयणवयणे' विकसितानि–भगवदागमनवार्ताश्रवणजनितानन्दातिशयादुत्फुल्लानि वरकमलवन्नयनवदनानि यस्य स तथा । 'पचलियवरकडगतुडियकेऊरमउडकुंडलहारविरायंतरइयवच्छे' प्रचलितानि–भगवदागमनश्रवणजनितसम्भ्रमातिरेकात् कम्पितानि वराणि–प्रधानानि कटकानि च कङ्कणानि तुटिकाश्च–बाहुरक्षकाः केयूराणि च–अङ्गदानि मुकुटं च–किरीटं कुण्डले च–कर्णाभरणे यस्य स तथा, हारो–मुक्ताकलापो विराजन्–शोभमानो रचितो–विहितो वक्षसि उरसि येन स तथा, ततः कर्मधारयः । 'पालंबपलंबमाणघोलंतभूसणधरे' प्रालम्बो–झुम्बनकं प्रलम्बमानं–लम्बमानं घोलं च–दोलायमानं यद्भूषणम्–आभरणं तद्धारयति यः स तथा । 'ससंभमं'ति सादरं 'तुरियं' (त्वरितं) चवलंति–अतित्वरितं, क्रियाविशेषणे चैते । 'पच्चोरुहइ'त्ति प्रत्यवरोहति–अवतरतीत्यर्थः, क्वचिदिदं पादुकाविशेषणं दृश्यते–'वेरुलियवरिट्ठरिट्ठअंजणनिउणोवियमिसिमिसिंतमणिरयणमंडियाओ'त्ति एवं चात्राक्षरघटना–वरिष्ठानि–प्रधानानि वैडूर्यरिष्ठाञ्जनानि–रत्नविशेषा ययोस्ते तथा, तथा निपुणेन–कुशलेन शिल्पिना ओवियत्ति–परिकर्मिते ये ते तथा, अत एव मिसिमिसिंतत्ति–चिकिचिकायमाने मणिरत्नैः–चन्द्रकान्तादिकर्केतनादिभिर्मण्डिते–भूषिते ये तथा, ततः पदचतुष्टयस्य कर्मधारयः । तथेदमपि 'अवहट्टु पंच रायककुहाई, तंजहा–खग्गं छत्तं उप्फेसं वाहणाओ वालवीअणं'ति तत्रावहट्टु–अपहृत्य–परिहृत्य राजककुदानि–राजचिह्नानि

॥ २४ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१२] दीप अनुक्रम [१२]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

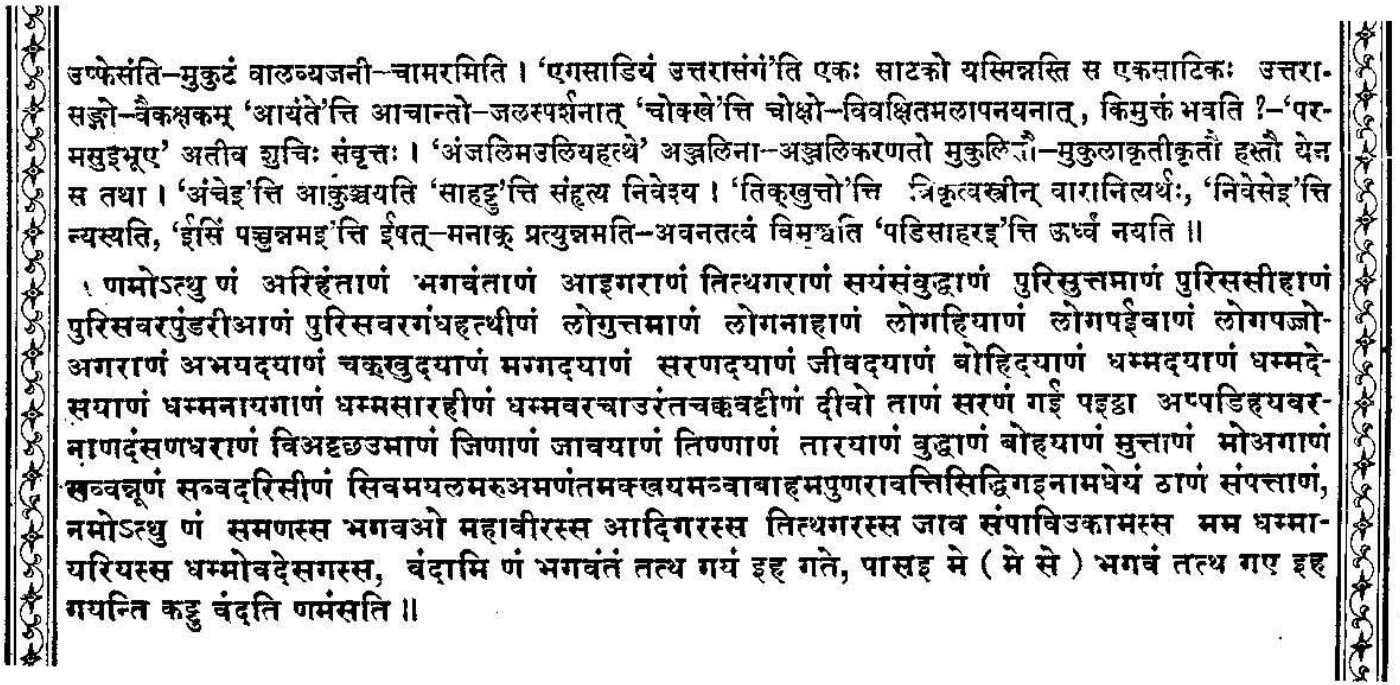

उप्फेसंति–मुकुटं वालव्यजनी–चामरमिति । 'एगसाडियं उत्तरासंगं'ति एकः साटको यस्मिन्नस्ति स एकसाटिकः उत्तरासङ्गो–वैकक्षकम् 'आयंते'त्ति आचान्तो–जलस्पर्शनात् 'चोक्खे'त्ति चोक्षो–विवक्षितमलापनयनात्, किमुक्तं भवति ?–'परमसुइभूए' अतीव शुचिः संवृत्तः । 'अंजलिमउलियहत्थे' अञ्जलिना–अञ्जलिकरणतो मुकुलितौ–मुकुलाकृतीकृतौ हस्तौ येन स तथा । 'अंचेइ'त्ति आकुञ्चयति 'साहट्टु'त्ति संहृत्य निवेश्य । 'तिक्खुत्तो'त्ति त्रिकृत्वस्त्रीन् वारानित्यर्थः, 'निवेसेइ'त्ति न्यस्यति, 'ईसिं पच्चुन्नमइ'त्ति ईषत्–मनाक् प्रत्युन्नमति–अवनतत्वं विमुञ्चति 'पडिसाहरइ'त्ति ऊर्ध्वं नयति ॥

णमोऽत्थु णं अरिहंताणं भगवंताणं आइगराणं तित्थगराणं सयंसंबुद्धाणं पुरिसुत्तमाणं पुरिससीहाणं पुरिसवरपुंडरीआणं पुरिसवरगंधहत्थीणं लोगुत्तमाणं लोगनाहाणं लोगहियाणं लोगपईवाणं लोगपज्जोअगराणं अभयदयाणं चक्खुदयाणं मग्गदयाणं सरणदयाणं जीवदयाणं बोहिदयाणं धम्मदयाणं धम्मदेसयाणं धम्मनायगाणं धम्मसारहीणं धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टीणं दीवो ताणं सरणं गई पइट्ठा अप्पडिहयवरनाणदंसणधराणं विअट्टछउमाणं जिणाणं जावयाणं तिण्णाणं तारयाणं बुद्धाणं बोहयाणं मुत्ताणं मोअगाणं सव्वन्नूणं सव्वदरिसीणं सिवमयलमरुअमणंतमक्खयमव्वाबाहमपुणरावत्तिसिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपत्ताणं, नमोऽत्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स आदिगरस्स तित्थगरस्स जाव संपाविउकामस्स मम धम्मायरियस्स धम्मोवदेसगस्स, वंदामि णं भगवंतं तत्थ गयं इह गते, पासइ मे (मे से) भगवं तत्थ गए इह गयन्ति कट्टु वंदति णमंसति ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	शक्रस्तवं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१२]

दीप अनुक्रम [१२]

'नमोऽत्थु ण' मित्यादि प्राग्वत्, नवरं 'दीवो ताणं सरणं गई पइट्ठा' इत्यत्र जे तेसिं नमोऽत्थु णमित्येवं गमनिका कार्येति । 'धम्मायरियस्से'ति धर्माचार्याय, न तु कलाचार्याय, धर्माचार्यत्वमेव कथमित्यत आह–'धम्मोवदेसगस्स' धर्मोपदेशकायेति । 'तत्थ गयं'ति तत्र ग्रामान्तरे स्थितम्, 'इह गए'त्ति अत्रावस्थितोऽहं वन्दे । कस्मादेवमित्यत आह– 'पासइ मे'त्ति पश्यति मां, 'से'त्ति स–भगवान् 'इतिकट्टु' इतिकृत्वा–इतिहेतोः 'वंदइ'त्ति पूर्वोक्तस्तुत्या स्तौति 'णमंसइ' त्ति नमस्यति–शिरोनमनेन प्रणमति ॥

वंदित्ता णमंसित्ता सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे निसीअइ, निसीइत्ता तस्स पवित्तिवाउअस्स अट्ठुत्तरसयसहस्सं पीतिदाणं दलयति, दलइत्ता सक्कारेति सम्माणेति सक्कारित्ता सम्माणित्ता एवं वयासी–जया णं देवाणुप्पिया ! समणे भगवं महावीरे इहमागच्छेज्जा इह समोसरिज्जा इहेव चंपाए णयरीए बहिया पुण्णभद्दे चेइए अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरेज्जा तया णं मम एअमट्ठं निवेदिज्जासित्तिकट्टु विसज्जिते ॥ (सू० १२) ॥

'अट्ठुत्तरसयसहस्सं पीइदाणं'ति अष्टोत्तरं लक्षं रजतस्य तुष्टिदानं ददाति स्मेति, तच्चावश्यके माण्डलिकानां प्रीतिदानमर्द्धत्रयोदशलक्षमानमुक्तं, यदाह–"'वित्ती उ सुवण्णस्सा बारस अद्धं च सयसहस्साइं । तावइयं चिय कोडी पीइदाणं तु

१ वृत्तिस्तु सुवर्णानां द्वादश अर्द्धं च शतसहस्राणाम् । तावत्य एव कोट्यश्च प्रीतिदानं तु चक्रिणाम् ॥ १ ॥ एतदेव प्रमाणं केवलं रजतानां तु केशवा ददति । माण्डलिकानां सहस्राणि प्रीतिदानं शतसहस्राणि ॥ २ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शक्रस्तवं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१२]

दीप अनुक्रम [१२]

चक्किस्स ॥ १ ॥ एयं चेव पमाणं नवरं रययं तु केसवा दिंति । मंडलियाण सहस्सा पीईदाणं सयसहस्सा ॥ २ ॥" इति, इह पुनस्तदष्टोत्तरलक्षमानमुक्तमिति कथं न विरोध ?, उच्यते, भगवति चम्पायामागते तदास्यतीति न विरोधः । 'सक्कारेइ'त्ति प्रवरवस्त्रादिभिः पूजयति । 'सम्माणेइ'त्ति तथाविधया वचनादिप्रतिपत्त्या पूजयत्येवेति । एवं 'सामित्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ'त्ति वाचनान्तरे वाक्यम्, एवमिति–यथाऽऽदेशं स्वामिन्नित्यामन्त्रणार्थः इतिः–उपप्रदर्शने आज्ञया–तदाज्ञां प्रमाणीकृत्येत्यर्थः विनयेन–अञ्जलिकरणादिना वचनं–राजादेशं प्रतिशृणोति–अभ्युपगच्छति इति ॥ १२ ॥

तएणं समणे भगवं महावीरे कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलितंमि आहा(अह)-पंडुरे पहाए रत्तासोगप्पगासकिंसुअसुअमुहगुंजद्धरागसरिसे कमलागरसंडबोहए उट्ठियम्मि सूरे सहस्सरस्सिंमि दिणयरे तेयसा जलंते जेणेव चंपा णयरी जेणेव पुण्णभद्दे चेइए तेणेव उवागच्छति २त्ता अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति ॥ (सू० १३) ॥

'कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए'त्ति कल्यमिति–श्वः प्रादुः प्राकाश्ये ततः प्रकाशप्रभातायां रजन्यां 'फुल्लुप्पलकमलकोम-लुम्मिलियंमि'त्ति फुल्लं–विकसितं तच्च तदुत्पलं च–पद्मं फुल्लोत्पलं तच्च कमलश्च–हरिणविशेषः तयोः कोमलम्–अकठोर-मुन्मीलितं–दलानां नयनयोश्चोन्मीलनं यस्मिँस्तत्तथा । तत्र 'अह पंडुरे पभाए'त्ति अथ रजनीप्रभातानन्तरं पाण्डुरे–शुक्ले प्रभाते–उषसि । 'रत्तासोगप्पगासकिंसुअसुअमुहगुंजद्धरागसरिसे कमलागरसंडबोहए उट्ठियंमि सूरे'त्ति रक्ताशोकस्य–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१३]

दीप अनुक्रम [१३]

तरुविशेषस्य प्रकाशः–प्रभा स च किंशुकं च–पलाशकुसुमं शुकमुखं च–प्रतीतं गुञ्जा–रक्तकृष्णः फलविशेषः तदर्द्धं चेति द्वन्द्वः, एषां यो रागो–रक्तत्वं तेन सदृशः–समो यः स तथा, तथा कमलाकराः–पद्मोत्पत्तिस्थानभूता ह्रदादयस्तेषु यानि षण्डानि–नलिनवनानि तेषां बोधको–विकाशको यः स तथा तत्र, उत्थिते–उद्गते सूरे–रवौ । किम्भूते?–'सहस्सरस्सिंमि दिणअरे तेअसा जलंते'त्ति विशेषणत्रयं व्यक्तम्। 'संपलियंकनिसन्ने'त्ति पद्मासने निषण्णः, इदं च वाचनान्तरपदम् ॥ १३ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी बहवे समणा भगवंतो अप्पेगइया उग्गपव्वइया भोगपव्वइया राइण्ण० णाय० कोरव्व० खत्तिअपव्वइआ भडा जोहा सेणावई पसत्थारो सेट्ठी इब्भा अण्णे य बहवे एवमाइणो उत्तमजातिकुलरूवविणयविण्णाणवण्णलावण्णविक्कमपहाणसोभग्गकंतिजुत्ता बहुधणधण्णणिचयपरियालफिडिआ णरवइगुणाइरेगा इच्छिअभोगा सुहसंपलालिआ किंपागफलोवमं च मुणिअ विसयसोक्खं जलबुब्बुअसमाणं कुसग्गजलबिंदुचंचलं जीवियं च णाऊण अद्धुवमिणं रयमिव पडग्गलग्गं संविधुणित्ता णं चइत्ता हिरण्णं जाव पव्वइआ, अप्पेगइया अद्धमासपरिआया अप्पेगइआ मासपरिआया एवं दुमास तिमास जाव एक्कारस० अप्पेगइआ वासपरिआया दुवास० तिवास० अप्पेगइआ अणेगवासपरिआया संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरंति ॥ (सू० १४) ॥

'अंतेवासि'त्ति शिष्याः । 'अप्पेगइय'त्ति अपिः–समुच्चये एकका–एके अन्ये केचिदपीत्यर्थः । 'उग्गपव्वइय'त्ति उग्रा–आदिदेवेन ये आरक्षकत्वेन नियुक्ताः तद्वंशजाश्च अत उग्राः सन्तः प्रव्रजिता–दीक्षामाश्रिता उग्रप्रव्रजिताः । एवमन्यान्यपि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं -(कुल-अनुसार)

प्रत सूत्रांक [१४] दीप अनुक्रम [१४]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

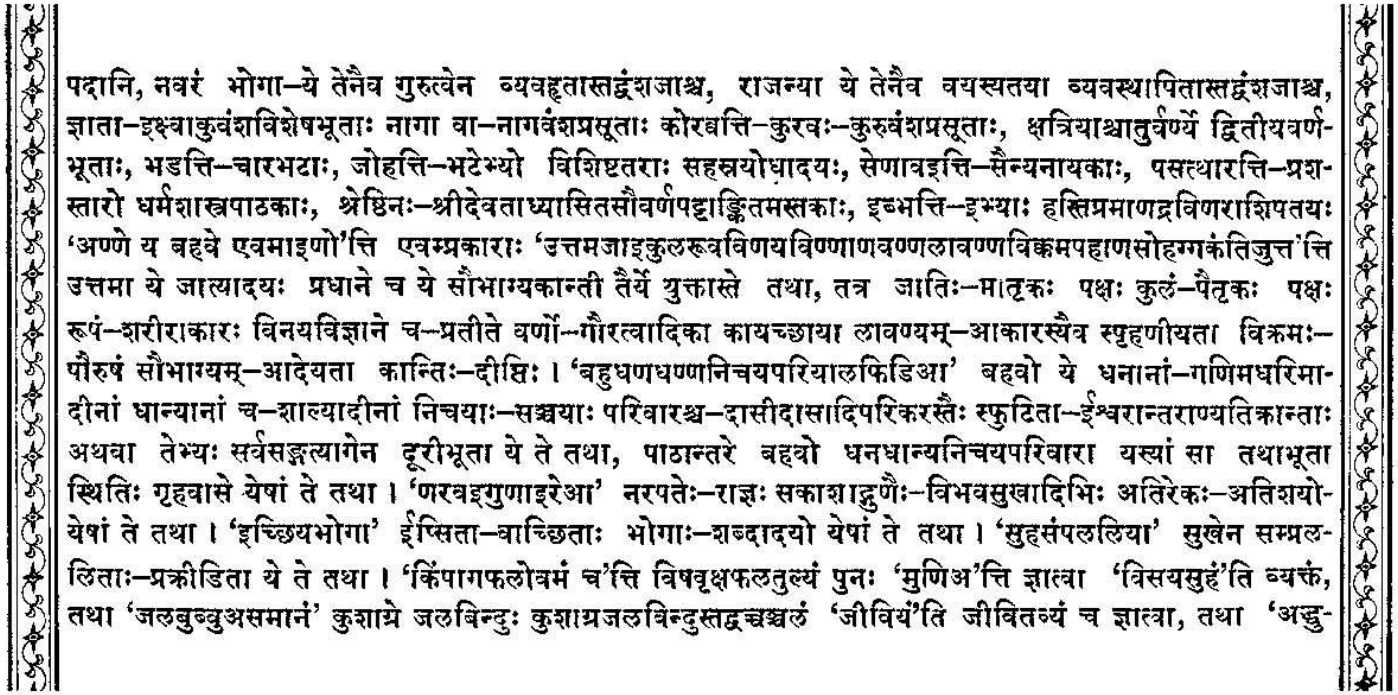

पदानि, नवरं भोगा–ये तेनैव गुरुत्वेन व्यवहृतास्तद्वंशजाश्च, राजन्या ये तेनैव वयस्यतया व्यवस्थापितास्तद्वंशजाश्च, ज्ञाता–इक्ष्वाकुवंशविशेषभूताः नागा वा–नागवंशप्रसूताः कोरव्वत्ति–कुरवः–कुरुवंशप्रसूताः, क्षत्रियाश्चातुर्वर्ण्ये द्वितीयवर्णभूताः, भडत्ति–चारभटाः, जोहत्ति–भटेभ्यो विशिष्टतराः सहस्रयोधादयः, सेणावइत्ति–सैन्यनायकाः, पसत्थारत्ति–प्रशस्तारो धर्मशास्त्रपाठकाः, श्रेष्ठिनः–श्रीदेवताध्यासितसौवर्णपट्टाङ्कितमस्तकाः, इब्भत्ति–इभ्याः हस्तिप्रमाणद्रविणराशिपतयः 'अण्णे य बहवे एवमाइणो'त्ति एवम्प्रकाराः 'उत्तमजाइकुलरूवविणयविण्णाणवण्णलावण्णविक्कमपहाणसोहग्गकंतिजुत्त'त्ति उत्तमा ये जात्यादयः प्रधाने च ये सौभाग्यकान्ती तैर्ये युक्तास्ते तथा, तत्र जातिः–मातृकः पक्षः कुलं–पैतृकः पक्षः रूपं–शरीराकारः विनयविज्ञाने च–प्रतीते वर्णो–गौरत्वादिका कायच्छाया लावण्यम्–आकारस्यैव स्पृहणीयता विक्रमः–पौरुषं सौभाग्यम्–आदेयता कान्तिः–दीप्तिः । 'बहुधणधण्णनिचयपरियालफिडिआ' बहवो ये धनानां–गणिमधरिमादीनां धान्यानां च–शाल्यादीनां निचयाः–सञ्चयाः परिवारश्च–दासीदासादिपरिकरस्तैः स्फुटिता–ईश्वरान्तराण्यतिक्रान्ताः अथवा तेभ्यः सर्वसङ्गत्यागेन दूरीभूता ये ते तथा, पाठान्तरे बहवो धनधान्यनिचयपरिवारा यस्यां सा तथाभूता स्थितिः गृहवासे येषां ते तथा । 'णरवइगुणाइरेआ' नरपतेः–राज्ञः सकाशाद्गुणैः–विभवसुखादिभिः अतिरेकः–अतिशयो-येषां ते तथा । 'इच्छियभोगा' ईप्सिता–वाञ्छिताः भोगाः–शब्दादयो येषां ते तथा । 'सुहसंपललिया' सुखेन सम्प्रललिताः–प्रक्रीडिता ये ते तथा । 'किंपागफलोवमं च'त्ति विषवृक्षफलतुल्यं पुनः 'मुणिअ'त्ति ज्ञात्वा 'विसयसुहं'ति व्यक्तं, तथा 'जलबुब्बुअसमानं' कुशाग्रे जलबिन्दुः कुशाग्रजलविन्दुस्तद्वच्चञ्चलं 'जीवियं'ति जीवितव्यं च ज्ञात्वा, तथा 'अद्धु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

वमिणं'ति इदं विषयसौख्यधनसञ्चयादिकम् अध्रुवम्–अनित्यरूपं रज इव पटाग्रलग्नं 'संविधुणित्ता णं'ति विधूय–झटिति विहाय, तथा 'चइत्त'त्ति त्यक्त्वा, किं तदित्याह–'हिरण्णं च' रूप्यं, यावच्छब्दोपादानादिदं दृश्यम्–चिच्चा सुवण्णं चिच्चा धणं एवं धण्णं बलं वाहणं कोसं कोट्ठागारं रज्जं रट्ठं पुरं अंतेउरं चिच्चा विपुलधणकणगरयणमणिमोत्तिअसंखसिलप्पवालरत्तरयणमाईयं संतसारसावतेज्जं विच्छड्डइत्ता विगोवइत्ता दाणं च दाइयाणं परिभायइत्ता मुंडा भवित्ता अगाराओ अणगारिय'मिति, व्यक्तं चैतत्, नवरं सुवर्णं घटितं धनं–गवादि बलं–चतुरङ्गं वाहनं–वेगसरादिकं पुनर्धनं–गणिमादि कनकम्–अघटितसुवर्णं रत्नानि–कर्केतनादीनि मणयः–चन्द्रकान्तादयः मौक्तिकानि–मुक्ताफलानि शङ्खाः–प्रतीताः शिलाप्रवालानि–विद्रुमाणि रक्तरत्नानि–पद्मरागा आदिशब्दाद्वस्त्रकम्बलादिपरिग्रहः, एतेन किमुक्तं भवतीत्याह–'संत'त्ति विद्यमानं सारस्वापतेयं–प्रधानद्रव्यं, किमित्याह–विच्छर्द्य–विशेषेण त्यक्त्वा विच्छर्दवद्वा कृत्वा निष्क्रमणमहिमकरणतः, तथा तदेव गुप्तं सद्विगोप्य–प्रकाशीकृत्य दानातिशयादत एव 'दाणं च दाइयाणं'ति दानार्हेभ्यः परिभाज्य–दत्त्वा, गोत्रिकेभ्यो वा–विभागशो दत्त्वा मुण्डा भूत्वा–द्रव्यतः शिरोलुञ्चनेन भावतः क्रोधाद्यपनयनेन अगारात्–गेहात् निष्क्रम्येति शेषः, अनगारितां–साधुतां प्रव्रजिता–गताः, विभक्तिपरिणामाद्वा अनगारितया प्रव्रजिताः–श्रमणीभूताः, पर्यायसूत्राणि व्यक्तान्येवेति ॥ १४ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी बहवे निग्गंथा भगवंतो अप्पेगइआ आभिणिबोहियणाणी जाव केवलणाणी अप्पेगइआ मणबलिआ वयबलिआ कायबलिआ अप्पेगइआ मणेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१४]

दीप अनुक्रम [१४]

विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं –(ज्ञान-आदि अनुसार)

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१५]

दीप अनुक्रम [१५]

सावाणुग्गहसमत्था ३ अप्पेगइआ खेलोसहिपत्ता एवं जल्लोसहि० विप्पोसहि० आमोसहि० सव्वोसहि० अप्पेगइआ कोट्ठबुद्धी एवं बीअबुद्धी पडबुद्धी अप्पेगइआ पयाणुसारी अप्पेगइआ संभिन्नसोआ अप्पेगइआ खीरासवा अप्पेगइआ महुआसवा अप्पेगइआ सप्पिआसवा अप्पेगइआ अक्खीणमहाणसिआ एवं उज्जुमती अप्पेगइआ विउलमई विउव्वणिड्ढिपत्ता चारणा विज्जाहरा आगासातिवाइणो ॥

साधुवर्णकगमान्तरं व्यक्तमेव, नवरं 'मणोबलिय'त्ति मनोबलिकाः–मानसावष्टम्भवन्तः वाग्बलिकाः–प्रतिज्ञातार्थनिर्वाहकाः परपक्षक्षोभकारिवचना वा, कायबलिकाः क्षुधादिपरीषहेष्वग्लानीभवत्कायाः 'नाणबलिया' अव्यभिचारिज्ञानाः 'दंसणबलिया' परैरक्षोभ्यदर्शनाः 'चारित्तबलिया' इति व्यक्तं, वाचनान्तराधीतं चेदं विशेषणत्रयम् 'अप्पेगइआ मणेणं सावाणुग्गहसमत्था' मनसैव परेषां शापानुग्रहौ–अपकारोपकारौ कर्तुं समर्था इत्यर्थः, एवं वाचा कायेन चेति । 'खेलोसहिपत्त'त्ति खेलो–निष्ठीवनं स एवौषधिः सकलरोगाद्यनर्थोपशमहेतुत्वात् खेलौषधिस्तां प्राप्ता ये ते तथा, एवमन्यत्रापि, नवरं 'जल्लोसहि'त्ति जल्लो–मलः 'विप्पोसहि'त्ति विप्रुषः प्रश्रवणादिबिन्दवः, अथवा वि इति विष्ठा प्र–इति प्रश्रवणं ते एव ओषधिः इति । 'आमोसहि'त्ति आमर्षणमामर्षः–हस्तादिसंस्पर्श इति । 'सव्वोसहि'त्ति सर्व एव खेलजल्लविप्रुड्केशरोमनखादय ओषधिः सर्वौषधिः, 'कोट्ठबुद्धि'त्ति कोष्ठवत्–कुशूल इव सूत्रार्थधान्यस्य यथाप्राप्तस्याविनष्टस्याऽऽजन्मधरणाद्बुद्धिः–मतिर्येषां ते तथा । 'बीजबुद्धि'त्ति बीजमिव विविधार्थाधिगमरूपमहातरुजननाद्बुद्धिर्येषां ते तथा । 'पडबुद्धि'त्ति

३ वाक्कायशापानुग्रहसमर्थेति ज्ञापनाय त्रिकलक्षणोऽङ्कः ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं –(ज्ञान-आदि अनुसार)

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१५]

दीप अनुक्रम [१५]

पटवत् विशिष्टवक्तृवनस्पतिविसृष्टविविधप्रभूतसूत्रार्थपुष्पफलग्रहणसमर्थतया बुद्धिर्येषां ते तथा। 'पदाणुसारि'त्ति पदेन–सूत्रावयवेनैकेनोपलब्धेन तदनुकूलानि पदशतान्यनुसरन्ति–अभ्यूहयन्तीत्येवंशीलाः पदानुसारिणः। 'संभिन्नसोअ'त्ति सम्भिन्नान्–बहुभेदभिन्नान् शब्दान् पृथक् पृथक् युगपच्छृण्वन्तीति सम्भिन्नश्रोतारः, सम्भिन्नानि वा–शब्देन व्याप्तानि शब्दग्राहीणि, प्रत्येकं वा शब्दादिविषयैः श्रोतांसि–सर्वेन्द्रियाणि येषां ते तथा। 'खीरासव'त्ति क्षीरवन्मधुरत्वेन श्रोतृणां कर्णमनःसुखकरं वचनमाश्रवन्ति–क्षरन्ति ये ते क्षीराश्रवाः। 'महुआसव'त्ति मध्वाश्रवाः प्राग्वत्, नवरं मधुवत्सर्वदोषोपशमनिमित्तत्वादाल्हादकत्वाच्च तद्वचनस्य क्षीराश्रवेभ्यस्ते भेदेनोक्ताः। 'सप्पिआसव'त्ति सर्पिराश्रवास्तथैव, नवरं श्रोतृणां स्वविषये स्नेहातिरेकसम्पादकत्वात् क्षीराश्रवमध्वाश्रवेभ्यो भेदेनोक्ताः। 'अक्खीणमहाणसीय'त्ति महानसम्–अन्नपाकस्थानं तदाश्रितत्वाद्वाऽन्नमपि महानसमुच्यते, ततश्चाक्षीणं–पुरुषशतसहस्रेभ्योऽपि दीयमानं स्वयमभुक्तं सत् तथाविधलब्धिविशेषादद्यूटितं तच्च तन्महानसं च–भिक्षालब्धं भोजनमक्षीणमहानसं तदस्ति येषां ते तथा। 'उज्जुमइ'त्ति ऋज्वी सामान्यतो मनोमात्रग्राहिणी मतिः–मनःपर्यायज्ञानं येषां ते तथा। 'विउलमइ'त्ति विपुला–बहुविधविशेषणोपेतमन्यमानवस्तुग्राहित्वेन विस्तीर्णा मतिः–मनःपर्यायज्ञानं येषां ते तथा, तथाहि–घटोऽनेन चिन्तितः स च द्रव्यतः सौवर्णादिः क्षेत्रतः पाटलिपुत्रकादिः कालतः शारदादिर्भावतः कालवर्णादिरित्येवं विपुलमतयो जानन्ति, ऋजुमतयस्तु सामान्यत एव, तथा अर्द्धतृतीयाङ्गुलन्यूने मनुजक्षेत्रे व्यवस्थितसंज्ञिनां मनोग्राहिका आद्याः, इतरे तु सम्पूर्णं इति। 'विउव्वणिड्ढिपत्त'त्ति विकुर्वणा–वैक्रियकरणलब्धिः सैव ऋद्धिस्तां प्राप्ता ये तथा। 'चारण'त्ति चरणं–गमनं तदतिशयवदस्ति येषां ते

॥ २८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१५]

दीप अनुक्रम [१५]

चारणाः, ते च द्विधा–जङ्घाचारणा विद्याचारणाश्च, तत्राष्टमाष्टमेन क्षपतो यतेर्या लब्धिरुत्पद्यते यया च कश्चिज्जङ्घाव्यापारमाश्रित्यैकेनैवोत्पातेन त्रयोदशं रुचकवराभिधानं द्वीपं मेरुमस्तकं च यावद्गन्तुं प्रतिनिवृत्तश्च तत उत्पातद्वयेनेहागन्तुं समर्थो भवति तया युक्ता आद्याः, या पुनः षष्ठं षष्ठेन क्षपत उत्पद्यत, यया श्रुतविहितेषदुपष्टम्भतयोत्पातद्वयेनाष्टमं नन्दीश्वराख्यं द्वीपं मेरुमस्तकं च गन्तुं ततः प्रतिनिवृत्तश्चैकेनैवोत्पातेनेहागन्तुं समर्थो भवति तया युक्ता द्वितीया इति। 'विज्जाहर'त्ति प्रज्ञप्त्यादिविविधविद्याविशेषधारिणः। 'आगासातिवाइणो'त्ति आकाशं–व्योमातिपतन्ति–अतिक्रामन्ति आकाशगामिविद्याप्रभावात् पादलेपादिप्रभावाद्वा आकाशाद्वा हिरण्यवृष्ट्यादिकमिष्टमनिष्टं वाऽतिशयेन पातयन्तीत्येवंशीला आकशातिपातिनः, आकाशादिवादिनो वा–अमूर्तानामपि पदार्थानां साधन (ने) समर्थवादिन इति भावः।

अप्पेगइआ कणगावलिं तवोकम्मं पडिवण्णा एवं एकावलिं खुड्डागसीहनिक्कीलियं तवोकम्मं पडिवण्णा अप्पेगइयामहालयं सीहनिक्कीलियं तवोकम्मं पडिवण्णा भद्दपडिमं महाभद्दपडिमं सव्वतोभद्दपडिमं आयंबिलवद्धमाणं तवोकम्मं पडिवण्णा

'कणगावलिं तवोकम्मं पडिवण्णग'त्ति कनकमयमणिकमयो भूषणविशेषः, कल्पनया तदाकारं यत्तपस्तत्कनकावलीत्युच्यते, तत्स्थापना चैवम्–चतुर्थं षष्ठमष्टमं चोत्तराधर्येणावस्थाप्य तेषामधोऽष्टावष्टमानि चत्वारि चत्वारि पङ्क्तिद्वयेनावस्थापनीयानि, उभयतो वा रेखाचतुष्केण नव कोष्ठकान्विधाय मध्यमे शून्यं विधाय शेषेष्वष्टसु तानि स्थापनीयानि, ततस्तस्याधोऽधः चतुर्थादीनि चतुस्त्रिंशत्तमपर्यन्तानि, ततः कनकावलिमध्यभागकल्पनया चतुस्त्रिंशदष्टमानि, तानि चोत्तराधर्येण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं –(तपोकर्म आदि अनुसार)

प्रत सूत्रांक [१५] दीप अनुक्रम [१५]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्ति:

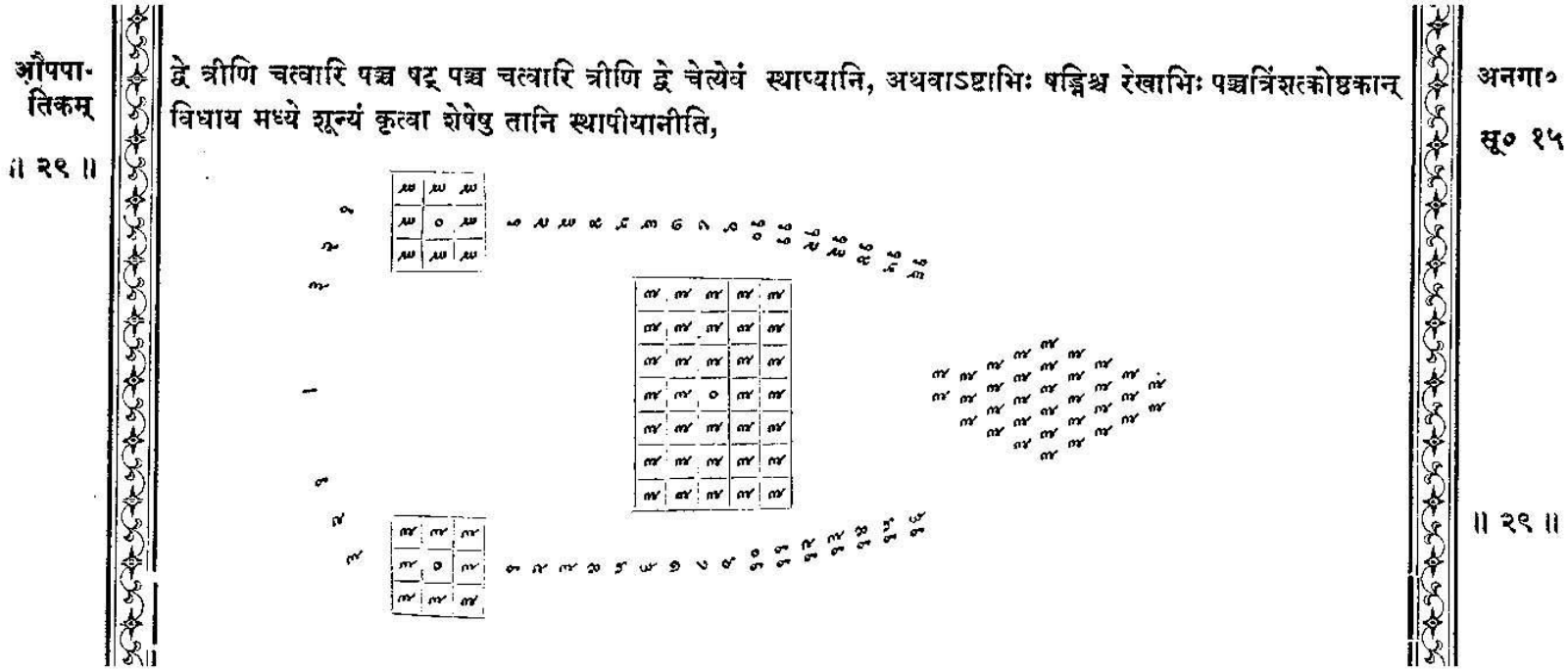

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं –(तपोकर्म आदि अनुसार)

प्रत सूत्रांक [१५] दीप अनुक्रम [१५]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

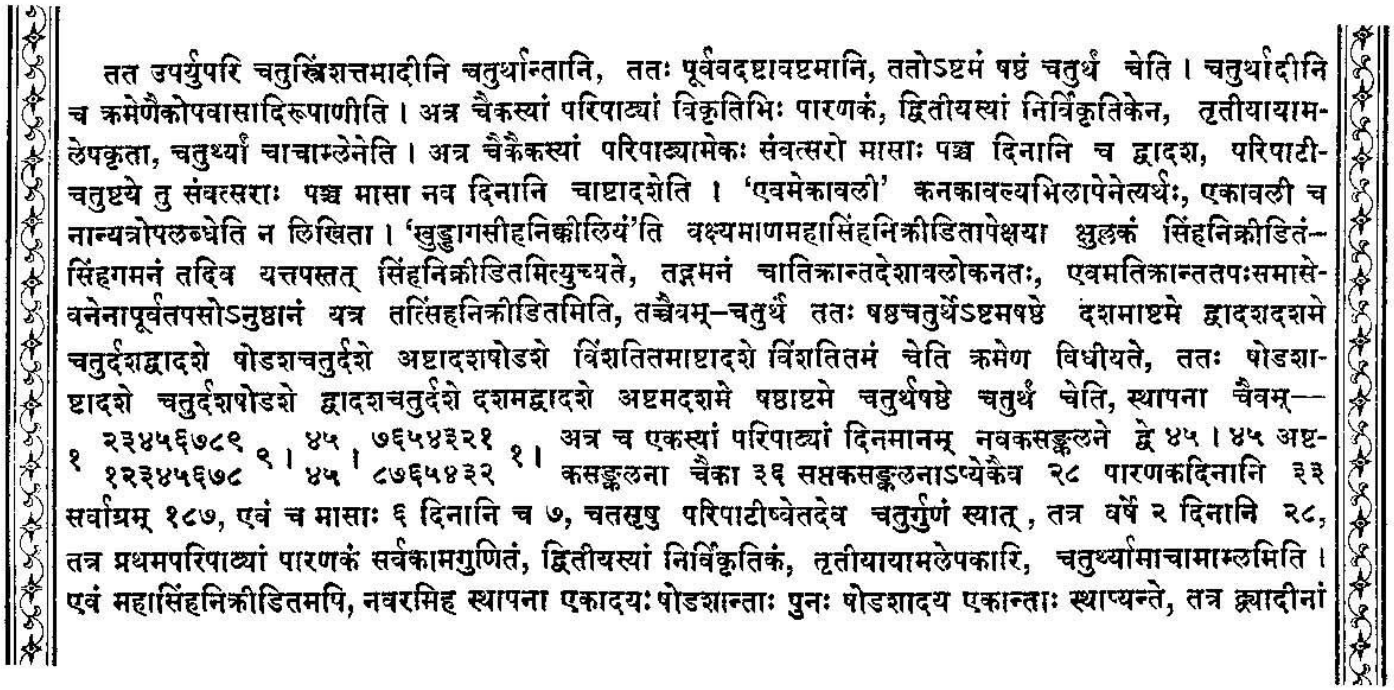

ततः उपर्युपरि चतुस्त्रिंशत्तमादीनि चतुर्थान्तानि, ततः पूर्ववदष्टावष्टमानि, ततोऽष्टमं षष्ठं चतुर्थं चेति। चतुर्थादीनि च क्रमेणैकोपवासादिरूपाणीति। अत्र चैकस्यां परिपाट्यां विकृतिभिः पारणकं, द्वितीयस्यां निर्विकृतिकेन, तृतीयायामलेपकृता, चतुर्थ्यां चाचाम्लेनेति। अत्र चैकैकस्यां परिपाट्यामेकः संवत्सरो मासाः पञ्च दिनानि च द्वादश, परिपाटीचतुष्टये तु संवत्सराः पञ्च मासा नव दिनानि चाष्टादशेति। 'एवमेकावली' कनकावल्यभिलापेनेत्यर्थः, एकावली च नान्यत्रोपलब्धेति न लिखिता। 'खुड्डागसीहनिक्कीलियं'ति वक्ष्यमाणमहासिंहनिक्रीडितापेक्षया क्षुल्लकं सिंहनिक्रीडितं—सिंहगमनं तदिव यत्तपस्तत् सिंहनिक्रीडितमित्युच्यते, तद्गमनं चातिक्रान्तदेशावलोकनतः, एवमतिक्रान्ततपःसमासेवनेनापूर्वतपसोऽनुष्ठानं यत्र तत्सिंहनिक्रीडितमिति, तच्चैवम्—चतुर्थं ततः षष्ठचतुर्थेऽष्टमषष्ठे दशमाष्टमे द्वादशदशमे चतुर्दशद्वादशे षोडशचतुर्दशे अष्टादशषोडशे विंशतितमाष्टादशे विंशतितमं चेति क्रमेण विधीयते, ततः षोडशाष्टादशे चतुर्दशषोडशे द्वादशचतुर्दशे दशमद्वादशे अष्टमदशमे षष्ठाष्टमे चतुर्थषष्ठे चतुर्थं चेति, स्थापना चैवम्—

$$\begin{matrix} १ & २३४५६७८९ \\ & १२३४५६७८ \end{matrix}\ ९।\ \begin{matrix} ४५ \\ ४५ \end{matrix}\ |\ \begin{matrix} ७६५४३२१ \\ ८७६५४३२ \end{matrix}\ १।$$

अत्र च एकस्यां परिपाट्यां दिनमानम् नवकसङ्कलने द्वे ४५। ४५ अष्टकसङ्कलना चैका ३६ सप्तकसङ्कलनाऽप्येकैव २८ पारणकदिनानि ३३ सर्वाग्रम् १८७, एवं च मासाः ६ दिनानि च ७, चतसृषु परिपाटीष्वेतदेव चतुर्गुणं स्यात्, तत्र वर्षे २ दिनानि २८, तत्र प्रथमपरिपाट्यां पारणकं सर्वकामगुणितं, द्वितीयस्यां निर्विकृतिकं, तृतीयायामलेपकारि, चतुर्थ्यामाचामाम्लमिति। एवं महासिंहनिक्रीडितमपि, नवरमिह स्थापना एकादयः षोडशान्ताः पुनः षोडशादय एकान्ताः स्थाप्यन्ते, तत्र क्ष्यादीनां

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं –(तपोकर्म आदि अनुसार)

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१५]

दीप अनुक्रम [१५]

षोडशान्तानामग्रे प्रत्येकमेकादयः पञ्चदशान्ताः स्थाप्यन्ते, तथा ये षोडशादय एकान्ताः स्थापितास्तेषु पञ्चदशादीनां द्व्यन्तानामादौ चतुर्दशादयः स्थापनीयाः, चतुर्थादिना चाभिलापेन ते समुत्कीर्तनीयाः ।

७	६	५	४	३	२	१	०	९	८	७	६	५	४	३
	५	४	३	२	१	०	९	८	७	६	५	४	३	२
		३	२	१	०	९	८	७	६	५	४	३	२	१
			१	०	९	८	७	६	५	४	३	२	१	०

दिनमानं चैकस्यां परिपाट्यामिदमत्र–द्वे षोडशानां सङ्कलने १३६, १३६ एका पञ्चदशानां १२० चतुर्दशानामप्येकैव १०५ एकषष्टिश्च पारणकानीति, सर्वाग्रं च ५५८, एवं च वर्षमेकं षट् च मासाः दिनान्यष्टादशेति, परिपाटीचतुष्टये चतुर्गुणमेतदेव वर्षाणि ६ मासौ २ दिनानि १२ । तथा भद्रप्रतिमा–यस्यां पूर्वदक्षिणापरोत्तराभिमुखः प्रत्येकं प्रहरचतुष्टयं कायोत्सर्गं करोति, एषा चाहोरात्रद्वयमानेति, महाभद्राऽपि तथैव, नवरमहोरात्रं यावदेकैकदिगभिमुखः कायोत्सर्गं करोति, अहोरात्रचतुष्टयं चास्यां मानमिति, सर्वतोभद्रा पुनर्यस्यां दशसु दिक्षु प्रत्येकमहोरात्रं कायोत्सर्गं करोति । अस्यां च दशाहोरात्राणि मानमिति । अथवा द्विविधा सर्वतोभद्रा–क्षुद्रा महती च, तत्र क्षुद्रायाः स्थापना—

१	२	३	४	५
३	४	५	१	२
५	१	२	३	४
२	३	४	५	१
४	५	१	२	३

स्थापनोपायगाथा चेयमत्र–'एगाई पंचंते ठविउं मज्झं तु आइमणुपंति । सेसे कमेण ठविउं जाणेज्जा सव्वओभद्दं ॥ १ ॥' तपोदिनानीह पञ्चसप्ततिः, पारणकदिनानि तु पञ्चविंशतिः, सर्वाणि दिनानि शतमेकस्यां परिपाट्यां, चतसृषु त्वेतदेव चतुर्गुणम् । एवं महत्यपि, नवरमेकादयः सप्तान्तास्तस्यामुपवासा भवन्ति, स्थापनोपायगाथा त्वियम्–'एगाई सत्तंता ठविउं मज्झं तु आइमणुपंति । सेसे कमेण ठविउं जाण महासव्वओभद्दं ॥ १ ॥'

॥ ३० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं –(तपोकर्म आदि अनुसार)

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१५]

दीप अनुक्रम [१५]

१।२।३।४।५।६।७। इयं प्रथमा पङ्क्तिः ४।५।६।७।१।२।३ द्वितीया ७।१।२।३।४।५।६। तृतीया ३।४।५।६।७।१।२ चतुर्थी ६।७।१।२।३।४।५ पञ्चमी २।३।४।५।६।७।१ षष्ठी ५।६।७।१।२।३।४ सप्तमी । इह च षण्णवत्यधिकं शतं तपोदिनानां स्यादेकोनपञ्चाशच्च पारणकदिनानि, एवं चाष्टौ मासाः पञ्च दिनानि, चतसृषु परिपाटीष्वेतदेव चतुर्गुणमिति । 'आयंबिलवद्धमाणं'ति यत्र चतुर्थं कृत्वा आयामाम्लं क्रियते, पुनश्चतुर्थं, पुनर्द्वे आयामाम्ले, पुनश्चतुर्थं, पुनस्त्रीणि आयामाम्लानि, एवं यावच्चतुर्थं शतं चायामाम्लानां क्रियत इति, इह च शतं चतुर्थानां तथा पञ्च सहस्राणि पञ्चाशदधिकानि आयामाम्लानां भवन्तीति ।

मासिअं भिक्खुपडिमं एवं दोमासिअं पडिमं तिमासिअं पडिमं जाव सत्तमासिअं भिक्खुपडिमं पडिवण्णा पढमं सत्तराइंदिअं अप्पेगइया भिक्खुपडिमं पडिवण्णा जाव तचं सत्तराइंदिअं भिक्खुपडिमं पडिवण्णा [1]अहोराइंदिअंभिक्खुपडिमं पडिवण्णा [2]इक्कराइंदिअं भिक्खुपडिमं पडिवण्णा सत्तसत्तमिअं भिक्खुपडिमं अट्ठट्ठमिअं भिक्खुपडिमं णवणवमिअं भिक्खुपडिमं दसदसमिअं भिक्खुपडिमं खुड्डियं मोअपडिमं पडिवण्णा महल्लियं मोअपडिमं पडिवण्णा जवमज्झं चंदपडिमं पडिवण्णा वइर (वज्र) मज्झं चंदपडिमं पडिवण्णा संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरंति ॥ (सू० १५ ॥)

'मासियं भिक्खुपडिमं'ति मासपरिमाणा मासिकी तां भिक्षुप्रतिमां–साधुप्रतिज्ञाविशेषं, तत्र हि मासं यावदेका दत्ति-

१ टीकाकृदभिप्रायेण राइंदिअं । २ एगराइयंति वृत्तिः ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं --(भिक्षु-प्रतिमादि अनुसार)

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१५]

दीप अनुक्रम [१५]

भक्तस्यैकैव च पानकस्येति, एवं द्वितीयाद्याः सप्तम्यन्ताः एकैकदत्तिवृद्धियुक्ता इति । 'पढमसत्तराइंदिअं'ति तिसृणां मध्ये प्रथमा सप्तरात्रिन्दिवा–सप्ताहोरात्रप्रमाणा, अस्यां च चतुर्थं चतुर्थेन पानकाहारविरहित उत्तानको वा पार्श्वशायी वा निषद्योपगतो वा ग्रामादिभ्यो बहिर्विहरति, द्वितीयसप्तरात्रिन्दिवाऽप्येवंविधैव, नवरं उत्कुटुको वा लगण्डशायी वा दण्डायतो वा विहरति, एवं तृतीया सप्तरात्रिन्दिवापि, नवरं गोदोहिकास्थितो वा वीरासनिको वा आम्रकुब्जो वा आस्त इति । 'राइंदिअं'ति रात्रिन्दिवप्रमाणामहोरात्रिकीमित्यर्थः, अस्यां च षष्ठोपवासिको ग्रामादिभ्यो बहिः प्रलम्बभुजस्तिष्ठतीति । 'एगराइयं'ति एका रात्रिः प्रमाणमस्या इत्येकरात्रिकी ताम्, अस्यां चाष्टमभक्तिको ग्रामादिबहिरीषदवनतगात्रोऽनिमिषनयनः शुष्कपुद्गलनिरुद्धदृष्टिः जिनमुद्रास्थापितपादः प्रलम्बितभुजस्तिष्ठतीति, विशिष्टसंहननादियुक्त एव चैताः प्रतिपद्यन्ते, आह च–"पडिवज्जइ एयाओ संघयणधिइजुओ महासत्तो । पडिमाउ भावियप्पा सम्मं गुरुणा अणुन्नाओ ॥ १ ॥" इत्यादि ॥ 'सत्तसत्तमियं'ति सप्तसप्तमानि दिनानि यस्यां सा तथा, सा च सप्तभिर्दिनानां सप्तकैर्भवति, तत्र च प्रथमदिने एका दत्तिर्भक्तस्यैकैव च पानकस्यैवं द्व्यादिष्वेकोत्तरया वृद्ध्या सप्तमदिने सप्त दत्तयः, एवमन्यान्यपि षट् सप्तकानि, अथवा प्रथमसप्तके प्रतिदिनमेका दत्तिर्द्वितीयादिषु तु द्व्यादयो यावत्सप्तमे सप्तके प्रतिदिनं सप्तेति, एवमष्टाष्टमिका नवनवमिका दशदशमिका चेति, नवरं दत्तिवृद्धिः कार्येति । क्वचिदिह स्थाने भद्रासुभद्रामहाभद्रासर्वतोभद्राभद्रोत्तराश्च भिक्षुप्रतिमाः पठ्यन्ते, तत्र सुभद्रा अप्रतीता, शेषास्तु व्याख्याताः प्राक्, नवरं भद्रोत्तरास्थापना

१ प्रतिपद्यत एताः संहननधृतियुक्तो महासत्त्वः । प्रतिमा भावितात्मा सम्यग्गुरुणाऽनुज्ञातः ॥ १ ॥

॥ ३१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं --(भिक्षु-प्रतिमादि अनुसार)

प्रत सूत्रांक [१५] दीप अनुक्रम [१५]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

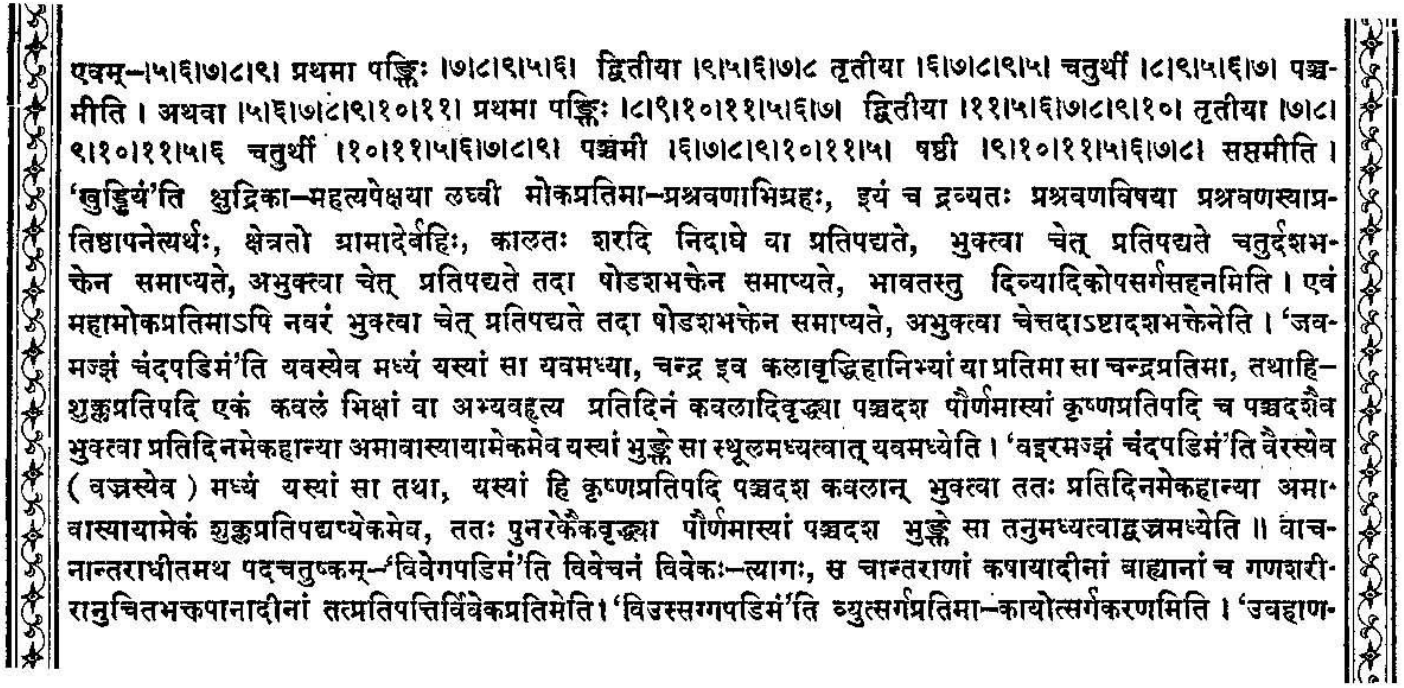

एवम्–।५।६।७।८।९। प्रथमा पङ्क्तिः ।७।८।९।५।६। द्वितीया ।९।५।६।७।८ तृतीया ।६।७।८।९।५। चतुर्थी ।८।९।५।६।७। पञ्चमीति । अथवा ।५।६।७।८।९।१०।११। प्रथमा पङ्क्तिः ।८।९।१०।११।५।६।७। द्वितीया ।११।५।६।७।८।९।१०। तृतीया ।७।८।९।१०।११।५।६ चतुर्थी ।१०।११।५।६।७।८।९। पञ्चमी ।६।७।८।९।१०।११।५। षष्ठी ।९।१०।११।५।६।७।८। सप्तमीति । 'खुड्डियं'ति क्षुद्रिका–महत्यपेक्षया लघ्वी मोकप्रतिमा–प्रश्रवणाभिग्रहः, इयं च द्रव्यतः प्रश्रवणविषया प्रश्रवणस्याप्रतिष्ठापनेत्यर्थः, क्षेत्रतो ग्रामादेर्बहिः, कालतः शरदि निदाघे वा प्रतिपद्यते, भुक्त्वा चेत् प्रतिपद्यते चतुर्दशभक्तेन समाप्यते, अभुक्त्वा चेत् प्रतिपद्यते तदा षोडशभक्तेन समाप्यते, भावतस्तु दिव्यादिकोपसर्गसहनमिति । एवं महामोकप्रतिमाऽपि नवरं भुक्त्वा चेत् प्रतिपद्यते तदा षोडशभक्तेन समाप्यते, अभुक्त्वा चेत्तदाऽष्टादशभक्तेनेति । 'जवमज्झं चंदपडिमं'ति यवस्येव मध्यं यस्यां सा यवमध्या, चन्द्र इव कलावृद्धिहानिभ्यां या प्रतिमा सा चन्द्रप्रतिमा, तथाहि–शुक्लप्रतिपदि एकं कवलं भिक्षां वा अभ्यवहृत्य प्रतिदिनं कवलादिवृद्ध्या पञ्चदश पौर्णमास्यां कृष्णप्रतिपदि च पञ्चदशैव भुक्त्वा प्रतिदिनमेकहान्या अमावास्यायामेकमेव यस्यां भुङ्क्ते सा स्थूलमध्यत्वात् यवमध्येति । 'वइरमज्झं चंदपडिमं'ति वैरस्येव (वज्रस्येव) मध्यं यस्यां सा तथा, यस्यां हि कृष्णप्रतिपदि पञ्चदश कवलान् भुक्त्वा ततः प्रतिदिनमेकहान्या अमावास्यायामेकं शुक्लप्रतिपद्यप्येकमेव, ततः पुनरेकैकवृद्ध्या पौर्णमास्यां पञ्चदश भुङ्क्ते सा तनुमध्यत्वाद्वज्रमध्येति ॥ वाचनान्तराधीतमथ पदचतुष्कम्–'विवेगपडिमं'ति विवेचनं विवेकः–त्यागः, स चान्तराणां कषायादीनां बाह्यानां च गणशरीरानुचितभक्तपानादीनां तत्प्रतिपत्तिर्विवेकप्रतिमेति । 'विउस्सग्गपडिमं'ति व्युत्सर्गप्रतिमा–कायोत्सर्गकरणमिति । 'उवहाण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं --(भिक्षु-प्रतिमादि अनुसार)

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१५]

दीप अनुक्रम [१५]

पडिमं'ति तपोविषयोऽभिग्रहः, यद्यपि दशाश्रुतस्कन्धे भिक्षूपासकप्रतिमास्वरूपेयमुक्ता तथापीह तथा न व्याख्याता, भिक्षुप्रतिमानां प्रागेव दर्शितत्वाद्, उपासकप्रतिमानां च साधूनामसम्भवात्। 'पडिसंलीणपडिमं'ति संलीनताऽभिग्रहमिति ॥१५॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी बहवे थेरा भगवंतो जातिसंपण्णा कुलसंपण्णा बलसंपण्णा रूवसंपण्णा विणयसंपण्णा णाणसंपण्णा दंसणसंपण्णा चरित्तसंपण्णा लज्जासंपण्णा लाघवसंपण्णा ओअंसी तेअंसी वच्चंसी जसंसी जिअकोहा जियमाणा जिअमाया जिअलोभा जिअइंदिआ जिअणिद्दा जिअपरीसहा जीविआसमरणभयविप्पमुक्का वयप्पहाणा गुणप्पहाणा करणप्पहाणा चरणप्पहाणा णिग्गहप्पहाणा निच्छयप्पहाणा अज्जवप्पहाणा मद्दवप्पहाणा लाघवप्पहाणा खंतिप्पहाणा मुत्तिप्पहाणा विज्जापहाणा मंतप्पहाणा वेअप्पहाणा बंभप्पहाणा नयप्पहाणा नियमप्पहाणा सच्चप्पहाणा सोअप्पहाणा चारुवण्णा लज्जातवस्सीजिइंदिआ सोही अणियाणा अप्पुस्सुआ अबहिल्लेसा अप्पडिलेस्सा सुसामण्णरया दंता इणमेव णिग्गथं पावयणं पुरओकाउं विहरंति।

साधुवर्णकगमान्तरमेव, तत्र 'जाइसंपन्न'त्ति उत्तममातृकपक्षयुक्ता इत्यवसेयम्, अन्यथा मातृकपक्षसम्पन्नत्वं पुरुषमात्रस्यापि स्यादिति नैषामुत्कर्षः कश्चिदुक्तः स्याद्, उत्कर्षाभिधानार्थं चैषां विशेषणकदम्बकं चिकीर्षितमिति, एवं 'कुलसंपन्ना' इत्याद्यपि विशेषणनवकं, नवरं कुलं–पैतृकः पक्षः बलं–संहननसमुत्थः प्राणः रूपम्–आकृतिः विनयज्ञाने प्रतीते दर्शनं–सम्यक्त्वं चरित्रं–समित्यादि लज्जा–अपवादभीरुता संयमो वा लाघवं–द्रव्यतोऽल्पोपधिता भावतो गौरवत्रयत्यागः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं -(जातिसंपन्न आदि गुणाः)

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१६]

दीप अनुक्रम [१६]

'ओअंसि'त्ति ओजो–मानसोऽवष्टम्भस्तद्वन्तः ओजस्विनः 'तेयंसि'त्ति तेजः शरीरप्रभा तद्वन्तः तेजस्विनः 'वच्चंसि'त्ति वचो–वचनं सौभाग्याद्युपेतं येषामस्ति ते वचस्विनः, अथवा वर्चः–तेजः प्रभाव इत्यर्थः, तद्वन्तो वर्चस्विनः 'जसंसि'त्ति यशस्विनः–ख्यातिमन्तः जितक्रोधादीनि सप्त विशेषणानि प्रतीतानि, नवरं क्रोधादिजयः–उदयप्राप्तक्रोधादिविफलीकरणतोऽवसेयः, 'जीविआसमरणभयविप्पमुक्का' जीविताशया मरणभयेन च विप्रमुक्ताः, तदुभयोपेक्षका इत्यर्थः, 'वयप्पहाणे'ति व्रतं–यतित्वं प्रधानम्–उत्तमं शाक्यादियतित्वापेक्षया निर्ग्रन्थयतित्वाद्येषां, व्रतेन वा प्रधाना ये ते तथा, निर्ग्रन्थश्रमणा इत्यर्थः, ते च न व्यवहारत एवेत्यत आह–'गुणप्पहाण'त्ति प्रतीतं, नवरं गुणाः–करुणादयः, गुणप्राधान्यमेव प्रपञ्चयन्नाह–'करणप्पहाणे' त्यादिविशेषणसप्तकं प्रतीतार्थं च, नवरं करणं–पिण्डविशुद्ध्यादि चरणं–महाव्रतादि निग्रहः–अनाचारप्रवृत्तेर्निषेधनं निश्चयः–तत्त्वनिर्णयः विहितानुष्ठानेषु वा अवश्यंकरणाभ्युपगमः, आर्जवं–मायोदयनिग्रहः मार्दवं–मानोदयनिरोधः, लाघवं–क्रियासु दक्षत्वं क्षान्तिः–क्रोधोदयनिग्रह इत्यर्थः, मुक्तिः–लोभोदयविनिरोधो विद्याः–प्रज्ञप्त्यादिकाः मन्त्राः–हरिणेगमेष्यादिमन्त्राः वेदाः–आगमाः ऋग्वेदादयो वा ब्रह्म–ब्रह्मचर्यं कुशलानुष्ठानं वा नयाः–नीतयः नियमाः–अभिग्रहाः सत्यं–सम्यग्वादः शौचं–द्रव्यतो निर्लेपता भावतोऽनवद्यसमाचारः, यच्चेह चरणकरणग्रहणेऽप्यार्जवादिग्रहणं तदार्जवादीनां प्राधान्यख्यापनार्थमवसेयं, 'चारुवण्ण'त्ति सत्कीर्तयः गौराद्युदात्तशरीरवर्णयुक्ता वा सत्प्रज्ञा वा 'लज्जातवस्सीजिइंदिय'त्ति लज्जाप्रधानास्तपस्विनः–शिष्या जितेन्द्रियाश्च येषां ते लज्जातपस्विजितेन्द्रियाः, अथवा लज्जया तपःश्रिया च जितानीन्द्रियाणि यैस्ते लज्जातपःश्रीजितेन्द्रियाः, यद्यपि जितेन्द्रिया इति प्रागुक्तं, तथापीह लज्जा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं -(जातिसंपन्न आदि गुणाः)

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१६]

दीप अनुक्रम [१६]

तपोविशेषितत्वान्न पुनरुक्तत्वमवसेयमिति, 'सोहि'त्ति सुहृदो–मित्राणि जीवलोकस्येति गम्यम्, अथवा शोधियोगाच्छोधयः–अकलुषहृदया इत्यर्थः, 'अणियाण'त्ति अनिदाना–निदानरहिताः 'अप्पुस्सुय'त्ति अल्पौत्सुक्या–औत्सुक्यवर्जिताः 'अबहिल्लेस'त्ति संयमादबहिर्भूतमनोवृत्तयः, 'अप्पडिलेस्सा [वा]' अप्रतिलेश्या–अतुलमनोवृत्तयः, 'सुसामण्णरय'त्ति अतिशयेन श्रमणकर्मासक्ताः, 'दंत'त्ति गुरुभिर्दमं ग्राहिताः विनयिता इत्यर्थः, इदमेव नैर्ग्रन्थ्यं प्रवचनं 'पुरओकाउं'ति पुरस्कृत्य–प्रमाणीकृत्य विहरन्तीति, क्वचिदेवं च पठ्यते–'बहूणं आयरिया' अर्थदायकत्वात् 'बहूणं उवज्झाया' सूत्रदायकत्वात्, बहूनां गृहस्थानां प्रव्रजितानां च दीप इव दीपो मोहतमःपटलपाटनपटुत्वात्, द्वीप इव वा द्वीपः संसारसागरनिमग्नानामाश्वासभूतत्वात्, 'ताणं'ति त्राणमनर्थेभ्यो रक्षकत्वात्, 'सरणं'ति शरणमर्थसम्पादकत्वात् 'गइ'त्ति गम्यत इति गतिरभिगमनीया इत्यर्थः, 'पइट्ठ'त्ति प्रतिष्ठन्त्यस्यामिति प्रतिष्ठा आश्रय इत्यर्थः ॥

तेसि णं भगवंताणं आयावायावि विदिता भवंति परवाया विदिता भवंति आयावायं जमइत्ता नलवणमिव मत्तमातंगा अच्छिद्दपसिणवागरणा रयणकरंडगसमाणा कुत्तिआवणभूआ परवादियपमद्दणा दुवालसंगिणो समत्तगणिपिडगधरा सव्वक्खरसण्णिवाइणो सव्वभासाणुगामिणो अजिणा जिणसंकासा जिणा इव अवितहं वागरमाणा संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरंति ॥ (सू० १६)

तेषां भगवतां 'आयावायावि'त्ति आत्मवादाः–स्वसिद्धान्तप्रवादाः, अपिः समुच्चये, पाठान्तरेणात्मवादिनो जैना इत्यर्थः, विदिताः–प्रतीताः भवन्ति, तथा परवादाः–शाक्यादिमतानि, पाठान्तरेण परवादिनः–शाक्यादयो विदिता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं -(जातिसंपन्न आदि गुणाः)

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१६]

दीप अनुक्रम [१६]

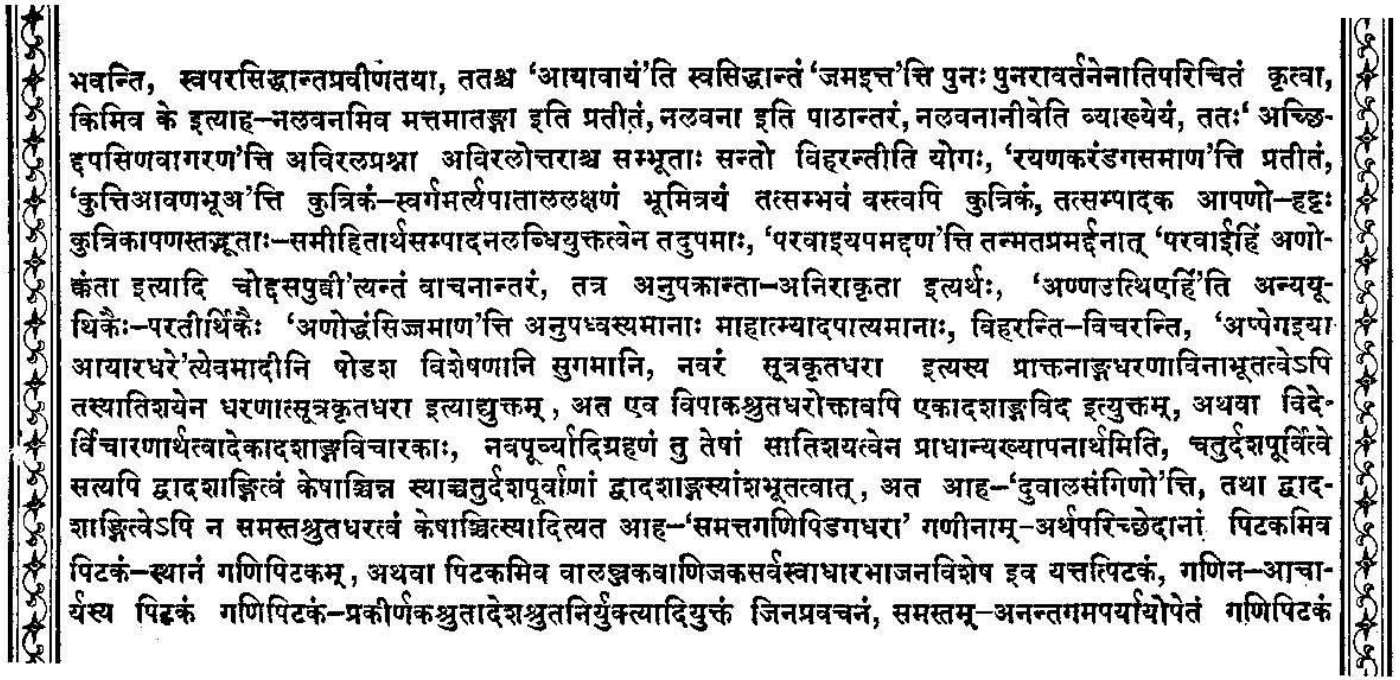

भवन्ति, स्वपरसिद्धान्तप्रवीणतया, ततश्च 'आयावायं'ति स्वसिद्धान्तं 'जमइत्त'त्ति पुनः पुनरावर्तनेनातिपरिचितं कृत्वा, किमिव के इत्याह–नलवनमिव मत्तमातङ्गा इति प्रतीतं, नलवना इति पाठान्तरं, नलवनानीवेति व्याख्येयं, ततः' अच्छिद्दपसिणवागरण'त्ति अविरलप्रश्ना अविरलोत्तराश्च सम्भूताः सन्तो विहरन्तीति योगः, 'रयणकरंडगसमाण'त्ति प्रतीतं, 'कुत्तिआवणभूअ'त्ति कुत्रिकं–स्वर्गमर्त्यपातालरूपं भूमित्रयं तत्सम्भवं वस्त्वपि कुत्रिकं, तत्सम्पादक आपणो–हट्टः कुत्रिकापणस्तद्भूताः–समीहितार्थसम्पादनलब्धियुक्तत्वेन तदुपमाः, 'परवाइयपमद्दण'त्ति तन्मतप्रमर्दनात् 'परवाईहिं अणोक्कंता इत्यादि चोद्दसपुव्वी'त्यन्तं वाचनान्तरं, तत्र अनुपक्रान्ता–अनिराकृता इत्यर्थः, 'अण्णउत्थिएहिं'ति अन्ययूथिकैः–परतीर्थिकैः 'अणोद्धंसिज्जमाण'त्ति अनुपध्वस्यमानाः माहात्म्यादपात्यमानाः, विहरन्ति–विचरन्ति, 'अप्पेगइया आयारधरे'त्येवमादीनि षोडश विशेषणानि सुगमानि, नवरं सूत्रकृतधरा इत्यस्य प्राक्तनाङ्गधरणाविनाभूतत्वेऽपि तस्यातिशयेन धरणात्सूत्रकृतधरा इत्याद्युक्तम्, अत एव विपाकश्रुतधरोक्तावपि एकादशाङ्गविद इत्युक्तम्, अथवा विदेर्विचारणार्थत्वादेकादशाङ्गविचारकाः, नवपूर्व्यादिग्रहणं तु तेषां सातिशयत्वेन प्राधान्यख्यापनार्थमिति, चतुर्दशपूर्वित्वे सत्यपि द्वादशाङ्गित्वं केषाञ्चिन्न स्याच्चतुर्दशपूर्वाणां द्वादशाङ्गस्यांशभूतत्वात्, अत आह–'दुवालसंगिणो'त्ति, तथा द्वादशाङ्गित्वेऽपि न समस्तश्रुतधरत्वं केषाञ्चित्स्यादित्यत आह–'समत्तगणिपिडगधरा' गणीनाम्–अर्थपरिच्छेदानां पिटकमिव पिटकं–स्थानं गणिपिटकम्, अथवा पिटकमिव बालङ्गकवाणिजकसर्वस्वाधारभाजनविशेष इव यत्तत्पिटकं, गणिन–आचार्यस्य पिटकं गणिपिटकं–प्रकीर्णकश्रुतादेशश्रुतनिर्युक्त्यादियुक्तं जिनप्रवचनं, समस्तम्–अनन्तगमपर्यायोपेतं गणिपिटकं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१६]

दीप अनुक्रम [१६]

धारयन्ति ये ते तथा, अत एव 'सव्वक्खरसण्णिवाइणो'त्ति सर्वे अक्षरसन्निपाताः—वर्णसंयोगा ज्ञेयतया विद्यन्ते येषां ते तथा, 'सव्वभासाणुगामिणो'त्ति सर्वभाषाः—आर्यानार्यामरवाचः अनुगच्छन्ति—अनुकुर्वन्ति तद्भाषाभाषित्वात् स्वभाषयैव वा लब्धिविशेषात्तथाविधप्रत्ययजननात्, अथवा सर्वभाषाः—संस्कृतप्राकृतमागध्याद्या अनुगमयन्ति—व्याख्यान्तीत्येवंशीला ये ते तथा, 'अजिण'त्ति असर्वज्ञाः सन्तो जिनसङ्काशाः, जिना इवावितथं व्याकुर्वाणाः ॥ १६ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी बहवे अणगारा भगवंतो इरिआसमिआ भासासमिआ एसणासमिआ आदाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिआ उच्चारपासवणखेलसिंघाणजल्लपारिट्ठावणियासमिआ मणगुत्ता वयगुत्ता कायगुत्ता गुत्ता गुत्तिंदिया गुत्तबंभयारी अममा अकिंचणा छिण्णग्गंथा छिण्णसोआ निरुवलेवा कंसपातीव मुक्कतोआ संख इव निरंगणा जीवो विव अप्पडिहयगती जच्चकणगंपिव जातरूवा आदरिसफलगाविव पागडभावा कुम्मो इव गुत्तिंदिआ पुक्खरपत्तं व निरुवलेवा गगणमिव निरालंबणा अणिलो इव निरालया चंद इव सोमलेसा सूर इव दित्ततेआ सागरो इव गंभीरा विहग इव सव्वओ विप्पमुक्का मंदर इव अप्पकंपा सारयसलिलं व सुद्धहिअया खग्गिविसाणं व एगजाया भारंडपक्खी व अप्पमत्ता कुंजरो इव सोंडीरा वसभो इव जायत्थामा सीहो इव दुद्धरिसा वसुंधरा इव सव्वफासविसहा सुहअहुआसणे इव तेअसा जलंता

१ वृत्त्यभिप्रायेण अगन्था ।

॥ ३४ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं --(केवलज्ञानप्राप्तिः योग्य अनगारस्य गुण-वर्णनं)

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१७]

दीप अनुक्रम [१७]

'तेणं कालेण'मित्यादि गमान्तरं व्यक्तं च, नवरं समितिसूत्रे 'आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिय'त्ति आदाने–ग्रहणे उपकरणस्येति गम्यते, भाण्डमात्रायाः–वस्त्राद्युपकरणरूपपरिच्छदस्य, भाण्डमात्रस्य वोपकरणस्यैव, अथवा भाण्डस्य–वस्त्रादेर्मृन्मयभाजनस्य वा मात्रस्य च–पात्रविशेषस्य निक्षेपणायां–विमोचने ये समिताः–सुप्रत्युपेक्षितादिक्रमेण सम्यक् प्रवृत्तास्ते तथा, 'उच्चारपासवणखेलसिंघाणजल्लपारिट्ठावणियासमिया' पुरीषमूत्रनिष्ठीवननासिकाश्लेष्ममलपरित्यागे समिता इति शुद्धस्थण्डिलाश्रयणात्, 'मणगुत्ते'त्यादि पदत्रयं कण्ठ्यम्, अत एव 'गुत्ता' सर्वथा गुप्तत्वात् 'गुत्तिंदिय'त्ति शब्दादिषु रागादिरहिता इत्यर्थः, अथवा 'गुत्तागुत्तिंदिय'त्ति गुप्तानि शब्दादिषु रागादिनिरोधाद् अगुप्तानि च आगमश्रवणेर्यासमित्यादिष्वनिरोधादिन्द्रियाणि येषां ते तथा, 'गुत्तबंभयारि'त्ति गुप्तं–वसत्यादिगुप्तिमद्ब्रह्म–मैथुनविरतिं चरन्ति–आसेवन्त इत्येवंशीलाः गुप्तब्रह्मचारिणः, 'अमम'त्ति आभिष्वङ्गिकममेतिशब्दवर्जाः 'अकिंचन'त्ति निर्द्रव्याः (ग्रन्थाग्रम् १०००) वाचनान्तरे 'अकोहे'त्यादीन्येकादश पदानि दृश्यन्ते, तत्र 'अकोहे'त्यादि ४ प्रतीतानि, अत एव 'संत'त्ति शान्ता अन्तर्वृत्त्या 'पसंत'त्ति प्रशान्ताः बहिर्वृत्त्या 'उवसंत'त्ति उपशान्ता उभयतः, अथवा मनःप्रभृत्यपेक्षया शान्तादीनि पदानि, अथवा श्रान्ता भवभ्रमणात् प्रशान्ताः प्रकृष्टचित्तत्वात् उपशान्ता–निवृत्ताः पापेभ्य, अथवा प्रशमप्रकर्षाभिधानायैकार्थं पदत्रयमिदम्, अत एव 'परिनिव्वुआ' सकलसन्तापवर्जिताः 'अणासव'त्ति अनाश्रवाः–अविद्यमानपापकर्मबन्धाः 'अगंथ'त्ति अविद्यमानहिरण्यादिग्रन्थाः 'छिन्नसोअ'त्ति छिन्नशोकाश्छिन्नश्रोतसो वा, छिन्नसंसारप्रवाहा इत्यर्थः, 'निरुवलेव'त्ति उपलिप्यते अनेनेत्युपलेपस्तद्रहिताः, कर्मबन्धहेतुवर्जिता इत्यर्थः, अथ निरुपलेपतामेवोपमानैराह–वक्ष्यमा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं --(केवलज्ञानप्राप्तिः योग्य अनगारस्य गुण-वर्णनं)

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१७]

दीप अनुक्रम [१७]

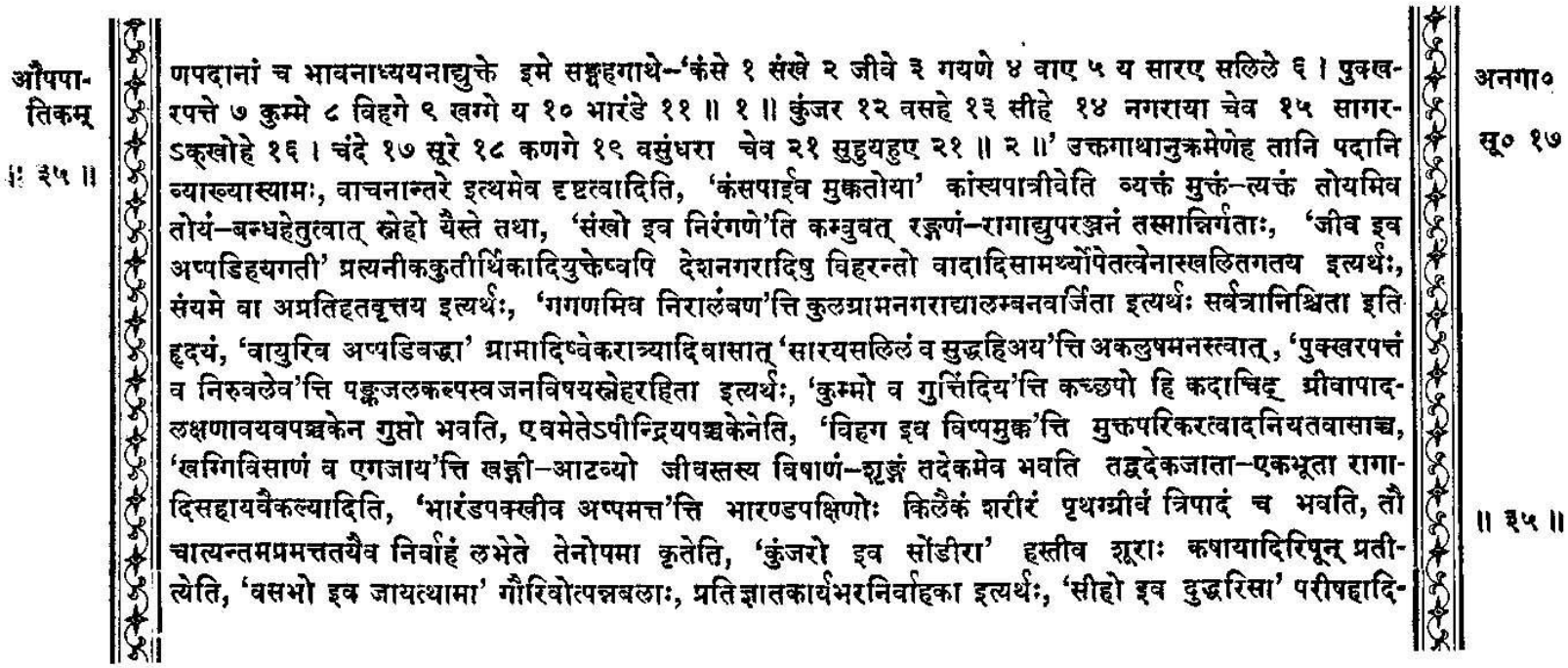

औपपातिकम् ॥ ३५ ॥

णपदानां च भावनाध्ययनाद्युक्ते इमे सङ्ग्रहगाथे–'कंसे १ संखे २ जीवे ३ गयणे ४ वाए ५ य सारए सलिले ६ । पुक्खरपत्ते ७ कुम्मे ८ विहगे ९ खग्गे य १० भारंडे ११ ॥ १ ॥ कुंजर १२ वसहे १३ सीहे १४ नगराया चेव १५ सागरऽक्खोहे १६ । चंदे १७ सूरे १८ कणगे १९ वसुंधरा चेव २१ सुहुयहुए २१ ॥ २ ॥' उक्तगाथानुक्रमेणेह तानि पदानि व्याख्यास्यामः, वाचनान्तरे इत्थमेव दृष्टत्वादिति, 'कंसपाईव मुक्कतोया' कांस्यपात्रीवेति व्यक्तं मुक्तं–त्यक्तं तोयमिव तोयं–बन्धहेतुत्वात् स्नेहो यैस्ते तथा, 'संखो इव निरंगणे'ति कम्बुवत् रङ्गणं–रागाद्युपरञ्जनं तस्मान्निर्गताः, 'जीव इव अप्पडिहयगती' प्रत्यनीककुतीर्थिकादियुक्तेष्वपि देशनगरादिषु विहरन्तो वादादिसामर्थ्योपेतत्वेनास्खलितगतय इत्यर्थः, संयमे वा अप्रतिहतवृत्तय इत्यर्थः, 'गगणमिव निरालंबण'त्ति कुलग्रामनगराद्यालम्बनवर्जिता इत्यर्थः सर्वत्रानिश्रिता इति हृदयं, 'वायुरिव अप्पडिबद्धा' ग्रामादिष्वेकरात्र्यादिवासात् 'सारयसलिलं व सुद्धहिअय'त्ति अकलुषमनस्त्वात्, 'पुक्खरपत्तं व निरुवलेव'त्ति पङ्कजलकल्पस्वजनविषयस्नेहरहिता इत्यर्थः, 'कुम्मो व गुत्तिंदिय'त्ति कच्छपो हि कदाचिद् ग्रीवापादलक्षणावयवपञ्चकेन गुप्तो भवति, एवमेतेऽपीन्द्रियपञ्चकेनेति, 'विहग इव विप्पमुक्क'त्ति मुक्तपरिकरत्वादनियतवासाच्च, 'खग्गिविसाणं व एगजाय'त्ति खड्गी–आटव्यो जीवस्तस्य विषाणं–शृङ्गं तदेकमेव भवति तद्वदेकजाता–एकभूता रागादिसहायवैकल्यादिति, 'भारंडपक्खीव अप्पमत्त'त्ति भारण्डपक्षिणोः किलैकं शरीरं पृथग्ग्रीवं त्रिपादं च भवति, तौ चात्यन्तमप्रमत्ततयैव निर्वाहं लभेते तेनोपमा कृतेति, 'कुंजरो इव सोंडीरा' हस्तीव शूराः कषायादिरिपून् प्रतीत्येति, 'वसभो इव जायत्थामा' गौरिवोत्पन्नबलाः, प्रतिज्ञातकार्यभरनिर्वाहका इत्यर्थः, 'सीहो इव दुद्धरिसा' परीषहादि-

अनगा० सू० १७

॥ ३५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं --(केवलज्ञानप्राप्तिः योग्य अनगारस्य गुण-वर्णनं)

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१७]

दीप अनुक्रम [१७]

मृगैरनभिभवनीया इत्यर्थः, 'मंदरो इव अप्पकंप'त्ति मेरुरिवानुकूलोपसर्गवायुभिरविचलितसत्त्वाः, 'सागरो इव गंभीर'त्ति हर्षशोकादिकारणसम्पर्केऽप्यविकृतचित्ताः, 'चंदो इव सोमलेस्स'त्ति अनुपतापहेतुमनःपरिणामाः, 'सूरो इव दित्ततेअ'त्ति दीप्ततेजसो द्रव्यतः शरीरदीप्त्या भावतो ज्ञानेन, 'जच्चकणगमिव जायरूवा' जातं–लब्धं रूपं–स्वरूपं रागादिकुद्रव्यविरहात् यैस्ते जातरूपाः, 'वसुंधरा इव सव्वफासविसह'त्ति स्पर्शाः–शीतोष्णादयो अनुकूलेतराः परीषहास्तान् सर्वान् विषहन्ते ये ते तथा, 'सुहुअहुआसणो इव तेअसा जलंता' सुष्ठु हुतं–क्षिप्तं घृतादि यत्र हुताशने–वह्नौ स तथा, तद्वत्तेजसा–ज्ञानरूपेण तपोरूपेण च ज्वलन्तो–दीप्यमानाः, पुस्तकान्तरे विशेषणानि सर्वाण्येतानीदं चाधिकम्–'आदरिसफलगा इव पायडभावा' आदर्शफलकानीव–पट्टिका इव प्रतले विस्तीर्णत्वादादर्शफलकानि तानीव प्रकटा–यथावदुपलभ्यमानस्वभावा भावा–आदर्शपक्षे नयनमुखादिधर्माः साधुपक्षे अशठतया मनःपरिणामाः येषु ते प्रकटभावाः ।

नत्थि णं तेसि णं भगवंताणं कत्थइ पडिबंधे भवइ, से अ पडिबंधे चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा–दव्वओ खित्तओ कालओ भावओ, दव्वओ णं सचित्ताचित्तमीसिएसु दव्वेसु, खेत्तओ गामे वा णयरे वा रण्णे वा खेत्ते वा खले वा घरे वा अंगणे वा, कालओ समए वा आवलियाए वा जाव अयणे वा अण्णतरे वा दीहकालसंजोगे, भावओ कोहे वा माणे वा मायाए वा लोहे वा भए वा हासे वा एवं तेसिं ण भवइ । ते णं भगवंतो वासावासवज्जं अट्ठ गिम्हहेमंतिआणि मासाणि गामे एगराइआ णयरे पंचराइआ वासीचंदण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं --(केवलज्ञानप्राप्तिः योग्य अनगारस्य गुण-वर्णनं)

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१७]

दीप अनुक्रम [१७]

समाणकप्पा समलेट्ठुकंचणा समसुहदुक्खा इहलोगपरलोगअप्पडिबद्धा संसारपारगामी कम्मणिग्घायणट्ठाए अब्भुट्ठिआ विहरंति ॥ (सू० १७) ॥

'नत्थी' त्यादि, नास्ति तेषां भगवतामयं पक्षो यदुत कुत्रचिदपि प्रतिबन्धो भवतीति, तद्यथा–द्रव्यतः ४, द्रव्यतः सचित्तादिषु ३, क्षेत्रतो ग्रामादिषु ७, तत्र क्षेत्रं–धान्यजन्मभूमिः खलं–धान्यमलनपवनादिस्थण्डिलं, शेषाणि व्यक्तानि, कालतः समयादिषु, तत्र समयः–सर्वनिकृष्टः कालः, आवलिका–असङ्ख्यातसमया यावत्करणादिदं दृश्यम्–'आणापाणू वा' उच्छ्वासनिःश्वासकाल इत्यर्थः, 'थोवे वा' सप्तप्राणमाने 'लवे वा' सप्तस्तोकमाने 'मुहुत्ते वा' लवसप्तसप्ततिमाने अहोरात्रपक्षमासाः प्रतीताः, 'अयणं' दक्षिणायनमितरच्च, अन्यतरे वा 'दीहकालसंजोए'त्ति वर्षशतादौ, भावतः क्रोधादिषु ६, 'एवं तेसिं न भवइ'त्ति एवम्–अमुना प्रकारेण तेषां न भवति प्रतिबन्ध इति प्रकृतम्, 'वासावासवज्जं'ति वर्षासु–प्रावृषि वासो–निवासस्तद्वर्जमित्यर्थः, 'गामे एगराइय'त्ति एकरात्रो वासमानतया अस्ति येषां ते एकरात्रिकाः, एवं नगरे पञ्चरात्रिका इति, एतच्च प्रतिमाकल्पिकानाश्रित्योक्तम्, अन्येषां मासकल्पविहारित्वादिति, 'वासीचंदणसमाणकप्प'त्ति वासीचन्दनयोः प्रतीतयोरथवा वासीचन्दने इव वासीचन्दने–अपकारकोपकारकौ तयोः समानो–निर्द्वेषरागत्वात्समः कल्पो–विकल्पः समाचारो वा येषां ते वासीचन्दनसमानकल्पाः, 'समलेट्ठुकंचण'त्ति समे–तुल्ये उपेक्षणीयत्वाल्लेष्टुकाञ्चने येषां ते तथा, 'समसुखे' त्यादि 'विहरंती' त्येतदन्तं व्यक्तं, वाचनान्तरे पुनः 'तंजहा' इत्यतः परं गमान्तं यावदिदं पठ्यते–'अंडए इ वा' अण्डजो–हंसादिः अण्डकं वा–मयूराण्डकादिः क्रीडादिमयूरादिहेतुरिति वा प्रतिबन्धः स्यात्, सप्तम्येकवचनान्तं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं --(केवलज्ञानप्राप्तिः योग्य अनगारस्य गुण-वर्णनं)

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१७]

दीप अनुक्रम [१७]

चेदं व्याख्येयम्, इकारस्तु प्राकृतप्रभवः, 'पोयए इ वा' पोतजो–हस्त्यादिः, पोतको वा शिशुरिति वा प्रतिबन्धः स्यात्, 'अंडजे इ वा' बोंडजे इ वे' त्यत्र पाठान्तरे अण्डजं–वस्त्रं कोशिकारकीटाण्डकप्रभवं बोण्डजं–कर्पासीफलप्रभवं वस्त्रमेव, 'उग्गहिए इ वा' अवगृहीतं–परिवेषणार्थमुत्पाटितं भक्तपानं 'पग्गहिए वा' प्रगृहीतं भोजनार्थमुत्पाटितं तदेव, अथवा अवग्रहिकं–अवग्रहोऽस्यास्तीत्यवग्रहिकं–वसतिपीठफलकादिकं औपग्रहिकं वा दण्डकादिकमुपधिजातं, प्रगृहीतं तु प्रकर्षेण गृहीतत्वादौधिकमिति, 'जण्णं जण्णं दिसं'ति णङ्कारस्य वाक्यालङ्कारार्थत्वाद्यां यां दिशमिच्छन्ति विहर्तुमिति शेषः, 'तं णं तं णं'ति तां तां दिशं विहरन्तीति योगः, 'सुइभूय'त्ति शुचिभूताः–भावशुद्धिमन्तः श्रुतिभूता वा–प्राप्तसिद्धान्ताः, 'लघुभूय'त्ति अल्पोपधितया गौरवत्यागाच्च, अथवा लघुभूतो वायुस्तद्वत् ये सततविहारास्ते लघुभूताः, 'अणप्पगंथा' अनल्पग्रन्थाः–बह्वागमाः अविद्यमानो वा आत्मनः सम्बन्धी ग्रन्थो–हिरण्यादिर्येषां ते तथा, अनर्घ्यग्रन्था वा भावधनयुक्ता इत्यर्थः ॥ १७ ॥

तेसि णं भगवंताणं एतेणं विहारेणं विहरमाणाणं इमे एआरूवे अब्भिंतरबाहिरए तवोवहाणे होत्था, तंजहा–अब्भिंतरए छव्विहे बाहिरएवि छव्विहे ॥ (सू० १८) ॥

अथ साधुवर्णकः प्रकारान्तरेणोच्यते–स च 'तेसि ण'मित्यादि से तं भावविउस्सग्गे' इत्येतदन्तः अनशनादितपोभेदप्रतिपादनपरः सुगम एव, नवरं वाचनान्तरे 'जायामायावित्ति'त्ति संयमयात्रामात्रार्थं वृत्तिः–भक्तग्रहणं यात्रामात्रावृत्तिः 'अदुचरं व'त्ति अथापरं पुनरित्यर्थः। तथाऽधिकृतवाचनायाम् 'अब्भिंतरए'त्ति अभ्यन्तरम्–आन्तरस्यैव शरी-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं --(केवलज्ञानप्राप्तिः योग्य अनगारस्य गुण-वर्णनं)

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१८]

दीप अनुक्रम [१८]

रस्य तापनात्सम्यग्दृष्टिभिरेव तपस्तया प्रतीयमानत्वाच्च, 'बाहिरए'त्ति बाह्यस्यैव शरीरस्य तापनान्मिथ्यादृष्टिभिरपि तपस्तया प्रतीयमानत्वाच्चेति ॥ १८ ॥

से किं तं बाहिरए ? २ छव्विहे, तंजहा–अणसणे ऊणो (अवमो) अरिया भिक्खाअरिया रसपरिच्चाए कायकिलेसे पडिसंलीणया । से किं तं अणसणे ?, २ दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–इत्तरिए अ आवकहिए अ । से किं तं इत्तरिए ?, २ अणेगविहे पण्णत्ते, तंजहा–चउत्थभत्ते छट्ठभत्ते अट्ठमभत्ते दसमभत्ते बारसभत्ते चउद्दसभत्ते सोलसभत्ते अद्धमासिए भत्ते मासिए भत्ते दोमासिए भत्ते तेमासिए भत्ते चउमासिए भत्ते पंचमासिए भत्ते छम्मासिए भत्ते, से तं इत्तरिए । से किं तं आवकहिए ?, २ दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–पाओवगमणे अ भत्तपच्चक्खाणे अ । से किं तं पाओवगमणे ?, २ दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–वाघाइमे अ निव्वाघाइमे अ नियमा अप्पडिकम्मे, से तं पाओवगमणे । से किं तं भत्तपच्चक्खाणे ?, २ दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–वाघाइमे अ निव्वाघाइमे अ णियमा सप्पडिकम्मे, से तं भत्तपच्चक्खाणे, से तं अणसणे ।

'अणसणे'त्ति भोजननिवृत्तिः, तच्चेत्कर्तुं न शक्नोति तदा किं कार्यमित्याह–'अवमोयरिअ'त्ति अवमोदरस्य करणमवमोदरिका–ऊनोदरतेत्यर्थः, उपलक्षणत्वाच्चास्य न्यूनोपधिताऽपीह दृश्येति, तत्राशक्तस्य यत्कार्यं तदाह–'भिक्खायरिय'त्ति वृत्तिसंक्षेप इत्यर्थः, तत्राप्यशक्तस्य यत्कार्यं तदाह–'रसपरिच्चाए'त्ति, तत्राप्यशक्तस्य यत्तदाह–'कायकिलेसे', तत्रापि यत्तदाह–'पडिसंलीणय'त्ति, 'इत्तरिए'त्ति इत्वरम्–अल्पकालिकमेकोपवासादि षण्मासान्तम् 'आवकहिए' त्ति यावती चासौ

॥ ३७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तपसः बाह्य-अभ्यंतर भेदाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१९]

दीप अनुक्रम [१९]

कथा च–मनुष्योऽयमितिव्यपदेशरूपा यावत्कथा तस्यां भवं यावत्कथिकं–यावज्जीविकमित्यर्थः, 'पाओवगमणे'त्ति पादपस्येवोपगमनम्–अस्पन्दतयाऽवस्थानं पादपोपगमनं 'वाघाइमे अ'त्ति व्याघातवत्–सिंहदावानलाद्यभिभूतो यत् प्रतिपद्यते 'निव्वाघाइमे अ'त्ति व्याघातविरहितं ।

से किं तं ओमोअरिआओ ?, २ दुविहा पण्णत्ता, तंजहा–दव्वोमोअरिआ य भावोमोअरिआ य, से किं तं दव्वोमोअरिआ ?, २ दुविहा पण्णत्ता, तंजहा–उवगरणदव्वोमोअरिआ य भत्तपाणदव्वोमोअरिआ य। से किं तं उवगरणदव्वोमोअरिआ ?, २ तिविहा पण्णत्ता, तंजहा–एगे वत्थे एगे पाए चियत्तोवकरणसातिज्जणया, से तं उवगरणदव्वोमोअरिआ । से किं तं भत्तपाणदव्वोमोअरिआ ?, २ अणेगविहा पण्णत्ता, तंजहा–अट्ठकुक्कुडिअंडगप्पमाणमेत्ते कवले आहारमाणे अप्पाहारे, दुवालसकुक्कुडिअंडगप्पमाणमेत्ते कवले आहारमाणे अवड्ढोमोअरिआ, सोलसकुक्कुडिअंडगप्पमाणमेत्ते कवले आहारमाणे दुभागपत्तोमोअरिआ, चउव्वीसकुक्कुडिअंडगप्पमाणमेत्ते कवले आहारमाणे पत्तोमोअरिआ, एक्कतीसकुक्कुडिअंडगप्पमाणमेत्ते कवले आहारमाणे किंचूणोमोअरिआ, बत्तीसकुक्कुडिअंडगप्पमाणमेत्ते कवले आहारमाणे पमाणपत्ता, एत्तो एगेणवि घासेण ऊणयं आहारमाहारेमाणे समणे णिग्गंथे णो पकामरसभोईत्ति वत्तव्वं सिआ, से तं भत्तपाणदव्वोमोअरिआ, से तं दव्वोमोअरिआ। से किं तं भावोमोअरिआ ?, २ अणेगविहा पण्णत्ता, तंजहा–अप्पकोहे अप्पमाणे अप्पमाए अप्पलोहे अप्पसद्दे अप्पझंझे, से तं भावोमोअरिआ, से तं ओमोअरिआ । से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तपसः बाह्य-अभ्यंतर भेदाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१९]

दीप अनुक्रम [१९]

औपपातिकम् ॥ ३८ ॥

किं तं भिक्खायरिया ?, २ अणेगविहा पण्णत्ता, तंजहा–दव्वाभिग्गहचरए खेत्ताभिग्गहचरए कालाभिग्गहचरए भावाभिग्गहचरए उक्खित्तचरए णिक्खित्तचरए उक्खित्तणिक्खित्तचरए णिक्खित्तउक्खित्तचरए वट्टिज्जमाणचरए साहरिज्जमाणचरए उवणीअचरए अवणीअचरए उवणीअअवणीअचरए अवणीअउवणीअचरए संसट्ठचरए असंसट्ठचरए तज्जातसंसट्ठचरए अण्णायचरए मोणचरए दिट्ठलाभिए अदिट्ठलाभिए पुट्ठलाभिए अपुट्ठलाभिए भिक्खालाभिए अभिक्खलाभिए अण्णगिलायए ओवणिहिए परिमितपिंडवाइए सुद्धेसणिए संखादत्तिए, से तं भिक्खायरिया ।

'चियत्तोवगरणसाइज्जणय'त्ति चियत्तं–प्रीतिकरं त्यक्तं वा दोषैर्यदुपकरणं–वस्त्रपात्रव्यतिरिक्तं वस्त्रपात्रमेव वा तस्य या श्रयणीयता स्वदनीयता वा सा तथा, 'अप्पाहारे'त्ति द्वात्रिंशत्कवलापेक्षया अष्टानामल्पत्वात्, 'अवड्ढोमोयरिय'त्ति द्वात्रिंशतोऽर्द्धं षोडश, एवं च द्वादशानामर्द्धसमीपवर्तित्वादुपार्द्धाऽवमोदरिका द्वादशभिरिति, 'दुभागोमोयरिय'त्ति द्वात्रिंशतः षोडश द्विभागोऽर्द्धमित्यर्थः, ततः षोडशकवलमाना द्विभागावमोदरिकेत्युच्यते, 'पत्तोमोयरिय'त्ति चतुर्विंशतेः कवलानां द्वात्रिंशद्द्वितीयार्द्धस्य मध्यभागं प्राप्तत्वाच्चतुर्विंशत्या कवलैः प्राप्तावमोदरिकेत्युते, अथवा प्राप्तेव प्राप्ता द्वात्रिंशतस्त्रयाणां भागानां प्राप्तत्वाच्चतुर्थभागस्य चाप्राप्तत्वादिति, 'किंचूणूमोयरिय'त्ति एकत्रिंशतो द्वात्रिंशत एकेनोनत्वात्, 'पमाणपत्ते'त्ति द्वात्रिंशता कवलैः प्राप्तप्रमाणो भवति साधुर्न न्यूनोदर इति, 'एत्तो'त्ति इतो द्वात्रिंशत्कवलमानादेकेनापि 'घासेणं'ति ग्रासेन 'णो पकामरसभोई'त्ति वत्तव्वं सिया' इति नात्यर्थमन्नभोक्तेति वाच्यं स्यादिति, 'अप्पसद्दे'त्ति

बाह्यत० सू० १९

॥ ३८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तपसः बाह्य-अभ्यंतर भेदाः

प्रत सूत्रांक [१९] दीप अनुक्रम [१९]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

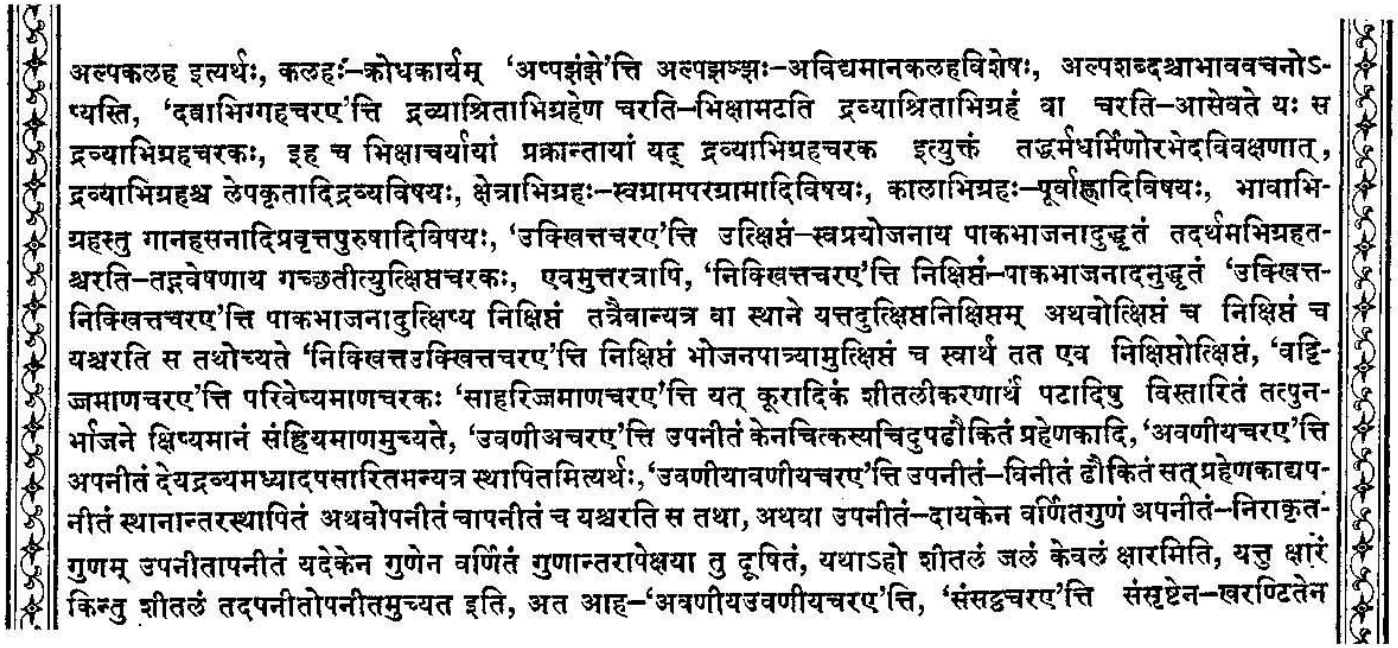

अल्पकलह इत्यर्थः, कलहः–क्रोधकार्यम् 'अप्पझंझे'त्ति अल्पझञ्झः–अविद्यमानकलहविशेषः, अल्पशब्दश्चाभाववचनोऽस्यस्ति, 'दव्वाभिग्गहचरए'त्ति द्रव्याश्रिताभिग्रहेण चरति–भिक्षामटति द्रव्याश्रिताभिग्रहं वा चरति–आसेवते यः स द्रव्याभिग्रहचरकः, इह च भिक्षाचर्यायां प्रक्रान्तायां यद् द्रव्याभिग्रहचरक इत्युक्तं तद्धर्मधर्मिणोरभेदविवक्षणात्, द्रव्याभिग्रहश्च लेपकृतादिद्रव्यविषयः, क्षेत्राभिग्रहः–स्वग्रामपरग्रामादिविषयः, कालाभिग्रहः–पूर्वाह्णादिविषयः, भावाभिग्रहस्तु गानहसनादिप्रवृत्तपुरुषादिविषयः, 'उक्खित्तचरए'त्ति उत्क्षिप्तं–स्वप्रयोजनाय पाकभाजनादुद्धृतं तदर्थमभिग्रहतश्चरति–तद्गवेषणाय गच्छतीत्युत्क्षिप्तचरकः, एवमुत्तरत्रापि, 'निक्खित्तचरए'त्ति निक्षिप्तं–पाकभाजनादनुद्धृतं 'उक्खित्तनिक्खित्तचरए'त्ति पाकभाजनादुत्क्षिप्य निक्षिप्तं तत्रैवान्यत्र वा स्थाने यत्तदुत्क्षिप्तनिक्षिप्तम् अथवोत्क्षिप्तं च निक्षिप्तं च यश्चरति स तथोच्यते 'निक्खित्तउक्खित्तचरए'त्ति निक्षिप्तं भोजनपात्र्यामुत्क्षिप्तं च स्वार्थं तत एव निक्षिप्तोत्क्षिप्तं, 'वट्टिज्जमाणचरए'त्ति परिवेष्यमाणचरकः 'साहरिज्जमाणचरए'त्ति यत् कूरादिकं शीतलीकरणार्थं पटादिषु विस्तारितं तत्पुनर्भाजने क्षिप्यमानं संह्रियमाणमुच्यते, 'उवणीअचरए'त्ति उपनीतं केनचित्कस्यचिदुपढौकितं प्रहेणकादि, 'अवणीयचरए'त्ति अपनीतं देयद्रव्यमध्यादपसारितमन्यत्र स्थापितमित्यर्थः, 'उवणीयावणीयचरए'त्ति उपनीतं–विनीतं ढौकितं सत् प्रहेणकाद्यपनीतं स्थानान्तरस्थापितं अथवोपनीतं चापनीतं च यश्चरति स तथा, अथवा उपनीतं–दायकेन वर्णितगुणं अपनीतं–निराकृतगुणम् उपनीतापनीतं यदेकेन गुणेन वर्णितं गुणान्तरापेक्षया तु दूषितं, यथाऽहो शीतलं जलं केवलं क्षारमिति, यत्तु क्षारं किन्तु शीतलं तदपनीतोपनीतमुच्यत इति, अत आह–'अवणीयउवणीयचरए'त्ति, 'संसट्ठचरए'त्ति संसृष्टेन–खरण्टितेन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	तपसः बाह्य-अभ्यंतर भेदाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१९]

दीप अनुक्रम [१९]

हस्तादिना दीयमानं संसृष्टमुच्यते तच्चरति यः स तथा, 'असंसट्ठचरए'त्ति उक्तविपरीतः, 'तज्जायसंसट्ठचरए'त्ति तज्जातेन देयद्रव्याविरोधिना यत् संसृष्टं हस्तादि तेन दीयमानं यश्चरति स तथा, 'अण्णायचरए'त्ति अज्ञातः–अनुपदर्शितस्वाजन्यादिभावः सँश्चरति यः स तथा, 'मोणचरए'त्ति व्यक्तं, 'दिट्ठलाभिय'त्ति दृष्टस्यैव भक्तादेर्दृष्टाद्वा पूर्वोपलब्धादायकालाभो यस्यास्ति स दृष्टलाभिकः, 'अदिट्ठलाभिए'त्ति तत्रादृष्टस्यापि अपवरकादिमध्यान्निर्गतस्य श्रोत्रादिभिः कृतोपयोगस्य भक्तादेरदृष्टाद्वा पूर्वमनुपलब्धादायकालाभो यस्यास्ति स तथा, 'पुट्ठलाभिए'त्ति पृष्टस्यैव हे साधो! किं ते दीयत इत्यादिप्रश्नितस्य यो लाभः स यस्यास्ति स तथा, 'अपुट्ठलाभिए'त्ति उक्तविपर्ययादिति, 'भिक्खालाभिए'त्ति भिक्षेव भिक्षा तुच्छमविज्ञातं वा तल्लाभो ग्राह्यतया यस्यास्ति स भिक्षालाभिकः, 'अभिक्खलाभिए'त्ति उक्तविपर्ययात्, 'अण्णगिलायए'त्ति अन्नं–भोजनं विना ग्लायति अन्नग्लायकः, स चाभिग्रहविशेषात् प्रातरेव दोषान्नभुगिति, 'ओवणिहिए'त्ति उपनिहितं यथा कथञ्चित् प्रत्यासन्नीभूतं तेन चरति यः स औपनिहितिकः उपनिधिना वा चरतीत्यौपनिधिकः, 'परिमियपिंडवाइए'त्ति परिमितपिण्डपातः–अर्द्धपोषादिलाभो यस्यास्ति स तथा, 'सुद्धेसणिए'त्ति शुद्धैषणा शङ्कादिदोषरहितता शुद्धस्य वा निर्व्यञ्जनस्य कूरादेरेषणा यस्यास्ति स तथा, 'संखादत्तिए'त्ति सङ्ख्याप्रधाना दत्तयो यस्य स तथा, दत्तिश्च एकक्षेपभिक्षालक्षणा ।

से किं तं रसपरिच्चाए ?, २ अणेगविहे पण्णत्ते, तंजहा–णिव्वि (य) तिए पणीअरसपरिच्चाए आयंबिलए आयामसित्थभोई अरसाहारे विरसाहारे अंताहारे पंताहारे लूहाहारे, से तं रसपरिच्चाए । से किं तं कायकिलेसे ?, २ अणेगविहे पण्णत्ते, तंजहा–ठाणट्ठितिए ठाणाइए उक्कुडुआसणिए पडिमट्ठाई वीरासणिए नेस-

॥ ३९ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तपसः बाह्य-अभ्यंतर भेदाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१९]

दीप अनुक्रम [१९]

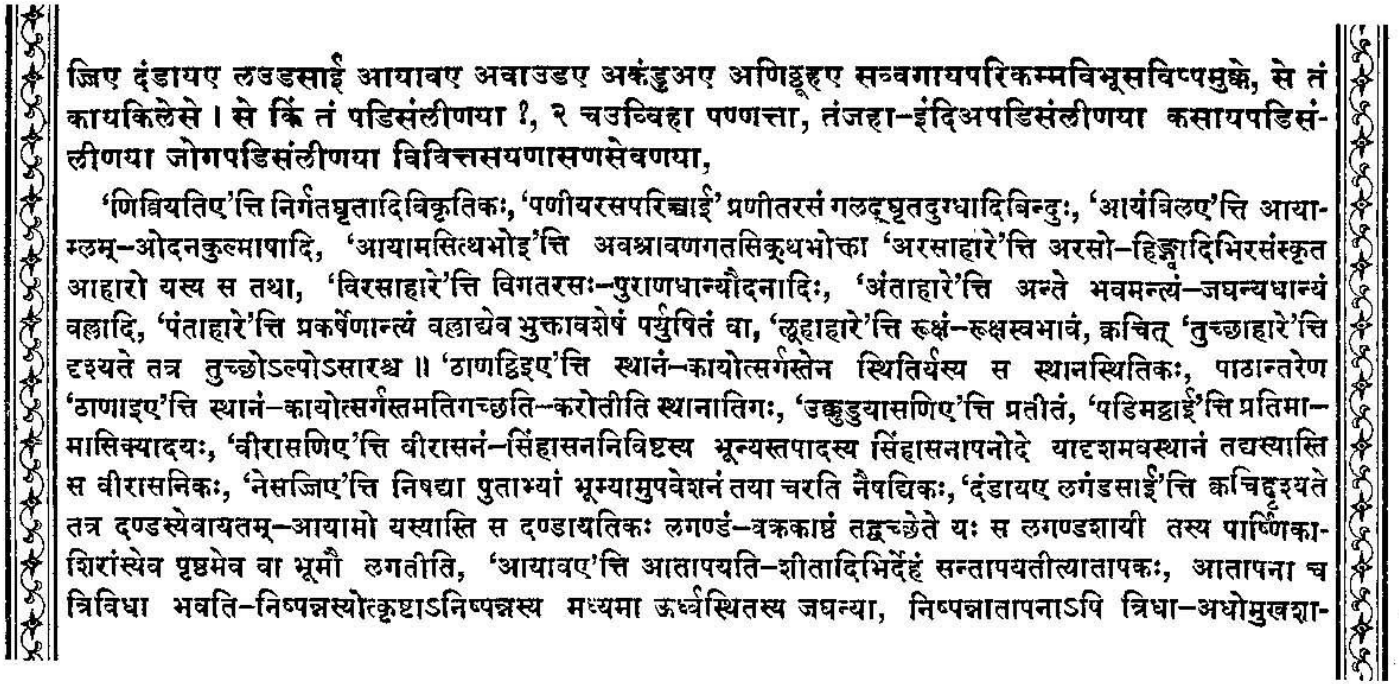

ज्जिए दंडायए लउडसाई आयावए अवाउडए अकंडुअए अणिट्ठूहए सव्वगायपरिकम्मविभूसविप्पमुक्के, से तं कायकिलेसे। से किं तं पडिसंलीणया ?, २ चउव्विहा पण्णत्ता, तंजहा–इंदिअपडिसंलीणया कसायपडिसंलीणया जोगपडिसंलीणया विवित्तसयणासणसेवणया,

'णिव्वियतिए'त्ति निर्गतघृतादिविकृतिकः, 'पणीयरसपरिच्चाई' प्रणीतरसं गलद्घृतदुग्धादिबिन्दुः, 'आयंबिलए'त्ति आयाम्लम्–ओदनकुल्माषादि, 'आयामसित्थभोइ'त्ति अवश्रावणगतसिक्थभोक्ता 'अरसाहारे'त्ति अरसो–हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृत आहारो यस्य स तथा, 'विरसाहारे'त्ति विगतरसः–पुराणधान्यौदनादिः, 'अंताहारे'त्ति अन्ते भवमन्त्यं–जघन्यधान्यं वल्लादि, 'पंताहारे'त्ति प्रकर्षेणान्त्यं वल्लाद्येव भुक्तावशेषं पर्युषितं वा, 'लूहाहारे'त्ति रूक्षं–रूक्षस्वभावं, क्वचित् 'तुच्छाहारे'त्ति दृश्यते तत्र तुच्छोऽल्पोऽसारश्च ॥ 'ठाणट्ठिइए'त्ति स्थानं–कायोत्सर्गस्तेन स्थितिर्यस्य स स्थानस्थितिकः, पाठान्तरेण 'ठाणाइए'त्ति स्थानं–कायोत्सर्गस्तमतिगच्छति–करोतीति स्थानातिगः, 'उक्कुडुयासणिए'त्ति प्रतीतं, 'पडिमट्ठाई'त्ति प्रतिमा–मासिक्यादयः, 'वीरासणिए'त्ति वीरासनं–सिंहासननिविष्टस्य भून्यस्तपादस्य सिंहासनापनोदे यादृशमवस्थानं तद्यस्यास्ति स वीरासनिकः, 'नेसज्जिए'त्ति निषद्या पुताभ्यां भूम्यामुपवेशनं तया चरति नैषद्यिकः, 'दंडायए लगंडसाई'त्ति क्वचिद्दृश्यते तत्र दण्डस्येवायतम्–आयामो यस्यास्ति स दण्डायतिकः लगण्डं–वक्रकाष्ठं तद्वच्छेते यः स लगण्डशायी तस्य पार्ष्णिकाशिरांस्येव पृष्ठमेव वा भूमौ लगतीति, 'आयावए'त्ति आतापयति–शीतादिभिर्देहं सन्तापयतीत्यातापकः, आतापना च त्रिविधा भवति–निष्पन्नस्योत्कृष्टाऽनिष्पन्नस्य मध्यमा ऊर्ध्वस्थितस्य जघन्या, निष्पन्नातापनाऽपि त्रिधा–अधोमुखशा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तपसः बाह्य-अभ्यंतर भेदाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१९]

दीप अनुक्रम [१९]

यिता १ पार्श्वशायिता २ उत्तानशायिता चेति ३, अनिष्पन्नातापनाऽपि त्रिधा–गोदोहिका उत्कुटुकासनता पर्यङ्कासनता चेति, ऊर्ध्वस्थानातापनाऽपि त्रिधैव–हस्तिशौण्डिका एकपादिका समपादिका चेति, एतेषु चातापनाभेदत्रितयेषु उत्कृष्टादित्रयं प्रत्येकं योजनीयमिति, 'अवाउडए'त्ति अप्रावृतकः प्रावरणवर्जक इत्यर्थः, अकण्डूयकानिष्ठीवकौ व्यक्तौ, 'धुयकेसमंसुलोम'त्ति क्वचिद्दृश्यते, तत्र धुतानि–निष्प्रतिकर्मतया त्यक्तानि केशश्मश्रुरोमाणि–शिरोजकूर्चकक्षादिलोमानि येन स तथा, किमुक्तं भवति ?–सर्वगात्रप्रतिकर्मविभूषाविप्रमुक्त इति ।

से किं तं इंदियपडिसंलीणया ?, २ पंचविहा पण्णत्ता, तंजहा–सोइंदियविसयपयारनिरोहो वा सोइंदियविसयपत्तेसु अत्थेसु रागदोसनिग्गहो वा चक्खिंदियविसयपयारनिरोहो वा चक्खिंदियविसयपत्तेसु अत्थेसु रागदोसनिग्गहो वा घाणिंदियविसयपयारनिरोहो वा घाणिंदियविसयपत्तेसु अत्थेसु रागदोसनिग्गहो वा जिब्भिंदियविसयपयारनिरोहो वा जिब्भिंदियविसयपत्तेसु अत्थेसु रागदोसनिग्गहो वा फासिंदियविसयपयारनिरोहो वा फासिंदियविसयपत्तेसु अत्थेसु रागदोसनिग्गहो वा, से तं इंदियपडिसंलीणया । से किं तं कसायपडिसंलीणया ?, २ चउव्विहा पण्णत्ता, तंजहा–कोहस्सुदयनिरोहो वा उदयपत्तस्स वा कोहस्स विफलीकरणं माणस्सुदयनिरोहो वा उदयपत्तस्स वा माणस्स विफलीकरणं मायाउदयणिरोहो वा उदयपत्तस्स (ताए) वा मायाए विफलीकरणं लोहस्सुदयणिरोहो वा उदयपत्तस्स वा लोहस्स विफलीकरणं, से तं कसायपडिसंलीणया । से किं तं जोगपडिसंलीणया ?, २ तिविहा पण्णत्ता,

॥ ४० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तपसः बाह्य-अभ्यंतर भेदाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१९]

दीप अनुक्रम [१९]

तंजहा–मणजोगपडिसंलीणया वयजोगपडिसंलीणया कायजोगपडिसंलीणया। से किं तं मणजोगपडिसंलीणया ?, २ अकुसलमणणिरोहो वा कुसलमणउदीरणं वा, से तं मणजोगपडिसंलीणया। से किं तं वयजोगपडिसंलीणया ?, २ अकुसलवयणिरोहो वा कुसलवयउदीरणं वा, से तं वयजोगपडिसंलीणया। से किं तं कायजोगपडिसंलीणया ?, २ जण्णं सुसमाहिअपाणिपाए कुम्मो इव गुत्तिंदिए सव्वगायपडिसंलीणे चिट्ठइ, से तं कायजोगपडिसंलीणया। से किं तं विवित्तसयणासणसेवणया ?, २ जं णं आरामेसु उज्जाणेसु देवकुलेसु सभासु पवासु पणियगिहेसु पणिअसालासु इत्थीपसुपंडगसंसत्तविरहियासु वसहीसु फासुएसणिज्जपीढफलगसेज्जासंथारगं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ, से तं पडिसंलीणया, से तं बाहिरए तवे (सू० १९)

'सोइंदियविसयप्पयारनिरोहो व'त्ति श्रोत्रेन्द्रियस्य विषये–शब्दे प्रचारस्य–प्रवृत्तेर्निरोधो–निषेधः श्रोत्रेन्द्रियविषयप्रचारनिरोधः, स च 'सोइंदियविसयपत्तेसु अत्थेसु'त्ति श्रोत्रेन्द्रियगोचरप्राप्तेष्वर्थेषु–शब्देषु कर्णप्रविष्टेष्वित्यर्थः, 'आरामेसु'त्ति पुष्पप्रधानवनेषु 'उज्जाणेसु'त्ति पुष्पफलोपेतादिमहावृक्षसमुदायरूपेषु 'सभासु'त्ति जनोपवेशनस्थानेषु 'पवासु'त्ति जलदानस्थानेषु 'पणियगिहेसु'त्ति भाण्डनिक्षेपार्थगृहेषु 'पणियसालासु'त्ति बहुग्राहकदायकजनोचितेषु गेहविशेषेषु, शय्या यत्र प्रसारितपादैः सुप्यते, संस्तारकस्तु ततो हीनः॥ १९॥

से किं तं अब्भिंतरए तवे? २ छव्विहे पण्णत्ते, तंजहा–पायच्छित्तं विणओ वेयावच्चं सज्झाओ झाणं विउस्सग्गो। से किं तं पायच्छित्ते ?, २ दसविहे पण्णत्ते, तंजहा–आलोअणारिहे पडिक्कमणारिहे तदुभयारिहे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तपसः बाह्य-अभ्यंतर भेदाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२०]

दीप अनुक्रम [२०]

विवेगारिहे विउस्सग्गारिहे तवारिहे छेदारिहे मूलारिहे अणवट्ठप्पारिहे पारंचिआरिहे, से तं पायच्छित्ते । से किं तं विणए ?, २ सत्तविहे पण्णत्ते, तंजहा–णाणविणए दंसणविणए चरित्तविणए मणविणए वइविणए कायविणए लोगोवयारविणए । से किं तं णाणविणए ?, २ पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा–आभिणिबोहियणाणविणए सुअणाणविणए ओहिणाणविणए मणपज्जवणाणविणए केवलणाणविणए । से किं तं दंसणविणए ?, २ दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–सुस्सुसणाविणए अणच्चासायणाविणए । से किं तं सुस्सुसणाविणए ?, २ अणेगविहे पण्णत्ते, तंजहा–अब्भुट्ठाणे इ वा आसणाभिग्गहे इ वा आसणप्पदाणे इ वा सक्कारे इ वा सम्माणे इ वा किइकम्मे इ वा अंजलिपग्गहे इ वा एंतस्स अणुगच्छणया ठिअस्स पज्जुवासणया गच्छंतस्स पडिसंसाहणया, से तं सुस्सुसणाविणए ।

'पायच्छित्तं'ति अतिचारविशुद्धिः, सा च वन्दनादिना विनयेन विधीयत इत्यत आह–'विणओ'त्ति कर्मविनयनहेतुर्व्यापारविशेषः, तद्वानेव च वैयावृत्त्ये वर्तत इत्यत आह–'वेयावच्चं'ति भक्तादिभिरुपष्टम्भः, वैयावृत्त्यान्तराले च स्वाध्यायो विधेय इत्यत आह–'सज्झाओ'त्ति शोभनो मर्यादया पाठ इत्यर्थः, तत्र च ध्यानं भवतीत्याह–'झाणं'ति, शुभध्यानादेव हेयत्यागो भवतीत्यत आह–'विउस्सग्गे'त्ति, 'आलोयणारिहे'त्ति आलोचनां–गुरुनिवेदनां विशुद्धये यदर्हति भिक्षाचर्याद्यतिचारजातं तदालोचनार्हं, तद्विषयत्वादालोचनालक्षणा विशुद्धिरपि आलोचनार्हमित्युक्तं, तस्या एव तपोरूपत्वादिति, एवमन्यान्यपि, नवरं 'पडिक्कमणारिहे'त्ति मिथ्यादुष्कृतं, 'तदुभयारिहे'त्ति आलोचनाप्रतिक्रमणस्वभावं, 'विवे-

॥ ४१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तपसः बाह्य-अभ्यंतर भेदाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२०]

दीप अनुक्रम [२०]

गारिहे'त्ति अशुद्धभक्तादिविवेचनं, 'विउस्सग्गारिहे'त्ति कायोत्सर्गः, 'तवारिहे'त्ति निर्विकृतादिकं तपः, 'छेदारिहे'त्ति दिनपञ्चकादिना क्रमेण पर्यायच्छेदनं, 'मूलारिहे'त्ति पुनर्व्रतोपस्थापनम्, 'अनवट्ठप्पारिहे'त्ति अचरिततपोविशेषस्य व्रतेष्वनवस्थापनं, 'पारंचिआरिहे'त्ति तपोविशेषेणैवातिचारपारगमनमिति, 'आसणाभिग्गहे इ व'त्ति यत्र यत्रोपवेष्टुमिच्छति तत्र तत्रासननयनं, 'आसणप्पयाणं'ति आसनदानमात्रमेवेति।

से किं तं अणच्चासायणाविणए ?, २ पणतालीसविहे पण्णत्ते, तंजहा–अरहंताणं अणच्चासायणया अरहंतपण्णत्तस्स धम्मस्स अणच्चासायणया आयरियाणं अणच्चासायणया एवं उवज्झायाणं थेराणं कुलस्स गणस्स संघस्स किरिआणं संभोगिअस्स आभिणिबोहियणाणस्स सुअणाणस्स ओहिणाणस्स मणपज्जवणाणस्स केवलणाणस्स एएसिं चेव भत्तिबहुमाणे एएसिं चेव वण्णसंजलणया, से तं अणच्चासायणाविणए। से किं तं चरित्तविणए ?, २ पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा–सामाइअचरित्तविणए छेओवट्ठावणिअचरित्तविणए परिहारविसुद्धिचरित्तविणए सुहुमसंपरायचरित्तविणए अहक्खायचरित्तविणए, से तं चरित्तविणए। से किं तं मणविणए ?, २ दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–पसत्थमणविणए अपसत्थमणविणए। से किं तं अपसत्थमणविणए ?, २ जे अ मणे सावज्जे सकिरिए सकक्से कडुए णिट्ठुरे फरुसे अण्हयकरे छेयकरे भेयकरे परितावणकरे उद्दवणकरे भूओवघाइए तहप्पगारं मणो णो पहारेज्जा, से तं अपसत्थमणोविणए। से किं तं पसत्थमणोविणए?, २ तं चेव पसत्थं णेयव्वं, एवं चेव वइविणओऽवि एएहिं पएहिं चेव णेअव्वो, से तं वइविणए।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तपसः बाह्य-अभ्यंतर भेदाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२०]

दीप अनुक्रम [२०]

'किरियाणं'ति क्रियावादिनां 'संभोइयस्स'त्ति एकसमाचारिकताया इति । मनोविनये लिख्यते–'जे अ मणे'त्ति यत्पुनर्मनः–चित्तमसंयतानामिति गम्यते, 'सावज्जे'त्ति सहावद्येन–गर्हितकर्मणा हिंसादिना वर्तत इति सावद्यम्, एतदेव प्रपञ्चयते–'सकिरिय'त्ति कायिक्यादिक्रियोपेतं, 'सकक्कसे'त्ति सकार्कश्यं कर्कशभावोपेतं, 'कडुए'त्ति परेषामात्मनो वा कटुकमिव कटुकमनिष्टमित्यर्थः, 'निट्ठुरे'त्ति निष्ठुरं–मार्दवाननुगतं, 'फरुसे'त्ति स्नेहाननुगतं, 'अण्हयकरे'त्ति आश्रवकरम्–अशुभकर्माश्रवकारि, कुत इत्याह–'छेयकरे'त्ति हस्तादिच्छेदनकारि, 'भेयकरे'त्ति नासिकादीनां भेदनकारि, 'परितावणकरे'त्ति प्राणिनामुपतापहेतुः, 'उद्दवणकरे'त्ति मरणान्तिकवेदनाकारि धनहरणाद्युपद्रवकारि वा, 'भूओवघाइए'त्ति भूतोपघातो यत्रास्ति तद्भूतोपघातिकमिति, 'तहप्पगारं'ति एवम्प्रकारं असंयतमनःसदृशमित्यर्थः, 'मणो णो पहारेज्ज'त्ति न प्रवर्तयेत् ।

से किं तं कायविणए ?, २ दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–पसत्थकायविणए अपसत्थकायविणए । से किं तं अपसत्थकायविणए ?, २ सत्तविहे पण्णत्ते, तंजहा–अणाउत्तं गमणे अणाउत्तं ठाणे अणाउत्तं निसीदणे अणाउत्तं तुअट्टणे अणाउत्तं उल्लंघणे अणाउत्तं पल्लंघणे अणाउत्तं सव्विंदियकायजोगजुंजणया, से तं अपसत्थकायविणए । से किं तं पसत्थकायविणए ?, २ एवं चेव पसत्थं भाणियव्वं, से तं पसत्थकायविणए, से तं कायविणए । से किं तं लोगोवयारविणए ?, २ सत्तविहे पण्णत्ते, तंजहा–अब्भासवत्तियं परच्छंदाणुवत्तियं कज्जहेउं कयपडिकिरिया अत्तगवेसणया देसकालण्णुया सव्वट्ठेसु अपडिलोमया, से तं लोगोवयारविणए, से तं विणए ।

'अणाउत्तं'ति असावधानतया, 'उल्लंघणे'त्ति कर्दमादीनामतिक्रमणं पौनःपुन्येन तदेव प्रलङ्घनमिति, 'सव्विंदियकायजो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तपसः बाह्य-अभ्यंतर भेदाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२०]

दीप अनुक्रम [२०]

गजुंजणय'त्ति सर्वेन्द्रियाणां काययोगस्य च योजनं–प्रयोजनं व्यापारणं सर्वेन्द्रियकाययोगयोजनतेति 'अब्भासवत्तिय'त्ति अभ्यासवृत्तिता–समीपवर्तित्वं 'परच्छंदाणुवत्तिय'त्ति पराभिप्रायानुवर्तनं 'कज्जहेउं'ति कार्यहेतोः–ज्ञानादिनिमित्तं भक्तादिदानमिति गम्यं, 'कयपडिकिरिय'त्ति अध्यापितोऽहमनेनेतिबुद्ध्या भक्तादिदानमिति 'अत्तगवेसणय'त्ति आर्तस्य–दुःखितस्य वार्तान्वेषणं 'देसकालण्णुय'त्ति प्रस्तावज्ञता–अवसरोचितार्थसम्पादनमित्यर्थः 'सव्वत्थेसु अपडिलोमय'त्ति सर्वप्रयोजनेष्वाराध्यसम्बन्धिष्वानुकूल्यमिति ।

से किं तं वेआवच्चे ?, २ दसविहे पण्णत्ते, तंजहा–आयरियवेआवच्चे उवज्झायवेआवच्चे सेहवेआवच्चे गिलाणवेआवच्चे तवस्सिवेआवच्चे थेरवेआवच्चे साहम्मिअवेआवच्चे कुलवेआवच्चे गणवेआवच्चे संघवेआवच्चे, से तं वेआवच्चे । से किं तं सज्झाए ?, २ पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा–वायणा पडिपुच्छणा परिअट्टणा अणुप्पेहा धम्मकहा, से तं सज्झाए । से किं तं झाणे ?, २ चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा–अट्टज्झाणे रुद्दज्झाणे धम्मज्झाणे सुक्कज्झाणे, अट्टज्झाणे चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा–अमणुण्णसंपओगसंपउत्ते तस्स विप्पओगस्सतिसमण्णागए आवि भवइ, मणुण्णसंपओगसंपउत्ते तस्स अविप्पओगस्सतिसमण्णागए आवि भवइ, आयंकसंपओगसंपउत्ते तस्स विप्पओगस्सतिसमण्णागए आवि भवइ, परिजूसियकामभोगसंपओगसंपउत्ते तस्स अविप्पओगस्सतिसमण्णागए आवि भवइ ।

'वेआवच्चे'त्ति वैयावृत्त्यं–भक्तपानादिभिरुपष्टम्भः 'सेह'त्ति अभिनवप्रव्रजितः तपस्वी–अष्टमादिक्षपकः 'थेर'त्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तपसः बाह्य-अभ्यंतर भेदाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२०]

दीप अनुक्रम [२०]

स्थविरो जन्मादिभिः, साधर्मिकः साधु साध्वी वा, कुलं गच्छसमुदायः, गणः कुलानां समुदायः, सङ्घो गणसमुदायः इति । 'अमणुण्णसंपओगसंपउत्ते'त्ति अमनोज्ञः–अनिष्टो यः शब्दादिस्तस्य यः सम्प्रयोगो–योगस्तेन सम्प्रयुक्तो यः स तथा, तथाविधः सन् 'तस्स'त्ति तस्य–अमनोज्ञस्य शब्दादेर्विप्रयोगस्मृतिसमन्वागतश्चापि भवति–वियोगचिन्तानुगतः स्यात्, वाऽपीत्युत्तरवाक्यापेक्षया समुच्चयार्थः, असावार्तध्यानं स्यादिति शेषः, धर्मधर्मिणोरभेदादिति । तथा 'मणुण्णसंपओगसंपउत्ते'त्ति व्यक्तं, नवरं मनोज्ञं–धनादि 'तस्स'त्ति मनोज्ञस्य धनादेः 'अविप्पओगस्सइसमण्णागए आवि भवइ'त्ति व्यक्तं, नवरम्–आर्तध्यानमसावुच्यत इति वाक्यशेषः,। तथा 'आयंकसंपओगसंपउत्ते'त्ति व्यक्तं, नवरमातङ्को–रोगः 'तस्स'त्ति तस्यातङ्कस्य 'विप्पओगसइसमण्णागए'त्ति व्यक्तं, वाक्यशेषः पूर्ववत् । तथा 'परिजुसियकामभोगसंपओगसंपउत्ते'त्ति व्यक्तं, नवरं परिजुसियत्ति–'जुषी प्रीतिसेवनयो'रितिवचनात् सेवितः प्रीतो वा यः कामभोगः–शब्दादिभोगो मदनसेवा वा 'तस्स'त्ति तस्य कामभोगस्य 'अविप्पओगस्सइसमण्णागए'त्ति प्राग्वत् ।

अट्टस्स णं झाणस्स चत्तारि लक्खणा पण्णत्ता, तंजहा–कंदणया सोअणया तिप्पणया विलवणया । रुद्दज्झाणे चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा–हिंसाणुबंधी मोसाणुबंधी तेणाणुबंधी सारक्खणाणुबंधी, रुद्दस्स णं झाणस्स चत्तारि लक्खणा पण्णत्ता, तंजहा–उसण्णदोसे बहुदोसे अण्णाणदोसे आमरणंतदोसे । धम्मज्झाणे चउव्विहे चउप्पडोयारे पण्णत्ते, तंजहा–आणाविजए अवायविजए विवागविजए संठाणविजए, धम्मस्स णं झाणस्स चत्तारि लक्खणा पण्णत्ता, तंजहा–आणारुई णिसग्गरुई उवएसरुई सुत्तरुई, धम्मस्स णं झाणस्स चत्तारि

॥ ४३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तपसः बाह्य-अभ्यंतर भेदाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२०]

दीप अनुक्रम [२०]

आलंबणा पण्णत्ता, तंजहा–वायणा पुच्छणा परियट्टणा धम्मकहा, धम्मस्स णं झाणस्स चत्तारि अणुप्पेहाओ पण्णत्ताओ, तंजहा–अणिच्चाणुप्पेहा असरणाणुप्पेहा एगत्ताणुप्पेहा संसाराणुप्पेहा।

'कंदणय'त्ति महता शब्देन विरवणं 'सोअणय'त्ति दीनता, 'तिप्पणय'त्ति तेपनता तिपेः क्षरणार्थत्वादश्रुविमोचनं, विलपनता–पुनः पुनः क्लिष्टभाषणमिति, 'उसण्णदोसे'त्ति उसण्णेन–बाहुल्येनानुपरतत्वेन दोषो–हिंसाऽनृतादत्तादानसंरक्षणानामन्यतमः उसण्णदोषः, तथा 'बहुदोसे'त्ति बहुष्वपि सर्वेष्वपि हिंसादिषु ४ दोषः–प्रवृत्तिलक्षणो बहुदोषः 'अण्णाणदोसे'त्ति अज्ञानात् कुशास्त्रसंस्काराद्धिंसादिष्वधर्मस्वरूपेषु धर्मबुद्ध्या या प्रवृत्तिस्तल्लक्षणो दोषः अज्ञानदोषः, 'आमरणंतदोसे'त्ति मरणमेवान्तो मरणान्तः आ मरणान्तात् आमरणान्तम् , असञ्जातानुतापस्य कालसौकरिकादेरिव या हिंसादिषु ४ प्रवृत्तिः सैव दोषः आमरणान्तदोषः, इह चार्तरौद्रे परिहार्यतया साधुविशेषणे धर्मशुक्ले त्वासेव्यतयेति। 'चउप्पडोयारे'त्ति चतुर्षु–भेदलक्षणालम्बनानुप्रेक्षालक्षणेषु पदार्थेषु प्रत्यवतारः–समवतारो वक्ष्यमाणस्वरूपो यस्य तच्चतुष्प्रत्यवतारमिति। 'आणाविजए'त्ति आज्ञा–जिनप्रवचनं तस्या विचयो–निर्णयो यत्र तदाज्ञाविचयं, प्राकृतत्वादाणाविजयं, आज्ञागुणानुचिन्तनमित्यर्थः, एवं शेषपदान्यपि, नवरम् अपायाः–रागद्वेषादिजन्या अनर्थाः, विपाकः–कर्मफलं, संस्थानानि–लोकद्वीपसमुद्राद्याकृतयः। 'आणारुई'त्ति निर्युक्त्यादिश्रद्धानं 'णिसग्गरुई'त्ति स्वभावत एव तत्त्वश्रद्धानम् 'उवएसरुई'त्ति साधूपदेशात्तत्त्वश्रद्धानं 'सुत्तरुई'त्ति आगमात्तत्त्वश्रद्धानम् 'आलंबण'त्ति आलम्बनानि धर्मध्यानसौधशिखरारोहणार्थं यान्यालम्ब्यन्ते–आश्रीयन्ते तान्यालम्बनानि–वाचनादीनि, अनित्यत्वाशरणत्वैकत्वसंसारानुप्रेक्षाः प्रतीताः।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तपसः बाह्य-अभ्यंतर भेदाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२०]

दीप अनुक्रम [२०]

औपपातिकम् ॥ ४४ ॥

सुक्कज्झाणे चउव्विहे चउप्पडोआरे पण्णत्ते, तंजहा–पुहुत्तवियके सविआरी १ एगत्तवियके अविआरी २ सुहुमकिरिए अप्पडिवाई ३ समुच्छिन्नकिरिए अणियट्टी, ४, सुक्कस्स णं झाणस्स चत्तारि लक्खणा पण्णत्ता, तंजहा–विवेगे विउसग्गे अव्वहे असम्मोहे, सुक्कस्स णं झाणस्स चत्तारि आलंबणा पण्णत्ता, तंजहा–खंती मुत्ती अज्जवे मद्दवे, सुक्कस्स णं झाणस्स चत्तारि अणुप्पेहाओ पण्णत्ताओ, तंजहा–अवायाणुप्पेहा असुभाणुप्पेहा अणंतवित्तिआणुप्पेहा विप्परिणामाणुप्पेहा, से तं झाणे ॥

'पुहुत्तवियके सविआरी'त्ति पृथक्त्वेन–एकद्रव्याश्रितानामुत्पादादिपर्यायाणां भेदेन वितर्को–विकल्पः पूर्वगतश्रुतालम्बनो नानानयानुसरणलक्षणो यत्र तत् पृथक्त्ववितर्कं, तथा विचारः–अर्थाद्व्यञ्जने व्यञ्जनादर्थे मनःप्रभृतियोगानां चान्यस्मादन्यतरस्मिन् विचरणं सह विचारेण यत्तत्सविचारि, सर्वधनादित्वादिन् समासान्तः, तथा 'एगत्तवियके अविआरी'त्ति एकत्वेन–अभेदेनोत्पादादिपर्यायाणामन्यतमैकपर्यायालम्बनतयेत्यर्थः, वितर्कः–पूर्वगतश्रुताश्रयो व्यञ्जनरूपोऽर्थरूपो वा यस्य तदेकत्ववितर्कं, तथा न विद्यते विचारोऽर्थव्यञ्जनयोरितरस्मादितरत्र तथा मनःप्रभृतीनामन्यतरस्मादन्यत्र यस्य तदविचारीति, 'सुहुमकिरिए अप्पडिवाइ'त्ति सूक्ष्मा क्रिया यत्र निरुद्धवाङ्मनोयोगत्वे सत्यर्द्धनिरुद्धकाययोगत्वात् तत् सूक्ष्मक्रियम्, अप्रतिपाति–अप्रतिपतनशीलं प्रवर्द्धमानपरिणामत्वाद्, एतच्च निर्वाणगमनकाले केवलिन एव स्यादिति, 'समुच्छिन्नकिरिए अणियट्टी'त्ति समुच्छिन्ना–क्षीणा क्रिया–कायिक्यादिका शैलेशीकरणे निरुद्धयोगत्वेन यस्मिंस्तत्तथा, अनिवर्ति–अव्यावर्तनस्वभावमिति । विवेगे'त्ति देहादात्मन आत्मनो वा सर्वसंयोगानां विवेचनं–बुद्ध्या पृथक्करणं विवेकः,

आन्तर० सू० २०

॥ ४४ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तपसः बाह्य-अभ्यंतर भेदाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२०]

दीप अनुक्रम [२०]

'विउसग्गे'त्ति व्युत्सर्गो–निःसङ्गतया देहोपधित्यागः 'अबहेत्ति' देवाद्युपसर्गजनितं भयं चलनं वा व्यथा तदभावोऽव्यथं 'असंमोहे'त्ति देवादिकृतमायाजनितस्य सूक्ष्मपदार्थविषयस्य च सम्मोहस्य–मूढताया निषेधोऽसम्मोहः, 'अवायाणुप्पेह'त्ति अपायानां–प्राणातिपाताद्याश्रवद्वारजन्यानर्थानामनुप्रेक्षा–अनुचिन्तनमपायानुप्रेक्षा 'असुभाणुप्पेह'त्ति संसाराशुभत्वानुचिन्तनम् 'अणंतवत्तियाणुप्पेह'त्ति भवसन्तानस्यानन्तवृत्तिताऽनुचिन्तनं 'विपरिणामाणुप्पेह'त्ति वस्तूनां प्रतिक्षणं विविधपरिणामगमनानुचिन्तनमिति ।

से किं तं विउस्सग्गे ?, २ दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–दव्वविउस्सग्गे भावविउस्सग्गे अ । से किं तं दव्वविउस्सग्गे ?, २ चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा–सरीरविउस्सग्गे गणविउस्सग्गे उवहिविउस्सग्गे भत्तपाणविउस्सग्गे, से तं दव्वविउस्सग्गे, से किं तं भावविउस्सग्गे ?, २ तिविहे पण्णत्ते, तंजहा–कसायविउस्सग्गे संसारविउस्सग्गे कम्मविउस्सग्गे, से किं तं कसायविउस्सग्गे ?. २ चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा–कोहकसायविउस्सग्गे माणकसायविउस्सग्गे मायाकसायविउस्सग्गे लोहकसायविउस्सग्गे, से तं कसायविउस्सग्गे, से किं तं संसारविउस्सग्गे ?, २ चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा–णेरइअसंसारविउस्सग्गे तिरियसंसारविउस्सग्गे मणुअसंसारविउस्सग्गे देवसंसारविउस्सग्गे, से तं संसारविउस्सग्गे, से किं तं कम्मविउस्सग्गे ?, २ अट्ठविहे पण्णत्ते, तंजहा–णाणावरणिज्जकम्मविउस्सग्गे दरिसणावरणिज्जकम्मविउस्सग्गे वेअणीअकम्मविउस्सग्गे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तपसः बाह्य-अभ्यंतर भेदाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२०]

दीप अनुक्रम [२०]

मोहणीयकम्मविउस्सग्गे आऊअकम्मविउस्सग्गे णामकम्मविउस्सग्गे गोअकम्मविउस्सग्गे अंतरायकम्मविउस्सग्गे, से तं कम्मविउस्सग्गे, से तं भावविउस्सग्गे ॥ (सू० २०) ॥

'संसारविउस्सग्गे'त्ति नरकायुष्कादिहेतूनां मिथ्यादृष्टित्वादीनां त्यागः 'कम्मविउस्सग्गे'त्ति ज्ञानावरणादिकर्मबन्धहेतूनां ज्ञानप्रत्यनीकत्वादीनां त्यागः ॥ २० ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स बहवे अणगारा भगवंतो अप्पेगइआ आयारधरा जाव विवागसुअधरा तत्थ तत्थ तहिं तहिं देसे देसे गच्छागच्छिं गुम्मागुम्मिं फड्डाफड्डिं अप्पेगइआ वायंति अप्पेगइआ पडिपुच्छंति अप्पेगइया परियट्टंति अप्पेगइया अणुप्पेहंति अप्पेगइआ अक्खेवणीओ विक्खेवणीओ संवेअणीओ णिव्वेअणीओ चउव्विहाओ कहाओ कहंति अप्पेगइया उड्ढंजाणू अहोसिरा झाणकोट्ठोवगया संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरंति।

'अप्पेगइया आयारधरे' त्यादि प्रतीतं, क्वचिद् दृश्यते 'तत्थ तत्थ'त्ति उद्यानादौ 'तहिं तहिं'ति तदंशोक्तमेवाह देशे देशे—अवग्रहभागे, वीप्साकरणं चाधारबाहुल्येन साधुबाहुल्यप्रतिपादनार्थं, 'गच्छागच्छिं'ति एकाचार्यपरिवारो गच्छः गच्छेन गच्छेन च भूत्वा गच्छागच्छि वाचयन्तीति योगः, दण्डादण्ड्यादिवच्छब्दसिद्धिः, एवं 'गुम्मागुम्मिं फड्डाफड्डिं च' नवरं गुल्मं—गच्छैकदेशः उपाध्यायाधिष्ठितः फड्डुकं—लघुतरो गच्छदेश एव गणावच्छेदकाधिष्ठित इति। अथ प्रकृतवाचना 'वायंति'त्ति सूत्रवाचनां ददति 'पडिपुच्छंति'त्ति सूत्रार्थौं पृच्छन्ति 'परियट्टंति'त्ति परिवर्तयन्ति तावेव, 'अणुप्पेहंति'त्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध-प्रकारस्य अनगारस्य वर्णनं --(आचार-आदि सूत्रधर एवं वाचनादि गुणयुक्तता)

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२१]

दीप अनुक्रम [२१]

अनुप्रेक्षन्ते तावेव चिन्तयन्ति। 'अक्खेवणीओ'त्ति आक्षिप्यते–मोहात्तत्त्वं प्रत्याकृष्यते श्रोता यकाभिरित्याक्षेपण्यः 'विक्खेवणीओ'त्ति विक्षिप्यते–कुमार्गविमुखो विधीयते श्रोता यकाभिस्ता विक्षेपण्यः 'संवेयणीओ'त्ति संवेज्यते–मोक्षसुखाभिलाषो विधीयते श्रोता यकाभिस्ता संवेजन्यः 'निव्वेयणीओ'त्ति निर्वेद्यते संसारनिर्विण्णो विधीयते श्रोता यकाभिस्ता निर्वेदिन्यः, तथा 'उड्ढंजाणू अहोसिर'त्ति शुद्धपृथिव्यासनवर्जनादौपग्रहिकनिषद्याया अभावाच्चोत्कुटुकासनाः सन्तोऽपदिश्यन्ते–ऊर्ध्वं जानुनी येषां ते ऊर्ध्वजानवः, अधःशिरसो–अधोमुखा, नोर्ध्वं तिर्यग्वा क्षिप्तदृष्टय इत्यर्थः, 'झाणकोट्ठोवगय'त्ति ध्यानरूपो यः कोष्ठस्तमुपागता ये ते तथा, ध्यानकोष्ठप्रवेशनेन संवृतेन्द्रियमनोवृत्तिधान्या इत्यर्थः, संयमेन तपसाऽऽत्मानं भावयन्तो विहरन्तीति।

• संसारभउव्विग्गा भीआ जम्मणजरमरणकरणगंभीरदुक्खपक्खुब्भिअपउरसलिलं संजोगविओगवीचीचिंतापसंगपसरिअवहबंधमहल्लविउलकल्लोलकलुणविलविअलोभकलकलंतबोलबहुलं अवमाणणफेणतिव्वखिंसणपुलंपुलप्पभूअरोगवेअणपरिभवविणिवायफरुसधरिसणासमावडिअकढिणकम्मपत्थरतरंगरंगंतनिच्चमच्चुभयतोअपट्टं कसायपायालसंकुलं भवसयसहस्सकलुसजलसंचयं पतिभयं अपरिमिअमहिच्छकलुसमतिवाउवेगउद्धुम्ममाणदुग्गयरयंधआरवरफेणपउरआसापिवासधवलं मोहमहावत्तभोगभममाणगुप्पमाणुच्छलंतपच्चोणियत्तपाणियपमायचंडबहुदुट्ठसावयसमाहउद्दायमाणपब्भारघोरकंदियमहारवरवंतभेरवरवं।

प्रकारान्तरेण स एवोच्यते–'संसारभउव्विग्ग'त्ति प्रतीतं 'जंमणजरमरणकरणगंभीरदुक्खपक्खुब्भियपउरसलिलं' जन्म-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२१]

दीप अनुक्रम [२१]

जरामरणान्येव करणानि–साधनानि यस्य तत्तथा, तच्च तद्गम्भीरदुःखं च तदेव प्रक्षुभितं–प्रचलितं प्रचुरं–प्रभूतं सलिलं–जलं यत्र स तथा तं, संसारसागरं तरन्तीति योगः, 'संजोगविओगवीइचिंतापसंगपसरियवहबंधमहल्लविउलकल्लोलकलुणविलविअलोभकलकलिंतबोलबहुलं' संयोगवियोगा एव वीचयः–तरङ्गा यत्र स तथा, चिन्ताप्रसङ्गः–चिन्तासातत्यमित्यर्थः स एव प्रसृतं–प्रसरो यस्य स तथा, वधाः–हननानि बन्धाः–संयमनानि तान्येव महान्तो–दीर्घा विपुलाश्च–विस्तीर्णाः कल्लोला–महोर्मयो यत्र स तथा, करुणानि विलपितानि यत्र स तथा, स चासौ लोभश्च, स एव कलकलायमानो यो बोलो–ध्वनिः स बहुलो यत्र स तथा, ततः संयोगादिपदानां कर्मधारयोऽतस्तम्, 'अवमाणणफेणतिव्वखिंसणपुलंपुलप्पभूयरोगवेअणपरिभवविणिवायफरुसधरिसणासमावडियकढिणकम्मपत्थरतरंगरंगंतनिच्चमच्चुभयतोयपट्ठं' अपमानमेव–अपूजनमेव फेनो यत्र स तथा, तीव्रखिंसनं च–अत्यर्थनिन्दा पुलम्पुलप्रभूता–अनवरतोद्भूताः या रोगवेदनाः, पाठान्तरे तीव्रखिंसनं प्रलुम्पनानि च प्रभूतरोगवेदनाश्च परिभवविनिपातश्च–पराभिभवसम्पर्कः परुषधर्षणाश्च–निष्ठुरवचननिर्भर्त्सनानि समापतितानि–समापन्नानि बद्धानि यानि कठिनानि–कर्कशोदयानि कर्माणि–ज्ञानावरणादीनि तानि चेति द्वन्द्वः, तत एतान्येव ये प्रस्तराः–पाषाणास्तैः कृत्वा तरङ्गै रङ्गद्भि–र्वीचिभिश्चलत् नित्यं–ध्रुवं मृत्युभयमेव–मरणभीतिरेव तोयपृष्ठं–जलोपरितनभागो यत्र स तथा, ततः कर्मधारयः, अथवा अपमानफेनमिति तोयपृष्ठस्य विशेषणम्, अतो बहुव्रीहिरेवातस्तं, 'कसायपायालसंकुलं' कषाया एव पातालाः–पातालकलशास्तैः सङ्कुलो यः स तथा तं, 'भवसयसहस्सकलुसजलसंचयं' भवशतसहस्राण्येव कलुषो जलानां सञ्चयो यत्र स तथा तं, पूर्वं जननादिजन्यदुःखस्य सलिलतोक्ता इह तु भवानां जन-

॥ ४६ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२१]

दीप अनुक्रम [२१]

नादिधर्मवतां जलविशेषसमुदायतोक्तेति न पुनरुक्तत्वमिति, 'पइभयं'ति व्यक्तं, 'अपरिमिअमहेच्छकलुसमइवाउवेगउद्धुम्ममाणदगरयरयंधआरवरफेणपउरआसापिवासधवलं' अपरिमिता–अपरिमाणा या महेच्छा–बृहदभिलाषा लोकास्तेषां कलुषा–मलिना या मतिः सैव वायुवेगेन उद्धुम्ममाणं उद्धुवमाणं वा–उत्पाद्यमानं यदुदकरजः–उदकरेणुसमूहस्तस्य रयो–वेगस्तेनान्धकारो यः स तथा, वरफेनेनेव प्रचुराशापिपासाभिस्तत्र प्रचुरा–बहव्य आशाः–अप्राप्तार्थानां प्राप्तिसम्भावनाः पिपासास्तु–तेषामेवाकांक्षा अतस्ताभिर्धवल इव धवलो यः स तथा, ततः कर्मधारयः, अतस्तं, 'मोहमहावत्तभोगभममाणगुप्पमाणुच्छलंतपच्चोणियत्तपाणियपमायचंडबहुदुट्ठसावयसमाहउद्धायमाणपब्भारघोरकंदियमहारवरवंतभेरवरवं' मोहरूपे महावर्ते भोगरूपं भ्राम्यत्–मण्डलेन भ्रमद्गुप्यत्–व्याकुलीभवदुच्छलत्–उत्पतत् प्रत्यवनिपतच्च–अधःपतत् पानीयं–जलं यत्र स तथा, प्रमादा–मद्यादयस्त एव चण्डबहुदुष्टश्वापदाः–रौद्रभूरिक्षुद्रव्यालास्तैर्ये समाहताः–प्रहता उद्धावन्तश्च–उत्तिष्ठन्तो वा विविधं चेष्टमाना समुद्रपक्षे मत्स्यादयः संसारपक्षे पुरुषादयस्तेषां प्राग्भारः पूरो वा समूहो यत्र स तथा, तथा घोरो यः क्रन्दितमहारवः स एव रवन्–प्रतिशब्दकरणतः शब्दायमानो भैरवरवो–भीमघोषो यत्र स तथा, ततः पदत्रयस्य कर्मधारयोऽतस्तम् ।

अण्णाणभमंतमच्छपरिहत्थअणिहुतिंदियमहामगरतुरिअचरिअखोखुब्भमाणनचंतचवलचंचलचलंतघुम्मंतजलसमूहं अरतिभयविसायसोगमिच्छत्तसेलसंकडं अणाइसंताणकम्मबंधणकिलेसचिक्खिल्लसुदुत्तारं अमरनरतिरियनिरयगइगमणकुडिलपरिवत्तविउलवेलं चउरंतमहंतमणवदग्गं रुद्दं संसारसागरं भीमदरिसणिज्जं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२१]

दीप अनुक्रम [२१]

तरंति धीईधणिअनिप्पकंपेण तुरियचवलं संवरवेरग्गतुंगकूवयसुसंपउत्तेणं णाणसितविमलमूसिएणं सम्मत्तविसुद्धलद्धणिज्जामएणं धीरा संजमपोएण सीलकलिआ पसत्थज्झाणतववायपणोल्लिअपहाविएणं उज्जमववसायग्गहियणिज्जरणजयणउवओगणाणदंसणविसुद्धवयभंडभरिअसारा जिणवरवयणोवदिट्ठमग्गेणं अकुडिलेण सिद्धिमहापट्टणाभिमुहा समणवरसत्थवाहा सुसुइसुसंभाससुपण्हसासा गामे गामे एगरायं णगरे णगरे पंचरायं दूइज्जन्ता जिइंदिया णिब्भया गयभया सचित्ताचित्तमीसिएसु दव्वेसु विरागयं गया संजया विरया मुत्ता लहुआ णिरवकंखा साहू णिहुआ चरंति धम्मं ॥ (सू० २१) ॥

'अण्णाणभमंतमच्छपरिहत्थअणिहुतिंदियमहामगरतुरियचरियखोखुब्भमाणनच्चंतचवलचंचलचलंतघुम्मंतजलसमूहं' अज्ञानान्येव भ्रमन्तो मत्स्याः परिहत्थत्ति–दक्षा यत्र स तथा, अनिभृतानि–अनुपशान्तानि यानीन्द्रियाणि तान्येव महामकरास्तेषां यानि त्वरितानि–शीघ्राणि चरितानि–चेष्टितानि तैः खोखुब्भमाणत्ति–भृशं क्षुभ्यमाणो नृत्यन्निव नृत्यन् चपलानां मध्ये चञ्चलश्च, अस्थिरत्वेन चलँश्च स्थानान्तरगमनेन घूर्णश्च–भ्राम्यन् जलसमूहो–जलसङ्घातोऽन्यत्र जडसमूहो यत्र स तथा, ततः कर्मधारयस्ततस्तम् , 'अरइभयविसायसोगमिच्छत्तसेलसंकडं' अरतिभयविषादशोकमिथ्यात्वानि प्रतीतानि तान्येव शैलास्तैः सङ्कटो यः स तथा तम् , 'अणाइसंताणकम्मबंधणकिलेसचिक्खिल्लसुदुत्तारं' अनादिसन्तानम्–अनादिप्रवाहं यत् कर्मबन्धनं तच्च क्लेशाश्च–रागादयस्तल्लक्षणं यच्चिक्खिल्लं–कर्दमस्तेन सुष्ठु दुस्तारो यः स तथा तम्, 'अमरनरतिरियनिरयगइगमणकुडिलपरिवत्तविउलवेलं' अमरनरतिर्यग्निरयगतिषु यद्गमनं तदेव कुटिलपरिवर्ता–वक्रपरिवर्तना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२१]

दीप अनुक्रम [२१]

विपुला च–विस्तीर्णा वेला–जलवृद्धिलक्षणा यत्र स तथा तं, 'चउरंतमहंतं'ति चतुर्विभागं दिग्भेदगतिभेदाभ्यां महान्तं च–महायामम्, 'अणवदग्गं'ति अनवदग्रम्–अनन्तमित्यर्थः, 'रुंदं'ति विस्तीर्णं, संसारसागरमिति व्यक्तं, 'भीमदरिसणिज्जं'ति भीमो दृश्यत इति भीमदर्शनीयस्तं, 'तरंति' लङ्घयन्ति, संयमपोतेनेति योगः, किम्भूतेन?–'धीईधणियनिप्पकंपेण' धृतिरज्जुबन्धनेन धनिकम्–अत्यर्थं निष्प्रकम्पः–अविचलो यः स मध्यपदलोपाद्धृतिधनिकनिष्प्रकम्पस्तेन त्वरितचपलम्–अतित्वरितं यथा भवतीत्येवं तरन्ति, 'संवरवेरग्गतुंगकूवयसुसंपउत्तेणं' संवरः–प्राणातिपातादिविरतिरूपो वैराग्यं–कषायनिग्रहः एतल्लक्षणो यस्तुङ्गः–उच्चः कूपकः–स्तम्भविशेषस्तेन सुष्ठु सम्प्रयुक्तो यः स तथा तेन, 'णाणसियविमलमूसिएणं'ति ज्ञानमेव सितः–सितपटः स विमल उच्छ्रितो यत्र स तथा तेन, मकारश्चेह प्राकृतशैलीप्रभवः 'सम्मत्तविसुद्धलद्धणिज्जामएणं' सम्यक्त्वरूपो विशुद्धो–निर्दोषो लब्धः–अवाप्तो निर्यामकः–कर्णधारो यत्र स तथा तेन, धीरा–अक्षोभाः संयमपोतेन शीलकलिता इति च प्रतीतं, 'पसत्थज्झाणतववायपणोल्लियपहाविएणं' प्रशस्तध्यानं–धर्मादि तद्रूपं यत्तपः स एव वातो–वायुस्तेन यत् प्रणोदितं–प्रेरणं तेन प्रधावितो–वेगेन चलितो यः स तथा तेन, संयमपोतेनेति प्रकृतम्, 'उज्जमववसायग्गहियणिज्जरणजयणउवओगणाणदंसणविसुद्धवयभंडभरिअसारा' उद्यमः–अनालस्यं व्यवसायो–वस्तुनिर्णयः सङ्ख्यापारो वा ताभ्यां मूलकल्पाभ्यां यद्गृहीतं–क्रीतं निर्जरणयतनोपयोगज्ञानदर्शनविशुद्धव्रतरूपं भाण्डं क्रयाणकं तस्य भरितः–संयमपोतभरणेन पिण्डितः सारो यैस्ते तथा, श्रमणवरसार्थवाहा इति योगः, तत्र निर्जरणं–तपः यतना–बहुदोषत्यागेनाल्पदोषाश्रयणम् उपयोगः–सावधानता ज्ञानदर्शनाभ्यां विशुद्धानि व्रतानि, अथवा ज्ञानदर्शने च विशुद्धव्रतानि चेति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

समासः, व्रतानि च–महाव्रतानि, पाठान्तरेण 'णाणदंसणचरित्तविसुद्धवरभंडभरियसार'त्ति तत्र ज्ञानदर्शनचारित्राण्येव विशुद्धवरभाण्डं तेन भरितः सारो यैस्ते तथा, 'जिणवरवयणोवदिट्ठमग्गेणं अकुडिलेण सिद्धिमहापट्टणाभिमुहा समणवरसत्थवाह'त्ति व्यक्तं, 'सुसुइसुसंभाससुपण्हसास'त्ति सुश्रुतयः–सम्यक्श्रुतग्रन्थाः सत्सिद्धान्ता वा सुशुचयो वा सुखः सम्भाषो येषां सुखेन वा सम्भाष्यन्त इति सुसम्भाषाः शोभनाः प्रश्नाः येषां सुखेन वा प्रश्नयन्ते ये ते सुप्रश्नाः शोभना आशाः–वाञ्छा येषां ते स्वाशाः अथवा सुखेन प्रश्नयन्ते शास्यन्ते च–शिक्ष्यन्ते ये ते सुप्रश्नशास्याः शोभनानि वा प्रश्नशस्यानि–पृच्छाधान्यानि येषां ते तथा अथवा सुप्रश्नाः शस्याश्च–प्रशंसनीयाः, ततः कर्मधारय इति, 'दूइज्जन्त'त्ति द्रवन्तो–वसन्तः, अनेकार्थत्वाद्धातूनां, 'णिब्भय'त्ति भयमोहनीयोदयनिषेधात् 'गयभय'त्ति उदयविफलताकरणात् 'संजय'त्ति संयमवन्तः, कुत इत्याह–'विरय'त्ति यतो निवृत्ताः हिंसादिभ्यः, तपसि वा विशेषेण रताः विरताः, विरया वा–निरौत्सुक्याः विरजसो वा–अपापाः, 'संचयाओ विरय'त्ति क्वचिद् दृश्यते, तत्र सन्निधेर्निवृत्ता इत्यर्थः, 'मुत्त'त्ति मुक्ताः ग्रन्थेन 'लहुअ'त्ति लघुका स्वल्पोपधित्वात् 'णिरवकंख'त्ति अप्राप्तार्थाकाङ्क्षाविमुक्ताः 'साहू' मोक्षसाधनात् 'णिहुआ' प्रशान्तवृत्तयः 'चरंति धम्मं'ति व्यक्तम्। अत्र साधुवर्णके जितेन्द्रियत्वादीनि विशेषणानि बहुशोऽधीतानि, तानि च गमान्तरतया निरवद्यानि, यत् पुनरत्रैव गमे पुनरुक्तमवभासते तत् स्तवत्वान्न दुष्टं, यदाह–"[1]सज्झायझाणतवओसहेसु उवएसथुइपयाणेसुं । संतगुणकित्तणासु य न हुंति पुनरुत्तदोसा उ ॥ १ ॥" ॥ २१ ॥

१ स्वाध्यायध्यानतपऔषधेषु उपदेशस्तुतिप्रदानेषु । सद्गुणकीर्तनेषु च न भवन्ति पुनरुक्तदोषास्तु ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२२]

दीप अनुक्रम [२२]

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स बहवे असुरकुमारा देवा अंतिअं पाउब्भवित्था कालमहाणीलसरिसणीलगुलिअगवलअयसिकुसुमप्पगासा विअसिअसयवत्तमिव पत्तलनिम्मलईसिंसि-तरत्ततंबणयणा गरुलायतउज्जुतुंगणासा उअचिअसिलप्पवालबिंबफलसण्णिभाहरोट्ठा पंडुरससिसकलवि-मलणिम्मलसंखगोक्खीरफेणदगरयमुणालियाधवलदंतसेढी हुयवहणिद्धंतधोयतत्ततवणिज्जरत्ततलतालुजीहा अंजणघणकसिणरुयगरमणिज्जणिद्धकेसा वामेगकुंडलधरा अहचंदणाणुलित्तगत्ता ।

असुरवर्णके किमपि लिख्यते–'कालमहाणीलसरिसणीलगुलिअगवलअयसिकुसुमप्पगासा' कालो यो महानीलो–मणि-विशेषस्तेन सदृशा वर्णतो ये ते तथा, नीलो–मणिविशेषः गुलिका–नीलिका गवलं–माहिषं शृङ्गम् अतसीकुसुमं–धान्य-विशेषपुष्पं एतेषामिव प्रकाशो–दीप्तिर्येषां ते तथा, ततः कर्मधारयः, कालवर्णा इत्यर्थः, 'विअसिअसयवत्तमिवे'ति व्यक्तं, 'पत्तलणिम्मलईसीसियरत्ततंबणयणा' पत्तलानि–पक्ष्मवन्ति निर्मलानि–विमलानि ईषत् सितरक्तानि क्वचिदेशे मनाक् श्वेतानि क्वचिच्च मनाग्रक्तानीत्यर्थः क्वचिच्च ताम्राणि–अरुणानि नयनानि येषां ते तथा, शतपत्रसाधर्म्यं च व्यक्तमेव, 'गरुले' त्यादिविशेषणचतुष्टयं महावीरवर्णकवन्नेयम् 'अंघणघणकसिणरुयगरमणिज्जणिद्धकेसा' अञ्जनघनौ–प्रतीतौ कृष्णः–कालः रुचको–मणिविशेषस्तद्वद्रमणीयाः स्निग्धाश्च केशा येषां ते तथा, 'वामेगकुंडलधरा' वामे कर्णे एकमेव कुण्डलं धारयन्ति ये ते तथा, दक्षिणे त्वाभरणान्तरधारिण इति सामर्थ्यगम्यम्, आर्द्रचन्दनानुलिप्तगात्रा इति व्यक्तम् ।

ईसिसिलिंधपुप्फप्पगासाइं सुहुमाइं असंकिलिट्ठाइं वत्थाइं पवरपरिहिया वयं च पढमं समतिक्कंता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे आगताः असुर-देवानाम् वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२२]

दीप अनुक्रम [२२]

वितिअं च वयं असंपत्ता भद्दे जोव्वणे वट्टमाणा तलभंगयतुडिअपवरभूसणनिम्मलमणिरयणमंडिअभुआ दससुद्दामंडिअग्गहत्था चूलामणिचिंधगया सुरूवा महिड्ढिआ महज्जुतिआ महबला महायसा महासोक्खा महाणुभागा हारविराइतवच्छा कडगतुडिअथंभिअभुआ अंगयकुंडलमट्ठगंडतलकण्णपीढधारी विचित्तवत्थाभरणा विचित्तमालामउलिमउडा कल्लाणकयपवरवत्थपरिहिया कल्लाणकयपवरमल्लाणुलेवणा भासुरबोंदी पलंबवणमालधरा।

'ईसिसिलिंधपुप्फप्पगासाइ' इति मनाक् सिलिन्ध्रकुसुमप्रभाणि, ईषत्सितानीत्यर्थः, सिलिन्ध्रं–भूमिस्फोटकच्छत्रकम् 'असुरेसु होंति रत्तं'ति मतान्तरम्, 'असंकिलिट्ठाइं'ति निर्दूषणानि 'सुहुमाइं'ति श्लक्ष्णानि 'वत्थाइं'ति वसनानि 'पवरपरिहिया' प्रवराश्च ते परिहिताश्च–निवसिता इति समासः, 'वयं च' इत्यादि सूत्रं, तत्र त्रीणि वयांसि भवन्ति, यदाह–'आषोडशाद्भवेद्बालो, यावत् क्षीरान्नवर्तकः। मध्यमः सप्ततिं यावत्, परतो वृद्ध उच्यते ॥ १ ॥" आद्यस्य वयसोऽतिक्रमे द्वितीयस्य सर्वथैवाप्राप्तौ भद्रं यौवनं भवत्येवेति भद्रे यौवने इत्युक्तं, 'तलभंगयतुडियपवरभूसणनिम्मलमणिरयणमंडिअभुआ' तलभङ्गकानि–बाह्वाभरणानि त्रुटिकाश्च–बाहुरक्षिकास्ता एव वरभूषणानि तैर्निर्मलमणिरत्नैश्च मण्डिता भुजा येषां ते तथा, 'चूलामणिचिंधगया' चूडामणिलक्षणं चिह्नं प्राप्ताः, श्रूयन्ते चासुरादीनां चूडामण्यादीनि चिह्नानि, यदाह–"[1]चूडामणिफणिवज्जे गरुडे घड अस्स वद्धमाणे य। मयरे सीहे हत्थी असुराईणं मुणसु चिंधे ॥ १ ॥" 'महिड्ढिअ'त्ति

१ चूडामणिः फणी वज्रं गरुडः घटः अश्वो वर्द्धमानश्च। मकरः सिंहो हस्ती असुरादीनां मुण चिह्नानि ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे आगताः असुर-देवानाम् वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२२]

दीप अनुक्रम [२२]

महर्द्धयो विशिष्टविमानपरिवारादियोगात्.'महज्जुइय'त्ति महाद्युतयो विशिष्टशरीराभरणप्रभायोगात् 'महाबल'त्ति विशिष्टशारीरप्रमाणाः'महायस'त्ति महायशसो–विशिष्टकीर्तयः'महासोक्ख'त्ति महासौख्याः'महाणुभाग'त्ति अचिन्त्यशक्तियुक्ता इति, इहैव गमान्तरं 'हारविराजितवक्षसः कटकत्रुटिकस्तम्भितभुजाः' इह कटकानि–कङ्कणानि त्रुटिका–बाहुरक्षकाः। 'अंगयकुंडलमट्ठगंडकण्णपीढधारी' अङ्गदानि–बाह्याभरणविशेषान् कुण्डलानि च–कर्णाभरणविशेषान् मृष्टगण्डानि च–उल्लिखितकपोलानि कर्णपीठकानि–कर्णाभरणविशेषान् धारयन्तीत्येवंशीला ये ते तथा, 'विचित्तहत्थाभरण'त्ति व्यक्तं, 'विचित्तमालामउलियमउडा' विचित्रा मालाः–कुसुमस्रजो येषां मौलौ च–मस्तके मुकुटं–किरीटं येषां ते तथा, शेषं सुगमं वर्णकान्तं यावत्, नवरं माल्यानि–पुष्पाणि बोन्दिः–शरीरं प्रलम्बो–झुम्बनकं वनमाला–आभरणविशेषः प्रलम्बवनमाला वा तस्याः कण्ठतो जानुप्रमाणत्वादिति।

दिव्वेणं वण्णेणं दिव्वेणं गंधेणं दिव्वेणं रूवेणं दिव्वेणं फासेणं दिव्वेणं संघाए(यणे)णं दिव्वेणं संठाणेणं दिव्वाए इड्ढीए दिव्वाए जुत्तीए दिव्वाए पभाए दिव्वाए छायाए दिव्वाए अच्चीए दिव्वेणं तेएणं दिव्वाए लेसाए दस दिसाओ उज्जोवेमाणा पभासेमाणा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिअं आगम्मागम्म रत्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ २ त्ता वंदंति णमंसंति वंदित्ता णमंसित्ता णच्चासणे णाइदूरे सुस्सूसमाणा णमंसमाणा अभिमुहा विणएणं पंजलिउडा पज्जुवासंति ॥ (सू० २२) ॥

दिवेणं' देवोचितेन प्रधानेनेत्यर्थः,'संघाए(घयणे)णं'ति संहननेन वज्रऋषभनाराचेनेत्यर्थः, 'संठाणेणं'ति समचतुरस्रलक्ष-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे आगताः असुर-देवानाम् वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२२]

दीप अनुक्रम [२२]

त्यर्थः, 'रिद्धीए'त्ति परिवारादिकया 'जुइए'त्ति युक्त्या–विवक्षितार्थयोगेन 'पभाए'त्ति यानादिदीप्त्या 'छायाए'त्ति शोभया 'अच्चीए'त्ति अर्चिषा शरीरस्थरत्नादितेजोज्वालया 'तेएणं'ति तेजसा–शरीरसम्बन्धिरोचिषा प्रभावेन वा 'लेसाए'त्ति देहवर्णेन, एकार्था वा द्युत्यादयः शब्दाः प्रकाशप्रकर्षप्रतिपादनपराश्चेति न पौनरुक्त्यमिति, 'उज्जोएमाण'त्ति उद्योतयन्तः प्रकाशकरणेन 'पभासेमाण'त्ति प्रभासयन्तः–शोभयन्तः, एकार्थौ वैताविति, 'रत्त'त्ति रक्ताः–सानुरागाः 'तिक्खुत्तो'त्ति त्रिकृत्वः–त्रीन् वारान् आदक्षिणात्–पार्श्वात् प्रदक्षिणो–दक्षिणपार्श्ववर्ती आदक्षिणप्रदक्षिणं 'वंदंति'त्ति स्तुवन्ति 'नमंसंति'त्ति नमस्यन्ति शिरोनमनेनेति । वाचनान्तरे दृश्यते–'साइं साइं'ति स्वकीयानि स्वकीयानि 'नामगोयाइं'ति नामगोत्राणि–यादृच्छिकान्वर्थाभिधानानीति 'सावेंति'त्ति श्रावयन्ति ॥ २२ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स बहवे असुरिंदवज्जिआ भवणवासी देवा अंतियं पाउब्भवित्था णागफडागरुलवयरपुण्णकलससीहहयगयमगरमउडवद्धमाणणिजुत्तविचित्तचिंधगया सुरूवा महिड्ढिया सेसं तं चेव जाव पज्जुवासंति ॥ (सू० २३) ॥

'नागे'त्यादि व्यक्तं, नागादीनां च नागफणादीनि चिह्नानि भवन्ति, तानि क्रमेण दर्शयन्नाह–'नागफडा १ गरुल २ वइर ३ पुण्णकलस ४ सीह ५ हयवर ६ गयंक ७ मयरंकवरमउड ८ वद्धमाण ९ निजुत्तविचित्तचिंधगया' नागफणादयो गजान्ता अङ्काः–चिह्नानि येषां मुकुटानां तानि तथा, तानि च मकराङ्कानि च–मकरचिह्नानि यानि वरमुकुटानि तानि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे आगताः असुर आदिः भवनपति-देवानाम् वर्णनं

च, वर्द्धमानकं च–शरावं पुरुषारूढपुरुषरूपं वेति द्वन्द्वः, तानि च तानि नियुक्तानि–यथास्थानं नियोजितानि विचित्राणि च–विविधानि चिह्नानि च–लक्षणानि गताः–प्राप्ता ये ते तथा, इह सूत्रे 'पुण्णकलससंकिण्णउप्फेससीहे'त्येवं क्वचित् विशेषो दृश्यते, तत्र नागफणादिभिरङ्किता ये उप्फेसा–मुकुटास्ते तथा, शेषं तथैव ॥ २३ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स बहवे वाणमंतरा देवा अंतिअं पाउब्भवित्था पिसाया भूआ य जक्ख रक्खस किंनर किंपुरिस भुअगवइणो अ महाकाया गंधव्वणिकायगणा णिउण-गंधव्वगीतरइणो अणपण्णिअ पणपण्णिअ इसिवादीअ भूअवादीअ कंदिय महाकंदिआ य कुहंड पयए य देवा चंचलचवलचित्तकीलणदवप्पिआ गंभीरहसिअभणिअपीअगीअणच्चणरई वणमालामेलमउडकुंडल-सच्छंदविउव्विआहरणचारुविभूसणधरा सव्वोउयसुरभिकुसुमसुरइयपलंबसोभंतकंतविअसंतचित्तवणमा-लरइअवच्छा कामगमी कामरूवधारी णाणाविहवण्णरागवरवत्थचित्तचिल्लियणियंसणा विविहदेसीणेवत्थ-ग्गहिअवेसा पमुइअकंदप्पकलहकेलिकोलाहलप्पिआ हासबोलबहुला अणेगमणिरयणविविहणिजुत्तविचित्त-चिंधगया सुरूवा महिड्ढिआ जाव पज्जुवासंति ॥ (सू० २४) ॥

'भुयगवइणो'त्ति महोरगाधिपाः, किम्भूतास्ते इत्याह–'महाकाय'त्ति बृहद्देहाः, इदं च विशेषणमवस्थाविशेषाश्रयम्, अन्यथा सर्व एव सप्तहस्तप्रमाणा भवन्ति, यदाह–"[1]भवणवणजोइसोहंमीसाणे सत्त होंति रयणीओ" 'गंधव्वनिकायगण'त्ति

१ भवनवनज्योतिष्कसौधर्मेशानेषु सप्त भवन्ति रत्नयः ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे आगता: वाणव्यन्तर-देवानाम् वर्णनं

प्रत सूत्रांक [२४]

दीप अनुक्रम [२४]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

गन्धर्वाणां–व्यन्तराष्टमभेदभूतानां निकायो–वर्गो येषां ते गन्धर्वनिकाया गन्धर्वा एव तेषां ये गणा–राशयस्ते तथा, पाठान्तरे 'गन्धर्वपतिगणाश्चे'ति व्यक्तमेव, किंविधास्ते इत्याह–'निउणगंधव्वगीयरइणो'त्ति निपुणे–सूक्ष्मे गन्धर्वे च–नाट्योपेतगाने गीते च–नाट्यवर्जितगेये रतिर्येषां ते तथा, अणपन्निकादयोऽष्टौ व्यन्तरनिकायविशेषभूताः रत्नप्रभापृथिव्या उपरितनयोजनशतवर्तिनः, किंविधा एत इत्याह–'चंचलचवलचित्तकीलणदवप्पिया' चञ्चलचपलचित्ताः–अतिचपलमानसाः क्रीडनं–क्रीडा द्रवश्च–परिहासस्तत्प्रियाः, ततः कर्मधारयः, 'गंभीरहसियभणियपियगीयणच्चणरई' गम्भीरं हसितं येषां भणितं च–वाक्प्रयोगः प्रियं येषां गीतनृत्तयोश्च रतिर्येषां ते तथा, 'गहिरहसियगीयणच्चणरइ'त्ति क्वचिद्दृश्यते व्यक्तं च, 'वणमालामेलमउडकुंडलसच्छंदविउव्वियाभरणचारुविभूसणधरा' वनमाला–रत्नादिमय आप्रपदीन आभरणविशेषः आमेलकः–पुष्पशेखरकः मुकुटं–सुवर्णादिमयं कुण्डलानि च–प्रतीतानि एतान्येव स्वच्छन्दविकुर्वितानि–स्वाभिप्रायनिर्मितालङ्कारास्तैर्यच्चारु विभूषणं–भूषा तद्धारयन्ति ये ते तथा, 'सव्वोउयसुरभिकुसुमसुरइयपलंबसोहंतकंतवियसंतचित्तवणमालरइयवच्छा' सर्वर्तुकानि–सर्वऋतुसम्भवानि यानि सुरभीणि–कुसुमानि तैः सुरचिता या सा तथा, सा चासौ प्रलम्बा च शोभमाना च कान्ता च विकसन्ती च चित्रा च वनमाला च–वनस्पतिस्रक् इति समासः, सा रचिता वक्षसि यैस्ते तथा, 'कामगमि'त्ति इच्छागामिनः 'कामरूवधारि'त्ति ईप्सितरूपधारिणः 'णाणाविहवण्णरागवरवत्थचित्तचिल्लियनियंसणा' नानाविधवर्णो रागो येषु तानि तथा, तानि वरवस्त्राणि चित्राणि–विविधानि 'चिल्लिय'त्ति लीनानि दीप्तानि

१ प्रत्यन्तरे नास्ति ।

॥ ५१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे आगताः वाणव्यन्तर-देवानाम् वर्णनं

प्रत सूत्रांक [२४] दीप अनुक्रम [२४]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

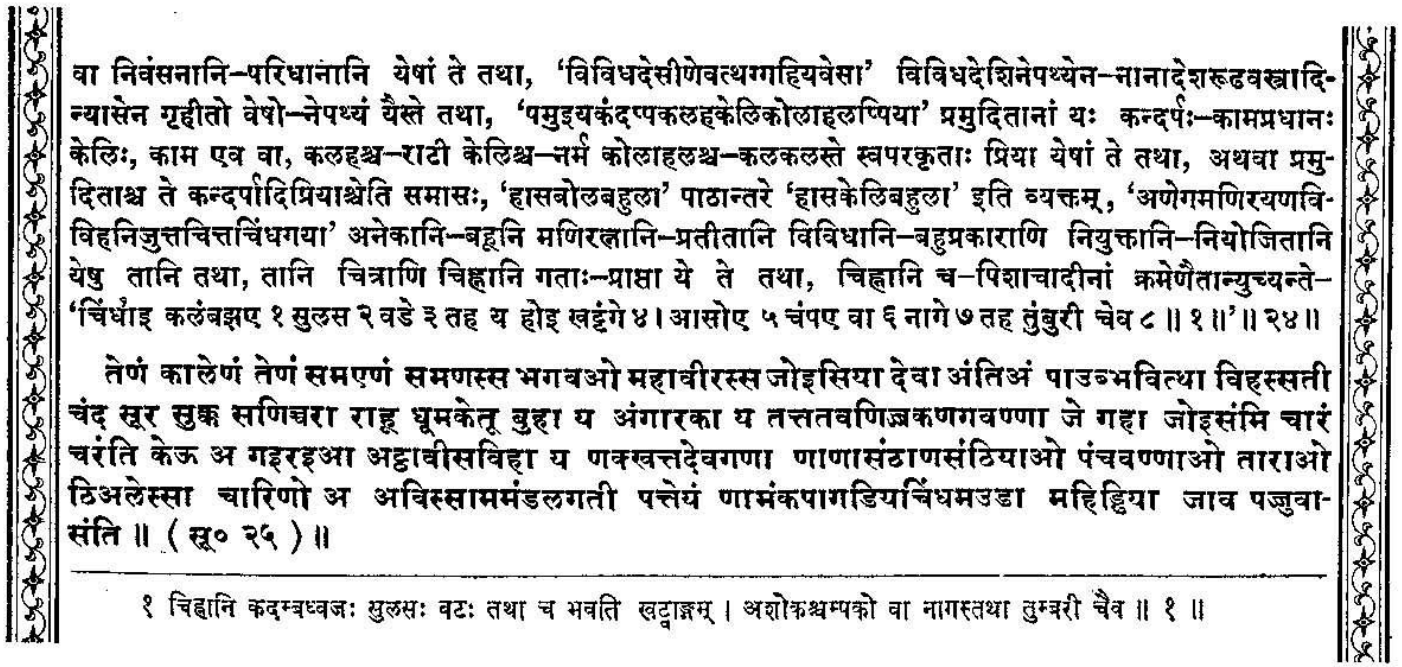

वा निवंसनानि–परिधानानि येषां ते तथा, 'विविधदेसीणेवत्थग्गहियवेसा' विविधदेशिनेपथ्येन–नानादेशरूढवस्त्रादिन्यासेन गृहीतो वेषो–नेपथ्यं यैस्ते तथा, 'पमुइयकंदप्पकलहकेलिकोलाहलप्पिया' प्रमुदितानां यः कन्दर्पः–कामप्रधानः केलिः, काम एव वा, कलहश्च–राटी केलिश्च–नर्म कोलाहलश्च–कलकलस्ते स्वपरकृताः प्रिया येषां ते तथा, अथवा प्रमुदिताश्च ते कन्दर्पादिप्रियाश्चेति समासः, 'हासबोलबहुला' पाठान्तरे 'हासकेलिबहुला' इति व्यक्तम्, 'अणेगमणिरयणविविहनिजुत्तचित्तचिंधगया' अनेकानि–बहूनि मणिरत्नानि–प्रतीतानि विविधानि–बहुप्रकाराणि नियुक्तानि–नियोजितानि येषु तानि तथा, तानि चित्राणि चिह्नानि गताः–प्राप्ता ये ते तथा, चिह्नानि च–पिशाचादीनां क्रमेणैतान्युच्यन्ते–'चिंधाइ कलंबझए १ सुलस २ वडे ३ तह य होइ खट्टंगे ४। आसोए ५ चंपए वा ६ नागे ७ तह तुंबुरी चेव ८ ॥ १ ॥' ॥ २४ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जोइसिया देवा अंतिअं पाउब्भवित्था विहस्सती चंद सूर सुक्क सणिचरा राहू धूमकेतू बुहा य अंगारका य तत्ततवणिज्जकणगवण्णा जे गहा जोइसंमि चारं चरंति केऊ अ गइरइआ अट्ठावीसविहा य णक्खत्तदेवगणा णाणासंठाणसंठियाओ पंचवण्णाओ ताराओ ठिअलेस्सा चारिणो अ अविस्साममंडलगती पत्तेयं णामंकपागडियचिंधमउडा महिड्ढिया जाव पज्जुवासंति ॥ (सू० २५) ॥

१ चिह्नानि कदम्बध्वजः सुलसः वटः तथा च भवति खट्वाङ्गम् । अशोकश्चम्पको वा नागस्तथा तुम्बरी चैव ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे आगताः वाणव्यन्तर एवं ज्योतिष्क-देवानाम् वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२५]

दीप अनुक्रम [२५]

ज्योतिष्कवर्णको व्यक्तो, नवरम् 'अंगारका य'त्ति मङ्गलाः, बहुत्वं च प्रत्येकं ज्योतिषामसङ्ख्यातत्वात्, 'तत्ततवणिज्जकणगवण्णा' तप्तस्य तपनीयस्य-सुवर्णस्य यः कणको-बिन्दुः शलाका वा अथवा तपनीयं-रक्तं सुवर्णं कनकं-सुवर्णमेव पीतं तद्वद्वर्णो येषां ते तथा, 'जे य गह'त्ति उक्तव्यतिरिक्ताः, 'जोइसंमि'त्ति ज्योतिश्चक्रे 'चारं चरन्ती'तिभ्रमणं कुर्वन्ति, 'केउ य'त्ति केतवो जलकेत्वादयः, किम्भूता ?-'गइरइय'त्ति मनुष्यलोकापेक्षयोक्तं, 'ठियलेस्स'त्ति स्थितलेश्याः-निश्चलप्रकाशाः 'चारिणो य'त्ति सञ्चरिष्णवः, अत एवाह-'अविस्साममंडलगइ'त्ति प्रतीतं, 'नामंकपागडियचिंधमउडा' नामाङ्कितानि प्रकटितानि-चिह्नप्रधानानि मुकुटानि यैरिति समासः ॥ २५ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स वेमाणिया देवा अंतिअं पाउब्भवित्था सोहम्मीसाणसणंकुमारमाहिंदबंभलंतकमहासुक्कसहस्साराणयपाणयारणअच्चुयवई पहिट्ठा देवा जिणदंसणुस्सुगागमणजणियहासा पालकपुप्फकसोमणससिरिवच्छणंदिआवत्तकामगमपीइगममणोगमविमलसव्वओभद्दणामधिज्जेहिं विमाणेहिं ओइण्णा वंदका जिणिंदं। मिगमहिसवराहछगलदद्दुरहयगयवइभुअगखग्गउसभंकविडिमपागडियचिंधमउडा पसिढिलवरमउडतिरीडधारी कुंडलउज्जोविआणणा मउडदित्तसिरया रत्ताभा पउमपम्हगोरा सेया सुभवण्णगंधफासा उत्तमविउव्विणो विविहवत्थगंधमल्लधरा महिड्ढिआ महज्जुतिआ जाव पंजलिउडा पज्जुवासंति ॥ (सू० २६) ॥

वैमानिकवर्णकोऽपि व्यक्तो, नवरं वाचनान्तरगतं किञ्चिदस्य व्याख्यायते, तदन्तर्गतं किञ्चिदधिकृतवाचनान्तरगतं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे आगताः ज्योतिष्क एवं वैमानिक-देवानाम् वर्णनं

प्रत सूत्रांक [२६] दीप अनुक्रम [२६]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

च, तत्र 'सामाणियतायत्तीससहिया' सामानिका–इन्द्रसमानायुष्कादिभावाः त्रायस्त्रिंशाः–महत्तरकल्पाः पूज्यस्थानीयाः 'सलोगपालअग्गमहिसिपरिसाणीअअप्परक्खेहिं संपरिवुडा' सह लोकपालैः–सोमादिभिर्दिक्पालकनियुक्तकैः या अग्रमहिष्यः–प्रधानजायाः परिषदश्च–बाह्यमध्यमाभ्यन्तरा जघन्यमध्यमोत्कृष्टपरिवारविशेषभूताः अनीकानि च–हस्त्यश्वरथपदातिवृषभनर्तकगाथकजनरूपाणि सैन्यानि आत्मरक्षाश्च–अङ्गरक्षा इति द्वन्द्वः, अतस्तैः सम्परिवृता इति, देवसहस्रानुयातमार्गैः सुरवरगणेश्वरैः प्रयतैः 'समणुगम्मंतसस्सिरीय'त्ति समनुगम्यमानाश्च ते सश्रीकाश्चेति समासः, सर्वादरभूषिताः सुरसमूहनायकाः सौम्यचारुरूपाः 'देवसंघजयसद्दकयालोया' देवसङ्घेन जयशब्दः कृत आलोके–दर्शने येषां ते तथा।

'मिग १ महिस २ वराह ३ छगल ४ दद्दुर ५ हय ६ गयवइ ७ भुयग ८ खग्ग ९ उसभंक १० विडिमपागडियचिंधमउडा' मृगादयो दश दशानां शक्रादीन्द्राणां चिह्नभूताः, तत्र वराहः–शूकरः खड्ग–आटव्यचतुष्पदविशेषः ऋषभो–वृषभः शेषाः प्रतीताः, तत्र मृगादयः अङ्का–लाञ्छनानि विटपेषु–विस्तरेषु येषां मुकुटानां तानि तथा, तानि प्रकटितचिह्नानि–रत्नादिदीप्त्या प्रकाशितमृगादिलाञ्छनानि मुकुटानि येषां ते तथा। पालक १ पुष्पक २ सौमनस ३ श्रीवत्स ४ नन्द्यावर्त ५ कामगम ६ प्रीतिगम ७ मनोगम ८ विमल ९ सर्वतोभद्र १० नामधेयैर्विमानैः, उत्तरवैक्रियैरित्यर्थः, सम्प्रस्थिता इति योगः, एतानि च क्रमेण शक्रादीनामच्युतान्तानां दशानामिन्द्राणां भवन्तीति। किंविधैस्तैरित्याह–'तरुणदिवागरकरातिरेगप्पहेहिं' तरुणदिवाकरकरेभ्योऽतिरेकेण–अतिशयेन प्रभा येषां तानि तथा तैः, 'मणिकणगरयणघडियजालुज्जलहेमजालपेरंतपरिगएहिं' मणिकनकरत्नैर्घटितं–युक्तं यज्ज्वालोज्ज्वलं–प्रभोज्ज्वलं हेमजालं–स्वर्णजालकं तेन पर्यन्तेषु परिगतानि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे आगताः वैमानिक-देवानाम् वर्णनं

तानि तथा तैः, 'सपयरवरमुत्तदामलंबंतभूसणेहिं' सह प्रतरैः–आभरणविशेषैर्वरमुक्तादामलक्षणानि लम्बमानानि भूषणानि येषु तानि तथा तैः, 'पचलियघंटावलिमहुरसद्दवंसतंततितलतालगीयवाइयरवेणं' प्रचलितायाः घण्टावल्याः यो मधुरः शब्दः स तथा वंशश्च–वेणुस्त्री च–वीणा तलतालाश्च–हस्ततालाः अथवा तलाश्च–हस्ताः तालाश्च–कंशिका गीतं च–गेयं वादितं च–वादित्रमिति द्वन्द्वः अतस्तेषां यो रवः–शब्दः स तथा, ततः पदद्वयस्य समाहारद्वन्द्वः, अतस्तेन करणभूतेन मधुरेण–मनोहरेण पूरयन्तः अम्बरं, दिशश्च शोभयन्तस्त्वरितं सम्प्रस्थिताः स्थिरयशसो देवेन्द्रा इति व्यक्तं, 'हट्ठतुट्ठमणस'त्ति अतीव तुष्टचित्ताः 'सेसावि य'त्ति इन्द्रसामानिकादयः, तानेवाह–'कप्पवरविमाणाहिवा' कल्पेषु यानि वरविमानानि तेषामधिपा इत्यर्थः, समनुयान्ति सुरवरेन्द्रानिति योगः, अत एव सुरवराः 'सविमाणविचित्तचिंधनामंकविगडपागडमउडाडोवसुभदंसणिज्जा' स्वविमानविचित्रचिह्नानां नामाङ्कविकटप्रकटमुकुटानां च य आटोपः–स्फारता तेन शुभा ये दृश्यन्ते ते तथा ते विचित्रकल्पवरविमानाधिपाः, 'समन्निंति'त्ति समनुयान्ति समनुगच्छन्ति सुरवरेन्द्रानिति, तथा 'लोयंतविमाणवासिणो यावि देवसंघाय'त्ति लोकस्य–ब्रह्मलोकस्यान्ते–समीपे यानि विमानानि तद्वासिनो लोकान्तिकाश्चापीत्यर्थः, 'पत्तेयविरायमाणविरइयमणिरयणकुंडलभिसंतनिम्मलनियगंकियविचित्तपागडियचिंधमउडा' प्रत्येकं विराजमानानि–शोभमानानि विरचितानि–कर्णेषु कृतानि मणिरत्नकुण्डलानि येषां ते तथा, भिसंतत्ति–दीप्यमानानि निर्मलानि निजाङ्कितानि निजकेन नामादिनाऽङ्केनाङ्कितानि विचित्राणि–विविधानि प्रकटितानि–प्रकाशितानि चिह्नानि च मुकुटानि चिह्नप्रधानानि वा मुकुटा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे आगताः वैमानिक-देवानाम् वर्णनं

नियैस्ते तथा, तथा 'दायंत'त्ति दर्शयन्तः 'अप्पणो समुदयं'ति आत्मीयं ऋद्ध्यादिसमूहं 'पेच्छंताविय परस्स रिद्धीउ'त्ति प्रेक्षमाणाश्च परर्द्धीः उत्तमाः, एवं कल्पालयाः सुरवराः 'जिणिंदवंदणनिमित्तभत्तीए'त्ति जिनेन्द्रवन्दनहेतुभूतभावेन 'चोइयमइ'त्ति प्रेरितबुद्धयः हर्षितमानसाश्च जीतकल्पमनुवर्तमाना देवाः 'जिणदंसणूस्सुयागमणजणियहासा' जिनदर्शनाय यदुत्सुकं—शीघ्रमागमनं तेन जनितो हर्षो येषां ते तथा, 'विउलबलसमूहपिंडिया' विपुलो बलसमूहः—सैन्यसमुदायः पिण्डितो यैस्ते तथा, कथमित्याह—'संभमेणं'ति भक्तिकृतौत्सुक्येन 'गयणतलविमलविउलगमणगइचवलचलियमणपवणजइणसिग्घवेगा' गगनतले विमले विपुले च यद्गमनं तस्य सम्बन्धी शीघ्रवेग इति सम्बन्धः गतिश्चपला स्वरूपत एव यस्य तद्गतिचपलं तच्च तच्चलितं च गन्तुं प्रवृत्तं तद्विधं यन्मनः पवनश्च तयोर्जयनशीलोऽत एव शीघ्रो वेगो येषां ते तथा, नानाविधयानवाहनगताः यानानि—रथादीनि वाहनानि—गजादीनि उच्छ्रितविमलधवलातपत्राः। 'विउव्वियजाणवाहणविमाणदेहरयणप्पभाए'त्ति वैक्रियाणां यानादीनां ४ रत्नानां च स्वाभाविकानामितरेषां च या प्रभा सा तथा तया, 'उज्जोएंता नहं' कथमित्याह—'वितिमिरं करेंता' नभ एवेति 'सविड्ढीए' युक्ता इति शेषः, 'हुलियं'ति शीघ्रं प्रयाताः। गमान्तरमिदम्—'पसिढिलवरमउडतिरीडधारी' प्रश्लथाः—शिथिलबन्धना, गाढबन्धनानां बाधाजनकत्वात् (वर) मुकुटाश्चतुरस्राः शेखरविशेषाः तिरीटास्त एव शिखरत्रययुक्तास्तान् धारयन्ति ये तच्छीलाश्च ते तथा, कुण्डलोद्योतिताननाः, 'मउडदित्तसिरय'त्ति मुकुटेन दीप्ताः शिरोजा—मस्तककेशा येषां ते तथा, मुकुटदीप्तशिरस्का वा, 'रत्ताभ'त्ति लोहितवर्णाः 'पउमपम्हगोर'त्ति कमलगर्भकान्ताः पीता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे आगताः वैमानिक-देवानाम् वर्णनं

इत्यर्थः, 'सेय'त्ति शुक्लाः, त्रिवर्णा एव वैमानिका भवन्ति, यदाह–"[1]कणगत्तयरत्ताभा सुरवसभा दोसु होंति कप्पेसु । तिसु होंति पम्हगोरा तेण परं सुक्किला देवा ॥ १ ॥" शेषं व्यक्तमेवेति ॥ २४ ॥

पुस्तकान्तरे देवीवर्णको दृश्यते, स चैवम्–'तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स बहवे अच्छरगणसंघाया अंतिअं पाउब्भवित्था, ताओ णं अच्छराओ धंतधोयकणगरुअगसरिसप्पभाओ' ध्मातम्–अग्निना तापितं धौतं–जलेन क्षालितं यत्कनकं तस्य यो रुचको–वर्णस्तत्सदृशप्रभाः गौराङ्ग्य इत्यर्थः, 'समइक्कंता य बालभावं'ति अतिक्रान्ता इव शिशुत्वं, मध्यमजरठवयोविरहिताः, नवयौवना इवेत्यर्थः, 'अणइवरसोम्मचारुरूवा' अनतिवरम्–अविद्यमान द्वासतया प्रधानं न विद्यते अतिवरं यस्मात्तदनतिवरमिति वा सौम्यं–नीरोगं चारु–शोभनं रूपं यासां तास्तथा, 'निरुवहयसरसजोव्वणकक्कसतरुणवयभावमुवगयाओ' निरुपहतं–रोगादिना अबाधितं सरसं च–शृङ्गाररसोपेतं निरुपहतो वा स्वो रसो यत्र तत्तथाविधं यौवनं तथा कर्कशः–अश्लथाङ्गतया यस्तरुणवयोभावस्तारुण्यं तं चोपगता यास्तास्तथा, इह च यौवनतरुणभावयोर्यद्यप्येकार्थता तथापि सरसत्वाश्लथाङ्गत्वलक्षणयोर्मनःशरीराश्रितयोर्धर्मयोराधारतया भेदेन विवक्षणान्न पौनरुक्त्यमिति, 'निच्चमवट्ठियसहावा' न जरां प्रामुवन्तीत्यर्थः, 'सव्वंगसुंदरीउ'त्ति 'इच्छियनेवत्थरइयरमणिज्जगहियवेसा' इष्टवस्त्राभरणादिरूपनेपथ्यस्य रचितेन–रचनेन रतिदो वा अत एव रमणीयो गृहीतः–आत्तो वेषः–आकृतिविशेषो यकाभिस्तास्तथा, 'किंते'त्ति तद्यथार्थः 'हारद्धहारपाउत्तरयणकुंडलवासुत्तगहेमजालम-

१ कनकत्वग्रक्ताभाः सुरवृषभा द्वयोर्भवन्ति कल्पयोः । त्रिषु भवन्ति पद्मगौरास्ततः परं शुक्ला देवाः ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे आगताः देवी-वर्णनं

प्रत सूत्रांक [२६] दीप अनुक्रम [२६]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

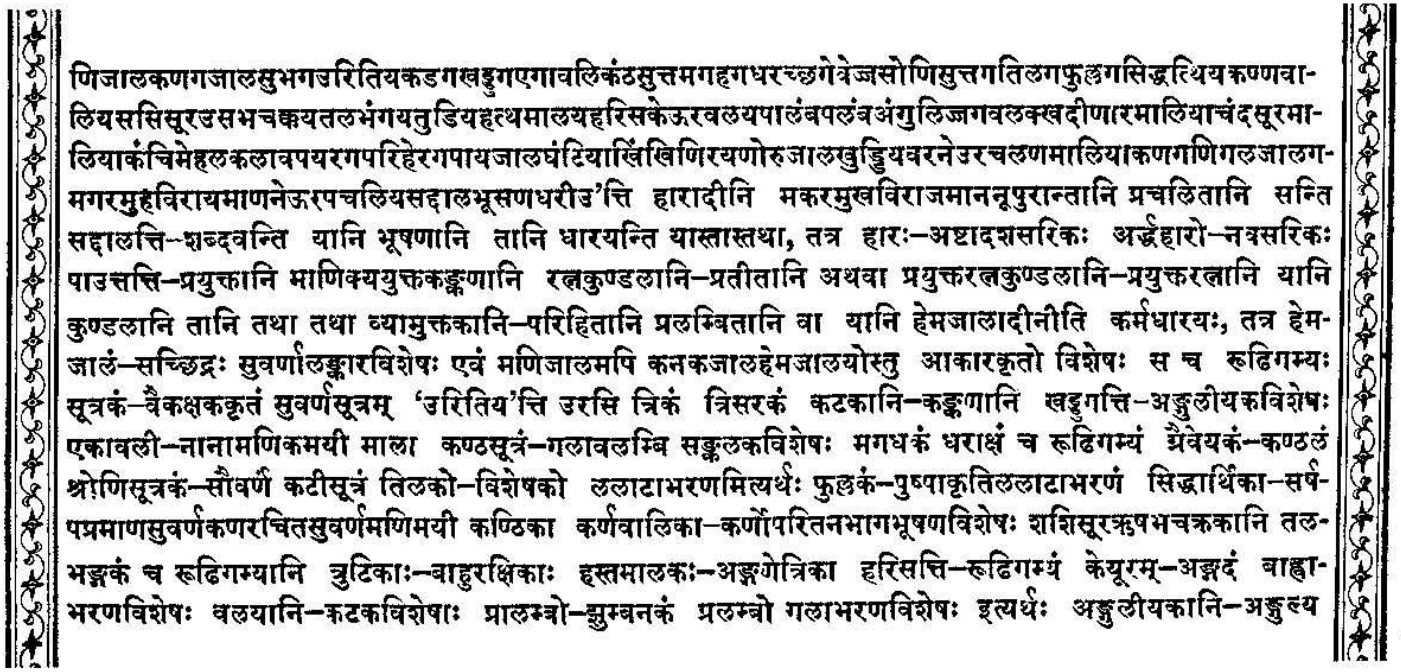

णिजालकणगजालसुभगउरितियकडगखडुगएगावलिकंठसुत्तमगहगधरच्छगेवेज्जसोणिसुत्तगतिलगफुल्लगसिद्धत्थियकण्णवालियससिसूरउसभचक्कयतलभंगयतुडियहत्थमालयहरिसकेऊरवलयपालंबपलंबअंगुलिज्जगवलक्खदीणारमालियाचंदसूरमालियाकंचिमेहलकलावपयरगपरिहेरगपायजालघंटियाखिंखिणिरयणोरुजालखुड्डियवरनेउरचलणमालियाकणगणिगलजालगमगरमुहविरायमाणनेऊरपचलियसद्दालभूसणधरीउ'त्ति हारादीनि मकरमुखविराजमाननूपुरान्तानि प्रचलितानि सन्ति सद्दालत्ति–शब्दवन्ति यानि भूषणानि तानि धारयन्ति यास्तास्तथा, तत्र हारः–अष्टादशसरिकः अर्द्धहारो–नवसरिकः पाउत्तत्ति–प्रयुक्तानि माणिक्ययुक्तकङ्कणानि रत्नकुण्डलानि–प्रतीतानि अथवा प्रयुक्तरत्नकुण्डलानि–प्रयुक्तरत्नानि यानि कुण्डलानि तानि तथा तथा व्यामुक्तकानि–परिहितानि प्रलम्बितानि वा यानि हेमजालादीनीति कर्मधारयः, तत्र हेमजालं–सच्छिद्रः सुवर्णालङ्कारविशेषः एवं मणिजालमपि कनकजालहेमजालयोस्तु आकारकृतो विशेषः स च रूढिगम्यः सूत्रकं–वैकक्षककृतं सुवर्णसूत्रम् 'उरितिय'त्ति उरसि त्रिकं त्रिसरकं कटकानि–कङ्कणानि खडुगत्ति–अङ्गुलीयकविशेषः एकावली–नानामणिकमयी माला कण्ठसूत्रं–गलावलम्बि सङ्कलकविशेषः मगधकं धराक्षं च रूढिगम्यं ग्रैवेयकं–कण्ठलं श्रोणिसूत्रकं–सौवर्णं कटीसूत्रं तिलको–विशेषको ललाटाभरणमित्यर्थः फुल्लकं–पुष्पाकृतिललाटाभरणं सिद्धार्थिका–सर्षपप्रमाणसुवर्णकणरचितसुवर्णमणिमयी कण्ठिका कर्णवालिका–कर्णोपरितनभागभूषणविशेषः शशिसूरऋषभचक्रकानि तलभङ्गकं च रूढिगम्यानि त्रुटिकाः–बाहुरक्षिकाः हस्तमालकः–अङ्गरेत्रिका हरिसत्ति–रूढिगम्यं केयूरम्–अङ्गदं बाह्याभरणविशेषः वलयानि–कटकविशेषाः प्रालम्बो–झुम्बनकं प्रलम्बो गलाभरणविशेषः इत्यर्थः अङ्गुलीयकानि–अङ्गुल्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे आगता: देवी-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२६]

दीप अनुक्रम [२६]

भरणविशेषाः वलाक्षं–रूढिगम्यं दीनारमालिकाचन्द्रमालिकासूर्यमालिकास्तु दीनाराद्याकृतिमालाः काञ्चीमेखलयोः कट्याभरणयोर्यद्यपि नामकोशे एकार्थत्वमधीयते तथापीह विशेषो रूढेरवसेयः कलापः–कण्ठाभरणविशेषो मेखलाकलाप इति वा द्रष्टव्यं प्रतरकाणि–वृत्तप्रतला आभरणविशेषाः परिहेरगत्ति–रूढ्यवसेयं पादजालघण्टिकाः–पादाभरणविशेषाः किङ्किणीकाः–क्षुद्रघण्टिकाः रत्नोरुजालं–रत्नमयं जङ्घयोः प्रलम्बमानं सङ्कलकं क्षुद्रिकाः–तत्प्रान्तघण्टिकाः वरनूपुराणि–प्रतीतानि क्षुद्रिकावरनूपुराणि वा–क्षुद्रघण्टिकाप्रधानतुलाकोटिकानि चलनमालिका–पादाभरणविशेषः कनकनिगलानि–निगडाकाराः सौवर्णपादाभरणविशेषाः जालकं–चरणाभरणविशेषः, मकरमुखविराजमाननूपुराणि–प्रतीतानि । 'दसद्धवण्ण-रागरइयरत्तमणहरे'त्ति दशार्द्धवर्णैः–पञ्चवर्णै रागै–रञ्जनद्रव्यैः कुसुम्भादिभिर्यानि रञ्जितत्वेन रक्तानीव रक्तानि मनो-हराणि च तानि तथा तानि अंशुकानि निवसिता इति योगः, महार्घाणि, नासानिःश्वासवायुवाह्यानि लघूनीत्यर्थः, चक्षु-र्हराणि अङ्गावारकत्वात्, वर्णस्पर्शयुक्तानि अतिशयवर्णादीनीत्यर्थः, 'हयलालापेलवाइरेगे' अश्वलालाभ्यः सकाशात् पेल-वानि–सुकुमाराण्यतिरेकेण यानि तानि तथा, 'धवले'त्ति कानिचिद्धवलानि, 'कणगखचियंतकम्मे' कनकखचितं–सुवर्ण-मण्डितम् अन्तकर्म–अञ्चलकर्म वानलक्षणं येषां तानि तथा, 'आगासफालियसरिसप्पहे' आकाशस्फटिकयोराकाशरूप-स्फटिकस्य वा सदृशी प्रभा येषां तानि तथा 'अंसुए नियत्थाओ'त्ति वस्त्राणि निवसिताः, 'आयरेणं'ति व्यक्तं, 'तुसारगो-क्खीरहारदगरयपंडुरदुगुल्लसुकुमालसुकयरमणिज्जउत्तरिज्जाइं पाउयाओ'त्ति व्यक्तं, नवरं तुषारं–हिमं दगरयत्ति–उदक-रजस्तद्वत् पाण्डुराणि यानि दुकूलानि–वस्त्राणि तान्येव सुकुमालानि सुकृतानि रमणीयानि च यान्युत्तरीयाणि तानि तथा

॥ ५५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे आगताः देवी-वर्णनं

तानि प्रावृताः, 'वरचन्दनचर्चिताः वराभरणभूषिता' इति व्यक्तं, 'सव्वोउयसुरभिकुसुमसुरइयविचित्तवरमल्लधारिणीओ' सर्वर्तुकैः सुरभिकुसुमैः सुरचितं विचित्रं वरं माल्यं–मालां धारयन्ति यास्तच्छीलाश्च तास्तथा, 'सुगंधिचुण्णंगरागवरवास-पुप्फपूरगविराइया' सुगन्धिचूर्णैरङ्गरागेण च–देहरञ्जनेन वरवासैः पुष्पपूरकेण च–पुष्परचनाविशेषेण विराजिता यास्ता-स्तथा, 'अहियसस्सिरीया' अधिकं सह श्रिया–शोभया यास्तास्तथा, 'उत्तमवरधूवधूविया' उत्तमानां मध्ये यो वरधूपः स तथा तेन धूपेन धूपिताः–कृतसौगन्ध्याः यास्तास्तथा, 'सिरीसमाणवेसा' श्रीः–देवता सा च लोके शोभनवेषेति रूढा अतस्तयोपमा कृतेति, 'दिव्वकुसुममल्लदामपव्भंजलिपुडाओ' दिव्यैः–वरैः कुसुमैः–अविकसितैः माल्यैः–विकसितैः दामभि-श्च–तन्मयमालाभिः प्रह्वाः–पूजासज्जाः अञ्जलिपुटाः–अञ्जलय एव यासां तास्तथा, उच्चत्वेन च सुराणां स्तोकोनमुच्छ्रिताः, 'चन्द्रानना' इति व्यक्तं, 'चंदविलासिणीओ'त्ति चन्द्रस्येव विलासः–कान्तिर्यासां तास्तथा, 'चन्द्रार्द्धसमललाटाः चन्द्राधि-कसौम्यदर्शना उल्का इवोद्योतमाना' इति व्यक्तं, 'विज्जुघणमिरीइसूरदिप्पंततेअअहियतरसंनिकासाओ' विद्युतो ये घना मरीचयः–किरणाः सूरस्य च यद्दीप्तं–तेजस्तेभ्योऽधिकतरः सन्निकाशो–दीप्तिर्यासां तास्तथा, 'सिंगारागारचारुवेसाओ' शृङ्गारो–रसविशेषस्तत्प्रधान आकारः–आकृतिश्चारुश्च वेषो–नेपथ्यं यासां तास्तथा, अथवा शृङ्गारस्यागारमिव–गृहमिव याश्चारुवेषाश्च यास्तास्तथा, 'संगयगयहसियभणियचेट्ठियविलाससललियसंलावनिउणजुत्तोवयारकुसलाओ' सङ्गतानि–उचि-तानि यानि गतादीनि तेषु निपुणा याः सङ्गतोपचारकुशलाश्च यास्तास्तथा, तत्र गतं–गमनं हसितं–हासः भणितं–वचनं चेष्टितं–चेष्टा विलासो–नेत्रविकारः, यदाह–"द्वावो मुखविकारः स्यात्, भावश्चित्तसमुद्भवः। विलासो नेत्रजो ज्ञेयो, विभ्रमो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे आगता: देवी-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२६]

दीप अनुक्रम [२६]

भ्रूसमुद्भवः ॥ १ ॥" सललितः–समाधुर्यः संलापः–परस्परभाषणम्, आह च–"संलापो भाषणं मिथः" अथवा ललितेन सह यः संलापः स तथा, ललितलक्षणं चेदम्–"हस्तपादाङ्गविन्यासो, भ्रूनेत्रोष्ठप्रयोजितः । सौन्दर्यं कामिनीनां यल्ललितं तत्प्रकीर्तितम् ॥ १ ॥" उपचारः–पूजा, 'सुन्दरस्तनजघनवदनकरचरणनयनलावण्यरूपयौवनविलासकलिताः' सुन्दराः स्तनादिनयनान्ता अवयवा यासां लावण्यप्रधानरूपेण स्पृहणीयेनेत्यर्थो यौवनेन विलासेन च कलिता यास्तास्तथा, इह च विलास एवंलक्षणो ग्राह्यो, यदुक्तम्–"स्थानासनगमनानां हस्तभ्रूनेत्रकर्मणां चैव । उत्पद्यते विशेषो यः श्लिष्टः स तु विलासः स्यात् ॥ १ ॥" इति, श्लिष्ट इति सुश्लिष्टः 'सुरवधुओ'त्ति विशेष्यपदं, 'सिरीसनवणीयमउयसुकुमालतुलफासाओ' शिरीषं–शिरीषाभिधानतरुकुसुमं नवनीतं च–सक्षणं ते च ते मृदुकसुकुमारे च–अत्यन्तसुकुमारे इति विशेष्यपूर्वपदः कर्मधारयः तत्तुल्यः स्पर्शो यासां तास्तथा, 'ववगयकलिकलुसधोयनिद्धंतरयमलाओ' व्यपगते कलिकलुषे–राटीपापकर्मणी यासां तास्तथा धौतौ–प्रक्षालितौ निर्ध्मातौ दग्धौ रजः स्पृष्टावस्थो रेणुः मलस्तु बद्धावस्थं रज एवेति धौतनिर्ध्मातावित्र धौतनिर्ध्मातौ रजोमलौ यासां तास्तथा, ततः कर्मधारयः, 'सोमाउ'त्ति सोम्या–नीरुजः 'कंताओ'त्ति काम्याः 'पियदंसणाओ'त्ति सुभगाः, सुरूपा इति व्यक्तं, 'जिणभत्तिदंसणाणुरागेण हरिसियाओ'त्ति जिनं प्रति भक्त्या कृत्वा यो दर्शनानुरागो–दर्शनेच्छा स तथा तेन हर्षिताः–सञ्जातरोमाञ्चादिहर्षकायाः, 'ओवइया यावि'त्ति अवपतिताश्चाप्यवतीर्णाः, 'जिनसगासं'ति जिनसमीपे, 'दिवेण' मित्यादि देववर्णकवच्चेयं, नवरं 'ठियाओ चेव'त्ति ऊर्ध्वस्थानस्थिता इति ॥ २६ ॥

॥ ५६ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे आगताः देवी-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२७]

दीप अनुक्रम [२७]

तए णं चंपाए नयरीए सिंघाडगतिगचउक्कचच्चरचउम्मुहमहापहपहेसु महया जणसद्दे इ वा जणवूहे इ वा जणबोले इ वा जणकलकले इ वा जणुम्मी ति वा जणुक्कलिया इ वा जणसन्निवाए इ वा बहुजणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ एवं भासइ एवं पण्णवेइ एवं परूवेइ–एवं खलु देवाणुप्पिआ ! समणे भगवं महावीरे आदिगरे तित्थगरे सयंसंबुद्धे पुरिसुत्तमे जाव संपाविउकामे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे इहमागए इह संपत्ते इह समोसढे इहेव चंपाए णयरीए बाहिं पुण्णभद्दे चेइए अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ।

'तए णं'ति ततोऽनन्तरं, णमित्यलङ्कारे, सिंघाडयेत्यादावयं वाक्यार्थः–सिङ्घाटकादिषु यत्र महाजनशब्दादयः तत्र बहुजनोऽन्योऽन्यस्यैवमाख्यातीति, तत्र सिङ्घाटकं–सिङ्घाटकाभिधानफलविशेषाकारं स्थानं त्रिकोणमित्यर्थः त्रिकं–यत्र स्थाने रथ्यात्रयमीलको भवति चतुष्कं–यत्र रथ्याचतुष्कमीलकः स्यात् चत्वरं–यत्र बहवो मार्गा मिलन्ति चतुर्मुखं–तथाविधदेवकुलादि महापथो–राजमार्गः पन्था–रथ्यामात्रं 'महयाजनसद्दे इ वा' महान् जनशब्दः–परस्परालापादिरूपः इकारो वाक्यालङ्कारार्थो वाशब्दः पदान्तरापेक्षया समुच्चयार्थः, अथवा 'सद्देइ व'त्ति इह सन्धिप्रयोगादितिशब्दो द्रष्टव्यः, स चोपप्रदर्शने, ततश्च यत्र महान् जनशब्दः इति तद्वस्तु, क्वचित् 'बहुजणसद्दे इ व'त्ति पाठो व्यक्तश्च, यत्र च जनव्यूह इति वा–लोकसमूहः, परस्परेण वा पदार्थानां विशेषेणोहनं वर्तत इत्यर्थः, एवं सर्वत्र, क्वचित्पठ्यते–'जणवाए इ वा जणुल्लावे इ वा' इति तत्र जनवादो–जनानां परस्परेण वस्तुविचारणं उल्लापस्तु–तेषामेव काक्वा वर्णनम्, आह च–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२७]

दीप अनुक्रम [२७]

"स्यात्सम्भाषणमालापः, प्रलापोऽनर्थकं वचः । काका वर्णनमुल्लापः, संलापो भाषणं मिथः ॥ १ ॥" एवं बोलः–अव्यक्तवर्णो ध्वनिः, कलकलः–स एवोपलभ्यमानवर्णविभागः, ऊर्मिः–सम्बाधः उत्कलिका–लघुतरः समुदाय एव सन्निपातः–अपरापरस्थानेभ्यो जनानामेकत्र मीलनमिति, 'एव'मिति वक्ष्यमाणप्रकारं वस्तु 'आइक्खइ'त्ति, आख्याति सामान्येन 'भासइ'त्ति भाषते विशेषतः, एतदेवार्थद्वयं पदद्वयेनाह–'प्रज्ञापयति प्ररूपयति चे'ति, अथवा आख्याति–सामान्यतः भाषते–विशेषतः प्रज्ञापयति–व्यक्तपर्यायवचनतः प्ररूपयति–उपपत्तितः 'इह आगए'त्ति चम्पायाम् 'इह संपत्ते'त्ति पूर्णभद्रे 'इह समोसढे'त्ति साधूचितावग्रहे, एतदेवाह–'इह चंपाए' इत्यादि 'अहापडिरूवं'ति यथाप्रतिरूपम् उचितमित्यर्थः ।

तं महप्फलं खलु भो देवाणुप्पिया ! तहारूवाणं अरहंताणं भगवंताणं णामगोअस्सवि सवणताए, किमंगपुण अभिगमणवंदणणमंसणपडिपुच्छणपज्जुवासणयाए ?, एक्कस्सवि आयरियस्स धम्मिअस्स सुवयणस्स सवणताए ?, किमंगपुण विउलस्स अत्थस्स गहणयाए ?, तं गच्छामो णं देवाणुप्पिया ! समणं भगवं महावीरं वंदामो णमंसामो सक्कारेमो सम्माणेमो कल्लाणं मंगलं देवयं चेइअं [विणएणं] पज्जुवासामो एतं णे पेच्चभवे इहभवे अ हियाए सुहाए खमाए निस्सेअसाए आणुगामिअत्ताए भविस्सइत्तिकट्टु बहवे उग्गा उग्गपुत्ता भोगा भोगपुत्ता

'तं महप्फलं'ति यस्मादेवं तस्मान्महद्–विशिष्टं फलम्–अर्थो भवतीति गम्यं, 'तहारूवाणं'ति तत्प्रकारस्वभावानां महाफलजननस्वभावानामित्यर्थः, 'णामगोयस्सवि'त्ति नाम्नो–यादृच्छिकाभिधानस्य गोत्रस्य–गुणनिष्पन्नाभिधानस्य 'सव-

॥ ५७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे निर्गताः जन-समूहानां वर्णनं

प्रत सूत्रांक [२७] दीप अनुक्रम [२७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

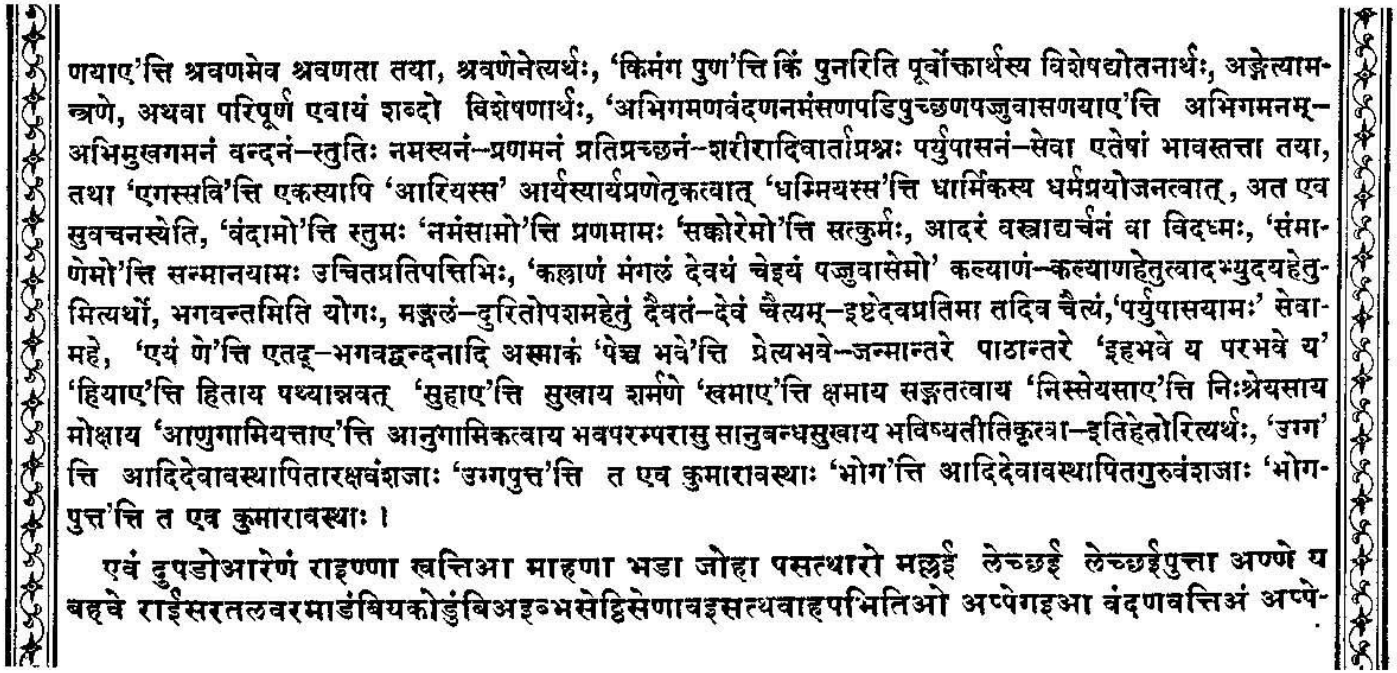

णयाए'त्ति श्रवणमेव श्रवणता तया, श्रवणेनेत्यर्थः, 'किमंग पुण'त्ति किं पुनरिति पूर्वोक्तार्थस्य विशेषद्योतनार्थः, अङ्गेत्यामन्त्रणे, अथवा परिपूर्ण एवायं शब्दो विशेषणार्थः, 'अभिगमणवंदणनमंसणपडिपुच्छणपज्जुवासणयाए'त्ति अभिगमनम्–अभिमुखगमनं वन्दनं–स्तुतिः नमस्यनं–प्रणमनं प्रतिप्रच्छनं–शरीरादिवार्ताप्रश्नः पर्युपासनं–सेवा एतेषां भावस्तत्ता तया, तथा 'एगस्सवि'त्ति एकस्यापि 'आरियस्स' आर्यस्यार्यप्रणेतृकत्वात् 'धम्मियस्स'त्ति धार्मिकस्य धर्मप्रयोजनत्वात्, अत एव सुवचनस्येति, 'वंदामो'त्ति स्तुमः 'नमंसामो'त्ति प्रणमामः 'सक्कारेमो'त्ति सत्कुर्मः, आदरं वस्त्राद्यर्चनं वा विदध्मः, 'संमाणेमो'त्ति सन्मानयामः उचितप्रतिपत्तिभिः, 'कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासेमो' कल्याणं–कल्याणहेतुत्वादभ्युदयहेतुमित्यर्थो, भगवन्तमिति योगः, मङ्गलं–दुरितोपशमहेतुं दैवतं–देवं चैत्यम्–इष्टदेवप्रतिमा तदिव चैत्यं,'पर्युपासयामः' सेवामहे, 'एयं णे'त्ति एतद्–भगवद्वन्दनादि अस्माकं 'पेच्च भवे'त्ति प्रेत्यभवे–जन्मान्तरे पाठान्तरे 'इहभवे य परभवे य' 'हियाए'त्ति हिताय पथ्यान्नवत् 'सुहाए'त्ति सुखाय शर्मणे 'खमाए'त्ति क्षमाय सङ्गतत्वाय 'निस्सेयसाए'त्ति निःश्रेयसाय मोक्षाय 'आणुगामियत्ताए'त्ति आनुगामिकत्वाय भवपरम्परासु सानुबन्धसुखाय भविष्यतीतिकृत्वा–इतिहेतोरित्यर्थः, 'उग्ग'त्ति आदिदेवावस्थापितारक्षवंशजाः 'उग्गपुत्त'त्ति त एव कुमारावस्थाः 'भोग'त्ति आदिदेवावस्थापितगुरुवंशजाः 'भोगपुत्त'त्ति त एव कुमारावस्थाः ।

एवं दुपडोआरेणं राइण्णा खत्तिआ माहणा भडा जोहा पसत्थारो मल्लई लेच्छई लेच्छईपुत्ता अण्णे य बहवे राईसरतलवरमाडंबियकोडुंबिअइब्भसेट्ठिसेणावइसत्थवाहपभितिओ अप्पेगइआ वंदणवत्तिअं अप्पे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे निर्गताः जन-समूहानां वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२७]

दीप अनुक्रम [२७]

गइआ पूअणवत्तिअं एवं सक्कारवत्तियं सम्माणवत्तियं दंसणवत्तियं कोऊहलवत्तियं अप्पेगइआ अट्ठविणिच्छयहेउं अस्सुयाइं सुणेस्सामो सुयाइं निस्संकियाइं करिस्सामो अप्पेगइआ अट्ठाइं हेऊइं कारणाइं वागरणाइं पुच्छिस्सामो ।

एवं पदद्वयोच्चारणेन शेषपदानि ज्ञेयानि, तत्र 'राजन्यका' भगवद्वयस्यवंशजाः, क्वचित्पठ्यते 'इक्खागा नाया कोरव्वा' तत्रेक्ष्वाकवो–नाभेयवंशजाः नायत्ति–नागवंश्या ज्ञातवंशा वा कोरव्वत्ति–कुरुवंशजाः खत्तियत्ति–सामान्यराजकुलीनाः माहणत्ति–प्रतीताः भडत्ति–शूराः जोहत्ति–योधाः सहस्रयोधादयः पसत्थारोत्ति–धर्मशास्त्रपाठकाः 'मल्लई लेच्छइ'त्ति मल्लकिनो लेच्छकिनश्च राजविशेषाः, यथा श्रूयन्ते चेटकराजस्याष्टादश गणराजाः–'नवमल्लई नवलेच्छई कासीकोसलगा अट्ठारस गणरायाणो' इति, 'राईसरतलवरमाडंबियकोडुंबियइब्भसेट्ठिसेणावइसत्थवाहपभितिओ'त्ति राजानो–माण्डलिका ईश्वरा–युवराजाः, अणिमाद्यैश्वर्ययुक्ता इति केचित्, तलवराः–परितुष्टनरपतिवितीर्णपट्टबन्धविभूषिता राजस्थानीयाः माण्डविकाः–मण्डपाधिपाः कौटुम्बिकाः–कतिपयकुटुम्बप्रभवोऽवलगकाः इभ्याः–यद्द्रव्यनिचयान्तरितो महेभो न दृश्यते, श्रेष्ठिनः–श्रीदेवताध्यासितसौवर्णपट्टविभूषितोत्तमाङ्गाः सेनापतयः–नृपतिनिरूपिताश्चतुरङ्गसैन्यनायकाः सार्थवाहाः–सार्थनायकाः 'वंदणवत्तियं'ति वन्दनप्रत्ययं वन्दनार्थमित्यर्थः, 'अट्ठाइं हेऊइं कारणाइं वागरणाइं पुच्छिस्सामो'त्ति क्वचिद् दृश्यते, तत्र अर्थान्–जीवादीन् हेतून्–तद्गमकानन्वयव्यतिरेकयुक्तान् कारणानि–उपपत्तिमात्राणि, यथा निरुपमसुखः सिद्धो, ज्ञानानावाधत्वप्रकर्षादिति, व्याकरणानि–परप्रश्नितार्थोत्तररूपाणि ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे निर्गताः जन-समूहानां वर्णनं

प्रत सूत्रांक [२७] दीप अनुक्रम [२७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

अप्पेगइआ सव्वओ समंता मुण्डे भवित्ता अगाराओ अणगारिअं पव्वइस्सामो, पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जिस्सामो, अप्पेगइआ जिणभत्तिरागेण अप्पेगइआ जीअमेअंतिकट्टु पहाया कयबलिकम्मा कयकोउयमंगलपायच्छित्ता सिरसाकंठेमालकडा आविद्धमणिसुवण्णा कप्पियहारऽद्धहारतिसरयपालंबपलंबमाणकडिसुत्तयसुकयसोहाभरणा पवरवत्थपरिहिया चंदणोलित्तगायसरीरा।

'कयबलिकम्म'त्ति कृतं बलिकर्म स्वगृहदेवतानां यैस्ते तथा, 'कयकोउयमंगलपायच्छित्त'त्ति कृतानि कौतुकमङ्गलान्येव प्रायश्चित्तानि–दुःस्वप्नादिविघातार्थमवश्यंकरणीयत्वाद् यैस्ते तथा, तत्र कौतुकानि–मषीतिलकादीनि मङ्गलानि तु–सिद्धार्थकदध्यक्षतादीनि 'उच्छोलणयधोय'त्ति क्वचिद्दृश्यते, तत्र उच्छोलनेन–प्रभूतजलक्षालनक्रियया धौताः–धौतगात्रा ये ते तथा, इदं च स्नानस्य प्रचुरजलत्वसूचनार्थं विशेषणं, स्नानव्यतिरिक्तप्रयोजनगतं वेदमिति, 'सिरसाकंठेमालकड'–त्ति शिरसा कण्ठे च माला कृता–धृता यैस्ते तथा, 'आविद्धमणिसुवण्ण'त्ति आविद्धं–परिहितं 'कप्पियहारऽद्धहारतिसरयपालंबपलंबमाणकडिसुत्तसुकयसोहाभरणा' कल्पितानि–इष्टानि रचितानि वा हारादीनि कटीसूत्रान्तानि येषामन्यानि च सुकृतशोभान्याभरणानि येषां ते तथा, 'पवरवत्थपरिहिय'त्ति निवसितप्रधानवाससः 'चंदणोलित्तगायसरीरा' चन्दनानुलिप्तानि गात्राणि यत्र तत्तथाविधं शरीरं येषां ते तथा।

अप्पेगइआ हयगया एवं गयगया रहगया सिबियागया संदमाणियागया अप्पेगइआ पायविहारचारिणो पुरिसवग्गुरापरिक्खित्ता महया उक्किट्ठिसीहणायबोलकलकलरवेणं पक्खुब्भिअमहासमुद्दरवभूतंपिव करे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थं निर्गताः जन-समूहानां वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२७]

दीप अनुक्रम [२७]

माणा चंपाए णयरीए मज्झंमज्झेणं णिगच्छंति २ त्ता जेणेव पुण्णभद्दे चेइए तेणेव उवागच्छंति २ त्ता समणस्स भगओ महावीरस्स अदूरसामंते छत्ताईए तित्थयराइसेसे पासंति, पासित्ता जाणवाहणाइं ठावइंति, २ त्ता जाणवाहणेहिंतो पच्चोरुहंति, पच्चोरुहित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेंति, करित्ता वंदंति णमंसंति, वंदित्ता णमंसित्ता णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणा णमंसमाणा अभिमुहा विणएणं पंजलिउडा पज्जुवासंति ॥ (सू० २७) ॥

वाचनान्तराधीतमथ पदपञ्चकं 'जाणगय'त्ति यानानि–शकटादीनि 'जुग्गगय'त्ति युग्यानि–गोल्लविषयप्रसिद्धानि जम्पानानि–द्विहस्तप्रमाणानि चतुरस्राणि वेदिकोपशोभितानि 'गिल्लि'त्ति हस्तिन उपरि कोल्लरूपा या मानुषं गिलतीवेति 'थिल्लि'त्ति लाटानां यानि अड्डपल्यानानि तान्यन्यविषयेषु थिल्लीओत्ति अभिधीयन्ते 'पवहण'त्ति प्रवहणानि वेगसरादीनि 'सीय'त्ति शिबिकाः कूटाकाराच्छादिता जम्पानविशेषाः 'संदमाणिय'त्ति स्यन्दमानिकाः पुरुषप्रमाणायामा जम्पानविशेषा एव 'पायविहारचारेणं' पादविहाररूपो यश्चारः–सञ्चरणं स तथा तेन, 'पुरिसवागुर'त्ति वागुरा–मृगबन्धनं पुरुषो वागुरेव सर्वतोऽवस्थानात् पुरुषवागुरा 'वग्गावग्गिं गुम्मागुम्मिं'ति क्वचिद्दृश्यते, तत्र वर्गः–समानजातीयवृन्दं वर्गेण वर्गेण च भूत्वा वर्गावर्गिं अत एवेहाव्ययीभावसमासः, गुम्मागुम्मिंमिति–गुल्मं–वृन्दमात्रं गुल्मेन च गुल्मेन च भूत्वेति गुल्मागुल्मि, 'महय'त्ति महता, रवेणेति योगः, 'उक्कुट्ठिसीहनायबोलकलकलरवेणं'ति उत्कृष्टिश्च–आनन्दमहाध्वनिः सिंहनादश्च–प्रतीतः बोलश्च–वर्णव्यक्तिवर्जितो ध्वनिरेव कलकलश्च–व्यक्तवचनः स एव एतल्लक्षणो यो रवः स तथा तेन, 'पक्खुब्भियमहा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे निर्गताः जन-समूहानां वर्णनं

प्रत सूत्रांक [२७] दीप अनुक्रम [२७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

समुद्दरवभूयं पिव करेमाण'त्ति प्रक्षुभितमहाजलधेर्घोषप्राप्तमिव–तन्मयमिव नगरं विदधाना इत्यर्थः, क्वचिदिदं पदचतुष्टयं दृश्यते–'पायदद्दरेणं भूमिं कंपेमाण'त्ति त्वरितगमनजनितपादप्रहारेण, 'अंबरतलमिव फोडेमाण'त्ति पादपातप्रतिरवेणाकाशं स्फोटयन्त इव, 'एगदिसिं'ति एकया दिशा पूर्वोक्तलक्षणया, 'एगाभिमुह'त्ति एकं भगवन्तमभि–लक्षणीकृत्य मुखं येषां ते एकाभिमुखाः, 'तित्थगराइसेसे'त्ति तीर्थकरातिशेषान् जिनातिशयान्, 'जाणवाहणाइं ठावइंति'त्ति यानानि–शकटादीनि वाहनानि–गवादीनि स्थापयन्ति–स्थिरीकुर्वन्ति, क्वचिद् 'विट्ठब्भंती'ति दृश्यते, तत्र विशेषेण स्तम्भयन्ति–निश्चलीकुर्वन्ति, इतो वाचनान्तरगतं बहु लिख्यते–'जाणाइं मुयंति'त्ति भुवि विन्यस्यन्ति, 'वाहणाइं विसज्जेंति'त्ति चरणार्थं मुत्कलयन्ति, 'पुप्फतंबोलाइयं आउहमाइयं सच्चित्ताल्कारं'ति सचित्तं च–सचेतनमलङ्कारं च–राजलक्षणं च विसर्जयन्तीति योगः, किंरूपं सचित्तमित्याह–पुष्पताम्बूलादिकम्, आदिशब्दात् तथाविधफलादिग्रहः, तथा अलङ्कारं च किंविधमित्याह–आयुधादिकम्, आयुधं–खड्गादि आदिशब्दाच्छत्रचामरमुकुटपरिग्रहः, 'पाहणाओ य'त्ति उपानहौ च, 'एगसाडियं उत्तरासंगं'ति एकशाटकवन्तमुत्तरीयविन्यासविशेषं, 'आयंत'त्ति आचान्ताः–शौचार्थं कृतजलस्पर्शाः, 'चोक्ख'त्ति आचमनादपनीताशुचिद्रव्याः, 'परमसुईभूय'त्ति अत एवात्यर्थं शुचीभूताः, 'अभिगमेणं'ति उपचारेण, 'अभिगच्छंति' भगवन्तमुपचरन्ति, 'चक्खुप्फासे'त्ति दर्शने 'मणसा एगत्तीभावकरणेणं'ति अनेकत्वस्य एकत्वस्य भवनम् एकत्वीभावस्तस्य यत् करणं तत्तथा तेन एकत्वीभावकरणेन, आत्मन इति गम्यते, मनसः एकाग्रतयेत्यर्थः, कायिकपर्युपासनामाह–'सुसमाहियपसंतसाहरियपाणिपाया' सुसमाहितैः–बहिर्वृत्त्याऽत्यन्तनिभृतैः प्रशान्तैः–अन्तर्वृत्त्या उपशान्तैः सद्भिः संहृतं–संलीनी-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थं निर्गताः जन-समूहानां वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२७]

दीप अनुक्रम [२७]

कृतं पाणिपादं यैस्ते तथा, अत एव 'अंजलिमउलियहत्था' अञ्जलिना–अञ्जलिरूपतया मुकुलितौ–मुकुलाकारौ कृतौ हस्तौ यैस्ते तथा, वाचिकपर्युपासनामाह–'एवमेयं भंते'त्ति एवमेतद्भदन्त !–भट्टारकेति सामान्यतः 'अवितहमेयं'ति विशेषतः, अत एव 'असंदिद्धमेयं'ति शङ्काया अविषय इत्यर्थः, अत एव 'इच्छियमेयं'ति इष्टमस्माकमेतत्, अत एव 'पडिच्छियमेयं'ति भगवन्मुखात् पतत् प्रतीप्सितमागृहीतमेतत्,इह च किञ्चिदिष्टमेव इष्टमन्यत् प्रतीप्सितमेवेत्यत उच्यते–'इच्छियपडिच्छियमेयं'ति, 'सच्चे णं एसमट्ठे' प्राणिहितोऽयमर्थ इति,'माणसियाए' 'तच्चित्त'त्ति तस्मिन् भगवद्वचने चित्तं–भावमनो येषां ते तच्चित्ताः, सामान्योपयोगापेक्षया वा तच्चित्ताः, 'तम्मण'त्ति तन्मनसो द्रव्यमनः प्रतीत्य विशेषोपयोगं वा, 'तल्लेस्स'त्ति तल्लेश्याः भगवद्वचनगतशुभात्मपरिणामविशेषाः, लेश्या हि कृष्णादिद्रव्यसाचिव्यजनित आत्मपरिणामः, तदाह–कृष्णादिद्रव्यसाचिव्यात्, परिणामो य आत्मनः। स्फटिकस्येव तत्रायं, लेश्याशब्दः प्रयुज्यते ॥ १ ॥ ''तयज्झवसिय'त्ति इहाध्यवसायः अध्यवसितं तच्चित्तत्वादिभावयुक्तानां सतां तस्मिन्–भगवद्वचने एवाध्यवसितं क्रियासम्पादनविषयं येषां ते तदध्यवसिताः,'तत्तिव-ज्झवसाण'त्ति तस्मिन्नेव–भगवद्वचने तीव्रमध्यवसानं–श्रवणविधिक्रियाप्रयत्नविशेषरूपं येषां ते तथा,'तदप्पियकरण'त्ति तस्मिन्–भगवत्यर्पितानि करणानि–इन्द्रियाणि शब्दरूपादिषु श्रोत्रचक्षुरादीनि यैस्ते तदर्पितकरणाः,'तयट्ठोवउत्त'त्ति तस्य–भगवद्वचनस्य योऽर्थस्तत्रोपयुक्ता ये ते तदर्थोपयुक्ताः, 'तब्भावणाभाविय'त्ति तेन–भगवद्वचनेन तदर्थेन वा यका भावना–वासना प्राक्तनमुहूर्ते तया भाविता–वासिता न वासनान्तरमुपगता ये ते तद्भावनाभाविताः, अत एव 'एगमण'त्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे निर्गताः जन-समूहानां वर्णनं

प्रत सूत्रांक [२७] दीप अनुक्रम [२७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

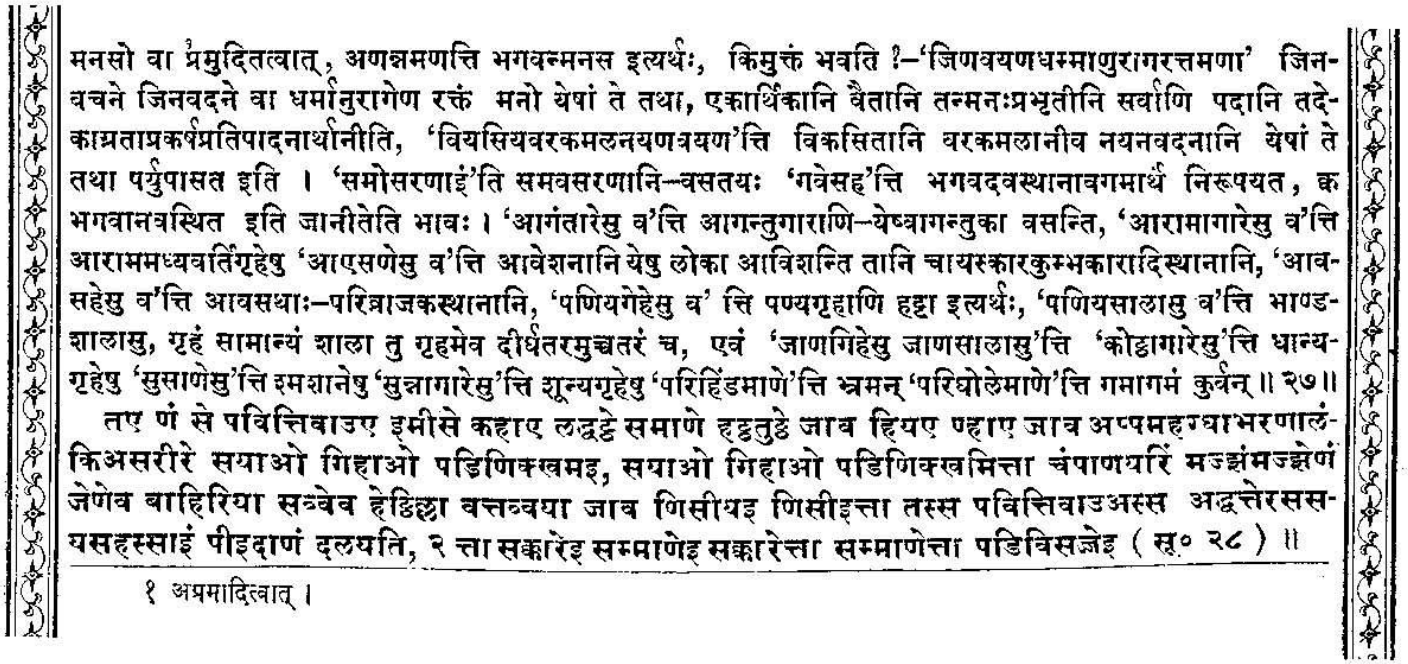

मनसो वा प्रमुदितत्वात्[1], अणन्नमणत्ति भगवन्मनस इत्यर्थः, किमुक्तं भवति ?–'जिणवयणधम्माणुरागरत्तमणा' जिनवचने जिनवदने वा धर्मानुरागेण रक्तं मनो येषां ते तथा, एकार्थिकानि वैतानि तन्मनःप्रभृतीनि सर्वाणि पदानि तदेकाग्रताप्रकर्षप्रतिपादनार्थानीति, 'वियसियवरकमलनयणवयण'त्ति विकसितानि वरकमलानीव नयनवदनानि येषां ते तथा पर्युपासत इति । 'समोसरणाइं'ति समवसरणानि–वसतयः 'गवेसह'त्ति भगवदवस्थानावगमार्थं निरूपयत, क्व भगवानवस्थित इति जानीतेति भावः । 'आगंतारेसु व'त्ति आगन्तुगाराणि–येष्वागन्तुका वसन्ति, 'आरामागारेसु व'त्ति आराममध्यवर्तिगृहेषु 'आएसणेसु व'त्ति आवेशनानि येषु लोका आविशन्ति तानि चायस्कारकुम्भकारादिस्थानानि, 'आवसहेसु व'त्ति आवसथाः–परिव्राजकस्थानानि, 'पणियगेहेसु व' त्ति पण्यगृहाणि हट्टा इत्यर्थः, 'पणियसालासु व'त्ति भाण्डशालासु, गृहं सामान्यं शाला तु गृहमेव दीर्घतरमुच्चतरं च, एवं 'जाणगिहेसु जाणसालासु'त्ति 'कोट्ठागारेसु'त्ति धान्यगृहेषु 'सुसाणेसु'त्ति श्मशानेषु 'सुन्नागारेसु'त्ति शून्यगृहेषु 'परिहिंडमाणे'त्ति भ्रमन् 'परिघोलेमाणे'त्ति गमागमं कुर्वन् ॥ २७ ॥

तए णं से पवित्तिवाउए इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठतुट्ठे जाव हियए ण्हाए जाव अप्पमहग्घाभरणालंकिअसरीरे सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमित्ता चंपाणयरिं मज्झंमज्झेणं जेणेव बाहिरिया सव्वेव हेट्ठिल्ला वत्तव्वया जाव णिसीयइ णिसीइत्ता तस्स पवित्तिवाउअस्स अद्धत्तेरससयसहस्साइं पीइदाणं दलयति, २ त्ता सक्कारेइ सम्माणेइ सक्कारेत्ता सम्माणेत्ता पडिविसज्जेइ (सू० २८) ॥

१ अप्रमादित्वात् ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थं निर्गताः जन-समूहानां वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२९]

दीप अनुक्रम [२९]

तए णं से कूणिए राया भंभसारपुत्ते बलवाउअं आमंतेइ आमंतेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिआ ! आभिसेक्कं हत्थिरयणं पडिकप्पेहि, हयगयरहपवरजोहकलिअं च चाउरंगिणिं सेणं सण्णाहेहि, सुभद्दापमुहाण य देवीणं बाहिरियाए उवट्ठाणसालाए पाडिएक्कपाडिएक्काइं जुत्ताभिमुहाइं जुत्ताइं जाणाइं उवट्ठवेह, चंपं णयरिं सब्भिंतरबाहिरिअं आसित्तसित्तसुइसम्मट्ठरत्थंतरावणवीहिअं मंचाइमंचकलिअं णाणाविहरागउच्छियज्झयपडागाइपडागमंडिअं लाउल्लोइयमहियं गोसीससरसरत्तचंदणजावगंधवट्टिभूअं करेह कारवेह करित्ता कारवेत्ता एअमाणत्तिअं पच्चप्पिणाहि, निज्जाइस्सामि समणं भगवं महावीरं अभिवंदए ॥ (सू० २९) ॥

प्रकृतवाचनाऽनुश्रीयते–'बलवाउयं'ति बलव्यापृतं–सैन्यव्यापारपरायणम् 'आभिसेक्कं'ति अभिषेकमर्हतीत्याभिषेक्यं, 'हत्थिरयणं'ति प्रधानहस्तिनं 'पडिकप्पेहि'त्ति प्रतिकल्पय सन्नद्धं कुरु 'पाडेक्कं'ति प्रत्येकमेकैकशः 'जत्ताभिमुहाइं'ति गमनाभिमुखानि 'जुत्ताइं'ति युक्तानि–बलीवर्दादियुतानि, क्वचित् युग्यानि पठ्यन्ते, तानि च जम्पानविशेषाः, 'जाणाइं'ति शकटानि 'सब्भिंतरबाहिरियं'ति सहाभ्यन्तरेण नगरमध्यभागेन बाहिरिका–नगरबहिर्भागो यत्र तत्तथा, क्रियाविशेषणं चेदम्, 'आसित्तसंमज्जिओवलित्तं' आसिक्ताम्–उदकच्छटेन सम्मार्जितां–कचवरशोधनेन उपलिप्तां–गोमयादिना, केष्वित्याह–'सिंघाडगतिगचउक्कचच्चरचउम्मुहमहापहपहेसु' इदं च वाक्यद्वयं क्वचिन्नोपलभ्यते, तथा 'आसित्तसित्तसुइसम्मट्ठरत्थंतरावणवीहियं' आसिक्तानि–ईषत्सिक्तानि सिक्तानि च–तदन्यथा अत एव शुचीनि–पवित्राणि संमृष्टानि कचवरापनयनेन

॥ ६१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

प्रत सूत्रांक [२९]

दीप अनुक्रम [२९]

रथ्यान्तराणि–रथ्यामध्यानि आपणवीथयश्च–हट्टमार्गा यत्र सा तथा तां , 'मंचाइमंचकलियं' मञ्चा–मालकाः प्रेक्षणद्रष्टृजनोपवेशननिमित्तम् अतिमञ्चाः–तेषामप्युपरि ये तैः कलिता या सा तथा तां, 'णाणाविहरागउच्छियज्झयपडागाइपडागमंडियं' नानाविधरागैरुच्छ्रितैः–ऊर्ध्वीकृतैः ध्वजैः–चक्रसिंहादिलाञ्छनोपेतैः पताकाभिः–तदितराभिरतिपताकाभिश्च–पताकोपरिवर्तिनीभिर्मण्डिता या सा तथा तां, शेषो नगरीवर्णकश्चैत्यवर्णक इवानुगमनीयः, 'आणत्तिअं पच्चप्पिणाहि'त्ति 'आज्ञप्तिकाम्' आज्ञां प्रत्यर्पय–सम्पाद्य मम निवेदयेत्यर्थः ॥ २९ ॥

तए णं से बलवाउए कूणिएणं रण्णा एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठजावहिअए करयलपरिग्गहिअं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी–सामित्ति आणाइ विणएणं वयणं पडिसुणेइ २ त्ता हत्थिवाउअं आमंतेइ आमंतेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिआ! कूणिअस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स आभिसेक्कं हत्थिरयणं पडिकप्पेहि, हयगयरहपवरजोहकलियं चाउरंगिणिं सेणं सण्णाहेहि सण्णाहित्ता एअमाणत्तिअं पच्चप्पिणाहि । तए णं से हत्थिवाउए बलवाउअस्स एअमट्ठं सोच्चा आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ पडिसुणित्ता छेआयरियउवएसमइविकप्पणाविकप्पेहिं सुणिउणेहिं उज्जलणेवत्थहत्थपरिवत्थिअं सुसज्जं धम्मिअसण्णद्धबद्धकवइयउप्पीलियकच्छवच्छगेवेयवद्धगलवरभूसणविरायंतं अहियतेअजुत्तं सललिअवरकण्णपूरविराइअं पलंबउच्चूलमहुअरकयंधयारं चित्तपरिच्छेअपच्छयं पहरणावरणभरिअजुद्धसज्जं सच्छत्तं सज्झयं सघंटं सपडागं पंचामेलअपरिमंडिआभिरामं ओसारियजमलजुअलघंटं विज्जुपणद्धं व कालमेहं उप्पाइयपव्वयं व

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३०]

दीप अनुक्रम [३०]

चंकमंतं मत्तं गुलगुलंतं मणपवणजइणवेगं भीमं संगामियाओज्जं आभिसेक्कं हत्थिरयणं पडिकप्पेइ पडिकप्पेत्ता हयगयरहपवरजोहकलिअं चाउरंगिणिं सेणं सण्णाहेइ, सण्णाहित्ता जेणेव बलवाउए तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता एअमाणत्तिअं पच्चप्पिणइ। तए णं से बलवाउए जाणसालिअं सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिआ! सुभद्दापमुहाणं देवीणं बाहिरियाए उवट्ठाणसालाए पाडिएक्कपाडिएक्काइं जत्ताभिमुहाइं जुत्ताइं जाणाइं उवट्ठवेह २ त्ता एअमाणत्तिअं पच्चप्पिणाहि।

'हत्थिवाउए'त्ति हस्तिव्यावृतो महामात्रः, इह प्रदेशे 'आभिसेयं हत्थिरयणं'ति यत्क्वचिद् दृश्यते सोऽपपाठः, अग्रे एतस्य वक्ष्यमाणत्वात्, 'छेआयरियउवएसमइकप्पणाविकप्पेहिं' छेको–निपुणो य आचार्यः–शिल्पोपदेशदाता तस्योपदेशाद्या मतिः–बुद्धिस्तस्या ये कल्पना–विकल्पाः कृत्तिभेदास्ते तथा तैः, किंविधैः ?–'सुणिउणेहिं'ति व्यक्तं, निपुणनरैर्वा, 'उज्जलणेवत्थहत्थपरिवत्थियं'ति उज्ज्वलनेपथ्येन–निर्मलवेषेण हत्थंति–शीघ्रं परिपक्षितं–परिगृहीतं परिवृत्तं यत्तत्तथा तत्, पाठान्तरे उज्ज्वलनेपथ्यैरिति, 'सुसज्जं'ति सुष्ठु प्रगुणं, 'धम्मियसण्णद्धबद्धकवइयउप्पीलियकच्छवच्छगेवेयबद्धगलवरभूसणविरायंतं'ति धर्मणि नियुक्ता धार्मिकाः तैः सन्नद्धं–कृतसन्नाहं यत्तद्धार्मिकसन्नद्धं बद्धं कवचं–सन्नाहविशेषो यस्य तत्तथा, तदेव बद्धकवचिकम्, अथवा धर्मितादयः शब्दा एकार्था एव सन्नद्धताप्रकर्षख्यापनार्थाः, भेदो वैषामस्ति, स च रूढितोऽवसेयः, तथा उत्पीडिता–गाढीकृता कक्षा–हृदयरज्जुर्वक्षसि–उरसि यस्य तत्तथा, 'वक्षःकक्ष' इति पाठान्तरं, तथा बद्धं ग्रैवेयकं–ग्रीवाभरणं गले यस्य तत्तथा, तथा वरभूषणैर्विराजमानं यत्तत्तथा, ग्रैवेयकबद्धभूषणविराजितमिति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३०]

दीप अनुक्रम [३०]

पाठान्तरं, ततो धर्मितादीनां कर्मधारयः, अतस्तत्, 'अहियतेयजुत्तं'ति क्वचिद्दृश्यते, तत्राधिकाधिकेन–अत्यर्थमधिकेन अहितानां वा शत्रूणामहितेन–अपथ्येन तेजसा–प्रभावेण युक्तं यत्तत्तथा तत् । 'सललियवरकण्णपूरविराइयं' सललिते–लालित्योपेते वरे ये कर्णपूरे–कर्णाभरणे ताभ्यां विराजितं यत्तत्तथा तत्, 'पलंबउच्चूलमहुअरकयंधयारं' प्रलम्बान्यवचूलानि–टगकन्यस्ताधोमुखकूर्चका यस्य तत् प्रलम्बावचूलं मधुकरैः–भ्रमरैर्मदजलगन्धाकृष्टैः कृतमन्धकारं यस्य तत्तथा, ततः कर्मधारयः, अतस्तत्, वाचनान्तरं त्वेवं नेयं 'विरचितवरकर्णपूरं सललितप्रलम्बावचूलं च चामरोत्करकृतान्धकारं च यत्तत्तथा तत्, चामरोत्करकृतान्धकारता तु चामराणां कृष्णत्वात्, 'चित्तपरिच्छेयपच्छयं' चित्रः परिच्छेको–लघुः प्रच्छदो–वस्त्रविशेषो यस्य तत्तथा तत्, 'पहरणावरणभरियजुद्धसज्जं' प्रहरणावरणानाम्–आयुधकवचानां भृतं यत् युद्धसज्जं च–सङ्ग्रामप्रगुणं यत्तत्तथा तत्, पाठान्तरे 'सचापशरप्रहरणावरणभरितयुद्धसज्ज'मिति, सच्छत्रं सध्वजं सघण्टमिति व्यक्तम्, सपताकमित्यपि दृश्यते, तत्र पताका–गरुडसिंहादिचिह्नरहिताः, 'पंचामेलयपरिमंडियाभिरामं' पञ्चभिः–आमेलकैः चूडाभिः परिमण्डितमत एवाभिरामं–रम्यं यत्तत् तथा तत्, 'ओसारियजमलजुयलघंटं' अवसारितम्–अवलम्बितं यमलं–समं युगलं–द्विकं घण्टयोर्यत्र तत्तथा तत्, 'विज्जुपणद्धं व कालमेहं' घण्टाप्रहरणादीनामुज्ज्वलदीप्तियुक्तत्वेन विद्युत्कल्पत्वात् विद्युत्परिगतमिवेत्युक्तं, हस्तिदेहस्य कालत्वेन महत्त्वेन च मेघकल्पत्वात् कालमेघमित्युक्तम्, 'उप्पाइयपव्वयं व चंकमंतं' स्वाभाविकपर्वतो हि न चङ्क्रमते अत उच्यते औत्पातिकपर्वतमिव चङ्क्रम्यमाणं, पाठान्तरे तु औत्पातिकपर्वतमिव सक्खंति–साक्षात्, 'मत्तं गुलुगुलंत'मिति व्यक्तं, क्वचित् 'महामेघ'-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३०]

दीप अनुक्रम [३०]

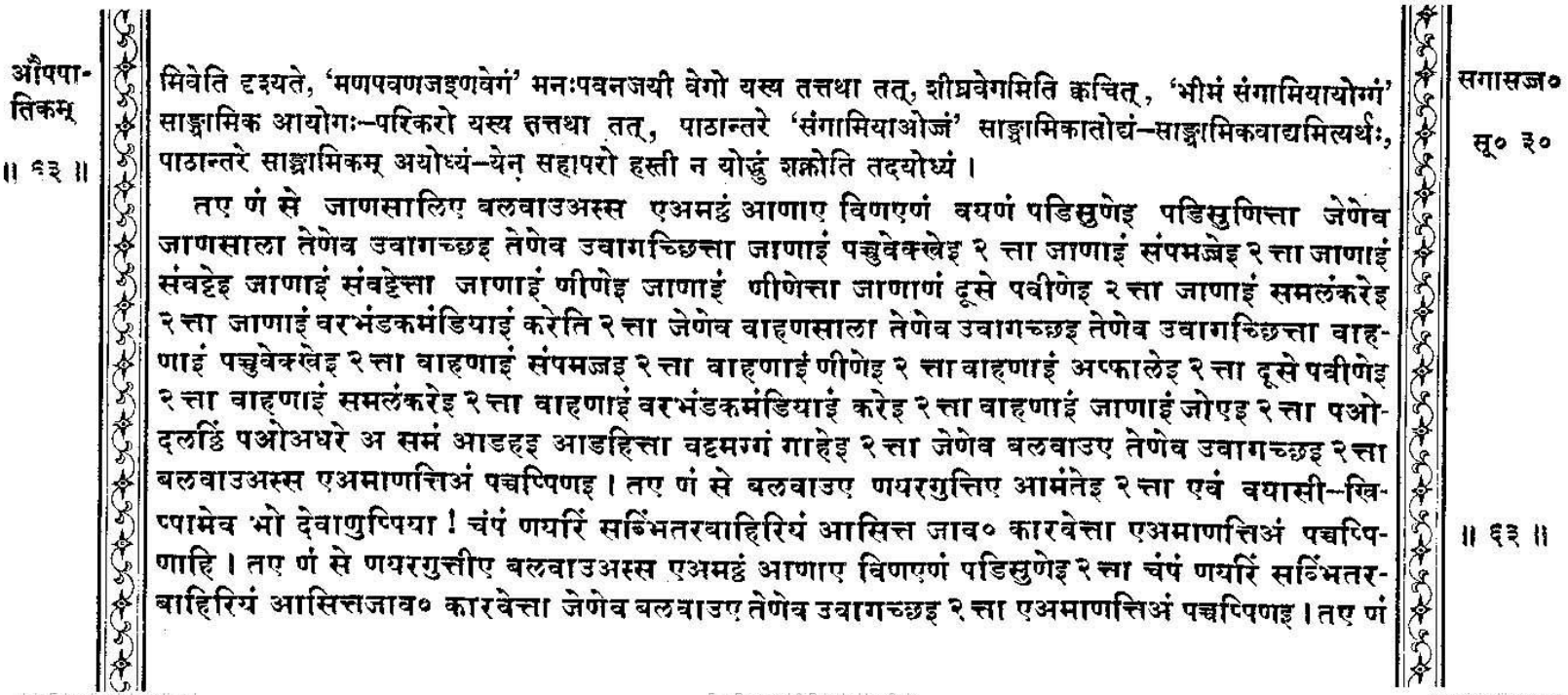

औपपातिकम् ॥ ६३ ॥

मिवेति दृश्यते, 'मणपवणजइणवेगं' मनःपवनजयी वेगो यस्य तत्तथा तत्, शीघ्रवेगमिति क्वचित्, 'भीमं संगामियायोग्गं' साङ्ग्रामिक आयोगः–परिकरो यस्य तत्तथा तत्, पाठान्तरे 'संगामियाओज्जं' साङ्ग्रामिकातोद्यं–साङ्ग्रामिकवाद्यमित्यर्थः, पाठान्तरे साङ्ग्रामिकम् अयोध्यं–येन सहापरो हस्ती न योद्धुं शक्नोति तदयोध्यं ।

तए णं से जाणसालिए बलवाउअस्स एअमट्ठं आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ पडिसुणित्ता जेणेव जाणसाला तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता जाणाइं पच्चुवेक्खेइ २ त्ता जाणाइं संपमज्जेइ २ त्ता जाणाइं संवट्टेइ जाणाइं संवट्टेत्ता जाणाइं णीणेइ जाणाइं णीणेत्ता जाणाणं दूसे पवीणेइ २ त्ता जाणाइं समलंकरेइ २ त्ता जाणाइं वरभंडकमंडियाइं करेति २ त्ता जेणेव वाहणसाला तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता वाहणाइं पच्चुवेक्खेइ २ त्ता वाहणाइं संपमज्जइ २ त्ता वाहणाइं णीणेइ २ त्ता वाहणाइं अप्फालेइ २ त्ता दूसे पवीणेइ २ त्ता वाहणाइं समलंकरेइ २ त्ता वाहणाइं वरभंडकमंडियाइं करेइ २ त्ता वाहणाइं जाणाइं जोएइ २ त्ता पओदलट्ठिं पओअधरे अ समं आडहइ आडहित्ता वट्टमग्गं गाहेइ २ त्ता जेणेव बलवाउए तेणेव उवागच्छइ २ त्ता बलवाउअस्स एअमाणत्तिअं पच्चप्पिणइ । तए णं से बलवाउए णयरगुत्तिए आमंतेइ २ त्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! चंपं णयरिं सब्भिंतरबाहिरियं आसित्त जाव० कारवेत्ता एअमाणत्तिअं पच्चप्पिणाहि । तए णं से णयरगुत्तीए बलवाउअस्स एअमट्ठं आणाए विणएणं पडिसुणेइ २ त्ता चंपं णयरिं सब्भिंतरबाहिरियं आसित्तजाव० कारवेत्ता जेणेव बलवाउए तेणेव उवागच्छइ २ त्ता एअमाणत्तिअं पच्चप्पिणइ । तए णं

सगासज्ज० सू० ३०

॥ ६३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३०]

दीप अनुक्रम [३०]

से बलवाउए कोणिअस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स आभिसेक्कं हत्थिरयणं पडिकप्पिअं पासइ हयगय जाव० सण्णाहिअं पासइ, सुभद्दापमुहाणं देवीणं पडिजाणाइं उवट्ठविआइं पासइ, चंपं णयरिं सब्भिंतरजाव० गंधवट्टिभूअं कयं पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए पीअमणे जाव हिअए जेणेव कूणिए राया भंभसारपुत्ते तेणेव उवागच्छइ २त्ता करयलजाव एवं वयासी–कप्पिए णं देवाणुप्पियाणं आभिसिक्के हत्थिरयणे हयगयपवरजोहकलिआ य चाउरंगिणी सेणा सण्णाहिआ सुभद्दापमुहाणं च देवीणं बाहिरियाए अ उवट्ठाणसालाए पाडिएक्कपाडिएक्काइं जत्ताभिमुहाइं जुत्ताइं जाणाइं उवट्ठावियाइं चंपा णयरी सब्भिंतरबाहिरिया आसित्तजाव गंधवट्टिभूआ कया, तं निज्जंतु णं देवाणुप्पिया! समणं भगवं महावीरं अभिवंदआ ॥ (सू० ३०)

'जाणाइं पच्चुवेक्खेइ'त्ति शकटादीनि प्रत्युपेक्षते–निरीक्षते 'संपमज्जेइ'त्ति विरजीकरोति, 'नीणेइ'त्ति शालाया निष्काशयति, 'संवट्टेइ'त्ति संवर्तयति एकत्र स्थाने न्यस्यति, 'दूसे पवीणेइ'त्ति दूष्याणि–तदाच्छादनवस्त्राणि प्रविनयति–अपसारयति, 'समलंकारेइ'त्ति समलङ्करोति–यन्त्रयोक्त्रादिभिः कृतालङ्काराणि करोति, 'वरभंडगमंडियाइं'ति प्रवराभरणभूषितानि, 'वाहणाइं'ति बलीवर्दादीन् 'अप्फालेइ'त्ति आस्फालयति हस्तेनाऽऽताडयति–उत्तेजयतीत्यर्थः, 'दूसे पवीणेइ'त्ति मक्षिकामशकादिनिवारणार्थं नियुक्तानि वस्त्राणि व्यपनयति 'जाणाइं जोएइ'त्ति वाहनैर्यानानि योजयतीति संबन्धयतीत्यर्थः, 'पओयलट्ठिं'ति प्रतोत्रयष्टिं–प्राजनकदण्डं, 'पओयधरे य'त्ति प्रतोत्रधरान् शकटखेटकान् 'समं'ति एककालं 'आडहइ'त्ति आदधाति नियुङ्क्ते, 'वट्टं गाहेइ'त्ति वर्त्म ग्राहयति यानानि मार्गे स्थापयतीत्यर्थः ॥ ३० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३१]

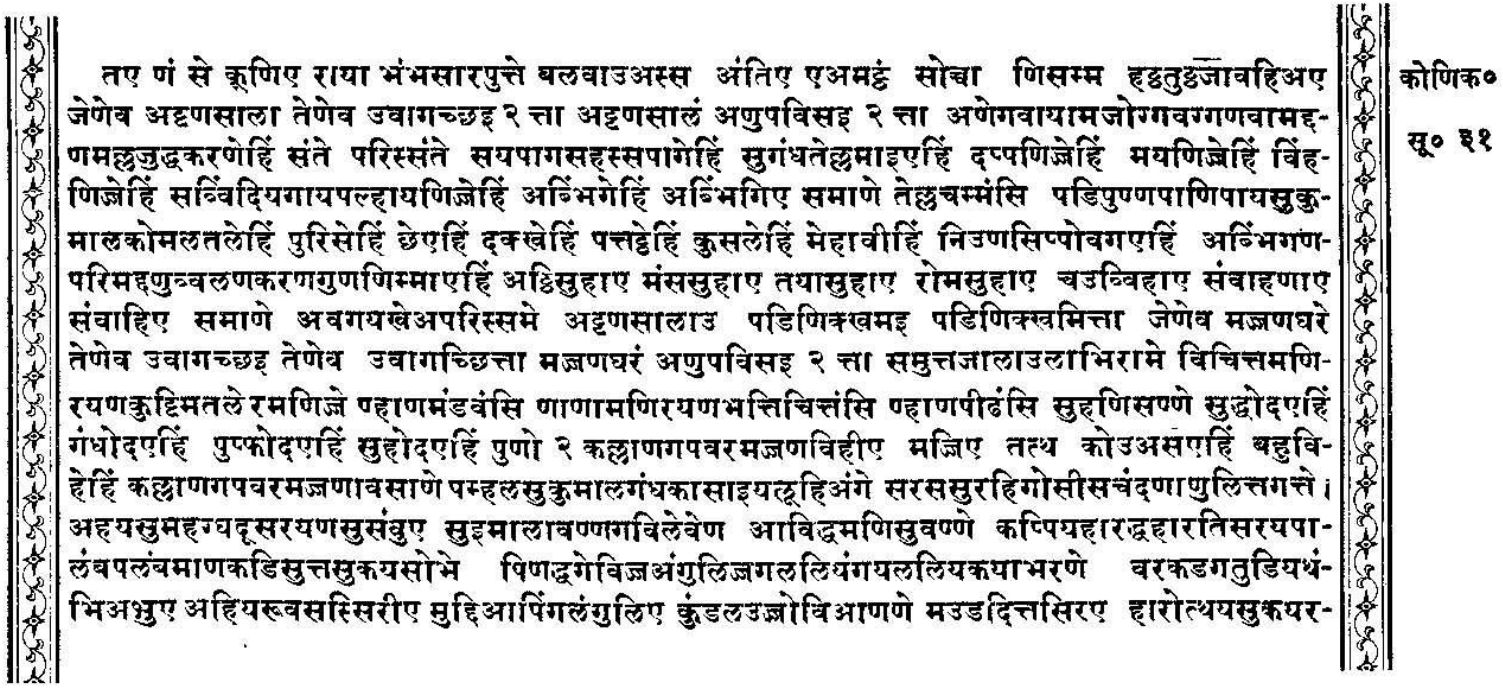

औपपातिकम् ॥ ६४ ॥

तए णं से कूणिए राया भंभसारपुत्ते बलवाउअस्स अंतिए एअमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठजावहिअए जेणेव अट्टणसाला तेणेव उवागच्छइ २ त्ता अट्टणसालं अणुपविसइ २ त्ता अणेगवायामजोग्गवग्गणवामद्दणमल्लजुद्धकरणेहिं संते परिस्संते सयपागसहस्सपागेहिं सुगंधतेल्लमाइएहिं दप्पणिज्जेहिं मयणिज्जेहिं विंहणिज्जेहिं सव्विंदियगायपल्हायणिज्जेहिं अब्भिंगेहिं अब्भिंगिए समाणे तेल्लचम्मंसि पडिपुण्णपाणिपायसुकुमालकोमलतलेहिं पुरिसेहिं छेएहिं दक्खेहिं पत्तट्ठेहिं कुसलेहिं मेहावीहिं निउणसिप्पोवगएहिं अब्भिंगणपरिमद्दणुव्वलणकरणगुणणिम्माएहिं अट्ठिसुहाए मंससुहाए तयासुहाए रोमसुहाए चउव्विहाए संवाहणाए संवाहिए समाणे अवगयखेअपरिस्समे अट्टणसालाउ पडिणिक्खमइ पडिणिक्खमित्ता जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता मज्जणघरं अणुपविसइ २ त्ता समुत्तजालाउलाभिरामे विचित्तमणिरयणकुट्टिमतले रमणिज्जे ण्हाणमंडवंसि णाणामणिरयणभत्तिचित्तंसि ण्हाणपीढंसि सुहणिसण्णे सुद्धोदएहिं गंधोदएहिं पुप्फोदएहिं सुहोदएहिं पुणो २ कल्लाणगपवरमज्जणविहीए मज्जिए तत्थ कोउअसएहिं बहुविहेहिं कल्लाणगपवरमज्जणावसाणे पम्हलसुकुमालगंधकासाइयलूहिअंगे सरससुरहिगोसीसचंदणाणुलित्तगत्ते। अहयसुमहग्घदूसरयणसुसंवुए सुइमालावण्णगविलेवेण आविद्धमणिसुवण्णे कप्पियहारद्धहारतिसरयपालंबपलंबमाणकडिसुत्तसुकयसोभे पिणद्धगेविज्जअंगुलिज्जगललियंगयललियकयाभरणे वरकडगतुडियथंभिअभुए अहियरूवसस्सिरीए मुद्दिआपिंगलंगुलिए कुंडलउज्जोविआणणे मउडदित्तसिरए हारोत्थयसुकयर-

कोणिक० सू० ३१

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३१]

इयवच्छे पालंबपलंबमाणपडसुकयउत्तरिज्जे णाणामणिकणगरयणविमलमहरिहणिउणोविअमिसिमिसंत-विरइयसुसिलिट्ठविसिट्ठलट्ठआविद्धवीरवलए ।

'अट्ठणसाल'त्ति व्यायामशाला 'अणेगवायामजोग्गवग्गणवामद्दणमल्लजुद्धकरणेहिं'ति अनेकानि यानि व्यायामाय–व्यायामनिमित्तं योग्यादीनि तानि तथा तैः, तत्र योग्या–गुणनिका वल्गनम्–उल्लङ्घनं व्यामर्दनं–परस्परस्याङ्गमोटनं मल्लयुद्धं–प्रतीतं करणानि च–अङ्गभङ्गविशेषा मल्लशास्त्रप्रसिद्धाः,'सयपागसहस्सपागेहिं'ति शतकृत्वो यत्पक्कमपरापरौषधीरसेन सह शतेन वा कार्षापणानां यत्पक्वं तच्छतपाकमेवमितरदपि, 'सुगंधतेल्लमाईएहिं'ति अत्र अभ्यङ्गैरिति योगः,आदिशब्दाद् घृतकर्पूरपानीयादिपरिग्रहः, किम्भूतैरित्याह–'पीणणिज्जेहिं'ति रसरुधिरादिधातुसमताकारिभिः 'दप्पणिज्जेहिं'ति दर्पणीयैर्बलकरैः 'मयणिज्जेहिं'ति मदनीयैर्मन्मथवर्द्धनैः 'विंहणिज्जेहिं'ति बृंहणीयैर्मांसोपचयकारिभिः 'सविंदियगायपल्हायणिज्जेहिं'ति प्रतीतं, एतानि पदानि वाचनान्तरे क्रमान्तरेणाधीयन्ते, 'तेल्लचम्मंसि'त्ति तैलाभ्यक्तस्य यत्र स्थितस्य सम्बाधना क्रियते तत्तैलचर्म, तत्र संवाहिएत्ति योगः, 'पडिपुण्णपाणिपायसुकुमालकोमलतलेहिं'ति प्रतिपूर्णानां पाणिपादानां सुकुमारकोमला-

१ न च वाच्यं 'प्राणितुर्याङ्गाणा' मिति द्वन्द्वैकत्वभावादसाधु, सिद्ध एकवचनेन कार्ये बहुवचनात्तदनित्यता, न च ततोऽसाधुरयं, यद्वाऽनेकप्राणिविवक्षया पाणिपादं च पाणिपादं च पाणिपादानि तेषामिति समाहारगर्भो द्वन्द्वः तेषां पाणिपादानामिति स्याद्, आलोच्यमेतद्विरोधेन सुधिया ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३१]

नि–अत्यन्तकोमलानि तलानि–अधोभागा येषां ते तथा तैः, 'छेएहिं'ति छेकैः–अवसरज्ञैः, द्विसप्ततिकलापण्डितैरिति वृद्धाः, 'दक्खेहिं'ति कार्याणामविलम्बितकारिभिः 'पत्तट्ठेहिं'ति प्राप्तार्थैः–लब्धोपदेशैरित्यर्थः 'कुसलेहिं'ति सम्बाधनाकर्मणि साधुभिः 'मेहावीहिं'ति मेधाविभिः–अपूर्वविज्ञानग्रहणशक्तिकैः 'निउणसिप्पोवगएहिं'ति निपुणानि–सूक्ष्माणि यानि शिल्पानि–अङ्गमर्दनादीनि तान्युपगतानि–अधिगतानि यैस्ते तथा तैः, 'अब्भंगणपरिमद्दणुव्वलणकरणगुणणिम्माएहिं'ति अभ्यङ्गनमर्दनोद्वलनानां प्रतीतार्थानां करणे ये गुणाः–विशेषास्तेषु निर्माता ये ते तथा तैः। 'अट्ठिसुहाए'त्ति अस्थ्नां सुखहेतुत्वादस्थिसुखा तया, एवं शेषाण्यपि, 'संवाहणाए'त्ति सम्बाधनया संवाहनया वा, विश्रामणयेत्यर्थः, 'अवगयखेयपरिस्समे'त्ति खेदो–दैन्यं 'खिद दैन्ये' इति वचनात् परिश्रमः–व्यायामजनितशरीरास्वास्थ्यविशेषः, 'समत्तजालाउलाभिरामे'त्ति समस्तः–सर्वो जालेन–विच्छित्तिच्छिद्रोपेतगृहावयवविशेषेणाकुलो–व्याप्तोऽभिरामश्च–रम्यो यः स तथा, पाठान्तरे समुक्तेन–मुक्ताफलयुतेन जालेनाऽऽकुलोऽभिरामश्च यः स तथा, 'विचित्तमणिरयणकुट्टिमतले'त्ति कुट्टिमतलं–मणिभूमिका, 'सुहोदएहिं'ति शुभोदकैस्तीर्थोदकैः सुखोदकैर्वा–नात्युष्णैरित्यर्थः, 'गंधोदएहिं'ति श्रीखण्डादिरसमिश्रैः 'पुप्फोदएहिं'ति पुष्परसमिश्रैः 'सुद्धोदएहिं'ति स्वाभाविकैरित्यर्थः, 'तत्थ कोउयसएहिं'ति तत्र–स्नानावसरे यानि कौतुकानां–रक्षादीनां शतानि तैः 'पम्हलसुकुमालगंधकासाइलूहियंगे' पक्ष्मला–पक्ष्मवती अत एव सुकुमाला गन्धप्रधाना काषायी–कषायरक्तशाटिका तया लूक्षितं–विरुक्षितमङ्गं–शरीरं यस्य स तथा।

॥ ६५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

प्रत सूत्रांक [३१] दीप अनुक्रम [३१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

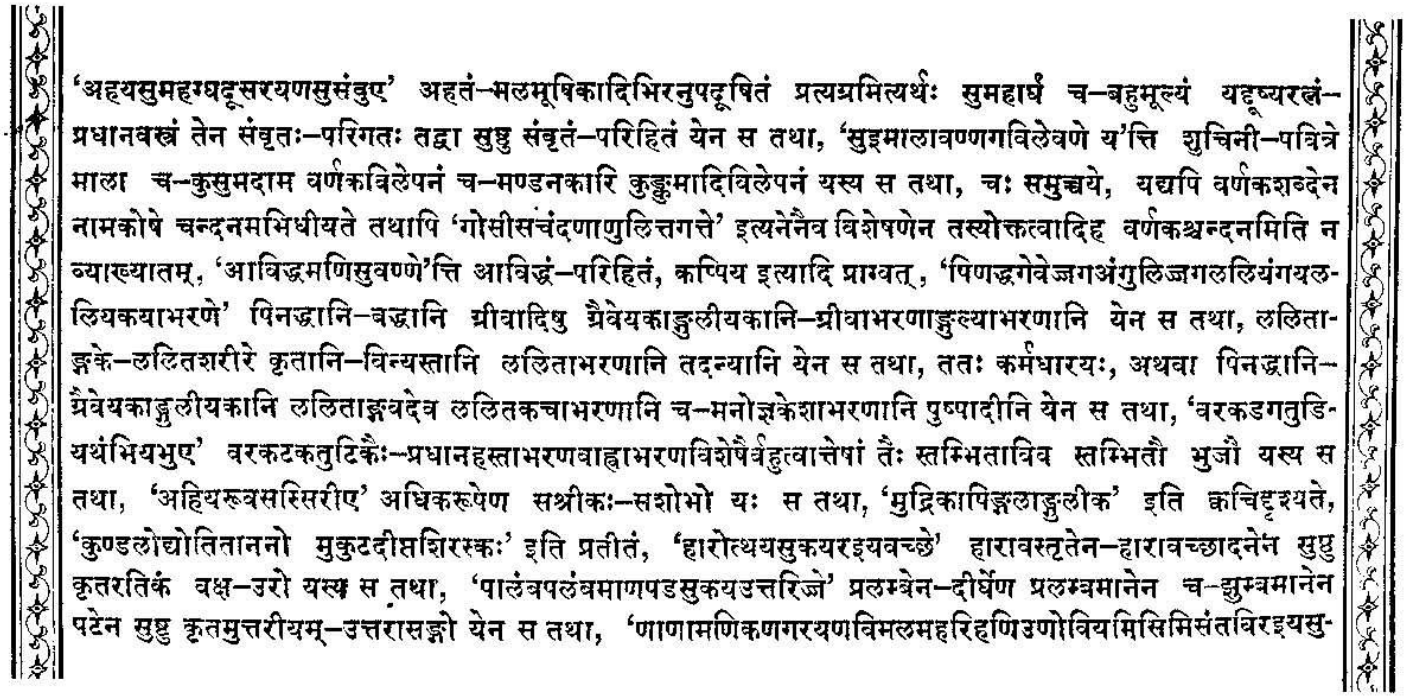

'अहयसुमहग्घदूसरयणसुसंवुए' अहतं–मलमूषिकादिभिरनुपदूषितं प्रत्यग्रमित्यर्थः सुमहार्घं च–बहुमूल्यं यद्दूष्यरत्नं–प्रधानवस्त्रं तेन संवृतः–परिगतः तद्वा सुष्ठु संवृतं–परिहितं येन स तथा, 'सुइमालावण्णगविलेवणे य'त्ति शुचिनी–पवित्रे माला च–कुसुमदाम वर्णकविलेपनं च–मण्डनकारि कुङ्कुमादिविलेपनं यस्य स तथा, चः समुच्चये, यद्यपि वर्णकशब्देन नामकोषे चन्दनमभिधीयते तथापि 'गोसीसचंदणाणुलित्तगत्ते' इत्यनेनैव विशेषणेन तस्योक्तत्वादिह वर्णकश्चन्दनमिति न व्याख्यातम्, 'आविद्धमणिसुवण्णे'त्ति आविद्धं–परिहितं, कप्पिय इत्यादि प्राग्वत्, 'पिणद्धगेवेज्जगअंगुलिज्जगललियंगयललियकयाभरणे' पिनद्धानि–बद्धानि ग्रीवादिषु ग्रैवेयकाङ्गुलीयकानि–ग्रीवाभरणाङ्गुल्याभरणानि येन स तथा, ललिताङ्गके–ललितशरीरे कृतानि–विन्यस्तानि ललिताभरणानि तदन्यानि येन स तथा, ततः कर्मधारयः, अथवा पिनद्धानि–ग्रैवेयकाङ्गुलीयकानि ललिताङ्गवदेव ललितकचाभरणानि च–मनोज्ञकेशाभरणानि पुष्पादीनि येन स तथा, 'वरकडगतुडियथंभियभुए' वरकटकतुटिकैः–प्रधानहस्ताभरणबाह्याभरणविशेषैर्बहुत्वात्तेषां तैः स्तम्भिताविव स्तम्भितौ भुजौ यस्य स तथा, 'अहियरूवसस्सिरीए' अधिकरूपेण सश्रीकः–सशोभो यः स तथा, 'मुद्दिकापिङ्गलाङ्गुलीक' इति क्वचिद्दृश्यते, 'कुण्डलोज्जोवितानने मुकुटदीप्तशिरस्कः' इति प्रतीतं, 'हारोत्थयसुकयरइयवच्छे' हारावस्तृतेन–हारावच्छादनेन सुष्ठु कृतरतिकं वक्ष–उरो यस्य स तथा, 'पालंबपलंबमाणपडसुकयउत्तरिज्जे' प्रलम्बेन–दीर्घेण प्रलम्बमानेन च–झुम्बमानेन पटेन सुष्ठु कृतमुत्तरीयम्–उत्तरासङ्गो येन स तथा, 'णाणामणिकणगरयणविमलमहरिहणिउणोवियमिसिमिसंतविरइयसु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

सिलिट्ठविसिट्ठलट्ठआविद्धवीरवलए' नानामणिकनकरत्नैर्विमलैर्महार्हैर्निपुणेन शिल्पिना ओवियत्ति–परिकर्मितैः मिसिमिसंतत्ति–देदीप्यमानैर्विरचितानि निर्मितानि सुश्लिष्टानि–सुसन्धीनि विशिष्टानि अन्येभ्यो विशेषवन्ति लष्टानि–मनोहराणि आविद्धानि–परिहितानि वीरवलयानि वरवलयानि वा येन स तथा, सुभटो हि यदि क्वचिदन्योऽप्यस्ति वीरस्तदाऽसौ मां विजित्याऽऽमोचयत्वेतानि वलयानीति स्पर्द्धयन् यानि कटकानि परिदधाति तानि वीरवलयानीत्युच्यन्ते ।

किं बहुणा ? कप्परुक्खए चेव अलंकियविभूसिए णरवई सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं चउचामरवालवीजियंगे मंगलजयसद्दकयालोए मज्जणघराओ पडिनिक्खमइ मज्जणघराउ पडिणिक्खमित्ता अणेगगणनायगदंडनायगराईसरतलवरमाडंबियकोडुंबियइब्भसेट्ठिसेणावइसत्थवाहदूअसंधिवाल सद्धिं संपरिवुडे धवलमहामेहणिग्गए इव गहगणदिप्पंतरिक्खतारागणाण मज्झे ससिव्व पियदंसणे णरवई जेणेव बाहिरिआ उवट्ठाणसाला जेणेव आभिसेक्के हत्थिरयणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता अंजणगिरिकूडसण्णिभं गयवइं णरवई दूरूढे ।

'कप्परुक्खए चेव'त्ति कल्पवृक्ष इव 'अलंकियविभूसिए'त्ति अलङ्कृतो–मुकुटादिभिः विभूषितो–वस्त्रादिभिरिति, 'सकोरंटमल्लदामेणं'ति सकोरण्टानि–कोरण्टकाभिधानकुसुमस्तबकवन्ति माल्यदामानि–पुष्पस्रजो यत्र तत्तथा तेन । वाचनान्तरे पुनश्छत्रवर्णक एवं दृश्यते–'अब्भपडलपिंगलुज्जलेण' अभ्रपटलमिव–मेघवृन्दमिव बृहच्छायाहेतुत्वात् अभ्रपटलं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३१]

पिङ्गलं च–कपिशं सुवर्णकम्बिकानिर्मितत्वात् उज्ज्वलं–निर्मलं यत्तत्तथा, अथवा अभ्रम्–अभ्रकं पृथिवीकायपरिणामविशेषस्तत्पटलमिव पिङ्गलं च–उज्ज्वलं च यत्तत्तथा तेन, 'अविरलसमसहियचंदमंडलसमप्पभेणं' अविरलं घनशलाकावत्त्वेन समं तुल्यशलाकायोगेन सहियत्ति–संहतमनिम्नोन्नतशलाकायोगात् चन्द्रमण्डलसमप्रभं च यद्दीप्या तत्तथा तेन, 'मंगलसयभत्तिछेयविचित्तियखिंखिणिमणिहेमजालविरइयपरिगयपेरंतकणगघंटियापयलियकिंकिणिकिंणितसुइसुहसुमहुरसद्दालसोहिएणं' मङ्गलाभिः–माङ्गल्याभिः शतभक्तिभिः–शतसङ्ख्याविच्छित्तिभिः छेकेन–निपुणेन शिल्पिना विचित्रितं यत्तत्तथा, किङ्किणीभिः–क्षुद्रघण्टिकाभिः मणिहेमजालेन च–रत्नकनकजालकेन विरचितेन–कृतेन विशिष्टरतिदेन वा परिगतं–परिवेष्टितं यत्तत्तथा, पर्यन्तेषु–प्रान्तेषु कनकघण्टिकाभिः प्रचलिताभिः किंकिणिकायमानाभिः श्रुतिसुखसुमधुरशब्दवतीभिश्च, आलप्रत्ययस्य मत्वर्थीयत्वात्, शोभितं यत्तत्तथा, ततः पदत्रयस्य कर्मधारयोऽतस्तेन, 'सप्पयरवरमुत्तदामलंबंतभूसणेणं' सप्रतराणि–आभरणविशेषयुक्तानि यानि वरमुक्तादामानि–वरमुक्ताफलमालाः लंबंतत्ति–प्रलम्बमानानि तानि भूषणानि यस्य तत्तथा तेन, 'नरिंदवामप्पमाणरुंदपरिमंडलेणं' नरेन्द्रस्य–तस्यैव राज्ञो वामप्रमाणेन–प्रसारितभुजयुगलमानेन रुन्दं–विस्तीर्णं परिमण्डलं–वृत्तभावो यस्य स तत्तथा तेन, 'सीयायवदायवरिसविसदोसनासणेण' शीतातपवातवृष्टिविषजन्यदोषाणां शीतादिलक्षणदोषाणां वा विनाशनं यत्तत्तथा तेन, 'तमरयमलबहलपडणधाडणप्पभाकरेण' तमः–अन्धकारं रजो–रेणुर्मलः–प्रतीतः एषां बहलं–घनं यत्पटलं–वृन्दं तस्य धाडनी–नाशनी या प्रभा–कान्तिस्तत्करणशीलं यत्तत्तथा तेन, अथवा–रजोमलतमोबहलपटलस्य धाडने प्रभाकर इव–दिवाकर इव यत्तत्तथा,'उउसुहसिवच्छायसमणुबद्धेणं' ऋतौ–कालवि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३१]

शेषे सुखा–सुखहेतुः ऋतुसुखा शिवा–निरुपद्रवा या छाया–आतपवारणलक्षणा तथा समनुबद्धम्–अनवच्छिन्नं यत्तत्तथा तेन, 'वेरुलियदंडसज्जिएणं'ति वैडूर्यमयदण्डे सज्जितं–वितानितं यत्तत्तथा तेन, 'वइरामयवत्थिनिउणजोइयअट्ठसहस्सवरकंचणसलागनिम्मिएणं' वज्रमय्यां वस्तौ–शलाकानिवेशनस्थाने निपुणेन शिल्पिना योजिताः–सम्बन्धिताः अट्ठसहस्सत्ति–अष्टोत्तरसहस्रसङ्ख्याः या वरकाञ्चनशलाकास्ताभिर्निर्मितं यत्तत्तथा तेन, 'सुनिम्मलरययसुच्छएणं'ति सुनिर्मलो रजतस्य सम्बन्धी सुच्छदः–शोभनप्रच्छादनपटो यत्र तत्तथा तेन, 'निउणोवियमिसिमिसिंतमणिरयणसूरमंडलवितिमिरकरनिग्गयग्गपडिहयपुणरविपच्चायडंतचंचलमिरिइकवयं विणिमुयंतेणं' निपुणेन शिल्पिना निपुणं वा यथा भवति एवं उवियत्ति–परिकर्मितानि मिसिमिसिंतत्ति–देदीप्यमानानि यानि मणिरत्नानि तानि तथा सूरमण्डलाद्–आदित्यबिम्बात् ये वितिमिरा–हतान्धकाराः कराः–किरणा निर्गतास्तेषां यान्यग्राणि तानि प्रतिहतानि–निराकृतानि पुनरपि प्रत्यापतन्ति च–प्रतिवर्तमानानि यस्माच्चञ्चलमरीचिकवचात्तत्तथा, अथवा सूरमण्डलाद् वितिमिरकराणां निर्गतानामग्रैः प्रतिहतं पुनरपि प्रत्यापतच्च तच्च तच्चञ्चलमरीचिकवचं च–चपलरश्मिपरिकर इति समासः, निपुणोपितमिसिमिसायमानमणिरत्नानां यत्सूरमण्डलवितिमिरकरनिर्गताग्रप्रतिहतं पुनरपि प्रत्यापतच्चञ्चलमरीचिकवचं यत्तत्तथा तद्विनिर्मुञ्चता–विसृजता, 'सपडिदंडेणं' अतिभारिकतया एकदण्डेन दुर्वहत्वात्सप्रतिदण्डेन, 'धरिज्जमाणेणं आयवत्तेणं विरायंते' इति व्यक्तम्, अधिकृतवाचनायतु चतुश्चामरवालवीजिताङ्ग इति व्यक्तं, वाचनान्तरे तु 'चउहियपवरगिरिकुहरविचरणसुमुइयनिरुवहयचमरपच्छिमसरीरसंजायसंगयाहिं' चउहियत्ति–चतसृभिः, 'ताहिय'त्ति क्वचित् तत्र ताभिश्च तथाविधाभिर्वर्णकवर्णितस्वरूपाभिः चामराभि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

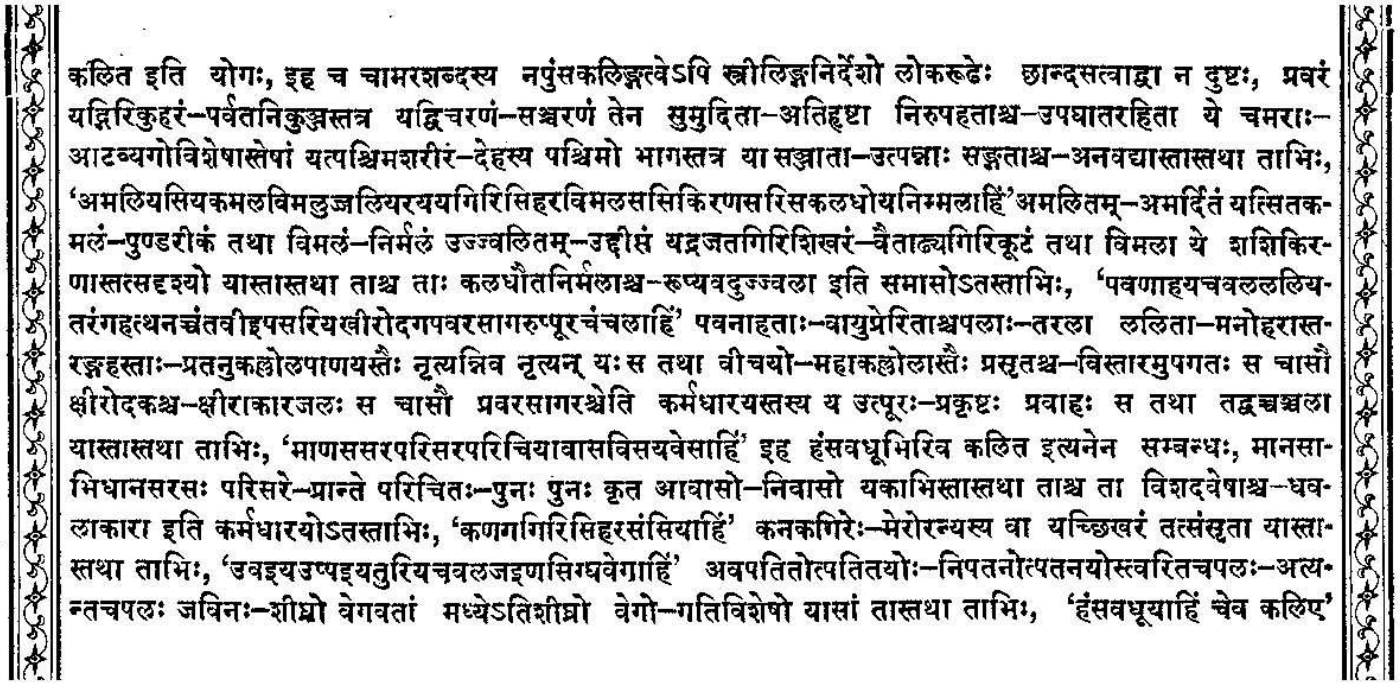

कलित इति योगः, इह च चामरशब्दस्य नपुंसकलिङ्गत्वेऽपि स्त्रीलिङ्गनिर्देशो लोकरूढेः छान्दसत्वाद्वा न दुष्टः, प्रवरं यद्गिरिकुहरं–पर्वतनिकुञ्जस्तत्र यद्विचरणं–सञ्चरणं तेन सुमुदिता–अतिहृष्टा निरुपहताश्च–उपघातरहिता ये चमराः–आटव्यगोविशेषास्तेषां यत्पश्चिमशरीरं–देहस्य पश्चिमो भागस्तत्र या सञ्जाता–उत्पन्नाः सङ्गताश्च–अनवद्यास्तास्तथा ताभिः, 'अमलियसियकमलविमलुज्जलियरययगिरिसिहरविमलससिकिरणसरिसकलधोयनिम्मलाहिं' अमलितम्–अमर्दितं यत्सितकमलं–पुण्डरीकं तथा विमलं–निर्मलं उज्ज्वलितम्–उद्दीप्तं यद्रजतगिरिशिखरं–वैताढ्यगिरिकूटं तथा विमला ये शशिकिरणास्तत्सदृश्यो यास्तास्तथा ताश्च ताः कलधौतनिर्मलाश्च–रूप्यवदुज्ज्वला इति समासोऽतस्ताभिः, 'पवणाहयचवललियतरंगहत्थनच्चंतवीइपसरियखीरोदगपवरसागरुप्पूरचंचलाहिं' पवनाहताः–वायुप्रेरिताश्चपलाः–तरला ललिता–मनोहरास्तरङ्गहस्ताः–प्रतनुकल्लोलपाणयस्तैः नृत्यन्निव नृत्यन् यः स तथा वीचयो–महाकल्लोलास्तैः प्रसृतश्च–विस्तारमुपगतः स चासौ क्षीरोदकश्च–क्षीराकारजलः स चासौ प्रवरसागरश्चेति कर्मधारयस्तस्य य उत्पूरः–प्रकृष्टः प्रवाहः स तथा तद्वच्चञ्चला यास्तास्तथा ताभिः, 'माणससरपरिसरपरिचियावासविसयवेसाहिं' इह हंसवधूभिरिव कलित इत्यनेन सम्बन्धः, मानसाभिधानसरसः परिसरे–प्रान्ते परिचिताः–पुनः पुनः कृत आवासो–निवासो यकाभिस्तास्तथा ताश्च ता विशदवेषाश्च–धवलाकारा इति कर्मधारयोऽतस्ताभिः, 'कणगगिरिसिहरसंसियाहिं' कनकगिरेः–मेरोरन्यस्य वा यच्छिखरं तत्संश्रिता यास्तास्तथा ताभिः, 'उवइयउप्पइयतुरियचवलजइणसिग्घवेगाहिं' अवपतितोत्पतितयोः–निपतनोत्पतनयोस्त्वरितचपलः–अत्यन्तचपलः जविनः–शीघ्रो वेगवतां मध्येऽतिशीघ्रो वेगो–गतिविशेषो यासां तास्तथा ताभिः, 'हंसवधूयाहिं चेव कलिए'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

हंसिकाभिरिव युक्तः, इह च हंसिकाभिश्चामराणां धवलत्वेन दण्डोपरिवर्तित्वेन चपलत्वेन च साधर्म्यमिति, तथा 'णाणामणिकणगरयणविमलमहरिहतवणिज्जुज्जलविचित्तदंडाहिं' नानामणिकनकरत्नानां सम्बन्धिनो निर्मला महरिहत्ति–महार्घास्तपनीयोज्ज्वलाः–रक्तवर्णसुवर्णदीप्राः विचित्रा–विविधचित्रा दण्डा यासां तास्तथा, 'चिल्लियाहिं' दीप्यमानाभिर्लीनाभिर्वा 'नरवइसिरिसमुदयपगासणकरीहिं'ति व्यक्तं, 'वरपट्टणुग्गयाहिं' प्रधानपत्तनसमुद्भवाभिः, वरपत्तने हि वराः शिल्पिनो भवन्तीति तत्परिकर्मिताः प्रधाना भवन्तीति वरपत्तनोद्गताभिरित्युक्तम्, अथवा वरपट्टनात्–प्रधानाच्छादनकोशकादुद्गता–निष्काशिता यास्तास्ताभिः, 'समिद्धरायकुलसेवियाहिं'ति व्यक्तं, 'कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कवरवण्णवासगंधुद्धुयाभिरामाहिं' कालागुरुः–कृष्णागुरुः प्रवरकुन्दुरुक्कं–सल्लकी तुरुक्कं–सिल्हकं वरवर्णः–प्रधानचन्दनं एतैर्यो वासो–वासनं तस्माद्यो गन्धः–सौरभ्यम् उद्धूत–उद्भूतस्तेनाभिरामा–रम्या यास्तास्तथा ताभिः, 'सललियाहिं'ति व्यक्तम्, 'उभओ पासंपि'त्ति उभयोरपि पार्श्वयोरित्यर्थः, 'उक्खिप्पमाणाहिं चामराहिं'ति व्यक्तं, कलित इति वर्तते, 'सुहसीयलवायवीइयंगे'ति समुत्क्षिप्यमाणचामराणामेव यः शुभः शीतलश्च वातस्तेन वीजितमङ्गं यस्य स तथेति। इतोऽधिकृतवाचना–'मंगलजयसद्दकयालोए' मङ्गलाय जयशब्दः कृतो जनेनालोके–दर्शने यस्य स तथा, 'अणेगगणनायगे'त्यादि पूर्ववत्,

तए णं तस्स कूणियस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स आभिसिक्कं हत्थिरयणं दुरूढस्स समाणस्स तप्पढमयाए इमे अट्ठट्ठमंगलया पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिआ, तंजहा–सोवत्थिय सिरिवच्छ णंदिआवत्त वद्धमाणक

॥ ६८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३१]

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३१]

भद्दासण कलस मच्छ दप्पण, तयाऽणंतरं च णं पुण्णकलसभिंगारं दिव्वा य छत्तपडागा सचामरा दंसण-
रइअआलोअदरसणिज्जा वाउद्धूयविजयवेजयंती ऊसिसआ गगणतलमणुलिहंती पुरओ अहाणुपुव्वीए संप-
ट्ठिआ, तयाऽणंतरं च णं वेरुलियभिसंतविमलदंडं पलंबकोरंटमल्लदामोवसोभियं चंदमंडलणिभं समूसिअ-
विमलं आयवत्तपवरं सीहासणं वरमणिरयणपादपीढं सपाउआजोयसमाउत्तं बहुकिंकरकम्मकरपुरिसपाय-
त्तपरिक्खित्तं पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठियं । तयाऽणंतरं बहवे लट्ठिग्गाहा कुंतग्गाहा चावग्गाहा चाम-
रग्गाहा पासग्गाहा पोत्थयग्गाहा फलकग्गाहा पीढग्गाहा वीणग्गाहा कुंतग्गाहा हडप्फग्गाहा पुरओ
अहाणुपुव्वीए संपट्ठिआ । तयाऽणंतरं बहवे डंडिणो मुंडिणो सिहंडिणो जडिणो पिंछिणो हासकरा डमरकरा
चाडुकरा वादकरा कंदप्पकरा दवकरा कोक्कुइआ किट्टिकरा वायंता गायंता हसंता णचंता भासंता सावेंता
रक्खंता आलोअं च करेमाणा जयरसद्दं पउंजमाणा पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिआ ।

'पुण्णकलसभिंगारं'ति जलपरिपूर्णौ घटभृङ्गारावित्यर्थः । 'दिव्वा य छत्तपडागा' दिव्येव दिव्या–शोभना सा च छत्रेण सह पताका छत्रपताका, 'सचामर'त्ति चामरयुक्ता, 'दंसणरइयआलोयदरसणिज्जा' दर्शने–राज्ञो दृष्टिमार्गे रचिता–विहिता दर्शनरचिता दर्शने वा सति रतिदा–सुखप्रदा दर्शन-रतिदा आलोकं–दृष्टिपथं यावद्दृश्यते अत्युच्चैस्त्वेन या सा आलोकदर्शनीया ततः कर्मधारयः, 'वाउद्धूयविजयवेजयंती' वातेनोद्धूता–उत्कम्पिता विजयसूचिका वैजयन्ती पार्श्वतो लघुपताकिकाद्वययुतः पताकाविशेष एव, 'उस्सिय'त्ति उत्सृता–ऊर्ध्वीकृता 'सपाउयाजोयसमाउत्तं'ति स्वः–स्वकीयो राजसत्क इत्यर्थो यः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३१]

पादुकायोगः–पादुकायुगं तेन समायुक्तं यत्तत्तथा, 'बहुकिंकरकम्मकरपुरिसपायत्तपरिक्खित्तं' बहवो ये किङ्कराः–प्रतिकर्म प्रभोः पृच्छापूर्वकारिणः कर्मकराश्च–तदन्यविधास्ते च ते पुरुषाश्चेति समासः, पादातं–पदातिसमूहस्तैः परिक्षिप्तं यत्तत्तथा, क्वचित् 'दासीदासकिंकरकम्मकरपुरिसपायत्तपरिक्खित्त'मिति दृश्यते, तत्र दास्यश्च–चेट्यो दासाश्च चेटकाः । 'लट्ठिग्गाह'त्ति काष्ठिकाः, क्वचिद्दृश्यते 'असिलट्ठिग्गाहा' तत्र असिः–खड्गः स एव यष्टिः–दण्डोऽसियष्टिः, अथवा असिश्च यष्टिश्चेति द्वन्द्वः, कुन्तचामराणि प्रतीतानि, पाशा–द्यूतोपकरणं उत्रस्ताश्वादिबन्धनानि वा चापं–धनुः पुस्तकानि–आयपरिज्ञानहेतुलेखकस्थानानि पण्डितोपकरणानि वा फलकानि–सम्पुटफलकानि खेटकानि वा अवष्टम्भनानि वा द्यूतोपकरणानि वा पीठकानि–आसनविशेषा वीणाः–प्रतीताः कुतुपः–पक्वतैलादिभाजनं हडप्फो–द्रम्मादिभाजनं ताम्बूलार्थं पूगफलादिभाजनं वा 'सिहंडिणो'त्ति शिखाधारिणः 'पिञ्छिणो'त्ति मयूरादिपिच्छवाहिनः 'डमरकर'त्ति विद्वरकारिणः 'दवकर'त्ति परिहासकारिणः 'चाडुकर'त्ति प्रियवादिनः 'कंदप्पिय'त्ति कामप्रधानकेलिकारिणः 'कोक्कुइय'त्ति भाण्डा भाण्डप्राया वा 'सासिंता य'त्ति शिक्षयन्तः 'सावेंत'त्ति इदं चेदं च परुत्परारि वा भविष्यति इत्येवम्भूतवचांसि श्रावयन्तः शपन्तो वा 'रक्खंत'त्ति अन्यायं रक्षन्तः, क्वचिद् 'राविंता य'त्ति रावयन्तः शब्दान् कारयन्तो रामयन्तो वा 'आलोयं'ति अवलोकनं राजादेः कुर्वन्तः, इह गमे कानिचित् पदानि न स्पृष्टानि स्पष्टत्वात्, सङ्ग्रहगाथाश्चास्य गमस्य क्वचिद्दृश्यन्ते तद्यथा–"असिलट्ठिकुंतचावे चामरपासे य फलग पोत्थे य । वीणाकूयग्गाहे तत्तो य हडप्फगाहे य ॥ १ ॥ दंडी मुंडी सिहंडी

॥ ६९ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थं गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३१]

पिच्छी जडिणो य हासकिड्डा य । दवकारा चडुकारा कंदप्पिय कोक्कुइयगाहा ॥ २ ॥ गायंता वायंता नच्चंता तह हसंत हासिंता । सावेंता रावेंता आलोय जयं पउंजंता ॥ ३ ॥"

तयाऽणंतरं जच्चाणं तरमल्लिहायणाणं हरिमेलामउलमल्लियच्छाणं चुंचुच्चियललिअपुलियचलचवलचंचलगईणं लंघणवग्गणधावणधोरणतिवईजइणसिक्खिअगईणं ललंतलामगललायवरभूसणाणं सुहभंडगउच्चूलगथासगअहिलाणचामरगण्डपरिमंडियकडीणं किंकरवरतरुणपरिग्गहिआणं अट्ठसयं वरतुरगाणं पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठियं । तयाऽणंतरं च णं ईसीदंताणं ईसीमत्ताणं ईसीतुंगाणं ईसीउच्छंगविसालधवलदंताणं कंचणकोसीपविट्ठदंताणं कंचणमणिरयणभूसियाणं वरपुरिसारोहगसंपउत्ताणं अट्ठसयं गयाणं पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठियं । तयाऽणंतरं सच्छत्ताणं सज्झयाणं सघंटाणं सपडागाणं सतोरणवराणं सणंदिघोसाणं सखिंखिणीजालपरिक्खित्ताणं हेमवयचित्ततिणिसकणकणिजुत्तदारुआणं कालायससुकयणेमिजंतकम्माणं सुसिलिट्ठवत्तमंडलधुराणं आइण्णवरतुरगसुसंपउत्ताणं कुसलनरच्छेअसारहिसुसंपग्गहिआणं बत्तीसतोणपरिमंडिआणं सकंकडवडेंसकाणं सचावसरपहरणावरणभरिअजुद्धसज्जाणं अट्ठसयं रहाणं पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठियं । तयाऽणंतरं च णं असिसत्तिकोंततोमरसूलल्लउडभिंडिमालधणुपाणिसज्जं पायत्ताणीयं पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिअं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३१]

'तरमल्लिहायणाणं'ति तरो–वेगो बलं वा तथा 'मल मल्ल धारणे' ततश्च तरोमल्लो–तरोधारकः वेगादिकारको हायनः–संवत्सरो वर्तते येषां ते तरोमल्लिहायनाः, यौवनवन्त इत्यर्थः, अतस्तेषां वरतुरङ्गाणामिति योगः, वाचनान्तरे त्वेवमधीयते –'वरमल्लिभासणाणं' प्रधानमाल्यवताम्, अत एव दीप्तिमतां चेत्यर्थः, 'हरिमेलामउलमल्लियच्छाणं' हरिमेला–वनस्पतिविशेषस्तस्या मुकुलं–कुड्मलं मल्लिका च–विचकिलस्तद्वदक्षिणी येषां ते तथा तेषां, शुक्लाक्ष्णामित्यर्थः, 'चंचुच्चियललियपुलियचलचवलचंचलगईणं' चंचुच्चियंति प्राकृतत्वेन चञ्चुरितं–कुटिलगमनं अथवा चञ्चुः–शुकचञ्चुस्तद्वद्धकृतयेत्यर्थः, उच्चितम्–उच्चताकरणं पादस्य उच्चितं वा–उत्पाटनं पादस्यैवं चञ्चुच्चितं तच्च ललितं च–विलासवद्गतिः पुलितं च–गतिविशेषः प्रसिद्ध एव एवंरूपा चलानाम्–अस्थिराणां च सतां चपलेभ्यः सकाशाच्चञ्चला अतीव चटुलेत्यर्थो, गतिर्येषां ते तथा तेषां, 'लंघणवग्गणधावणधोरणतिवईजइणसिक्खियगईणं' लङ्घनं–गर्त्तादेरतिक्रमणं वल्गनम्–उत्कुर्दनं धावनं–शीघ्रमृजुगमनं धोरणं–गतिचातुर्यं त्रिपदी–भूमौ पदत्रयन्यासः जयिनी च–गमनान्तरजयवती जविनी वा–वेगवती शिक्षिता–अभ्यस्ता गतिर्यैस्ते तथा तेषां, 'ललंतलामगललायवरभूसणाणं' ललन्ति–दोलायमानानि लामंति–प्राकृतत्वाद्रम्याणि गललातानि–कण्ठेनाऽऽत्तानि वरभूषणानि येषां ते तथा तेषां, 'मुहभंडगओचूलगथासगमिलाणचमरीगंडपरिमंडियकडीणं' मुखभाण्डकं–मुखाभरणम् अवचूलाः–प्रलम्बमानगुच्छाः स्थासकाश्च–आदर्शकाकारा येषां ते तथा मिलाणत्ति–पर्याणैरथवा अम्लानैः–अम्लिनैः चमरीगण्डैः–चामरदण्डैः परिमण्डिता कटिर्येषां ते तथा ततः कर्मधारयोऽतस्तेषां, 'किंकरवररुणपरिग्गहियाणं'ति व्यक्तम् । अथाधिकृतवाचनाऽनुश्रीयते–'थासगअहिलाणचामरगण्डपरिमंडियकडीणं' थासगअहिलाणत्ति इह मत्वर्थीयलो-

॥ ७० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

प्रत सूत्रांक [३१] दीप अनुक्रम [३१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

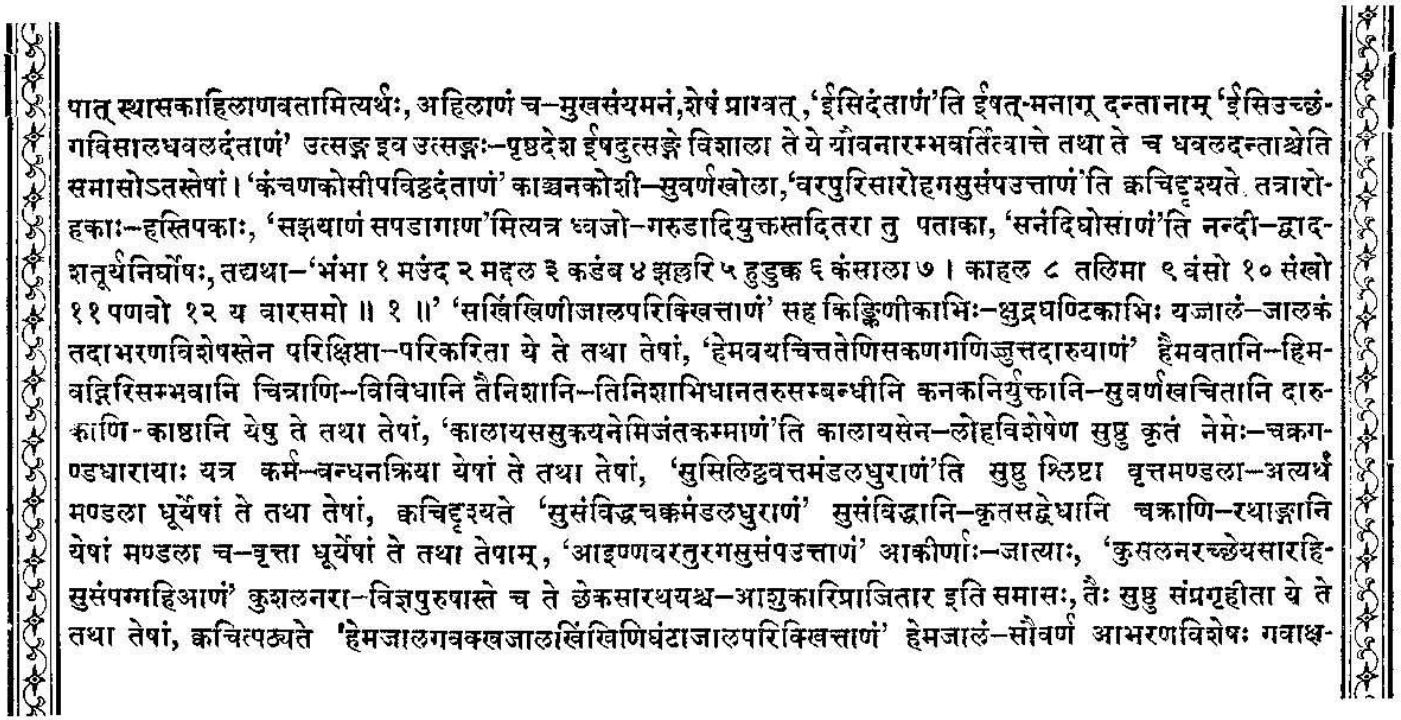

पात् स्थासकाहिलाणवतामित्यर्थः, अहिलाणं च–मुखसंयमनं,शेषं प्राग्वत्,'ईसिदंताणं'ति ईषत्-मनाग् दन्तानाम् 'ईसिउच्छंगविसालधवलदंताणं' उत्सङ्ग इव उत्सङ्गः–पृष्ठदेश ईषदुत्सङ्गे विशाला ते ये यौवनारम्भवर्तित्वात्ते तथा ते च धवलदन्ताश्चेति समासोऽतस्तेषां। 'कंचणकोसीपविट्ठदंताणं' काञ्चनकोशी–सुवर्णखोला,'वरपुरिसारोहगसुसंपउत्ताणं'ति क्वचिद्दृश्यते तत्रारोहकाः–हस्तिपकाः, 'सज्झयाणं सपडागाण'मित्यत्र ध्वजो–गरुडादियुक्तस्तदितरा तु पताका, 'सनंदिघोसाणं'ति नन्दी–द्वादशतूर्यनिर्घोषः, तद्यथा–'भंभा १ मउंद २ मद्दल ३ कडंब ४ झल्लरि ५ हुडुक्क ६ कंसाला ७। काहल ८ तलिमा ९ वंसो १० संखो ११ पणवो १२ य बारसमो ॥ १ ॥' 'सखिंखिणीजालपरिक्खित्ताणं' सह किङ्किणीकाभिः–क्षुद्रघण्टिकाभिः यज्जालं–जालकं तदाभरणविशेषस्तेन परिक्षिप्ता–परिकरिता ये ते तथा तेषां, 'हेमवयचित्ततेणिसकणगणिज्जुत्तदारुयाणं' हैमवतानि–हिमवद्गिरिसम्भवानि चित्राणि–विविधानि तैनिशानि–तिनिशाभिधानतरुसम्बन्धीनि कनकनिर्युक्तानि–सुवर्णखचितानि दारुकाणि-काष्ठानि येषु ते तथा तेषां, 'कालायससुकयनेमिजंतकम्माणं'ति कालायसेन–लोहविशेषेण सुष्ठु कृतं नेमेः–चक्रगण्डधारायाः यत्र कर्म–बन्धनक्रिया येषां ते तथा तेषां, 'सुसिलिट्ठवत्तमंडलधुराणं'ति सुष्ठु श्लिष्टा वृत्तमण्डला–अत्यर्थं मण्डला धूर्येषां ते तथा तेषां, क्वचिद्दृश्यते 'सुसंविद्धचक्कमंडलधुराणं' सुसंविद्धानि–कृतसद्धेधानि चक्राणि–रथाङ्गानि येषां मण्डला च–वृत्ता धूर्येषां ते तथा तेषाम्, 'आइण्णवरतुरगसुसंपउत्ताणं' आकीर्णाः–जात्याः, 'कुसलनरच्छेयसारहिसुसंपग्गहिआणं' कुशलनरा–विज्ञपुरुषास्ते च ते छेकसारथयश्च–आशुकारिप्राजितार इति समासः, तैः सुष्ठु संप्रगृहीता ये ते तथा तेषां, क्वचित्पठ्यते 'हेमजालगवक्खजालखिंखिणिघंटाजालपरिक्खित्ताणं' हेमजालं–सौवर्णं आभरणविशेषः गवाक्ष-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३१]

जालं–जालकोपेता गवाक्षाः किङ्किण्यः–क्षुद्रघण्टिकाः घण्टास्तु–बृहद्घण्टास्तासां यज्जालं–समूहस्तत्तथा, हेमजालादिभिः परिक्षिप्ताः–परिकरिता ये ते तथा तेषां, 'बत्तीसतोणपरिमंडियाणं'ति द्वात्रिंशता तोणैः–भस्त्रकैः परिमण्डिता ये ते तथा तेषां,क्वचित्पठ्यते 'बत्तीसतोरणपरिमंडियाणं'ति द्वात्रिंशद्विभागं यत्तोरणं तेन परिमण्डितानां,'सकंकडवडेंसगाणं'सह कङ्कटैः–कवचैरवतंसकैश्च–शेखरकैः शिरस्त्राणैर्वा ये ते तथा तेषां, 'सचावसरपहरणावरणभरियजुद्धसज्जाणं' सह चापशरैः–धनुर्बाणैर्यानि प्रहरणानि–खड्गादीन्यावरणानि च–स्फुरकादीनि तेषां भरिता–भृता अत एव युद्धसज्जाः–रणप्रह्वा ये ते तथा तेषाम्, 'असिसत्तिकुंततोमरसूललउलभिंडिमालधणुपाणिसज्जं' अस्यादीनि प्रसिद्धानि नवरं–शक्तिस्त्रिशूलं शूलं त्वेकशूलं लउलोत्ति–लकुटः भिण्डिमालं–रूढिगम्यं, ततः अस्यादीनि पाणौ–हस्ते यस्य तत्तथा तच्च तत्सज्जं च–प्रगुणं युद्धस्येति समासः, 'पायत्ताणीयं'ति पादातानीकं–पदातिकटकं (ग्रन्थाग्रं २०००) वाचनान्तरे पुनः 'सन्नद्धबद्धवम्मियकवयाणं' तत्र बद्धं कशाबन्धनात् वर्मितं च–वर्मीकृतं तनुत्राणहेतोः शरीरे नियोजनात् कवचम्–अङ्गरक्षको यैस्ते तथा, सन्नद्धाश्च ते सन्नह्न्या बन्धनाद्बद्धवर्मितकवचाश्चेति समासस्तेषाम्, 'उप्पीलियसरासणवट्टियाणं' उत्पीडिता–आरोपितप्रत्यञ्चा शरासनपट्टिका–धनुर्यष्टिर्यैः, अथवा–उत्पीडिता-बाहौ बद्धा शरासनपट्टिका–धनुर्दण्डाकर्षणे बाहुरक्षार्थं चर्मपट्टो यैस्ते तथा तेषां, 'पिनद्धगेवेज्जविमलवरबद्धचिंधपट्टाणं'पिनद्धं–परिहितं ग्रैवेयकं–ग्रीवाभरणं यैस्ते तथा, विमलो वरो बद्धो शिरसीति गम्यं चिह्नपट्टो–वीरतासूचको नेत्रादिवस्त्रमयः पट्टो यैस्ते तथा, ततः कर्मधारयोऽतस्तेषां, 'गहियाउहप्पहरणाणं' गृहीतान्यायुधानि–खड्गादीनि प्रहरणाय यैस्ते तथा तेषाम्, अथवा–आयुधान्यक्षेप्याणि प्रहरणानि तु क्षेप्याणीति विशेषः ।

॥ ७१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३१]

तए णं से कूणिए राया हारोत्थयसुकयरइयवच्छे कुंडलउज्जोवियाणणे मउडदित्तसिरए णरसीहे णरवई णरिंदे णरवसहे मणुअरायवसभकप्पे अब्भहिअरायतेअलच्छीए दिप्पमाणे हत्थिक्खंधवरगए सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं सेअवरचामराहिं उद्धुव्वमाणीहिं २ वेसमणो चेव णरवई-अमरवईसण्णिभाए इड्ढीए पहियकित्ती हयगयरहपवरजोहकलियाए चाउरंगिणीए सेणाए समणुगम्ममाणमग्गे जेणेव पुण्णभद्दे चेइए तेणेव पहारित्थ गमणाए, तए णं तस्स कूणिअस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स पुरओ महंआसा आसधरा उभओ पासिं णागा णागधरा पिट्ठओ रहसंगेल्लि ।

अथाधिकृतवाचनाऽनुश्रीयते–'तए णं से कूणिए राया' इत्यादि महंआसा' इत्येतदन्तं सुगमं व्याख्यातप्रायं च, नवरं 'पहारेत्थगमणाए'त्ति सम्बन्धः, नरसीहे शूरत्वात् नरवई स्वामित्वात् नरिंदे परमैश्वर्ययोगात् नरवसभे अङ्गीकृतकार्यभरनिर्वाहकत्वात् 'मणुयरायवसहकप्पे' मनुजराजानां–नृपतीनां वृषभा नायकाश्चक्रवर्तिन इत्यर्थः,तत्कल्पः–तत्सन्निभ उत्तरभरतार्द्धस्यापि साधने प्रवृत्तत्वात्, एवंविधश्च 'वेसमणे चेव' यक्षराज इव, तथा 'नरवईअमरवईसन्निभाए इड्ढीए पहियकित्ती' नरपतिरसौ केवलममरपतिसन्निभया ऋद्ध्या प्रथितकीर्तिः–विश्रुतयशा इति, 'जेणेव पुण्णभद्दे'त्ति यस्यामेव दिशि पूर्णभद्रं चैत्यं 'तेणेव'त्ति तस्यामेव दिशि 'पहारित्थ'त्ति प्रधारितवान्–विकल्पितवान् प्रवृत्त इत्यर्थः, 'गमणाए'त्ति गमनाय गमनार्थमिति, । 'महंआस'त्ति महाश्वा–बृहत्तुरङ्गाः 'आसधर'त्ति अश्वधारकपुरुषाः 'आसवर'त्ति पाठान्तरं,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३१]

तत्र किम्भूता अश्वा इत्याह–'अश्ववराः' अश्वानां मध्ये प्रधानाः 'णाग'त्ति हस्तिनः 'णागधर'त्ति हस्तिधारकपुरुषाः पाठान्तरं तथैव, 'रहसंगेल्लि'त्ति रथसमुदायः ।

तए णं से कूणिए राया भंभसारपुत्ते अभुग्गयभिंगारे पग्गहियतालियंटे उच्छियसेअच्छत्ते पवीइअवालवीयणीए सव्विड्ढीए सव्वजुत्तीए सव्वबलेणं सव्वसमुदएणं सव्वादरेणं सव्वविभूईए सव्वविभूसाए सव्वसंभमेणं सव्वपुप्फगंधमल्लालंकारेणं सव्वतुडिअसद्दसण्णिणाएणं महया इड्ढीए महया जुत्तीए महया बलेणं महया समुदएणं महया वरतुडिअजमगसमगप्पवाइएणं संखपणवपडहभेरिझल्लरिखरमुहिहुडुक्कमुरवमुअंगदुंदुभिणिग्घोसणाइयरवेणं चंपाए णयरीए मज्झं मज्झेणं णिगच्छइ ॥ (सू० ३१)

'तए णं से कूणिए' इत्यादि सुगमं, नवरम् अस्य निर्गच्छतीत्यनेन सम्बन्धः, तथा 'अब्भुग्गयभिंगारे'त्ति अभ्युद्गतः–अभिमुखमुद्गत–उत्पाटितो भृङ्गारो यस्य स तथा, 'पग्गहियतालियंटे' प्रगृहीतं तालवृन्तं यं प्रति स तथा, 'उच्छियसेयच्छत्ते' उच्छ्रितश्वेतच्छत्रः, 'पवीइयवालवीयणीए' प्रवीजिता बालव्यजनिका यस्य स तथा, 'सव्विड्ढीए'त्ति समस्तयाऽऽभरणादिरूपया लक्ष्म्या, युक्त इति गम्यम्, एवमन्यान्यपि पदानि, नवरं 'जुत्तीए'त्ति संयोगेन परस्परोचितपदार्थानां 'बलेणे'ति सैन्येन 'समुदएणं'ति परिवारादिसमुदायेन 'आदरेणं'ति प्रयत्नेन 'विभूईए'त्ति विच्छर्देन 'विभूसाए'त्ति उचितनेपथ्यादिकरणेन 'संभमेणं'ति भक्तिकृतौत्सुक्येन, क्वचिदिदं पदचतुष्कमधिकं दृश्यते–'पगईहिं'ति कुम्भकारादिश्रेणिभिः 'नायगेहिं'ति नगरकटकादिप्रधानैः 'तालायरेहिं'ति तालादानेन प्रेक्षाकारिभिः दण्डपाशिकैर्वा 'सव्वोरोहेहिं'ति सर्वावरोधैः–समस्तान्तः-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [३१]

पुरैः 'सव्वपुप्फगंध(वास)मल्लालंकारेणं'ति पुष्पाणि–अग्रथितानि वासाः–प्रतीताः माल्यानि तु–ग्रथितानि एतान्येवालङ्कारो मुकुटादिर्वा, समासश्च समाहारद्वन्द्वः, क्वचिद्दृश्यते 'सव्वपुप्फवत्थगंधमल्लालंकारविभूसाए'त्ति, व्यक्तं च, 'सव्वतुडियसद्दसण्णिणाएणं'ति सर्वतूर्याणां यः शब्दो–ध्वनिर्यश्च सङ्गतो निनादः–प्रतिशब्दः स तथा तेन, पूर्वोक्तानामृद्ध्यादिपदार्थानां सर्वत्वे सत्यपि महत्त्वं न स्यादपीत्यत आह–'महया इड्ढीए' इत्यादि महर्द्ध्या, युक्त इति गम्यम्, एवमन्यान्यपि पदानि, 'महया वरतुरियजमगसमगपवाइएणं'ति महता–बृहता वरतूर्याणां यमकसमकं–युगपत् यत्प्रवादितं–ध्वनितं तत्तथा तेन, 'संखपणवपडहभेरिझल्लरिखरमुहिहुडुक्कमुरवमुइंगदुंदुभिणिग्घोसणाइयरवेणं'ति शङ्खः–प्रतीतः पणवस्तु–भाण्डपडहो लघुपटह इत्यन्ये, पटहस्त्वेतद्विपरीतः, भेरी–महाकाहला झल्लरी–वलयाकारा उभयतो बद्धा खरमुही–काहला हुडुक्का–प्रतीता मुरजो–महामर्दलो मृदङ्गो–मर्दलः दुन्दुभी–महाढक्का एषां यो निर्घोषः–नादितरूपो रवः स तथा तेन, तत्र निर्घोषो–महाध्वनिर्नादितं तु–शब्दानुसारी नाद इति ॥ ३१ ॥

तए णं कूणिअस्स रण्णो चंपानगरिं मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छमाणस्स बहवे अत्थत्थिया कामत्थिआ भोगत्थिया किव्विसिआ करोडिआ लाभत्थिया कारवाहिया संखिआ चक्किया णंगलिया मुहमंगलिआ वद्धमाणा पुस्समाणवा खंडियगणा ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पिआहिं मणुण्णाहिं मणामाहिं मणोभिरामाहिं हिययगमणिज्जाहिं वग्गूहिं जयविजयमंगलसएहिं अणवरयं अभिणंदंता य अभिथुणंता य एवं वयासी–जय २ णंदा ! जय २ भद्दा ! भद्दं ते अजियं जिणाहि जिअं (च) पालेहि जिअमज्झे वसाहि ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३२]

दीप अनुक्रम [३२]

'अत्थत्थिया' द्रव्यार्थिनः 'कामत्थिया' मनोज्ञशब्दरूपार्थिनः 'भोगत्थिया' मनोज्ञगन्धरसस्पर्शार्थिनः 'लाभत्थिया' भोजनमात्रादिप्राप्त्यर्थिनः 'किब्बिसिया' किल्बिषिकाः परविदूषकत्वेन पापव्यवहारिणो भाण्डादयः 'कारोडिकाः' कापालिकाः ताम्बूलस्थगिकावाहका वा . 'कारवाहिया' करपीडिता नृपाभाव्यवाहिनो वा 'संखिया' शाङ्खिकाः चन्दनगर्भशङ्खहस्ता माङ्गल्यकारिणः शङ्खवादका वा 'चक्किया' चाक्रिकाश्चक्रप्रहरणाः कुम्भकारतैलिकादयो वा 'नंगलिया' गलावलम्बित-सुवर्णादिमयलाङ्गलाकारधारिणो भट्टविशेषाः कर्षका वा 'मुहमंगलिया' मुखे मङ्गलं येषामस्ति ते मुखमाङ्गलिकाः—चाटुकारिणः 'वद्धमाणा' स्कन्धारोपितपुरुषाः 'पूसमाणवा' पूष्यमानवा मागधाः 'खंडिअगणा' छात्रसमुदायाः 'ताहिं'ति ताभिर्विवक्षिताभिरित्यर्थः, विवक्षितत्वमेवाह—'इट्ठाहिं' इष्यन्ते स्म इतीष्टा—वाञ्छितास्ताभिः, प्रयोजनवशादिष्टमपि किञ्चित्स्वरूपतः कान्तं स्यादकान्तं चेत्यत आह—'कंताहिं' कमनीयशब्दाभिः 'पियाहिं'ति प्रियार्थिभिः 'मणुण्णाहिं' मनसा ज्ञायन्ते सुन्दरतया यास्ता मनोज्ञाः, भावतः सुन्दरा इत्यर्थस्ताभिः 'मणामाहिं' मनसा अम्यन्ते—गम्यन्ते पुनः पुनर्याः सुन्दरत्वातिशयात्ता मनोऽमाः 'मणोभिरामाहिं' ति तत्र मनोऽभिविधिना बहुकालं यावत् रमयन्तीति मनोऽभिरामा अतस्ताभिः, वाचनान्तराधीतमथ प्रायो वाग्विशेषणकदम्बकम् 'उरालाहिं' उदाराभिः शब्दतोऽर्थतश्च 'कल्लाणाहिं' कल्याणाभिः—शुभार्थप्राप्तिसूचिकाभिः 'सिवाहिं' उपद्रवरहिताभिः शब्दार्थदूषणरहिताभिरित्यर्थः 'धण्णाहिं' धन्याभिः—धनलम्भिकाभिः 'मंगल्लाहिं' मङ्गले—अनर्थप्रतिघाते साध्वीभिः 'सस्सिरीयाहिं' सश्रीकाभिः शोभायुक्ताभिः 'हिययगमणिज्जाहिं' हृदयगमनीयाभिः, सुबोधाभिरित्यर्थः, 'हिययपल्हायणिज्जाहिं' हृदयप्रह्लादनीयाभिः हृदयगतकोपशोकग्रन्थिविलयनकरीभिरित्यर्थः,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३२]

दीप अनुक्रम [३२]

'मियमहुरगंभीरगाहिगाहिं' मिताः–परिमिताक्षराः मधुराः–कोमलशब्दाः गम्भीरा–महाध्वनयः दुरवधार्यमप्यर्थं श्रोतॄन् ग्राहयन्ति यास्ता ग्राहिकाः, ततः पदचतुष्टयस्य कर्मधारयोऽतस्ताभिः, 'अट्ठसइयाहिं' अर्थशतानि यासु सन्ति ता अर्थशतिकास्ताभिः, अथवा सह बहुफलत्वमर्थतः सइयाओ अट्ठसइयाओ ताहिं 'अपुनरुक्ताभि'रिति व्यक्तं, 'वग्गूहिं'ति वाग्भिः–गीर्भिः, एकार्थिकानि वा प्राय इष्टादीनि वाग्विशेषणानीति, 'जयविजयमंगलसएहिं' जयविजयेत्यादिभिर्मङ्गलाभिधायकवचनशतैरित्यर्थः, 'अणवरयं' 'अभिणंदंता य' अभिनन्दयन्तश्च–राजानं समृद्धिमन्तमाचक्षाणाः 'अभिथुणंता य' अभिष्टुवन्तश्च राजानमेवेति 'जय जय णंदा!' जय जयेति सम्भ्रमे द्विर्वचनं नन्दति–समृद्धो भवतीति नन्दस्तस्यामन्त्रणमिदम्, इह च दीर्घत्वं प्राकृतत्वात्, अथवा जय त्वं जगन्नन्द–भुवनसमृद्धिकारक ! 'जय जय भद्दा!' प्राग्वत्, नवरं भद्रः–कल्याणवान् कल्याणकारी वा 'जय जय नन्दा भद्दं ते' प्राग्वदेव, नवरं भद्रं ते तव भवत्विति शेषः, 'अजिय'मित्यादीन्याशंसनानि व्यक्तानि ।

इंदो इव देवाणं चमरो इव असुराणं धरणो इव नागाणं चंदो इव ताराणं भरहो इव मणुआणं बहूइं वासाइं बहूइं वाससआइं बहूइं वाससहस्साइं बहूइं वाससयसहस्साइं अणहसमग्गो हट्ठतुट्ठो परमाउं पालयाहि इट्ठजणसंपरिवुडो चंपाए णयरीए अण्णेसिं च बहूणं गामागरणयरखेडकव्वडमडंबदोणमुहपट्टणआसमनिगमसंवाहसंनिवेसाणं आहेवच्चं पोरेवच्चं सामित्तं भट्टित्तं महत्तरगत्तं आणाईसरसेणावच्चं कारेमाणे पाले-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३२]

दीप अनुक्रम [३२]

माणे महयाऽऽहयणट्टगीयवाइयतंतीतलतालतुडियघणमुइंगपडुप्पवाइयरवेणं विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहराहित्तिकट्टु जय २ सद्दं पउंजंति ।

'इंदो इवेत्यादि विहराहि'त्ति एतदन्तं वाचनाद्वयेऽपि व्यक्तं, नवरम्–'अणहसमग्गो'त्ति अनघो–निर्दोषः समग्रः–समग्रपरिवारः 'हट्ठतुट्ठे'त्ति अतीव तुष्टः 'परमाउं पालयाहि'त्ति तत्कालापेक्षया यदुत्कृष्टमायुस्तत् परमायुः 'गामागरणगरखेडकब्बडमडंबदोणमुहपट्टणासमसंवाहसंनिवेसाणं' ग्रामो–जनपदाध्यासितः आकरो–लवणाद्युत्पत्तिभूमिः नगरम्–अविद्यमानकरं खेटं–धूलीप्राकारं कर्बटं–कुनगरं मडम्बम्–अविद्यमानासन्ननिवेशान्तरं द्रोणमुखं–जलपथस्थलपथोपेतं पत्तनं–जलपथोपेतमेव स्थलपथोपेतमेव वा, पत्तनं रत्नभूमिरित्यन्ये, आश्रमः–तापसाद्यावासः संवाहः–पर्वतनितम्बादिदुर्गे स्थानं सन्निवेशो–घोषप्रभृतिरिति 'आहेवच्चं'ति आधिपत्यं तदाश्रितलोकेभ्य आधिक्येन तेष्ववस्थायित्वं 'पोरेवच्चं'ति पुरोवर्तित्वम्–अग्रेसरत्वं 'भट्टित्तं'ति भर्तृत्वं पोषकत्वं 'सामित्तं'ति स्वस्वामिसम्बन्धमात्रं 'महयरत्तं' महत्तरत्वं तदाश्रितजनापेक्षया महत्तमता 'आणाईसरसेणावच्चं' आज्ञेश्वर–आज्ञाप्रधानो यः सेनापतिः–सैन्यनायकः तस्य भावः कर्म वा आज्ञेश्वरसेनापत्यं 'कारेमाणे'त्ति अन्यैः कारयन् 'पालेमाणे'त्ति स्वयमेव पालयन्निति, 'महयाऽऽहयनट्टगीयवाइयतंतीतलतालतुडियघणमुइंगपडुप्पवाइयरवेणं' महता रवेणेति योगः, आहयत्ति–आख्यानकप्रतिबद्धं अहतं वा–अव्यवच्छिन्नं आहतं वा–आस्फालितं यन्नाट्यं–नाटकं तत्र यद्गीतं च–गेयं वादितं च–वाद्यं तत्तथा तथा तन्त्री च–वीणा तलतालाश्च–हस्तास्फोटरवाः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३२]

दीप अनुक्रम [३२]

तला वा–हस्ताः तालाः–कंशिकाः तुडियत्ति–शेषतूर्याणि च धनमृदङ्गश्च–मेघध्वनिर्महलः पटुप्रवादितो–दक्षपुरुषास्फालित इति कर्मधारयगर्भो द्वन्द्वः, ततश्च एतेषां यो रवः स तथा तेन।

तए णं से कूणिए राया भंभसारपुत्ते णयणमालासहस्सेहिं पेच्छिज्जमाणे २ हिअयमालासहस्सेहिं अभिणंदिज्जमाणे २ मणोरहमालासहस्सेहिं विच्छिप्पमाणे २ वयणमालासहस्सेहिं अभिथुव्वमाणे २ कंतिसोहग्गगुणेहिं पत्थिज्जमाणे २ बहूणं णरणारिसहस्साणं दाहिणहत्थेणं अंजलिमालासहस्साइं पडिच्छमाणे २ मंजुमंजुणा घोसेणं पडिबुज्झमाणे २ भवणपंतिसहस्साइं समइच्छमाणे २ चंपाए णयरीए मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ २ त्ता जेणेव पुण्णभद्दे चेइए तेणेव उवागच्छइ २ त्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते छत्ताईए तित्थयराइसेसे पासइ पासित्ता आभिसेक्कं हत्थिरयणं ठवेइ ठवित्ता आभिसेक्काओ हत्थिरयणाओ पच्चोरुहइ आभिसेक्काओ२त्ता अवहट्टु पंच रायककुहाइं, तंजहा–खग्गं छत्तं उप्फेसं वाहणाओ वालवीअणं, जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छति, तंजहा–सचित्ताणं दव्वाणं विउसरणयाए १ अचित्ताणं दव्वाणं अविउसरणयाए२एगसाडियं उत्तरासंगकरणेणं ३ चक्खुफासे अंजलिपग्गहेणं ४ मणसो एगत्तभावकरणेणं५ समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेत्ता वंदति णमंसति वंदित्ता णमंसित्ता तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासइ, तंजहा–काइयाए वाइयाए माणसियाए, काइयाए ताव संकुइ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३२]

दीप अनुक्रम [३२]

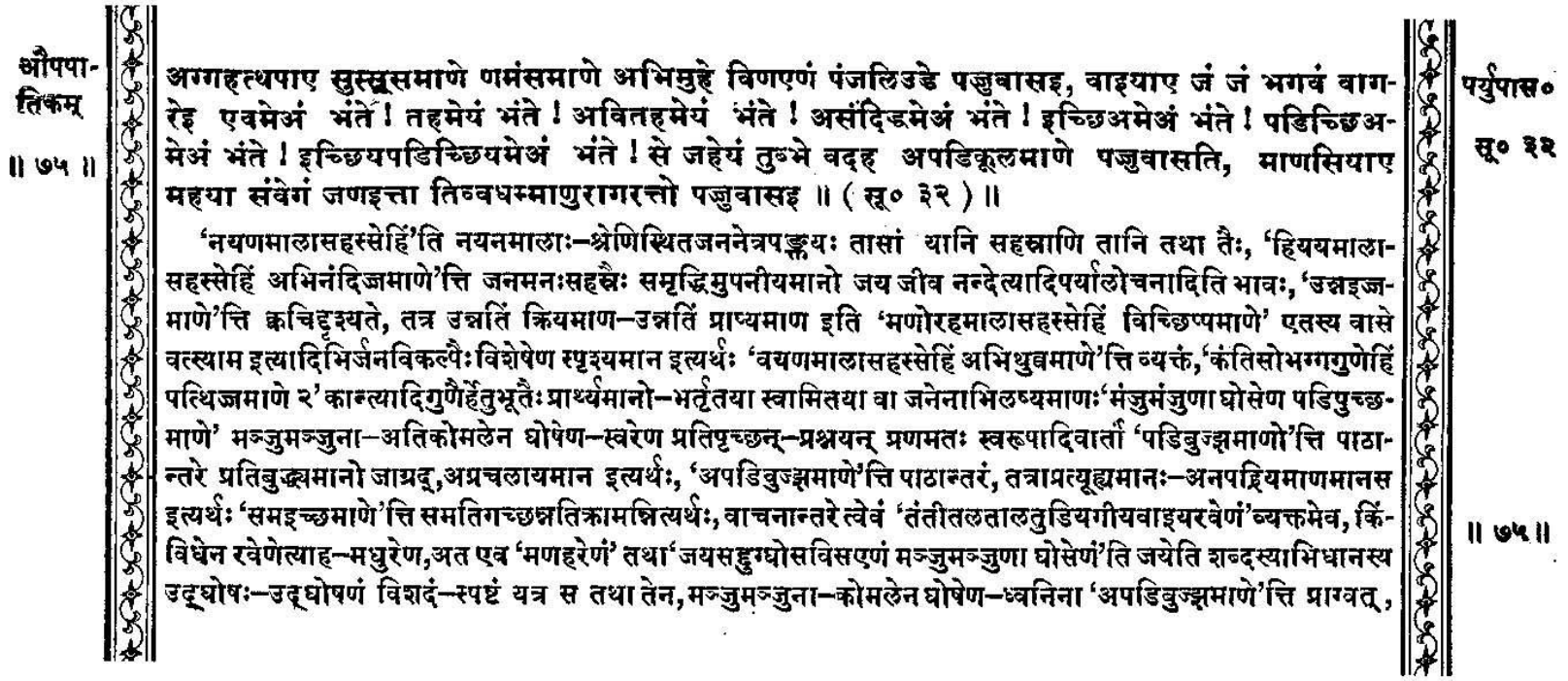

औपपातिकम् ॥ ७५ ॥

अग्गहत्थपाए सुस्सूसमाणे णमंसमाणे अभिमुहे विणएणं पंजलिउडे पज्जुवासइ, वाइयाए जं जं भगवं वागरेइ एवमेअं भंते ! तहमेयं भंते ! अवितहमेयं भंते ! असंदिद्धमेअं भंते ! इच्छिअमेअं भंते ! पडिच्छिअमेअं भंते ! इच्छियपडिच्छियमेअं भंते ! से जहेयं तुब्भे वदह अपडिकूलमाणे पज्जुवासति, माणसियाए महया संवेगं जणइत्ता तिव्वधम्माणुरागरत्तो पज्जुवासइ ॥ (सू० ३२) ॥

'नयणमालासहस्सेहिं'ति नयनमालाः–श्रेणिस्थितजननेत्रपङ्क्तयः तासां यानि सहस्राणि तानि तथा तैः, 'हिययमालासहस्सेहिं अभिनंदिज्जमाणे'त्ति जनमनःसहस्रैः समृद्धिमुपनीयमानो जय जीव नन्देत्यादिपर्यालोचनादिति भावः, 'उन्नइज्जमाणे'त्ति क्वचिद्दृश्यते, तत्र उन्नतिं क्रियमाण–उन्नतिं प्राप्यमाण इति 'मणोरहमालासहस्सेहिं विच्छिप्पमाणे' एतस्य वासे वत्स्याम इत्यादिभिर्जनविकल्पैः विशेषेण स्पृश्यमान इत्यर्थः 'वयणमालासहस्सेहिं अभिथुव्वमाणे'त्ति व्यक्तं,'कंतिसोभग्गगुणेहिं पत्थिज्जमाणे २' कान्त्यादिगुणैर्हेतुभूतैः प्रार्थ्यमानो–भर्तृतया स्वामितया वा जनेनाभिलष्यमाणः'मंजुमंजुणा घोसेण पडिपुच्छमाणे' मञ्जुमञ्जुना–अतिकोमलेन घोषेण–स्वरेण प्रतिपृच्छन्–प्रश्नयन् प्रणमतः स्वरूपादिवार्तां 'पडिबुज्झमाणो'त्ति पाठान्तरे प्रतिबुद्ध्यमानो जाग्रद्,अप्रचलायमान इत्यर्थः, 'अपडिबुज्झमाणे'त्ति पाठान्तरं, तत्राप्रत्यूह्यमानः–अनपह्रियमाणमानस इत्यर्थः 'समइच्छमाणे'त्ति समतिगच्छन्नतिक्रामन्नित्यर्थः, वाचनान्तरे त्वेवं 'तंतीतलतालतुडियगीयवाइयरवेणं'व्यक्तमेव, किंविधेन रवेणेत्याह–मधुरेण,अत एव 'मणहरेणं' तथा'जयसद्दुग्घोसविसएणं मञ्जुमञ्जुणा घोसेणं'ति जयेति शब्दस्याभिधानस्य उद्घोषः–उद्घोषणं विशदं–स्पष्टं यत्र स तथा तेन,मञ्जुमञ्जुना–कोमलेन घोषेण–ध्वनिना 'अपडिबुज्झमाणे'त्ति प्राग्वत्,

पर्युपास० सू० ३२

॥ ७५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३२]

दीप अनुक्रम [३२]

'कंदरगिरिविवरकुहरगिरिवरपासादुद्धघणभवणदेवकुलसिंघाडगतिगचउक्कचच्चरआरामुज्जाणकाणणसभापवापदेसदेसभागे' कन्दराणि–दर्यो गिरीणां विवरकुहराणि–गुहाः पर्वतान्तराणि वा गिरिवराः–प्रधानपर्वताः प्रासादाः–सप्तभूमिकादयः ऊर्ध्वधनभवनानि–उच्चाविरलगेहानि देवकुलानि–प्रतीतानि शृङ्गाटकत्रिकचतुष्कचत्वराणि प्राग्वत् आरामाः–पुष्पजाति-प्रधानाः वनषण्डाः उद्यानानि–पुष्पादिमद्वृक्षयुक्तानि काननानि–नगराद् दूरवर्तीनि सभा–आस्थायिकाः प्रपा–जलदान-स्थानम् एतेषां ये प्रदेशदेशरूपा भागास्ते तथा तान्, तत्र प्रदेशा–लघुतरा भागा देशास्तु–महत्तराः, 'पडिसद्द(डिंसुआ)सय-सहस्ससंकुलं करेंति' प्राकृतत्वेन बहुवचनार्थे एकवचनमत्र,ततः प्रतिशब्दलक्षसङ्कुलान् कुर्वन् कूणिको निर्गच्छतीति सम्बन्धः, तथा 'हयहेसियहत्थिगुलुगुलाइयरहघणघणसद्दमीसएणं महया कलकलरवेणं जणस्स महुरेण पूरयंते' इत्यत्र नभ इत्यनेन सम्बन्धः, प्रदेशदेशभागान् वेत्यनेन, 'सुगंधवरकुसुमचुण्णउविद्धवासरेणुकविलं नभं करेंते' सुगन्धीनां वरकुसुमानां चूर्णानां च उविद्धः–ऊर्ध्वं गतो यो वासरेणुः–वासकं रजः तेन यत्कपिलं तत्तथा 'नभं'ति नभ आकाशं कुर्वन्, 'कालागुरुकुंदुरुक्क-तुरुक्कधूवनिवहेण जीवलोगमिव वासयंते' जीवलोकं वासयन्निव, शेषं प्राग्वत्, 'समंतओ खुभियचक्कवालं' सर्वतः क्षुभितानि चक्रवालानि–जनमण्डलानि यत्र निर्गमने तत्तथा तद्यथा भवतीत्येवं निर्गच्छतीत्येवं सम्बन्धः, तथा'पउरजणबालवुड्ढपमुइयतु-रियपहावियविउलाउलबोलबहुलं नभं करेंते' प्रचुरजनाश्च अथवा पौरजनाश्च बालवृद्धाश्च ये प्रमुदितास्त्वरितप्रधाविताश्च–शीघ्रं गच्छन्तस्तेषां व्याकुलाकुलानाम्–अतिव्याकुलानां यो बोलः स बहुलो यत्र तत्तथा तदेवम्भूतं नभः कुर्वन्निति। अथाधिकृतवाचनाऽनुश्रीयते–'अदूरसामंते' अनिकटासन्ने उचिते देशे इत्यर्थः, 'ठवेइ'त्ति स्थिरीकरोति 'अवहट्टु'त्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः विशद-वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३२]

दीप अनुक्रम [३२]

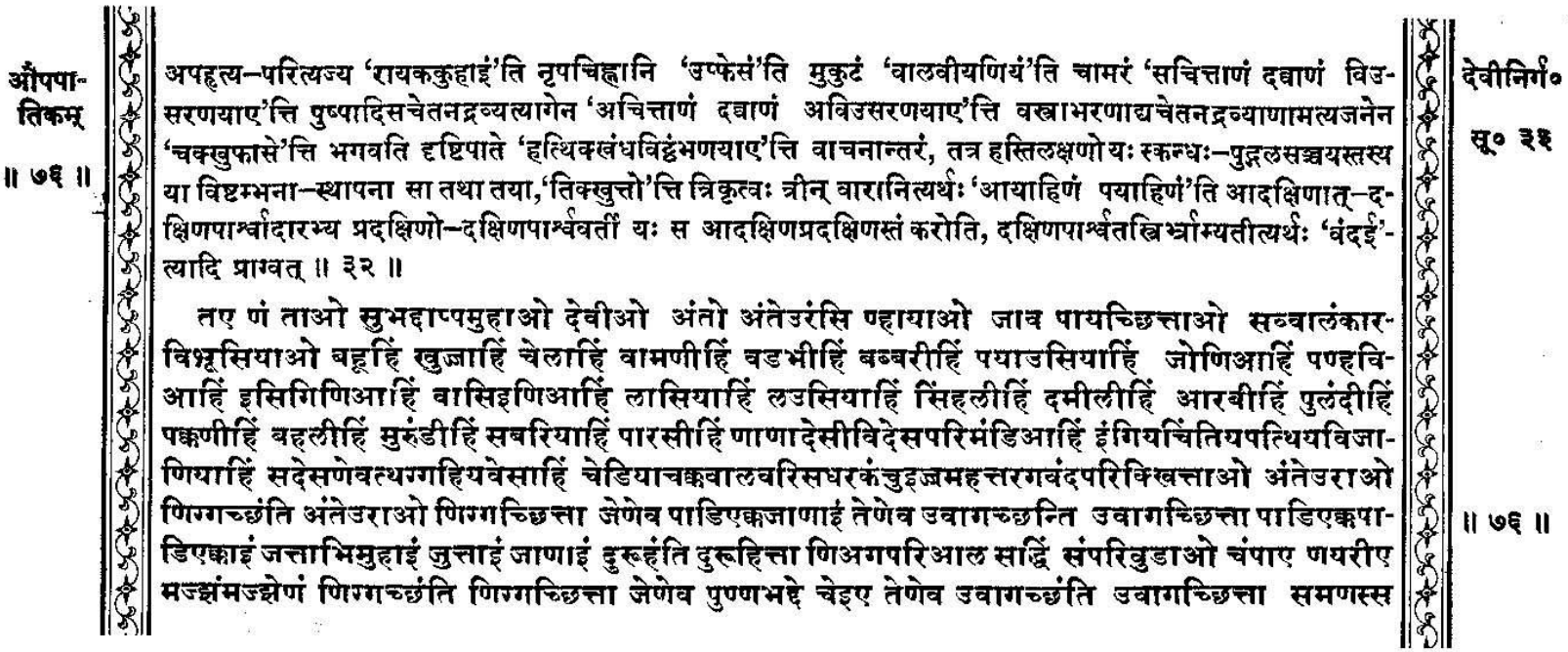

औपपातिकम् ॥ ७६ ॥

अपहृत्य–परित्यज्य 'रायककुहाइं'ति नृपचिह्नानि 'उप्फेसं'ति मुकुटं 'वालवीयणियं'ति चामरं 'सचित्ताणं दव्वाणं विउसरणयाए'त्ति पुष्पादिसचेतनद्रव्यत्यागेन 'अचित्ताणं दव्वाणं अविउसरणयाए'त्ति वस्त्राभरणाद्यचेतनद्रव्याणामत्यजनेन 'चक्खुफासे'त्ति भगवति दृष्टिपाते 'हत्थिक्खंधविट्ठंभणयाए'त्ति वाचनान्तरं, तत्र हस्तिलक्षणो यः स्कन्धः–पुद्गलसञ्चयस्तस्य या विष्टम्भना–स्थापना सा तथा तया,'तिक्खुत्तो'त्ति त्रिकृत्वः त्रीन् वारानित्यर्थः 'आयाहिणं पयाहिणं'ति आदक्षिणात्–दक्षिणपार्श्वादारभ्य प्रदक्षिणो–दक्षिणपार्श्ववर्ती यः स आदक्षिणप्रदक्षिणस्तं करोति, दक्षिणपार्श्वतस्त्रिर्भ्रामयतीत्यर्थः 'वंदई'त्यादि प्राग्वत् ॥ ३२ ॥

तए णं ताओ सुभद्दाप्पमुहाओ देवीओ अंतो अंतेउरंसि ण्हायाओ जाव पायच्छित्ताओ सव्वालंकारविभूसियाओ बहूहिं खुज्जाहिं चेलाहिं वामणीहिं वडभीहिं बब्बरीहिं पयाउसियाहिं जोणियाहिं पण्हविआहिं इसिगिणियाहिं वासिइणियाहिं लासियाहिं लउसियाहिं सिंहलीहिं दमीलीहिं आरबीहिं पुलंदीहिं पक्कणीहिं बहलीहिं मुरुंडीहिं सबरियाहिं पारसीहिं णाणादेसीविदेसपरिमंडियाहिं इंगियचिंतियपत्थियवियाणियाहिं सदेसणेवत्थग्गहियवेसाहिं चेडियाचक्कवालवरिसधरकंचुइज्जमहत्तरगवंदपरिक्खित्ताओ अंतेउराओ णिग्गच्छंति अंतेउराओ णिग्गच्छित्ता जेणेव पाडिएक्कजाणाइं तेणेव उवागच्छन्ति उवागच्छित्ता पाडिएक्कपाडिएक्काइं जत्ताभिमुहाइं जुत्ताइं जाणाइं दुरूहंति दुरूहित्ता णिअगपरिआल सद्धिं संपरिवुडाओ चंपाए णयरीए मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छंति णिग्गच्छित्ता जेणेव पुण्णभद्दे चेइए तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता समणस्स

देवीनिर्ग० सू० ३३

॥ ७६ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः सुभद्रा नामक राज्ञ्यः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः वर्णनं

प्रत सूत्रांक [३३] दीप अनुक्रम [३३]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

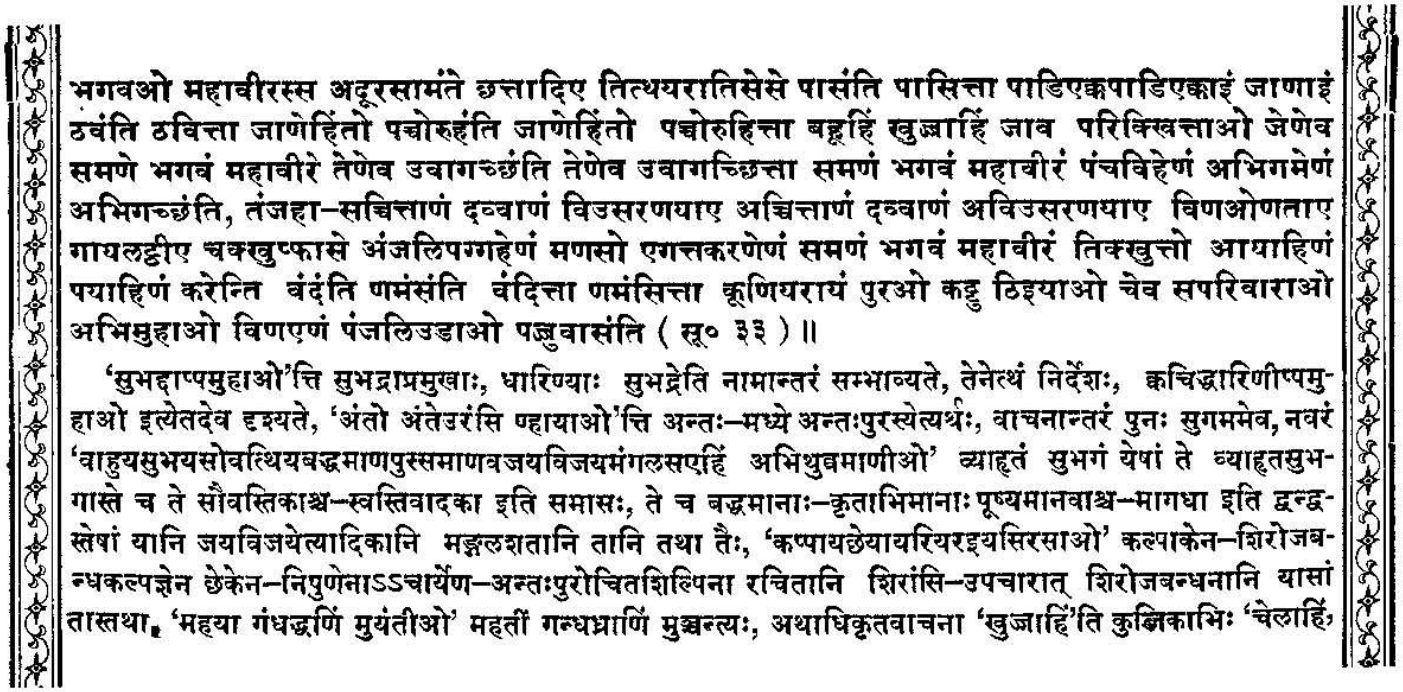

भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते छत्तादिए तित्थयरातिसेसे पासंति पासित्ता पाडिएक्कपाडिएक्काइं जाणाइं ठवंति ठवित्ता जाणेहिंतो पच्चोरुहंति जाणेहिंतो पच्चोरुहित्ता बहूहिं खुज्जाहिं जाव परिक्खित्ताओ जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छंति, तंजहा–सचित्ताणं दव्वाणं विउसरणयाए अचित्ताणं दव्वाणं अविउसरणयाए विणओणताए गायलट्ठीए चक्खुप्फासे अंजलिपग्गहेणं मणसो एगत्तकरणेणं समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेन्ति वंदंति णमंसंति वंदित्ता णमंसित्ता कूणियरायं पुरओ कट्टु ठिइयाओ चेव सपरिवाराओ अभिमुहाओ विणएणं पंजलिउडाओ पज्जुवासंति (सू० ३३) ॥

'सुभद्दाप्पमुहाओ'त्ति सुभद्राप्रमुखाः, धारिण्याः सुभद्रेति नामान्तरं सम्भाव्यते, तेनेत्थं निर्देशः, क्वचिद्धारिणीप्पमुहाओ इत्येतदेव दृश्यते, 'अंतो अंतेउरंसि ण्हायाओ'त्ति अन्तः–मध्ये अन्तःपुरस्येत्यर्थः, वाचनान्तरं पुनः सुगममेव, नवरं 'वाहुयसुभयसोवत्थियबद्धमाणपुस्समाणवजयविजयमंगलसएहिं अभिथुवमाणीओ' व्याहृतं सुभगं येषां ते व्याहृतसुभगास्ते च ते सौवस्तिकाश्च–स्वस्तिवादका इति समासः, ते च बद्धमानाः–कृताभिमानाः पूष्यमानवाश्च–मागधा इति द्वन्द्वस्तेषां यानि जयविजयेत्यादिकानि मङ्गलशतानि तानि तथा तैः, 'कप्पायछेयायरियरइयसिरसाओ' कल्पाकेन–शिरोजबन्धकल्पज्ञेन छेकेन–निपुणेनाऽऽचार्येण–अन्तःपुरोचितशिल्पिना रचितानि शिरांसि–उपचारात् शिरोजबन्धनानि यासां तास्तथा, 'महया गंधद्धणिं मुयंतीओ' महतीं गन्धध्राणिं मुञ्चन्त्यः, अथाधिकृतवाचना 'खुज्जाहिं'ति कुब्जिकाभिः 'चेलाहिं,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	कोणिक-राज्ञः सुभद्रा नामक राज्ञ्यः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः वर्णनं

ति चेटिकाभिः अनार्यदेशोत्पन्नाभिर्वा युक्ता इति गम्यं, 'वामणीहिं' अत्यन्तह्रस्वदेहाभिः ह्रस्वोन्नतहृदयकोष्ठाभिर्वा 'वडभियाहिं'ति वटभिकाभिर्वक्राधःकायाभिः'बब्बरीहिं'ति बर्बराभिधानानार्यदेशोत्पन्नाभिः, एवमन्यान्यपि षोडश पदानि, 'णाणादेसीहिं' नानाजनपदजाताभिः,'विदेशपरिमंडियाहिं' विदेशः परिमण्डितो यकाभिस्तास्तथा 'विदेसपरिपिंडियाहिं'ति वाचनान्तरं, तत्र विदेशे परिपिण्डिता–मिलिता यास्तास्तथा ताभिः,'इंगियचिंतियपत्थियवियाणियाहिं' इङ्गितेन–चेष्टितेन चिन्तितं प्रार्थितं च वस्तु जानन्ति यास्तास्तथा, पाठान्तरे 'इंगियचिंतियपत्थियमणोगतवियाणियाहिं' इङ्गितेन चिन्तितप्रार्थिते मनोगते–मनसि वर्तमाने वचनादिनाऽनुपदेशिते विजानन्ति यास्तास्तथा ताभिः, 'सदेसणेवत्थगहियवेसाहिं' स्वदेशनेपथ्यमिव गृहीतो वेषो यकाभिस्तास्तथा ताभिः, तथा 'चेडियाचक्कवालवरिसधरकंचुइज्जमहत्तरवंदपरिक्खित्ताओ' वर्षधराः–वर्द्धितकाः कञ्चुकिनस्तदितरे च ये महत्तरा–अन्तःपुररक्षकास्तेषां यद्वृन्दं तेन परिक्षिप्ता यास्तास्तथा, 'णियगपरियाल सद्धिं संपरिवुडाओ'त्ति निजकपरिवारेण लुप्ततृतीयैकवचनदर्शनात् सार्धं–सह संपरिवृताः–तेनैव परिवेष्टिताः 'ठियाउ चेव'त्ति ऊर्ध्वस्थिता एवेति ॥ ३३ ॥

धर्मकथा सू० ३४

तए णं समणे भगवं महावीरे कूणिअस्स भंभसारपुत्तस्स सुभद्दाप्पमुहाणं देवीणं तीसे अ महतिमहालियाए परिसाए इसीपरिसाए मुणिपरिसाए जइपरिसाए देवपरिसाए अणेगसयाए अणेगसयवंदाए अणेगसयवंदपरिवाराए ओहबले अइबले महब्बले अपरिमिअबलवीरियतेयमाहप्पकंतिजुत्ते सारयनवत्थणियमहुरगंभीरकोंचणिग्घोसदुंदुभिस्सरे उरेवित्थडाए कंठेऽवट्टियाए सिरे समाइण्णाए अगरलाए अमम्मणाए

॥ ७७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोणिक-राज्ञः सुभद्रा नामक राज्ञ्यः भगवत् महावीरस्य वन्दनार्थे गमन-यात्रायाः वर्णनं

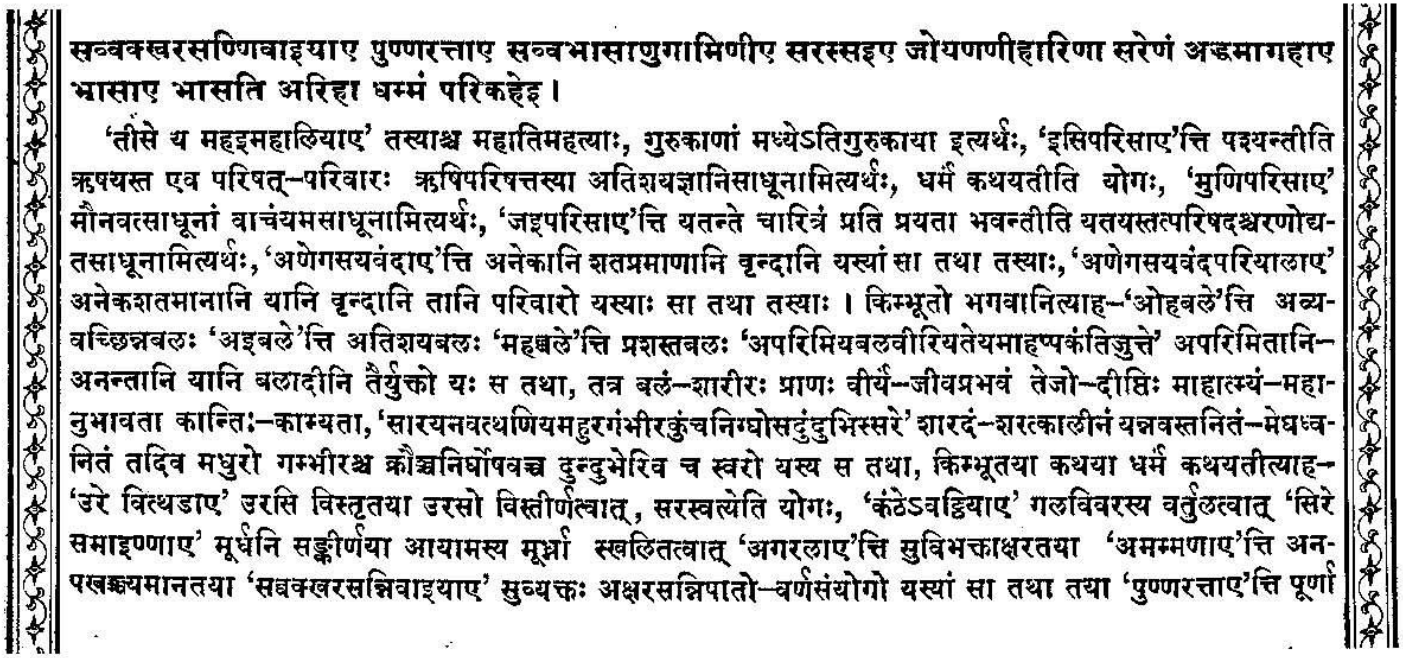

सव्वक्खरसण्णिवाइयाए पुण्णरत्ताए सव्वभासाणुगामिणीए सरस्सइए जोयणणीहारिणा सरेणं अद्धमागहाए भासाए भासति अरिहा धम्मं परिकहेइ।

'तीसे य महइमहालियाए' तस्याश्च महातिमहत्याः, गुरुकाणां मध्येऽतिगुरुकाया इत्यर्थः, 'इसिपरिसाए'त्ति पश्यन्तीति ऋषयस्त एव परिषत्–परिवारः ऋषिपरिषत्तस्या अतिशयज्ञानिसाधूनामित्यर्थः, धर्मं कथयतीति योगः, 'मुणिपरिसाए' मौनवत्साधूनां वाचंयमसाधूनामित्यर्थः, 'जइपरिसाए'त्ति यतन्ते चारित्रं प्रति प्रयता भवन्तीति यतयस्तत्परिषदश्चरणोद्यतसाधूनामित्यर्थः, 'अणेगसयवंदाए'त्ति अनेकानि शतप्रमाणानि वृन्दानि यस्यां सा तथा तस्याः, 'अणेगसयवंदपरियालाए' अनेकशतमानानि यानि वृन्दानि तानि परिवारो यस्याः सा तथा तस्याः। किम्भूतो भगवानित्याह–'ओहबले'त्ति अव्यवच्छिन्नबलः 'अइबले'त्ति अतिशयबलः 'महब्बले'त्ति प्रशस्तबलः 'अपरिमियबलवीरियतेयमाहप्पकंतिजुत्ते' अपरिमितानि–अनन्तानि यानि बलादीनि तैर्युक्तो यः स तथा, तत्र बलं–शारीरः प्राणः वीर्यं–जीवप्रभवं तेजो–दीप्तिः माहात्म्यं–महानुभावता कान्तिः–काम्यता, 'सारयनवत्थणियमहुरगंभीरकुंचनिग्घोसदुंदुभिस्सरे' शारदं–शरत्कालीनं यन्नवस्तनितं–मेघध्वनितं तदिव मधुरो गम्भीरश्च क्रौञ्चनिर्घोषवच्च दुन्दुभेरिव च स्वरो यस्य स तथा, किम्भूतया कथया धर्मं कथयतीत्याह–'उरे वित्थडाए' उरसि विस्तृतया उरसो विस्तीर्णत्वात्, सरस्वत्येति योगः, 'कंठेऽवट्ठियाए' गलविवरस्य वर्तुलत्वात् 'सिरे समाइण्णाए' मूर्धनि सङ्कीर्णया आयामस्य मूर्ध्ना स्खलितत्वात् 'अगरलाए'त्ति सुविभक्ताक्षरतया 'अमम्मणाए'त्ति अनपखक्खयमानतया 'सव्वक्खरसन्निवाइयाए' सुव्यक्तः अक्षरसन्निपातो–वर्णसंयोगो यस्यां सा तथा तया 'पुण्णरत्ताए'त्ति पूर्णा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३४]

दीप अनुक्रम [३४]

च स्वरकलाभिः रक्ता च–गेयरागानुरक्ता या सा तथा तया, क्वचिदिदं विशेषणद्वयं–'फुडविसयमहुरगंभीरगाहियाए' स्फुटविशदा–अत्यन्तव्यक्ताक्षरा स्फुटविषया वा–स्फुटार्था मधुरा–कोमला गम्भीरा–महती ग्राहिका–अक्लेशेनार्थबोधिका, एतेषां कर्मधारयोऽतस्तया, 'सव्वक्खरसण्णिवाइयाए' सर्वाक्षराणां सन्निपातः–अवतारो यस्यामस्ति सर्वे वाऽक्षरसन्निपाताः–संयोगाः सन्ति यस्यां सा सर्वाक्षरसन्निपातिका तया, 'सरस्सइए' वाण्या 'जोयणणीहारिणा' योजनातिक्रामिणा स्वरेण 'अद्धमागहाए भासाए'त्ति 'रसोर्लसौ मागध्या'[1]मित्यादि यन्मागधभाषालक्षणं तेनापरिपूर्णा प्राकृतभाषालक्षणबहुला अर्द्धमागधीत्युच्यते ।

तेसिं सव्वेसिं आरियमणारियाणं अगिलाए धम्ममाइक्खइ, साऽविय णं अद्धमागहा भासा तेसिं सव्वेसिं आरियमणारियाणं अप्पणो सभासाए परिणामेणं परिणमइ, तंजहा–अत्थि लोए अत्थि अलोए एवं जीवा अजीवा बंधे मोक्खे पुण्णे पावे आसवे संवरे वेयणा णिज्जरा अरिहंता चक्कवट्टी बलदेवा वासुदेवा नरका णेरइया तिरिक्खजोणिआ तिरिक्खजोणिणीओ माया पिया रिसओ देवा देवलोआ सिद्धी सिद्धा परिणिव्वाणं परिणिव्वुया अत्थि पाणाइवाए मुसावाए अदिण्णादाणे मेहुणे परिग्गहे अत्थि कोहे माणे माया लोभे जाव मिच्छादंसणसल्ले ।

'आरियमणारियाणं'ति आर्यदेशोत्पन्नतदितरनराणाम् 'अप्पणो सभासाए परिणामेणं परिणमइ'त्ति आर्यादीनामात्मन-

१ श्रीसिद्धहैमशब्दानुशासने तु ९–४–२९९ तमं सूत्रं 'रसोर्लशौ' इति, तत्र मागध्यामित्यस्यानुवृत्तेर्लाभात् ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य धर्मदेशनयाः [प्रवचनस्य] वर्णनं

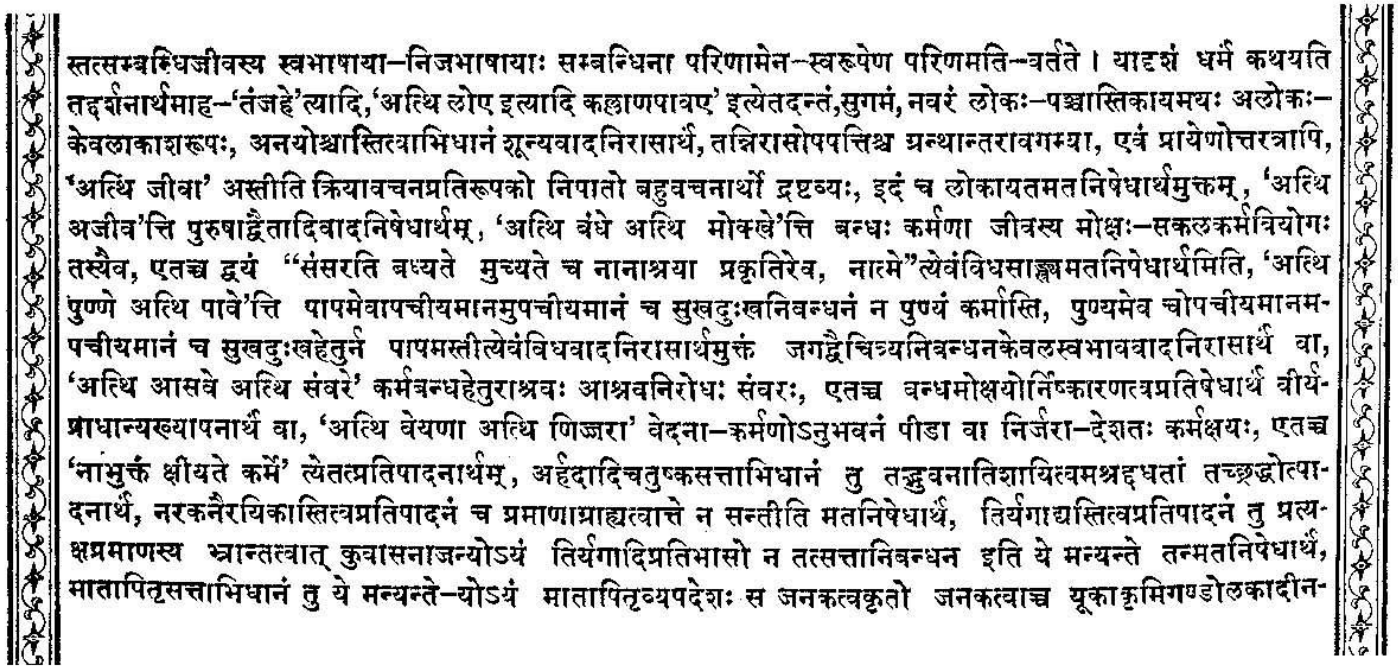

तत्सम्बन्धिजीवस्य स्वभाषाया–निजभाषायाः सम्बन्धिना परिणामेन–स्वरूपेण परिणमति–वर्तते । यादृशं धर्मं कथयति तद्दर्शनार्थमाह–'तंजहे'त्यादि,'अत्थि लोए इत्यादि कल्लाणपावए' इत्येतदन्तं,सुगमं, नवरं लोकः–पञ्चास्तिकायमयः अलोकः–केवलाकाशरूपः, अनयोश्चास्तित्वाभिधानं शून्यवादनिरासार्थं, तन्निरासोपपत्तिश्च ग्रन्थान्तरावगम्या, एवं प्रायेणोत्तरत्रापि, 'अत्थि जीवा' अस्तीति क्रियावचनप्रतिरूपको निपातो बहुवचनार्थो द्रष्टव्यः, इदं च लोकायतमतनिषेधार्थमुक्तम्, 'अत्थि अजीव'त्ति पुरुषाद्वैतादिवादनिषेधार्थम्, 'अत्थि बंधे अत्थि मोक्खे'त्ति बन्धः कर्मणा जीवस्य मोक्षः–सकलकर्मवियोगः तस्यैव, एतच्च द्वयं "संसरति बध्यते मुच्यते च नानाश्रया प्रकृतिरेव, नात्मे"त्येवंविधसाङ्ख्यमतनिषेधार्थमिति, 'अत्थि पुण्णे अत्थि पावे'त्ति पापमेवापचीयमानमुपचीयमानं च सुखदुःखनिबन्धनं न पुण्यं कर्मास्ति, पुण्यमेव चोपचीयमानमपचीयमानं च सुखदुःखहेतुर्न पापमस्तीत्येवंविधवादनिरासार्थमुक्तं जगद्वैचित्र्यनिबन्धनकेवलस्वभाववादनिरासार्थं वा, 'अत्थि आसवे अत्थि संवरे' कर्मबन्धहेतुराश्रवः आश्रवनिरोधः संवरः, एतच्च बन्धमोक्षयोर्निष्कारणत्वप्रतिषेधार्थं वीर्यप्राधान्यख्यापनार्थं वा, 'अत्थि वेयणा अत्थि णिज्जरा' वेदना–कर्मणोऽनुभवनं पीडा वा निर्जरा–देशतः कर्मक्षयः, एतच्च 'नाभुक्तं क्षीयते कर्म' त्येतत्प्रतिपादनार्थम्, अर्हदादिचतुष्कसत्ताभिधानं तु तद्भुवनातिशायित्वमश्रद्दधतां तच्छ्रद्धोत्पादनार्थं, नरकनैरयिकास्तित्वप्रतिपादनं च प्रमाणाग्राह्यत्वात्ते न सन्तीति मतनिषेधार्थं, तिर्यगाद्यस्तित्वप्रतिपादनं तु प्रत्यक्षप्रमाणस्य भ्रान्तत्वात् कुवासनाजन्योऽयं तिर्यगादिप्रतिभासो न तत्सत्तानिबन्धन इति ये मन्यन्ते तन्मतनिषेधार्थं, मातापितृसत्ताभिधानं तु ये मन्यन्ते–योऽयं मातापितृव्यपदेशः स जनकत्वकृतो जनकत्वाच्च यूकाकृमिगण्डोलकादीन-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३४]

दीप अनुक्रम [३४]

प्याश्रित्य स स्यात्, न चैवं, तस्मान्न वास्तवो मातापितृव्यवहार इति, तन्मतनिरासार्थं, निरासश्च जनकत्वे समानेऽप्युपकारित्वकृतस्तद्व्यपदेश इति, तथा ये मन्यन्ते अतीन्द्रियार्थद्रष्टारो न सम्भवन्ति, रागादिमत्त्वात्पुरुषाणाम्, अस्मदादिवदिति तन्मतनिरासार्थमृषिसत्ताभिधानं, तन्निरासश्च चन्द्रोपरागादिज्ञानानामविसंवाददर्शनादिति, देवाद्यस्तिताभिधानं च ये मन्यन्ते–न सन्ति देवादयोऽप्रत्यक्षत्वात्, तन्मतव्युदासार्थं, तत्र सिद्धिः–ईषत्प्राग्भारा निष्ठितार्थता वा सिद्धास्तु–तद्वन्तः परिनिर्वाणं–कर्मकृतसन्तापोपशान्त्या सुस्थत्वं परिनिर्वृतास्तु–तद्वन्तः, तथा ये मन्यन्ते–प्राणातिपातादयो न बन्धमोक्षहेतवो भवन्ति, बन्धनीयस्य मोचनीयस्य च जीवस्याभावात्, तन्मतनिषेधार्थम् 'अत्थि पाणाइवाए' इत्याद्युक्तं, केवलमत्र सूत्रे बन्धमोक्षहेतुरिति वाक्यशेषो दृश्यः, इह च यावत्करणादिदं दृश्यं–'पेज्जे दोसे कलहे अब्भक्खाणे पेसुन्ने परपरिवाए अरइरई मायामोसे'त्ति तत्र पेज्जेत्ति–प्रेमानभिव्यक्तमायालोभव्यक्तिकमभिष्वङ्गमात्रं 'दोसे'त्ति द्वेषः अनभिव्यक्तक्रोधमानव्यक्तिकमप्रीतिमात्रं कलहो–राटिः अभ्याख्यानम्–असद्दोषारोपणं पैशुन्यं–प्रच्छन्नं सद्दोषाविष्करणं परपरिवादो–विप्रकीर्णं परेषां गुणदोषवचनम् 'अरइरइ'त्ति अरतिः–अरतिमोहनीयोदयाच्चित्तोद्वेगस्तत्फला रतिः–विषयेषु मोहनीयाच्चित्ताभिरतिः अरतिरतिः 'मायामोसि'त्ति तृतीयकषायद्वितीयाश्रवयोः संयोगः, अनेन च सर्वसंयोगा उपलक्षिताः, अथवा वेषान्तरभाषान्तरकरणेन यत्परवञ्चनं तन्मायामृषावाद इति, 'मिच्छादंसणसल्ले'त्ति मिथ्यादर्शनं शल्यमिव विविधव्यथानिबन्धनत्वात् मिथ्यादर्शनशल्यं ।

अत्थि पाणाइवायवेरमणे मुसावायवेरमणे अदिण्णादाणवेरमणे मेहुणवेरमणे परिग्गहवेरमणे जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य धर्मदेशनयाः [प्रवचनस्य] वर्णनं

प्रत सूत्रांक [३४]

दीप अनुक्रम [३४]

मिच्छादंसणसल्लविवेगे सव्वं अत्थिभावं अत्थित्ति वयति, सव्वं णत्थिभावं णत्थित्ति वयति, सुचिण्णा कम्मा सुचिण्णफला भवंति, दुचिण्णा कम्मा दुचिण्णफला भवंति, फुसइ पुण्णपावे, पच्चायंति जीवा, सफले कल्लाणपावए। धम्ममाइक्खइ–इणमेव णिग्गंथे पावयणे सच्चे अणुत्तरे केवलए संसुद्धे पडिपुण्णे णेआउए सल्लकत्तणे सिद्धिमग्गे मुत्तिमग्गे णिव्वाणमग्गे णिज्जाणमग्गे अवितहमविसंधि सव्वदुक्खप्पहीणमग्गे इहट्ठिआ जीवा सिज्झंति बुज्झंति मुचंति परिणिव्वायंति सव्वदुक्खाणमंतं करंति।

'पाणाइवायवेरमणे' इत्यादौ तु तत्सत्ताभिधानम् अप्रमादस्य सर्वथा कर्तुमशक्यत्वेन तदसम्भव इत्येतन्मतनिषेधार्थं, किं बहुना ?–'सव्वमत्थिभावं'ति अस्तीतिक्रियायुक्तो भावोऽस्तिभावस्तं, नास्तीतिविवक्षानिबन्धनभूतो भावो नास्तिभावोऽतस्तं, 'सुचिण्णा कम्म'त्ति सुचरितानि तपःप्रभृतीनि कर्माणि–क्रियाः 'सुचिण्णफल'त्ति सुचरितं–सुचरितहेतुकत्वात् पुण्यकर्मबन्धादि तदेव फलं येषां तानि तथा, शुभफलानीत्यर्थः, न निष्फलानि नाप्यशुभफलानीति हृदयम्, एवं विपर्ययवाक्यमपि, ततश्च 'फुसइ पुण्णपावे' बध्नाति जीवः शुभाशुभं कर्म सुचरितेतरक्रियाभिः, ततः 'पच्चायंति'त्ति जीवाः प्रत्याजायन्ते–उत्पद्यन्ते, न पुनः 'भस्मीभूतस्य शान्तस्य, पुनरागमनं कुतः?' इत्येतदेव नास्तिकवचनं सत्यं, ततश्चोत्पत्तौ सत्यां 'सफले कल्लाणपावए' सौभाग्यादीतरनिबन्धनत्वात् फलवच्छुभाशुभं कर्मेति। प्रकारान्तरेण भगवतो धर्मप्ररूपणां दर्शयन्नाह–'धम्ममाइक्खइ इत्यादि पडिरूवे इत्येतदन्तम्', इदं च व्यक्तं, नवरम् 'इदमेव' प्रत्यक्षं 'णिग्गंथे पावयणे' नैर्ग्रन्थं प्रवचनं–जिनशासनं 'सच्चे' सद्भ्यो हितम् 'अणुत्तरे' नेतः प्रधानतरमन्यदस्तीत्यर्थः 'केवले' अद्वितीयं केवलि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य धर्मदेशनयाः [प्रवचनस्य] वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३४]

दीप अनुक्रम [३४]

प्रतीतं वा अनन्तं वा–अनन्तार्थविषयत्वात् 'पडिपुण्णे' प्रतिपूर्णमल्पग्रन्थत्वादिभिः प्रवचनगुणैः 'संसुद्धे' कषादिभिः शुद्धं सुवर्णमिव निर्दोषं गुणपूर्णत्वात् 'णेयाउए' नैयायिकं–न्यायानुगतं प्रमाणाबाधितमित्यर्थः, 'सल्लकत्तणे' मायादिशल्यकर्तनं, तद्भावितानां हि भावशल्यानि व्यवच्छेदमायान्तीति 'सिद्धिमग्गे' निष्ठितार्थत्वोपायः 'मुत्तिमग्गे' मुक्तेः–सकलकर्मवियोगस्य हेतुः अथवा मुक्तिः–निर्लोभता मार्गो यस्य प्राप्तेः तन्मुक्तिमार्गं 'णिज्जाणमग्गे' निर्याणस्य–अनावृत्तिकगमनस्य मार्गो–हेतुः, 'णिव्वाणमग्गे' निर्वाणस्य–सकलसन्तापरहितत्वस्य पन्थाः 'अवितहं' सद्भूतार्थं 'अविसंधि' अविरुद्धपूर्वापरघट्टनं 'सव्वदुक्खप्पहीणमग्गे' सकलदुःखप्रक्षयस्य पन्थाः अथवा सर्वाणि दुःखानि प्रहीणानि यत्र सन्ति स तथा स मार्गः–शुद्धिर्यत्र तत्तथा, अत एव 'इहट्ठिया जीवा सिज्झंति' विशेषतः सिद्धिगमनयोग्या भवन्ति अणिमादिमहासिद्धिप्राप्ता वा भवन्ति 'बुज्झंति' केवलज्ञानप्राप्त्या 'मुच्चंति' भवोपग्राहिकर्मांशापगमात् 'परिणिव्वायंति' कर्मकृतसकलसन्तापविरहात्, किमुक्तं भवतीत्यत आह–'सव्वदुक्खाणमंतं करेंति'।

एगच्चा पुण एगे भयंतारो पुव्वकम्मावसेसेणं अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति, महड्ढीएसु जाव महासुक्खेसु दूरंगइएसु चिरट्ठिईएसु, ते णं तत्थ देवा भवंति महड्ढीए जाव चिरट्ठिईआ हारविराइयवच्छा जाव पभासमाणा कप्पोवगा गतिकल्लाणा आगमेसिभद्दा जाव पडिरूवा, तमाइक्खइ एवं खलु चउहिं ठाणेहिं जीवा णेरइअत्ताए कम्मं पकरेंति, णेरइअत्ताए कम्मं पकरेत्ता णेरइसु उववज्जंति, तंजहा–महारंभयाए महापरिग्गहयाए पंचिंदियवहेणं कुणिमाहारेणं, एवं एएणं अभिलावेणं तिरिक्खजोणिएसु माइल्ल-

॥ ८० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य धर्मदेशनयाः [प्रवचनस्य] वर्णनं

प्रत सूत्रांक [३४] + गाथा: दीप अनुक्रम [३४-३९]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः
	भगवत् महावीरस्य धर्मदेशनया: [प्रवचनस्य] वर्णनं

याए णिअडिल्लयाए अलिअवयणेणं उक्कंचणयाए वंचणयाए, मणुस्सेसु पगतिभद्दयाए पगतिविणीतताए साणुक्कोसयाए अमच्छरियताए, देवेसु सरागसंजमेणं संजमासंजमेणं अकामणिज्जराए बालतवोकम्मेणं, तमाइक्खइ,–जह णरगा गम्मंति जे णरगा जा य वेयणा णरए । सारीरमाणसाइं दुक्खाइं तिरिक्खजोणीए ॥ १ ॥ माणुस्सं च अणिचं वाहिजरामरणवेयणापउरं । देवे अ देवलोए देविड्ढिं देवसोक्खाइं ॥ २ ॥ णरगं तिरिक्खजोणिं माणुसभावं च देवलोअं च । सिद्धे अ सिद्धवसहिं छज्जीवणियं परिकहेइ ॥ ३ ॥ जह जीवा बज्झंति मुच्चंति जह य परिकिलिस्संति । जह दुक्खाणं अंतं करंति केई अपडिबद्धा ॥ ४ ॥ अट्टदुहट्टियचित्ता जह जीवा दुक्खसागरमुविंति । जह वेरग्गमुवगया कम्मसमुग्गं विहाडंति ॥ ५ ॥

'एगच्चा' एकार्चा–एका अर्चा–मनुष्यतनुर्भाविनी येषां ते तथा, ते पुनरेके केचन 'भयंतारो'त्ति भदन्ताः–कल्याणिनः भक्तारो वा–नैर्ग्रन्थप्रवचनस्य सेवयितारः पूर्वकर्मावशेषेण 'अण्णयरेसु देवलोएसु'त्ति अन्यतरदेवानां मध्य इत्यर्थः, 'महड्ढिएसु' इह यावत्करणादिदं दृश्यं–'महज्जुइएसु महाबलेसु महायसेसु महाणुभागेसु'त्ति, व्याख्या च प्राग्वत्, 'दूरंगइएसु'त्ति अच्युतान्तदेवलोकगतिकेष्वित्यर्थः 'हारविराइयवच्छा' इह यावत्करणादिदं दृश्यं–'कडयतुडियथंभियभुया अंगयकुंडलमट्ठगंडयलकण्णपीढधारी विचित्तहत्थाभरणा दिव्वेणं संघाएणं दिव्वेणं संठाणेणं दिव्वाए इड्ढीए दिव्वाए जुईए दिव्वाए पभाए दिव्वाए छायाए दिव्वाए अच्चीए दिव्वेणं तेएणं दिव्वाए लेसाए दस दिसाओ उज्जोवेमाणा' इति व्याख्या चासुरवर्णकवद् दृश्या, 'कप्पोवग'त्ति कल्पोपगा–देवलोकजाः 'आगमेसिभद्द'त्ति आगमिष्यद्–अनागतकालभावि भद्रं–कल्याणं निर्वाण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३४] + गाथा: दीप अनुक्रम [३४-३९]

लक्षणं येषां ते तथा, इह यावत्करणादिदं दृश्यं–'पासाईया दरिसणिज्जा अभिरूव पडिरूव'त्ति व्याख्या प्राग्वदेवेति, निर्ग्रन्थप्रवचनफलवक्तव्यतां निगमयन्नाह–'तमाइक्खइ'त्ति तत्प्रवचनफलमिति । अथ प्रकारान्तरेण धर्ममाह–'एवं खल्वित्यादि बालतवोकम्मेण'मित्येतदन्तं, व्यक्तमेव, नवरं 'एव'मिति वक्ष्यमाणेन प्रकारेण, खलुर्वाक्यालङ्कारे, 'कुणिमाहारेणं'ति कुणिमं–मांसं, 'उक्कंचणयाए वंचणयाए'त्ति उत्कञ्चनता मुग्धवञ्चनप्रवृत्तस्य समीपवर्तिविदग्धचित्तरक्षार्थं क्षणमव्यापारतयाऽवस्थानं वञ्चनता–प्रतारणं 'पगइभद्दयाए'त्ति प्रकृतिभद्रकता स्वभावत एवापरोपतापिता 'साणुक्कोसयाए'त्ति सानुक्रोशता–सदयता 'तमाइक्खइ'त्ति तं धर्ममाख्यातीति धर्मकथानिगमनम् । अथोक्तधर्मदेशनामेव सविशेषां दर्शयन्नाह–'जह णरगा गम्मन्ती'त्यादिगाथापञ्चकं, व्यक्तं, नवरं यथा नरका गम्यन्ते तथा परिकथयतीति सर्वत्र क्रियायोगः, 'नरगं चे'त्यादि गाथा उक्तसङ्ग्राहिकेति, तथा 'अट्टा अट्टियचित्ता' इति आर्ताः–शरीरतो दुःखिता आर्तितचित्ताः–शोकादिपीडिताः आर्ताद्वा–ध्यानविशेषादार्तिंचित्ता इति, 'अट्टणियट्टियचित्त'त्ति पाठान्तरं, तत्र आर्तेन नितरामर्दितम्–अनुगतं चित्तं येषां ते तथा, 'अट्टदुहट्टियचित्ते'त्ति वा आर्तेन दुःखार्दितं चित्तं येषां ते तथा ।

जहा रागेण कडाणं कम्माणं पावगो फलविवागो जह य परिहीणकम्मा सिद्धा सिद्धालयमुविंति, तमेव धम्मं दुविहं आइक्खइ, तंजहा–अगारधम्मं अणगारधम्मं च, अणगारधम्मो ताव इह खलु सव्वओ सव्वत्ताए मुंडे भवित्ता अगारातो अणगारियं पव्वयइ सव्वाओ पाणाइवायाओ वेरमणं मुसावाय० अदिण्णा-

॥ ८१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य धर्मदेशनयाः [प्रवचनस्य] वर्णनं

प्रत सूत्रांक [३४] + गाथा: दीप अनुक्रम [३४-४०]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

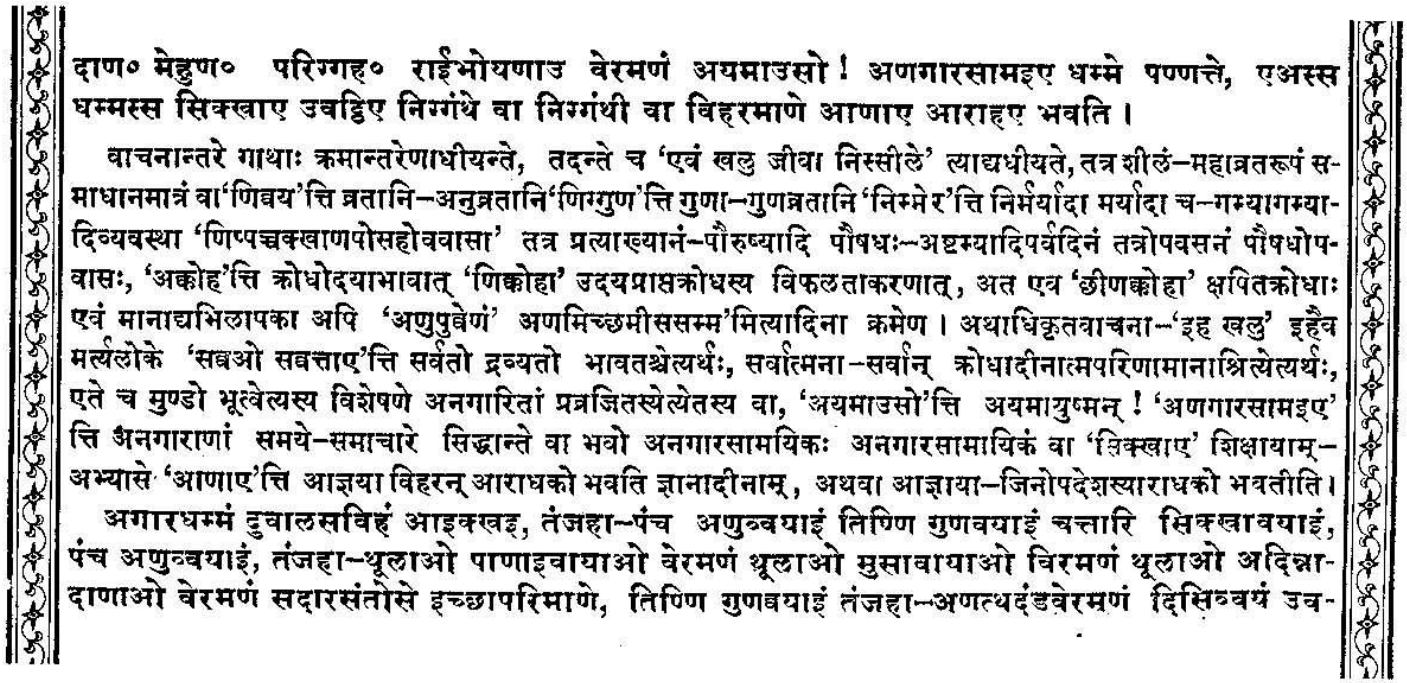

दाण० मेहुण० परिग्गह० राईभोयणाउ वेरमणं अयमाउसो! अणगारसामइए धम्मे पण्णत्ते, एअस्स धम्मस्स सिक्खाए उवट्ठिए निग्गंथे वा निग्गंथी वा विहरमाणे आणाए आराहए भवति।

वाचनान्तरे गाथाः क्रमान्तरेणाधीयन्ते, तदन्ते च 'एवं खलु जीवा निस्सीले' त्याद्यधीयते, तत्र शीलं–महाव्रतरूपं समाधानमात्रं वा'णिव्वय'त्ति व्रतानि–अनुव्रतानि'णिग्गुण'त्ति गुणा–गुणव्रतानि 'निम्मेर'त्ति निर्मर्यादा मर्यादा च–गम्यागम्यादिव्यवस्था 'णिप्पच्चक्खाणपोसहोववासा' तत्र प्रत्याख्यानं–पौरुष्यादि पौषधः–अष्टम्यादिपर्वदिनं तत्रोपवसनं पौषधोपवासः, 'अकोह'त्ति क्रोधोदयाभावात् 'णिक्कोहा' उदयप्राप्तक्रोधस्य विफलताकरणात्, अत एव 'छीणकोहा' क्षपितक्रोधाः एवं मानाद्यभिलापका अपि 'अणुपुव्वेणं' अणमिच्छमीससम्म'मित्यादिना क्रमेण। अथाधिकृतवाचना–'इह खलु' इहैव मर्त्यलोके 'सव्वओ सव्वत्ताए'त्ति सर्वतो द्रव्यतो भावतश्चेत्यर्थः, सर्वात्मना–सर्वान् क्रोधादीनात्मपरिणामानाश्रित्येत्यर्थः, एते च मुण्डो भूत्वेत्यस्य विशेषणे अनगारितां प्रव्रजितस्येत्येतस्य वा, 'अयमाउसो'त्ति अयमायुष्मन्! 'अणगारसामइए' त्ति अनगाराणां समये–समाचारे सिद्धान्ते वा भवो अनगारसामयिकः अनगारसामायिकं वा 'सिक्खाए' शिक्षायाम्–अभ्यासे 'आणाए'त्ति आज्ञया विहरन् आराधको भवति ज्ञानादीनाम्, अथवा आज्ञाया–जिनोपदेशस्याराधको भवतीति।

अगारधम्मं दुवालसविहं आइक्खइ, तंजहा–पंच अणुव्वयाइं तिण्णि गुणव्वयाइं चत्तारि सिक्खावयाइं, पंच अणुव्वयाइं, तंजहा–थूलाओ पाणाइवायाओ वेरमणं थूलाओ मुसावायाओ विरमणं थूलाओ अदिन्नादाणाओ वेरमणं सदारसंतोसे इच्छापरिमाणे, तिण्णि गुणव्वयाइं तंजहा–अणत्थदंडवेरमणं दिसिव्वयं उव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	भगवत् महावीरस्य धर्मदेशनया: [प्रवचनस्य] वर्णनं

प्रत सूत्रांक [३४] + गाथा: दीप अनुक्रम [३४-४०]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

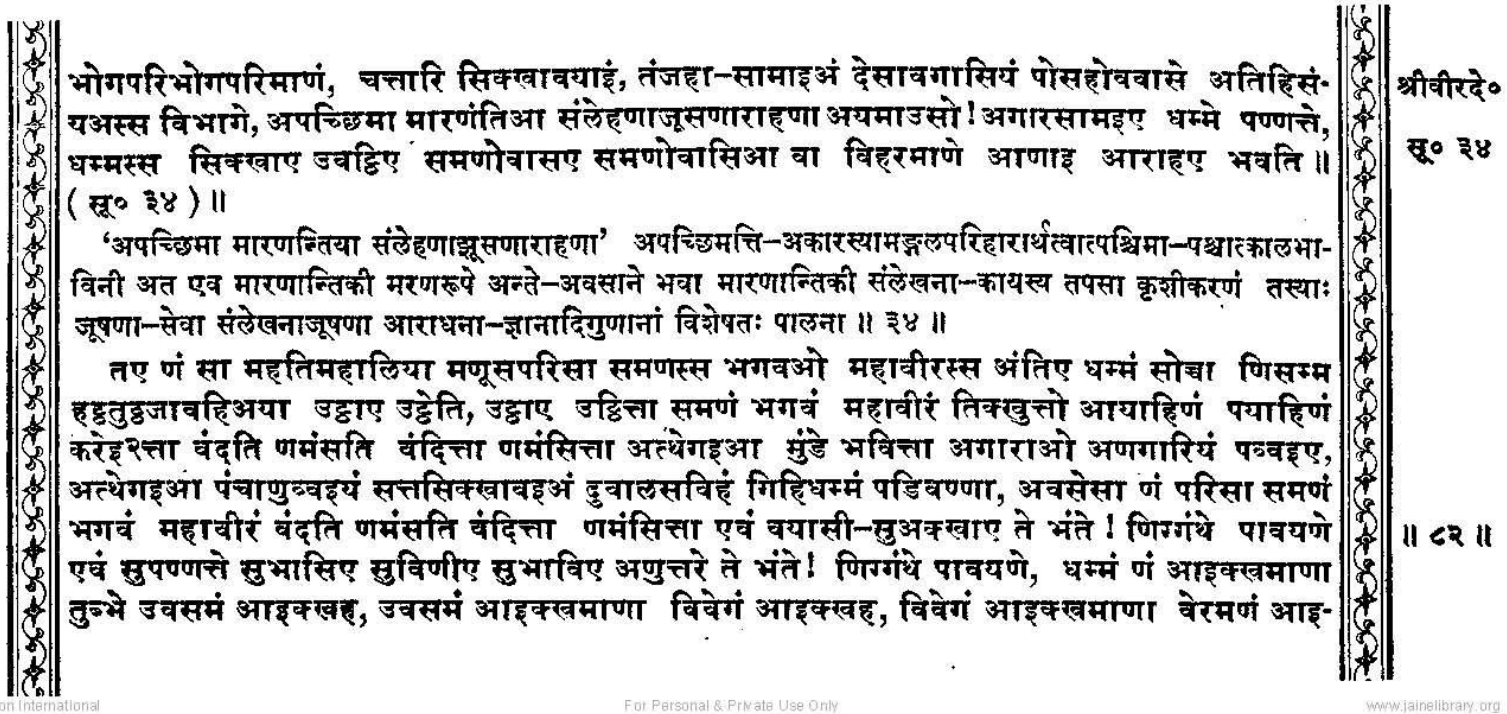

औपपातिकम् ॥ ८२ ॥

भोगपरिभोगपरिमाणं, चत्तारि सिक्खावयाइं, तंजहा–सामाइअं देसावगासियं पोसहोववासे अतिहिसंयअस्स विभागे, अपच्छिमा मारणंतिआ संलेहणाजूसणाराहणा अयमाउसो! अगारसामइए धम्मे पण्णत्ते, धम्मस्स सिक्खाए उवट्ठिए समणोवासए समणोवासिआ वा विहरमाणे आणाइ आराहए भवति ॥ (सू० ३४) ॥

'अपच्छिमा मारणन्तिया संलेहणाझूसणाराहणा' अपच्छिमत्ति–अकारस्यामङ्गलपरिहारार्थत्वात्पश्चिमा–पश्चात्कालभाविनी अत एव मारणान्तिकी मरणरूपे अन्ते–अवसाने भवा मारणान्तिकी संलेखना–कायस्य तपसा कृशीकरणं तस्याः जूषणा–सेवा संलेखनाजूषणा आराधना–ज्ञानादिगुणानां विशेषतः पालना ॥ ३४ ॥

तए णं सा महतिमहालिया मणूसपरिसा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठजावहिअया उट्ठाए उट्ठेति, उट्ठाए उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ२त्ता वंदति णमंसति वंदित्ता णमंसित्ता अत्थेगइआ मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए, अत्थेगइआ पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइअं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवण्णा, अवसेसा णं परिसा समणं भगवं महावीरं वंदति णमंसति वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी–सुअक्खाए ते भंते! णिग्गंथे पावयणे एवं सुपण्णत्ते सुभासिए सुविणीए सुभाविए अणुत्तरे ते भंते! णिग्गंथे पावयणे, धम्मं णं आइक्खमाणा तुब्भे उवसमं आइक्खह, उवसमं आइक्खमाणा विवेगं आइक्खह, विवेगं आइक्खमाणा वेरमणं आइ-

श्रीवीरदे० सू० ३४

॥ ८२ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	भगवत् महावीरस्य धर्मदेशनया: [प्रवचनस्य] वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३५-३७]

दीप अनुक्रम [४१-४३]

क्खह, वेरमणं आइक्खमाणा अकरणं पावाणं कम्माणं आइक्खह, णत्थि णं अण्णे केइ समणे वा माहणे वा जे एरिसं धम्ममाइक्खित्तए, किमंग पुण इत्तो उत्तरतरं ?, एवं वदित्ता जामेव दिसं पाउब्भूआ तमेव दिसं पडिगया ॥ (सू० ३५) ॥ तए णं कूणिए राया भंभसारपुत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठजावहियए उट्ठाए उट्ठेइ उट्ठाए उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेति २ त्ता वंदति णमंसति वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी–सुअक्खाए ते भंते ! णिग्गंथे पावयणे जाव किमंग पुण एत्तो उत्तरतरं ?, एवं वदित्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए ॥ (सू० ३६) ॥ तए णं ताओ सुभद्दापमुहाओ देवीओ समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोचा णिसम्म हट्ठतुट्ठजावहिअयाओ उट्ठाए उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेन्ति २ त्ता वंदंति णमंसंति वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी–सुअक्खाए ते भंते ! णिग्गंथे पावयणे जाव किमंग पुण इत्तो उत्तरतरं ?, एवं वदित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूआओ तामेव दिसिं पडिगयाओ । समोसरणं सम्मत्तं ॥ (सू० ३७) ॥

'महइमहालिया महच्चपरिस'त्ति महातिमहती–अतिगरीयसी महत्पर्षत्–महत्त्वोपेतसभा महतां समूह इत्यर्थः, 'मणूसपरिस'त्ति तु व्यक्तमेव, 'सोच्चा निसम्म'त्ति श्रुत्वा–आकर्ण्य निशम्य–अवधार्येति 'उट्ठाए उट्ठेइ'त्ति उत्थया–कायस्योर्ध्वभवनेन 'सुयक्खाए'त्ति सुष्ठु आख्यातं सामान्यभणनतः 'सुपण्णत्ते' सुष्ठु प्रज्ञप्तं विशेषभणनतः 'सुभासिए' सुभाषितं वचन-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवत् महावीरस्य धर्मदेशनयाः [प्रवचनस्य] वर्णनं

व्यक्तितः 'सुविणीए' सुविनीतं शिष्येषु सुष्ठु विनियोजितं 'सुभाविए' सुष्ठु भावितं–तत्त्वभणनात् 'उवसमं आइक्खह'त्ति क्रोधादिनिरोधमित्यर्थः, 'विवेगं'ति बाह्यग्रन्थत्यागमित्यर्थः, 'वेरमणं'ति मनसो निवृत्तिं 'धर्मम्' उपशमादिरूपं ब्रूथेति हृदयं, 'नत्थि णं'ति न प्रभवति–न शक्तो भवति 'आइक्खित्तए'त्ति आख्यातुं, 'किमंग पुण'त्ति अङ्गेत्यामन्त्रणे, किं पुनरिति विशेषद्योतनार्थः, 'उत्तरतरं' प्रधानतरं 'जामेव दिसं पाउब्भूया' यस्या दिशः सकाशात् प्रकटीभूता–आगतेत्यर्थः समवसरणवर्णकः ॥ ३५–३६–३७ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई नामं अणगारे गोयमसगोत्तेणं सत्तुस्सेहे समचउरंससंठाणसंठिए वइरोसहनारायसंघयणे कणगपुलगनिग्घसपम्हगोरे उग्गतवे दित्ततवे तत्ततवे महातवे घोरतवे उराले घोरे घोरगुणे घोरतवस्सी घोरबंभचेरवासी उच्छूढसरीरे संखित्तविउलतेअलेस्से समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते उड्ढंजाणू अहोसिरे झाणकोट्ठोवगए संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति ।

'तेणं कालेण'मित्यादि व्यक्तं, नवरं 'सत्तुस्सेहे'त्ति सप्तहस्तोच्छ्रयः, विशेषणद्वयं त्वागमसिद्धं, 'कणगपुलगनिग्घसपम्हगोरे' कनकस्य-सुवर्णस्य पुलको–लवस्तस्य यो निकषः–कषपट्टे रेखालक्षणस्तथा पम्हत्ति–पद्मगर्भस्तद्वद्गौरो यः स तथा, वृद्धव्याख्या तु कनकस्य न लोहादेर्यः पुलकः–सारो वर्णातिशयस्तत्प्रधानो यो निकषो–रेखा तस्य यत्पक्ष्म–बहुलत्वं तद्वद् यो गौरः स तथा, 'उग्गतवे' उग्रम्–अप्रधृष्यं तपोऽस्येत्युग्रतपाः 'दित्ततवे' दीप्तहुताशन इव कर्मवनदाहकत्वेन ज्वलत्तेजः तपो यस्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

औपपातिक सूत्रे अत्र "समवसरण-पदं" परिसमाप्तं

औपपातिक सूत्रे अत्र "औपपातिक-पदं" आरभ्यते

स तथा, 'तत्ततवे' तप्तं–तापितं तपो येन स तप्ततपाः, एवं तेन तत्तपस्तप्तं येन कर्माणि सन्ताप्य तेन तपसा स्वात्माऽपि तपोरूपः सन्तापितो, यतोऽन्यस्यास्पृश्यमिव जातमिति, 'महातवे' महातपाः प्रशस्ततपाः बृहत्तपा वा 'ओराले'त्ति भीमः कथम् ?–अतिकष्टं तपः कुर्वन् पार्श्ववर्तिनामल्पसत्त्वानां भयानको भवति, अपरस्त्वाह–'ओराले'त्ति उदारः–प्रधानः 'घोर'त्ति घोरो–निर्घृणः परीषहेन्द्रियकषायाख्यानां रिपूणां विनाशे कर्तव्ये, अन्ये त्वात्मनिरपेक्षं घोरमाहुः, 'घोरगुणो' घोराः–अन्यैर्दुरनुचरा गुणाः–मूलगुणादयो यस्य स तथा, 'घोरतवस्सी' घोरैस्तपोभिस्तपस्वी 'घोरबंभचेरवासी' घोरं–दारुणमल्पसत्त्वैर्दुरनुचरत्वाद्यद् ब्रह्मचर्यं तत्र वस्तुं शीलं यस्य स तथा, 'उच्छूढसरीरे' उच्छूढम्–उज्झितमिवोज्झितं शरीरं येन तत्संस्कारत्यागात् स तथा, 'संखित्तविउलतेयलेस्से' संक्षिप्ता–शरीरान्तर्लीना विपुला च विस्तीर्णा अनेकयोजनप्रमाणक्षेत्राऽऽश्रितवस्तुदहनसमर्थत्वात् तेजोलेश्या–विशिष्टतपोजन्यलब्धिविशेषप्रभवा तेजोज्वाला यस्य स तथा, 'ऊड्ढंजाणू' शुद्धपृथिव्यासनवर्जनात् औपग्रहिकनिषद्याया अभावाच्च उत्कुटुकासनः सन्नपदिश्यते, ऊर्ध्वे जानुनी यस्य स ऊर्ध्वजानुः, 'अहोसिरे' अधोमुखो नोर्ध्वं तिर्यग्वा निक्षिप्तदृष्टिरिति भावः, 'झाणकोट्ठोवगए' ध्यानमेव कोष्ठो ध्यानकोष्ठस्तमुपगतो यः स तथा, यथा हि कोष्ठके धान्यं प्रक्षिप्तमविप्रकीर्णं भवत्येवं स भगवान् धर्मध्यानकोष्ठकमनुप्रविश्येन्द्रियमनांस्यधिकृत्य संवृतात्मा भवतीति भावः ।

तए णं से भगवं गोअमे जायसड्ढे जायसंसए जायकोऊहल्ले उप्पण्णसड्ढे उप्पण्णसंसए उप्पण्णकोऊहल्ले संजायसड्ढे संजायसंसए संजायकोऊहल्ले समुप्पण्णसड्ढे समुप्पण्णसंसए समुप्पण्णकोऊहल्ले उट्ठाए उट्ठेइ उट्ठाए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८]

दीप अनुक्रम [४४]

उट्ठित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छति तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेति तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेत्ता वंदति णमंसति वंदित्ता णमंसित्ता णचासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणे णमंसमाणे अभिमुहे विणएणं पंजलिउडे पज्जुवासमाणे एवं वयासी।

'जायसड्ढे' जाता-प्रवृत्ता श्रद्धा-इच्छाऽस्येति जातश्रद्धः, क्व ?-वक्ष्यमाणानां पदार्थानां तत्त्वपरिज्ञाने, 'जायसंसए' जातः संशयोऽस्येति जातसंशयः, संशयस्त्वनिर्द्धारितार्थं ज्ञानमुभयवस्त्वंशावलम्बितया प्रवृत्तं, स त्वेवं तस्य भगवतो जातः, यथा-श्रीमन्महावीरवर्द्धमानस्वामिना प्रथमाङ्गप्रथमश्रुतस्कन्धप्रथमाध्ययने प्रथमोद्देशके आत्मन उपपात उक्तः, स किमसत एवात्मनः उत सतः परिणामान्तरापत्तिरूपः, 'जायकोउहल्ले' जातं कुतूहलं-कौतुकं यस्य स तथा, कीदृशमुपपातं भगवान्वक्ष्यतीत्येवंरूपजातश्रवणौत्सुक्य इत्यर्थः, 'उप्पन्नसड्ढे' प्रागभूता उत्पन्ना श्रद्धा यस्य स उत्पन्नश्रद्धः, अथोत्पन्नश्रद्धत्वस्य जातश्रद्धत्वस्य च कोऽर्थभेदो ?, न कश्चिद्, अथ किमर्थं तत्प्रयोगः ?, उच्यते, हेतुत्वप्रदर्शनार्थः, तथाहि-उत्पन्नश्रद्धत्वाज्जातश्रद्धः प्रवृत्तश्रद्ध इत्यर्थः, 'संजायसड्ढे' इत्यादौ च संशब्दः प्रकर्षादिवचनः, अपरस्त्वाह-जाता श्रद्धा प्रष्टुं यस्य स जातश्रद्धः, कथं जातश्रद्धो ?, यस्माज्जातसंशयः, कथं संशयः अजनि ?, यस्मात् प्राक्तूहलं-किंविधो नामायमुपपातो भविष्यतीत्येवंरूपमित्येष तावदवग्रहः, एवमुत्पन्नसञ्जातसमुत्पन्नश्रद्धादय ईहापायधारणाभेदेन वाच्या इति उपोद्घातग्रन्थो व्याख्यातः।

जीवे णं भंते ! असंजए अविरए अप्पडिहयपच्चक्खायपावकम्मे सकिरिए असंवुडे एगंतदंडे एगंतबाले

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८]

दीप अनुक्रम [४४]

एगंतसुत्ते पावकम्मं अण्हाति ? हंता अण्हाति १ । जीवे णं भंते ! असंजअअविरअअप्पडिहयपच्चक्खाय-पावकम्मे सकिरिए असंवुडे एगंतदंडे एगंतबाले एगंतसुत्ते मोहणिज्जं पावकम्मं अण्हाति?, हंता अण्हाति २। जीवे णं भंते ! मोहणिज्जं कम्मं वेदेमाणे किं मोहणिज्जं कम्मं बंधइ ? वेअणिज्जं कम्मं बंधइ ?, गोअमा !, मोहणिज्जंपि कम्मं बंधइ वेअणिज्जंपि कम्मं बंधति, णण्णत्थ चरिममोहणिज्जं कम्मं वेदेमाणे वेअणिज्जं कम्मं बंधइ णो मोहणिज्जं कम्मं बंधइ ३। जीवे णं भंते ! असंजए अविरए अप्पडिहयपच्चक्खायपावकम्मे सकिरिए असंवुडे एगंतदंडे एगंतबाले एगंतसुत्ते ओसण्णतसपाणघाती कालमासे कालं किच्चा णिरइएसु उववज्जंति?, हंता उववज्जंति ४। जीवे णं भंते ! असंजए अविरए अपडिहयपच्चक्खायपावकम्मे इओ चुए पेच्चा देवे सिआ ?, गोअमा ! अत्थेगइया देवे सिया अत्थेगइया णो देवे सिया, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–अत्थे-गइआ देवे सिआ अत्थेगइआ णो देवे सिआ ?, गोयमा !, जे इमे जीवा गामागरणयरणिगमरायहाणि-खेडकव्वडमडंबदोणमुहपट्टणासमसंबाहसण्णिवेसेसु अकामतण्हाए अकामछुहाए अकामबंभचेरवासेणं अका-मअण्हाणकसीयायवदंसमसगसेअजल्लमल्लपंकपरितावेणं अप्पतरो वा भुज्जतरो वा कालं अप्पाणं परिकिले-संति अप्पतरो वा भुज्जतरो वा कालं अप्पाणं परिकिलेसित्ता कालमासे कालं किच्चा अण्णतरेसु वाणमंत-रेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति, तहिं तेसिं गती तहिं तेसिं ठिती तहिं तेसिं उववाए पण्णत्ते ।

अथाभिधित्सितोपपातस्य कर्मबन्धपूर्वकत्वात् कर्मबन्धप्ररूपणायाह–'जीवे ण' मित्यादि, 'असंजयअविरयअप्पडिहयपच्च-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्खायपावकम्मे' असंयतः–असंयमवान् अविरतः–तपसि न विशेषेण रतः, अथवा कस्मादसंयतो ?, यस्मादविरतो–विरतिवर्जितः, तथा न प्रतिहतानि–सम्यक्त्वप्राप्त्या ह्रस्वीकृतानि प्रत्याख्यातानि च–सर्वविरतिप्रतिपत्तितः प्रतिषेधितानि पापकर्माणि–ज्ञानावरणादीनि येन स तथा, अथवा प्रतिहतानि अतीतकालकृतानि निन्दाद्वारेण प्रत्याख्यातानि अनागतकालभावीनि निवृत्तितः पापकर्माणि–प्राणातिपातादिपापक्रिया येन स तथा, तन्निषेधेनाप्रतिहतप्रत्याख्यातपापकर्मा, ततः पूर्वपदाभ्यां सह कर्मधारयः, अत एव 'सकिरिए' सक्रियः–कायिक्यादिक्रियायुक्तः 'असंवुडे' असंवृतः–अनिरुद्धेन्द्रियः 'एगंतदंडे' एकान्तेनैव–सर्वथैव दण्डयत्यात्मानं परं वा पापप्रवृत्तितो यः स एकान्तदण्डः, 'एगंतबाले' सर्वथा मिथ्यादृष्टिः, अत एव 'एगंतसुत्ते' सर्वथा मिथ्यात्वनिद्रया प्रसुप्तः 'पापकर्म' ज्ञानावरणाद्यशुभं कर्म 'अण्हाइ' आस्रौति–आश्रवति बध्नातीत्यर्थः, हन्तेति कोमलामन्त्रणे प्रत्यवधारणार्थो वा, 'अण्हाइ'त्ति आस्रौत्येव बध्नात्येवेत्युत्तरं, न ह्यसंयतादिविशेषणो जीवः कस्याञ्चिदवस्थायां कर्म न बध्नातीति १ । तृतीयसूत्रे 'णण्णत्थ चरिममोहणिज्जं कम्मं वेदेमाणे वेअणिज्जं कम्मं बंधइ णो मोहणिज्जं'ति नन्नत्थत्ति–नवरं केवलमित्यर्थः, चरममोहनीयं सूक्ष्मसम्परायगुणस्थानके लोभमोहनीयसूक्ष्मकिट्टिकारूपं वेदयन् वेदनीयं बध्नाति, अयोगिन एव वेदनीयस्याबन्धकत्वात्, न पुनर्मोहनीयं बध्नाति, सूक्ष्मसम्परायस्य मोहनीयायुष्कवर्जानां षण्णामेव प्रकृतीनां बन्धकत्वात्, यदाह–"सत्तविहबंधगा होंति पाणिणो आउवज्जियाणं तु । तह

१ सप्तविधबन्धका भवन्ति प्राणिन आयुर्वर्ज्यानामेव । तथा सूक्ष्मसम्परायाः षड्विधबन्धका विनिर्दिष्टाः ॥ १ ॥ मोहायुर्वर्ज्यानां प्रकृतीनां ते तु बन्धका भणिताः ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

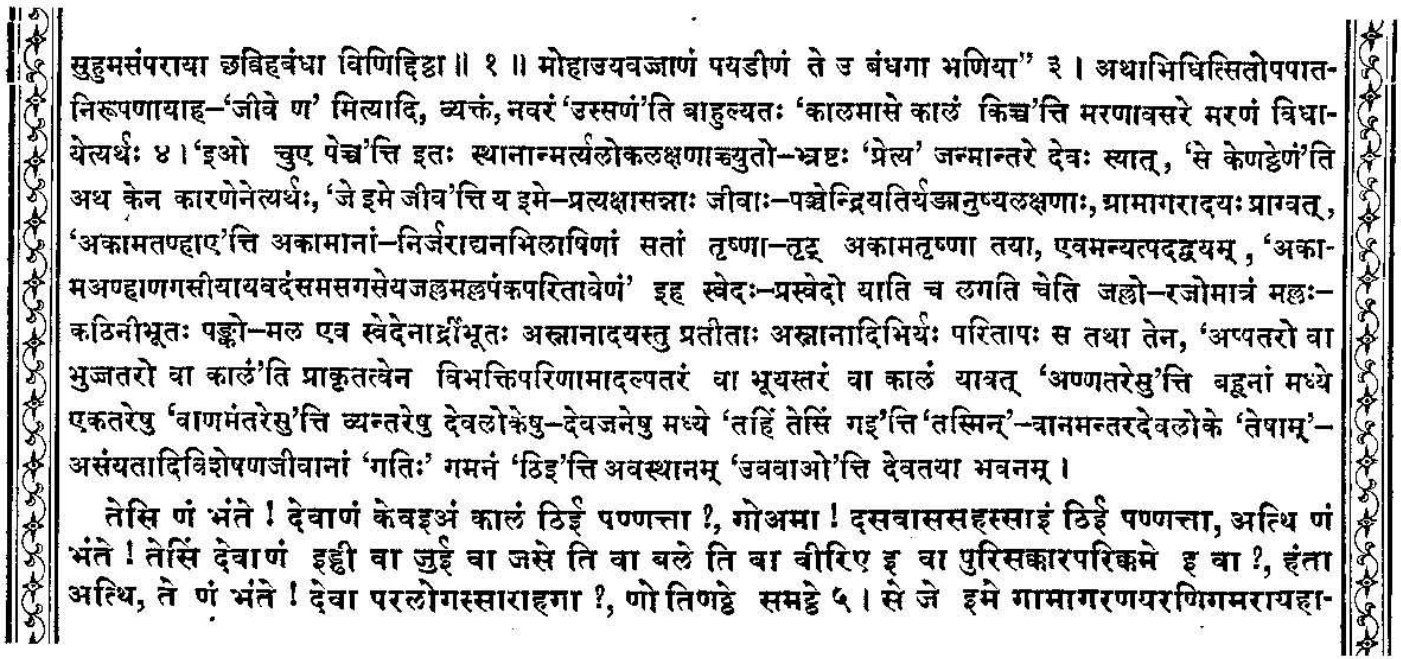

सुहुमसंपराया छविहबंधा विणिद्दिट्ठा ॥ १ ॥ मोहाउयवज्जाणं पयडीणं ते उ बंधगा भणिया" ३ । अथाभिधित्सितोपपात-निरूपणायाह–'जीवे णं' मित्यादि, व्यक्तं, नवरं 'उस्सण्ण'ति बाहुल्यतः 'कालमासे कालं किच्च'त्ति मरणावसरे मरणं विधा-येत्यर्थः ४ । 'इओ चुए पेच्च'त्ति इतः स्थानान्मर्त्यलोकलक्षणाच्युतो–भ्रष्टः 'प्रेत्य' जन्मान्तरे देवः स्यात्, 'से केणट्ठेणं'ति अथ केन कारणेनेत्यर्थः, 'जे इमे जीव'त्ति य इमे–प्रत्यक्षासन्नाः जीवाः–पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चमनुष्यलक्षणाः, ग्रामागरादयः प्राग्वत्, 'अकामतण्हाए'त्ति अकामानां–निर्जराद्यनभिलाषिणां सतां तृष्णा–तृट् अकामतृष्णा तया, एवमन्यत्पदद्वयम्, 'अका-मअण्हाणगसीयायवदंसमसगसेयजल्लमल्लपंकपरितावेणं' इह स्वेदः–प्रस्वेदो याति च लगति चेति जल्लो–रजोमात्रं मल्लः–कठिनीभूतः पङ्को–मल एव स्वेदेनार्द्रीभूतः अस्नानादयस्तु प्रतीताः अस्नानादिभिर्यः परितापः स तथा तेन, 'अप्पतरो वा भुज्जतरो वा कालं'ति प्राकृतत्वेन विभक्तिपरिणामादल्पतरं वा भूयस्तरं वा कालं यावत् 'अण्णतरेसु'त्ति बहूनां मध्ये एकतरेषु 'वाणमंतरेसु'त्ति व्यन्तरेषु देवलोकेषु–देवजनेषु मध्ये 'तहिं तेसिं गइ'त्ति 'तस्मिन्'–वानमन्तरदेवलोके 'तेषाम्'–असंयतादिविशेषणजीवानां 'गतिः' गमनं 'ठिइ'त्ति अवस्थानम् 'उववाओ'त्ति देवतया भवनम् ।

तेसि णं भंते ! देवाणं केवइअं कालं ठिई पण्णत्ता ?, गोअमा ! दसवाससहस्साइं ठिई पण्णत्ता, अत्थि णं भंते ! तेसिं देवाणं इड्ढी वा जुई वा जसे ति वा बले ति वा वीरिए इ वा पुरिसक्कारपरिक्कमे इ वा ?, हंता अत्थि, ते णं भंते ! देवा परलोगस्साराहगा ?, णो तिणट्ठे समट्ठे ५ । से जे इमे गामागरणयरणिगमरायहा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णिखेडकव्वडमडंबदोणमुहपट्टणासमसंबाहसण्णिवेसेसु मणुआ भवंति, तंजहा–अंडुबद्धका णिअलबद्धका हडिबद्धका चारगबद्धका हत्थच्छिन्नका पायच्छिन्नका कण्णच्छिण्णका णक्कच्छिण्णका उट्ठच्छिन्नका जिब्भच्छिन्नका सीसच्छिन्नका मुखच्छिन्नका मज्झछिन्नका वेकच्छच्छिन्नका हियउप्पाडियगा णयणुप्पाडियगा दसणुप्पाडियगा वसणुप्पाडियगा गेवच्छिण्णका तंडुलच्छिण्णका कागणिमंसक्खाइयया ओलंबिया लंबिअया घंसिअया घोलिअया फाडिअया पीलिअया सूलाइअया सूलभिण्णका खारवत्तिया वज्झवत्तिया सीहपुच्छियया दवग्गिदड्ढिगा पंकोसण्णका पंके खुत्तका वलयमयका वसट्टमयका णियाणमयका अंतोसल्लमयका गिरिपडिअका तरुपडियका मरुपडियका गिरिपक्खंदोलिया तरुपक्खंदोलिया मरुपक्खंदोलिया जलपवेसिका जलणपवेसिका विसभक्खितका सत्थोवाडितका वेहाणसिआ गिद्धपिट्ठका कंतारमतका दुब्भिक्खमतका असंकिलिट्ठपरिणामा ते कालमासे कालं किच्चा अण्णतरेसु वाणमंतरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति, तहिं तेसिं गती तहिं तेसिं ठिती तहिं तेसिं उववाए पण्णत्ते, तेसि णं भंते ! देवाणं केवइअं कालं ठिती पण्णत्ता ?, गोअमा !, बारसवाससहस्साइं ठिती पण्णत्ता। अत्थि णं भंते ! तेसिं देवाणं इड्ढी वा जुई वा जसे ति वा बले ति वा वीरिए इ वा पुरिसक्कारपरिक्कमे इ वा ?, हंता अत्थि, ते णं भंते ! देवा परलोगस्साराहगा ?, णो तिणट्ठे समट्ठे ६।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३८]

दीप अनुक्रम [४४]

'इड्ढी इ व'त्ति ऋद्धिः–परिवारादिसम्पत् 'जुई इ व'त्ति द्युतिः–शरीराभरणादिदीप्तिः, इशब्दो निपातो वाक्यालङ्कारार्थः, इतिशब्दो वाऽयं कृतसन्धिप्रयोग उपप्रदर्शनार्थः, 'जसे इ व'त्ति यशः–ख्यातिः, वाशब्दो विकल्पार्थः, क्वचित्पठ्यते–'उट्ठाणे इ वा कम्मे इ व'त्ति तत्रोत्थानम्–ऊर्ध्वीभवनं कर्म च–उत्क्षेपणादिका क्रिया 'बले इ व'त्ति बलं शारीरः प्राणः 'वीरिए इ वा' वीर्यं–जीवप्रभवः प्राण एव 'पुरिसक्कारपरिक्कमे इ व'त्ति पुरुषकारः–पुरुषाभिमानः स एव निष्पादितफलः पराक्रमः, 'हंते'त्ति एवमेवेत्यर्थः, 'ते णं देवा परलोगस्स आराहग'त्ति ते अकामनिर्जरालब्धदेवभवा व्यन्तराः 'परलोकस्य'जन्मान्तरस्य निर्वाणसाधनानुकूलस्य 'आराधका' निष्पादका इति प्रश्नः?, 'नो इणट्ठे'त्ति नायमर्थः 'समट्ठे'त्ति समर्थः–सङ्गत इत्युत्तरम्, अयमभिप्रायो–ये हि सम्यग्दर्शनज्ञानपूर्वकानुष्ठानतो देवाः स्युस्त एवावश्यंतया आनन्तर्येण पारम्पर्येण वा निर्वाणानुकूलं भवान्तरमावर्जयन्ति, तदन्ये तु भाज्याः ५। 'से जे' इत्यादिसूत्रं व्यक्तं, नवरं सेशब्दोऽथशब्दार्थः, अथशब्दश्चेह वाक्योपक्षेपार्थो, ग्रामादयः प्राग्वत्, 'अंडुबद्धग'त्ति अण्डूनि–अन्दुकानि काष्ठमयानि लोहमयानि वा हस्तयोः पादयोर्वा बन्धनविशेषाः 'नियलबद्धग'त्ति निगडानि–लोहमयानि पादयोर्बन्धनानि 'हडिबद्धग'त्ति हडिः–खोटकः 'चारगबद्धग'त्ति चारको–गुप्तिः 'मुरवच्छिन्नग'त्ति मुरजो–गलघण्टिका 'मज्झच्छिन्नग'त्ति मध्य–उदरदेशः 'वइकच्छच्छिन्नग'त्ति उत्तरासङ्गन्यायेन विदारिताः, 'हियउप्पाडियग'त्ति उत्पाटितहृदया आकृष्टकालेयकमांसा इत्यर्थः, 'वसणुप्पाडियग'त्ति उत्पाटितवृषणा आकृष्टाण्डा इत्यर्थः, 'तण्डुलच्छिन्नग'त्ति तण्डुलप्रमाणखण्डैः खण्डिताः 'कागणिमंसखाइय'त्ति काकणीमांसानि तद्देहोद्धृतश्लक्ष्णमांसखण्डानि तानि खादिताः 'उल्लंबियग'त्ति अवलम्बितकाः रज्ज्वा बद्धा गर्तादावतारिताः, उल्लम्बितपर्यायास्तु नैते भवन्ति,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उल्लम्बितानां वैहायसिकशब्देन वक्ष्यमाणत्वादिति, 'लंबियग'त्ति लम्बितकाः–तरुशाखायां बाहौ बद्धाः 'घंसियग'त्ति घर्षितकाश्चन्दनमिव दृषदि 'घोलियय'त्ति घोलितका दधिघट इव पट इव वा 'फालियय'त्ति स्फालितकाः कुठारेण दारुवच्छाटकवद्वा, पुस्तकान्तरे 'पीलियग'त्ति पीडितका यन्त्रैरिक्षुवदिति 'सूलाइयग'त्ति शूलाचितकाः शूलिकाप्रोताः 'सूलभिन्नग'त्ति मस्तकोपरि निर्गतशूलिकाः 'खारवत्तिय'त्ति क्षारेण क्षारे वा तोक्षकतरुभस्मादिनिर्मितमहाक्षारे वर्तिता–वृत्तिं कारिताः तत्र क्षिप्ता इत्यर्थः, क्षारपात्रं वा कृताः–क्षारपात्रिताः तं भोजितास्तस्य वाऽऽधारतां नीता इत्यर्थः, 'वज्झवत्तिय'त्ति वर्धेण सह वृत्तिं कारिताः वर्द्धपात्रिता वा–तेन बद्धा इत्यर्थः, उत्पाटितबद्धा वा, 'सीहपुच्छियय'त्ति इह पुच्छशब्देन मेहनं विवक्षितम् उपचारात् ततः सीहपुच्छं कृतं सञ्जातं वा येषां ते सिंहपुच्छितास्त एव सिंहपुच्छितकाः, सिंहस्य हि मैथुनान्निवृत्तस्यात्याकर्षणात् कदाचिन्मेहनं त्रुट्यति एवं ये क्वचिदपराधे राजपुरुषैस्त्रोटितमेहनाः क्रियन्ते ते सिंहपुच्छितका व्यपदिश्यन्त इति, अथवा कृकाटिकातः पुतप्रदेशं यावद्येषां वर्धं उत्कर्त्य सिंहपुच्छाकारः क्रियते ते तथोच्यन्ते इति, 'दवग्गिदड्ढग'त्ति दवाग्निः–दावानलस्तेन ये दग्धास्ते तथोक्ताः 'पंकोसन्नग'त्ति पङ्के ये अवसन्नाः–सर्वथा निमग्नास्ते पङ्कावसन्नाः 'पंके खुत्तग'त्ति पङ्के मनाङ् मग्नाः केवलं तत उत्तरीतुमशक्ताः 'वलयमयग'त्ति वलन्तः–संयमाद् भ्रश्यन्तः अथवा बुभुक्षादिना वेलन्तो ये मृतास्ते वलन्मृतकाः 'वसट्टमयग'त्ति वशेन–विषयपारतन्त्र्येण कृताः–पीडिता वशार्ताः, वशं वा–

१ मोक्षक प्र० ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विषयपरतन्त्रतां ऋता–गता वशार्तास्ते सन्तो ये मृतास्ते वशार्तमृता वशर्तमृता वा शब्दादिरक्तहरिणादिवदिति 'णियाण-मयग'त्ति निदानं कृत्वा बालतपश्चरणादिमन्तो ये मृतास्ते तथा 'अंतोसल्लमयग'त्ति अनुद्धृतभावशल्या मध्यवर्तिभल्ल्या-दिशल्या वा सन्तो ये मृताः 'गिरिपडियग'त्ति गिरेः–पर्वतात्पतिताः गिरिर्वा–महापाषाणः पतितो येषामुपरि ते तथा, एवं तरुपतितकाः, 'मरुपडियग'त्ति मरौ–निर्जलदेशे पतिता ये ते तथा, मरोर्वा–निर्जलदेशावयवविशेषात् स्थलादित्यर्थः पतिता ये ते तथा, 'भरपडियग'त्ति क्वचित्तत्र भरात्–तृणकर्षासादिभरात्पतिता भरो वा पतितो येषामुपरि ते तथा, 'गिरिपक्खंदोलया' गिरिपक्षे–पर्वतपार्श्वे छिन्नटङ्कगिरौ वाऽऽत्मानमन्दोलयन्ति ये ते तथा, तेषां च तदन्दोलनमन्दोलका-त्पातेनात्मनो मरणार्थम्, एवं तरुपक्षान्दोलकादयोऽपीति, 'सत्थोवाडियग'त्ति शस्त्रेणात्मानमवपाटयन्ति–विदारयन्ति मरणार्थं ये ते तथा, 'वेहाणसिग'त्ति विहायसि–आकाशे तरुशाखादावात्मन उल्लम्बनेन यन्मरणं भवति तद्वैहायसं तदस्ति येषां ते प्राकृतशैलीवशात् वेहाणसिया, 'गिद्धपट्ठग'त्ति ये मरणार्थं पुरुषकरिकरभरासभादिकलेवरमध्ये निपतिताः सन्तो गृध्रैः स्पृष्टास्तुण्डैर्विदारिता म्रियन्ते ते गृध्रस्पृष्टकाः 'असंकिलिट्ठपरिणाम'त्ति संक्लिष्टपरिणामा हि महार्तरौद्रध्याना-वेशेन देवत्वं न लभन्त इति भावः ६ ।

से जे इमे गामागरणयरणिगमरायहाणिखेडकव्वडमडंबदोणमुहपट्टणासमसंवाहसंनिवेसेसु मणुआ भवंति, तंजहा–पगइभद्दगा पगइउवसंता पगइपतणुकोहमाणमायालोहा मिउमद्दवसंपण्णा अल्लीणा विणीआ अम्मा-पिउसुस्सूसका अम्मापिईणं अणतिक्कमणिज्जवयणा अप्पिच्छा अप्पारंभा अप्पपरिग्गहा अप्पेणं आरंभेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८]

दीप अनुक्रम [४४]

अप्पेणं समारंभेणं अप्पेणं आरंभसमारंभेणं वित्तिं कप्पेमाणा बहूइं वासाइं आउअं पालंति पालित्ता कालमासे कालं किच्चा अण्णतरेसु वाणमंतरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति, तहिं तेसिं गती तहिं तेसिं ठिती तहिं तेसिं उववाए पण्णत्ते, तेसि णं भंते ! देवाणं केवइअं कालं ठिती पण्णत्ता ?, गोयमा ! चउद्दसवाससहस्सा ७।

'पगइभद्दग'त्ति प्रकृत्या–स्वभावत एव न परानुवृत्त्यादिना भद्रकाः–परोपकारकरणशीलाः प्रकृतिभद्रकाः 'पगइउवसंता' इत्यत्र उपशान्ताः–क्रोधोदयाभावात् 'पगइतणुकोहमाणमायलोह'त्ति सत्यपि कषायोदये प्रतनुक्रोधादिभावाः 'मिउमद्दवसंपन्न'त्ति मृदु यन्मार्दवम्–अत्यर्थमहङ्कृतिजयं ये सम्पन्नाः–प्राप्तास्ते तथा 'आलीण'त्ति आलीना–गुरुमाश्रिताः,'भद्दग'त्ति क्वचित्तत्र भद्रकाः–अनुपतापकाः सेव्यशिक्षागुणात्, तत एव विनीताः, एतदेवाह–'अम्मापिऊण सुस्सूसगा' अम्बापित्रोः शुश्रूषकाः–सेवकाः, अत एव 'अम्मापिऊणं अणइक्कमणिज्जवयणा' इहैवं सम्बन्धः–अम्बापित्रोः सत्कमनतिक्रमणीयं वचनं येषां ते तथा, तथा 'अप्पिच्छा' अमहेच्छाः 'अप्पारंभा अप्पपरिग्गह'त्ति इहारम्भः–पृथिव्यादिजीवोपमर्दः कृष्यादिरूपः परिग्रहस्तु–धनधान्यादिस्वीकारः, एतदेव वाक्यान्तरेणाह–'अप्पेण आरंभेण'मित्यादि, इहारम्भो–जीवानां विनाशः समारम्भः–तेषामेव परितापकरणं, आरम्भसमारम्भस्त्वेतद्वयं, 'वित्तिं'ति वृत्तिं–जीविकां 'कप्पेमाण'त्ति कल्पयन्तः कुर्वाणाः७।

१ सप्त इति प्र० ।

॥ ८८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८]

दीप अनुक्रम [४४]

से जाओ इमाओ गामागरणयरणिगमरायहाणिखेडकब्बडमडंबदोणमुहपट्टणासमसंबाहसंनिवेसेसु इत्थियाओ भवंति, तंजहा–अंतो अंतेउरियाओ गयपइआओ मयपइआओ बालविहवाओ छड्डितल्लिताओ माइरक्खिआओ पिअरक्खिआओ भायरक्खिआओ कुलघररक्खिआओ ससुरकुलरक्खिआओ परूढणहमंसकेसकक्खरोमाओ ववगयपुप्फगंधमल्लालंकाराओ अण्हाणगसेअजल्लमलपंकपरितावाओ ववगयखीरदहिणवणीअसप्पितेल्लगुललोणमहुमज्जमंसपरिचत्तकयाहाराओ अप्पिच्छाओ अप्पारंभाओ अप्पपरिग्गहाओ अप्पेणं आरंभेणं अप्पेणं समारंभेणं अप्पेणं आरंभसमारंभेणं वित्तिं कप्पेमाणीओ अकामबंभचेरवासेणं तमेव पइसेज्जं णाइक्कमइ, ताओ णं इत्थिआओ एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणीओ बहूइं वासाइं सेसं तं चेव जाव चउसट्ठिं वाससहस्साइं ठिई पण्णत्ता ८।

'से जाओ इमाओ'त्ति अथ या एता 'अंतो अंतेउरियाओ'त्ति अन्तः–मध्ये अन्तःपुरस्येति गम्यं, 'कुलघररक्खियाओ'त्ति कुलगृहं–पितृगृहं 'मित्तनाइनियगसंबंधिरक्खियाओ'त्ति क्वचित्, तत्र मित्राणि पितृपत्यादीनां तासामेव वा सुहृदः एवं ज्ञातयो–मातुलादिस्वजना निजका–गोत्रीयाः सम्बन्धिनो–देवरादिरूपाः 'परूढणहकेसकक्खरोमाओ'त्ति प्ररूढा–वृद्धिमुपगताः विशिष्टसंस्काराभावान्नखादयो यासां तास्तथा, पाठान्तरे 'परूढनहकेसमंसुरोमाओ'त्ति इह श्मश्रूणि–कूर्चरोमाणि, तानि च यद्यपि स्त्रीणां न भवन्ति तथापि कासाञ्चिदल्पानि भवन्त्यपीति तद्ग्रहणम्, 'अण्हाणगसेयजल्लमलपंकपरितावाओ' अस्नानकेन हेतुना स्वेदादिभिः परितापो यासां तास्तथा, तत्र स्वेदः–प्रस्वेदः जल्लो–रजोमात्रं मलः–कठि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८]

दीप अनुक्रम [४४]

नीभूतं तदेव पङ्क्तः–स्वेदेनार्द्रीभूतं तदेव, 'ववगयखीरदहिणवणीयसप्पितेलगुललोणमहुमज्जमंसपरिचत्तकयाहाराओ'त्ति व्यपगतानि क्षीरादीनि यतस्तथा परित्यक्तानि मध्वादीनि ३ येन स एवंविधः कृतः–अभ्यवहृत आहारो यकाभिस्तास्तथा, 'तमेव पइसेज्जं नाइक्कमंति' या निधुवनार्थमाश्रीयते तामेव प्रतिशय्यां–भर्तृशयनं नातिक्रामन्ति–उपपतिना सह नाऽऽश्रयन्तीति ८ ।

से जे इमे गामागरणयरणिगमरायहाणिखेडकब्बडमडंबदोणमुहपट्टणासमसंबाहसन्निवेसेसु मणुआ भवंति, तंजहा–दगबिइया दगतइया दगसत्तमा दगएक्कारसमा गोअमा गोव्वइआ गिहिधम्मा धम्मचिंतका अविरुद्धविरुद्धवुड्ढसावकप्पभिअओ तेसिं मणुआणं णो कप्पइ इमाओ नव रसविगईओ आहारित्तए, तंजहा–खीरं दहिं णवणीयं सप्पिं तेल्लं फाणियं महुं मज्जं मंसं, पण्णत्थ एक्काए सरसवविगइए, ते णं मणुआ अप्पिच्छा तं चेव सव्वं णवरं चउरासीइ वाससहस्साइं ठिई पण्णत्ता ९ ।

'दगबीय'त्ति ओदनद्रव्यापेक्षया दकम्–उदकं द्वितीयं भोजने येषां ते दकद्वितीयाः 'दगतइय'त्ति ओदनादिद्रव्यद्वयापेक्षया दकम्–उदकं तृतीयं येषां ते दकतृतीयाः 'दगसत्तम'त्ति ओदनादीनि षट् द्रव्याणि दकं च सप्तमं भोजने येषां ते दकसप्तमाः, एवं दगएक्कारसमा एतदपीति, 'गोतमगोव्वइयगिहिधम्मधम्मचिंतकअविरुद्धविरुद्धवुड्ढसावगप्पभियओ'त्ति गौतमो–इस्वो बलीवर्दस्तेन गृहीतपादपतनादिविचित्रशिक्षेण जनचित्ताक्षेपदक्षेण भिक्षामटन्ति ये ते गौतमाः, गोव्रतं–गोव्रतिकाः, ते हि गोषु ग्रामान्निर्गच्छन्तीषु निर्गच्छन्ति चरन्तीषु चरन्ति पिबन्तीषु पिबन्ति

॥ ८९ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

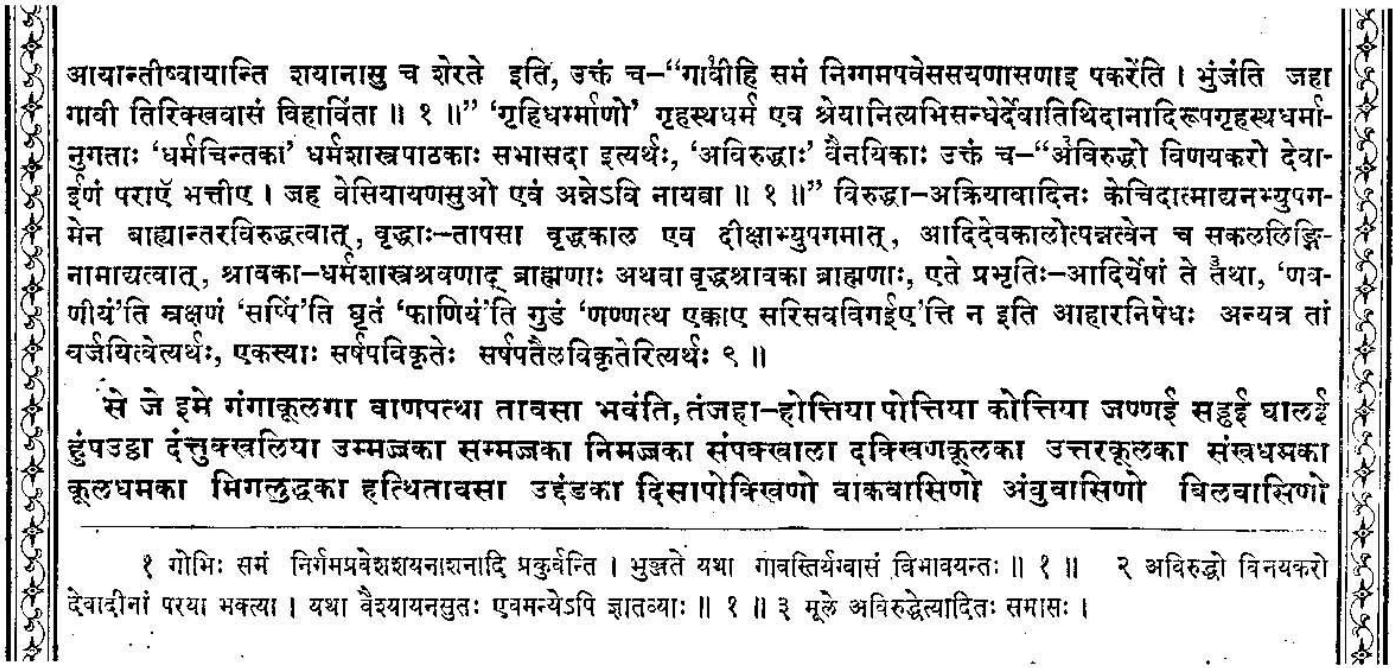

आयान्तीष्वायान्ति शयानासु च शेरते इति, उक्तं च–"गावीहि समं निग्गमपवेससयणासणाइ पकरेंति। भुंजंति जहा गावी तिरिक्खवासं विहावेंता ॥ १ ॥" 'गृहिधर्म्माणो' गृहस्थधर्म एव श्रेयानित्यभिसन्धेर्देवातिथिदानादिरूपगृहस्थधर्मानुगताः 'धर्मचिन्तका' धर्मशास्त्रपाठकाः सभासदा इत्यर्थः, 'अविरुद्धाः' वैनयिकाः उक्तं च–"अविरुद्धो विणयकरो देवाईणं पराए भत्तीए। जह वेसियायणसुओ एवं अन्नेऽवि नायव्वा ॥ १ ॥" विरुद्धा–अक्रियावादिनः केचिदात्माद्यनभ्युपगमेन बाह्यान्तरविरुद्धत्वात्, वृद्धाः–तापसा वृद्धकाल एव दीक्षाभ्युपगमात्, आदिदेवकालोत्पन्नत्वेन च सकललिङ्गिनामाद्यत्वात्, श्रावका–धर्मशास्त्रश्रवणाद् ब्राह्मणाः अथवा वृद्धश्रावका ब्राह्मणाः, एते प्रभृतिः–आदिर्येषां ते तथा, 'णवणीयं'ति म्रक्षणं 'सप्पिं'ति घृतं 'फाणियं'ति गुडं 'णण्णत्थ एक्काए सरिसवविगईए'त्ति न इति आहारनिषेधः अन्यत्र तां वर्जयित्वेत्यर्थः, एकस्याः सर्षपविकृतेः सर्षपतैलविकृतेरित्यर्थः ९ ॥

से जे इमे गंगाकूलगा वाणपत्था तावसा भवंति, तंजहा–होत्तिया पोत्तिया कोत्तिया जण्णई सड्ढई थालई हुंपउट्ठा दंतुक्खलिया उम्मज्जका सम्मज्जका निमज्जका संपक्खाला दक्खिणकूलका उत्तरकूलका संखधमका कूलधमका मिगलुद्धका हत्थितावसा उद्दंडका दिसापोक्खिणो वाकवासिणो अंबुवासिणो बिलवासिणो

१ गोभिः समं निर्गमप्रवेशशयनाशनादि प्रकुर्वन्ति। भुञ्जते यथा गावस्तिर्यग्वासं विभावयन्तः ॥ १ ॥ २ अविरुद्धो विनयकरो देवादीनां परया भक्त्या। यथा वैश्यायनसुतः एवमन्येऽपि ज्ञातव्याः ॥ १ ॥ ३ मूले अविरुद्धेत्यादितः समासः।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८]

दीप अनुक्रम [४४]

जलवासिणो वेलवासिणो रुक्खमूलिआ अंबुभक्खिणो वाउभक्खिणो सेवालभक्खिणो मूलाहारा कंदाहारा तयाहारा पत्ताहारा पुप्फाहारा बीयाहारा परिसडियकंदमूलतयपत्तपुप्फफलाहारा जलाभिसेअकढिणगायभूया आयावणाहिं पंचग्गितावेहिं इंगालसोल्लियं कंडुसोल्लियं कंठसोल्लियंपिव अप्पाणं करेमाणा बहूइं वासाइं परियायं पाउणंति बहूइं वासाइं परियायं पाउणित्ता कालमासे कालं किच्चा उक्कोसेणं जोइसिएसु देवेसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति, पलिओवमं वाससयसहस्समब्भहिअं ठिई, आराहगा ?, णो इणट्ठे समट्ठे १० ।

'गंगाकूलग'त्ति गङ्गाकूलाश्रिताः 'वानप्पत्थ'त्ति वने–अटव्यां प्रस्था–प्रस्थानं गमनमवस्थानं वा वनप्रस्था सा अस्ति येषां तस्यां वा भवा वानप्रस्थाः–'ब्रह्मचारी गृहस्थश्च, वानप्रस्थो यतिस्तथे' त्येवंभूततृतीयाश्रमवर्तिनः 'होत्तिय'त्ति अग्निहोत्रिकाः 'पोत्तिय'त्ति वस्त्रधारिणः 'कोत्तिय'त्ति भूमिशायिनः 'जन्नई'त्ति यज्ञयाजिनः 'सड्ढइ'त्ति श्राद्धाः 'थालइ'त्ति गृहीतभाण्डाः 'हुंबउट्ठ'त्ति कुण्डिकाश्रमणाः 'दंतुक्खलिय'त्ति फलभोजिनः 'उम्मज्जक'त्ति उन्मज्जनमात्रेण ये स्नान्ति 'संमज्जग'त्ति उन्मज्जनस्यैवासकृत्करणेन ये स्नान्ति 'निमज्जक'त्ति स्नानार्थं निमग्ना एव ये क्षणं तिष्ठन्ति 'संपक्खाल'त्ति मृत्तिकादिघर्षणपूर्वकं येऽङ्गं क्षालयन्ति 'दक्खिणकूलग'त्ति यैर्गङ्गाया दक्षिणकूल एव वस्तव्यम् 'उत्तरकूलग'त्ति उक्तविपरीताः 'संखधमग'त्ति शङ्खं ध्मात्वा ये जेमन्ति यद्यन्यः कोऽपि नागच्छतीति 'कूलधमग'त्ति ये कूले स्थित्वा शब्दं कृत्वा भुञ्जते 'मियलुद्धय'त्ति प्रतीता एव, 'हत्थितावस'त्ति ये हस्तिनं मारयित्वा तेनैव बहुकालं भोजनतो यापयन्ति 'उड्डंडग'ति ऊर्द्धीकृतदण्डा ये सञ्चरन्ति 'दिसापेक्खिणो'त्ति उदकेन दिशः प्रोक्ष्य ये फलपुष्पादि समुच्चिन्वन्ति

॥ ९० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८] + गाथा: दीप अनुक्रम [४४-४८]

'वाकवासिणो' त्ति वल्कलवाससः 'चेलवासिणो' त्ति व्यक्तं पाठान्तरे 'वेलवासिणो' त्ति समुद्रवेलासन्निधिवासिनः 'जल-वासिणो' त्ति ये जलनिमग्ना एवासते, शेषाः प्रतीताः, नवरं 'जलाभिसेयकढिणगाया' इति ये अस्नात्वा न भुञ्जते स्नानाद्वा पाण्डुरीभूतगात्रा इति वृद्धाः, पाठान्तरे जलाभिषेककठिनं गात्रं भूताः-प्राप्ता ये ते तथा, 'इंगालसोल्लिय' त्ति अङ्गारैरिव पक्वं 'कंडुसोल्लियं' ति कन्दुपक्वमिवेति 'पलिओवमं वाससयसहस्समब्भहियं' ति मकारस्य प्राकृतप्रभवत्वाद्व-र्षशतसहस्राभ्यधिकमित्यर्थः, अथवा पल्योपमं वर्षशतसहस्रमभ्यधिकं च पल्योपमादित्येवं गमनिका ॥ १० ॥

से जे इमे जाव सन्निवेसेसु पव्वइया समणा भवंति, तंजहा-कंदप्पिया कुक्कुइया मोहरिया गीयरइप्पिया नच्चणसीला ते णं एएणं विहारेणं विहरमाणा बहूइं वासाइं सामण्णपरियायं पाउणंति बहूइं वासाइं साम-ण्णपरियायं पाउणित्ता तस्स ठाणस्स अणालोइअअप्पडिक्कंता कालमासे कालं किच्चा उक्कोसेणं सोहम्मे कप्पे कंदप्पिएसु देवेसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति, तहिं तेसिं गती तहिं तेसिं ठिती, सेसं तं चेव, णवरं पलिओवमं वाससहस्समब्भहियं ठिती ११। से जे इमे जाव सन्निवेसेसु परिव्वायगा भवंति, तंजहा-संखा जोई कविला भिउच्चा हंसा परमहंसा बहुउदया कुडिव्वया कण्हपरिव्वायगा, तत्थ खलु इमे अट्ठ माहणपरिव्वायगा भवंति, तंजहा-कण्हे अ करकंडे य, अंबडे य पारासरे। कण्हे दीवायणे चेव, देवगुत्ते अ णारए ॥ १ ॥ तत्थ खलु इमे अट्ठ खत्तियपरिव्वायगा भवंति, तंजहा-सीलई ससिहारे(य), णग्गई भग्गई तिअ। विदेहे राया-रीया रायारामे बलेति अ ॥ १ ॥ ते णं परिव्वायगा रिउव्वेदजजुव्वेदसामवेयअहव्वणवेय इतिहासपंचमाणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८] + गाथा: दीप अनुक्रम [४४-४८]

णिग्घंटुछट्ठाणं संगोवंगाणं सरहस्साणं चउण्हं वेयाणं सारगा पारगा धारगा वारगा सडंगवी सट्ठितंतविसारया संखाणे सिक्खाकप्पे वागरणे छंदे णिरुत्ते जोतिसामयणे अण्णेसु य बंभण्णएसु अ सत्थेसु सुपरिणिट्ठिया यावि हुत्था। ते णं परिव्वायगा दाणधम्मं च सोअधम्मं च तित्थाभिसेअं च आघवेमाणा पण्णवेमाणा परूवेमाणा विहरंति, जण्णं अम्हे किंचि असुई भवति तण्णं उदएण य मट्टिआए अ पक्खालिअं सुई भवति, एवं खलु अम्हे चोक्खा चोक्खायारा सुई सुइसमायारा भवेत्ता अभिसेअजलपूअप्पाणो अविग्घेण सग्गं गमिस्सामो, तेसि णं परिव्वायगाणं णो कप्पइ अगडं वा तलायं वा णइं वा वाविं वा पुक्खरिणीं वा दीहियं वा गुंजालिअं वा सरं वा सागरं वा ओगाहित्तए, णण्णत्थ अद्धाणगमणे, णो कप्पइ सगडं वा जाव संदमाणिअं वा दूरुहित्ता णं गच्छित्तए,तेसि णं परिव्वायगाणं णो कप्पइ आसं वा हत्थिं वा उट्टं वा गोणिं वा महिसं वा खरं वा दुरुहित्ता णं गमित्तए, तेसि णं परिव्वायगाणं णो कप्पइ नडपेच्छा इ वा जाव मागहपेच्छा इ वा पिच्छित्तए, तेसिं परिव्वायगाणं णो कप्पइ हरिआणं लेसणया वा घट्टणया वा थंभणया वा लूसणया वा उप्पाडणया वा करित्तए, तेसिं परिव्वायगाणं णो कप्पइ इत्थिकहा इ वा भत्तकहा इ वा देसकहा इ वा रायकहा इ वा चोरकहा इ वा अणत्थदंडं करित्तए, तेसि णं परिव्वायगाणं णो कप्पइ अयपायाइं वा तउअपायाणि वा तंबपायाणि वा जसदपायाणि वा सीसगपायाणि वा रुप्पपायाणि वा सुवण्णपायाणि वा अण्णयराणि वा बहुमुल्लाणि वा धारित्तए, णण्णत्थ लाउपाएण वा दारुपाएण वा मट्टिआपाएण वा, तेसि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३८] + गाथा: दीप अनुक्रम [४४-४८]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

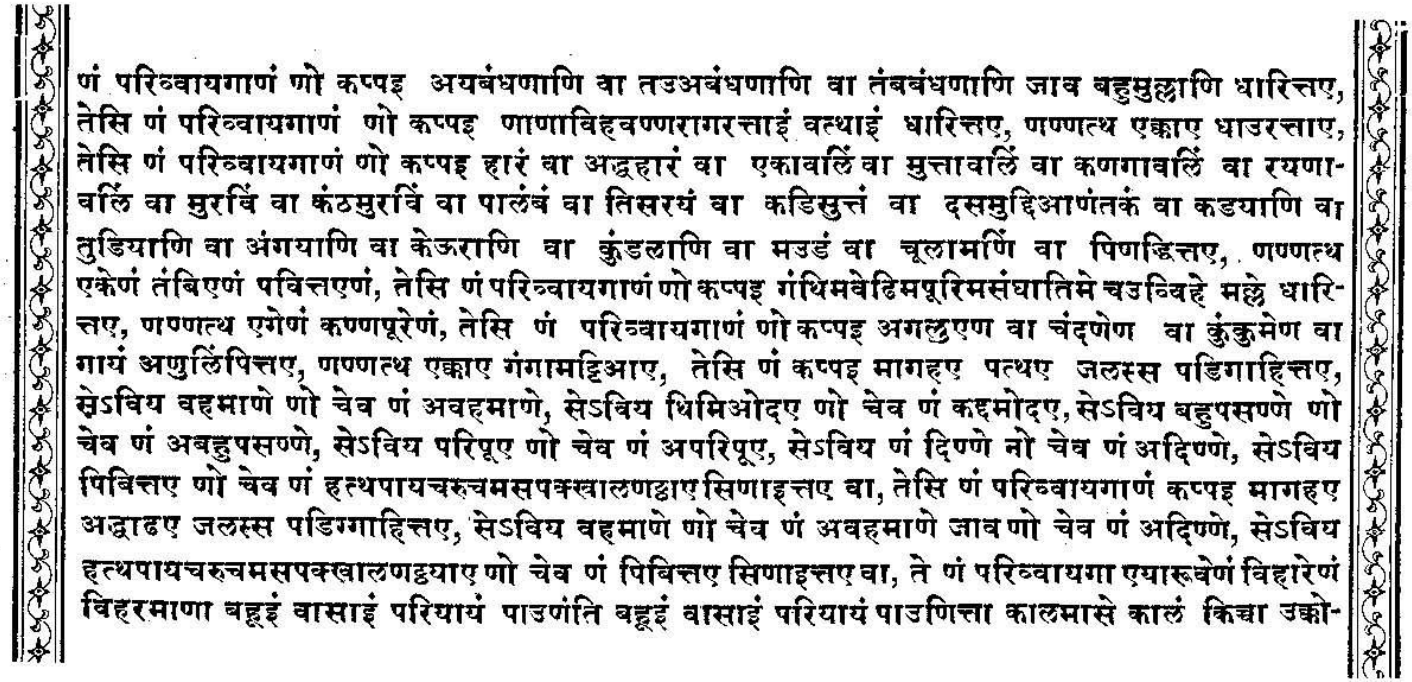

णं परिव्वायगाणं णो कप्पइ अयबंधणाणि वा तउअबंधणाणि वा तंबबंधणाणि जाव बहुमुल्लाणि धारित्तए, तेसि णं परिव्वायगाणं णो कप्पइ णाणाविहवण्णरागरत्ताइं वत्थाइं धारित्तए, णण्णत्थ एक्काए धाउरत्ताए, तेसि णं परिव्वायगाणं णो कप्पइ हारं वा अद्धहारं वा एकावलिं वा मुत्तावलिं वा कणगावलिं वा रयणावलिं वा मुरविं वा कंठमुरविं वा पालंबं वा तिसरयं वा कडिसुत्तं वा दसमुद्दिआणंतकं वा कडयाणि वा तुडियाणि वा अंगयाणि वा केऊराणि वा कुंडलाणि वा मउडं वा चूलामणिं वा पिणद्धित्तए, णण्णत्थ एक्केणं तंबिएणं पवित्तएणं, तेसि णं परिव्वायगाणं णो कप्पइ गंथिमवेढिमपूरिमसंघातिमे चउव्विहे मल्ले धारित्तए, णण्णत्थ एगेणं कण्णपूरेणं, तेसि णं परिव्वायगाणं णो कप्पइ अगलुएण वा चंदणेण वा कुंकुमेण वा गायं अणुलिंपित्तए, णण्णत्थ एक्काए गंगामट्टिआए, तेसि णं कप्पइ मागहए पत्थए जलस्स पडिगाहित्तए, सेऽविय वहमाणे णो चेव णं अवहमाणे, सेऽविय थिमिओदए णो चेव णं कद्दमोदए, सेऽविय बहुपसण्णे णो चेव णं अबहुपसण्णे, सेऽविय परिपूए णो चेव णं अपरिपूए, सेऽविय णं दिण्णे नो चेव णं अदिण्णे, सेऽविय पिबित्तए णो चेव णं हत्थपायचरुचमसपक्खालणट्ठाए सिणाइत्तए वा, तेसि णं परिव्वायगाणं कप्पइ मागहए अद्धाढए जलस्स पडिग्गाहित्तए, सेऽविय वहमाणे णो चेव णं अवहमाणे जाव णो चेव णं अदिण्णे, सेऽविय हत्थपायचरुचमसपक्खालणट्ठयाए णो चेव णं पिबित्तए सिणाइत्तए वा, ते णं परिव्वायगा एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणा बहूइं वासाइं परियायं पाउणंति बहूइं वासाइं परियायं पाउणित्ता कालमासे कालं किच्चा उक्को-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सेणं बंभलोए कप्पे देवत्ताए उववत्तारो भवंति, तहिं तेसिं गई तहिं तेसिं ठिई दस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता, सेसं तं चेव १२ ॥ (सू० ३८–) ॥

'पव्वइया समण' त्ति निर्ग्रन्था इत्यर्थः, 'कंदप्पिय' त्ति कान्दर्पिकाः–नानाविधहासकारिणः 'कुक्कुइय' त्ति कुकुचेन–कुत्सितावस्पन्देन चरन्तीति कौकुचिकाः, ये हि भ्रूनयनवदनकरचरणादिभिर्भाण्डा इव तथा चेष्टन्ते यथा स्वयमहसन्त एव परान् हासयन्तीति 'मोहरिय' त्ति मुखरा–नानाविधासम्बद्धाभिधायिनस्त एव मौखरिकाः 'गीयरइपिय' त्ति गीतेन या रती–रमणं क्रीडा सा प्रिया येषां गीतरतयो वा लोकाः प्रिया येषां ते तथा 'सामण्णपरियागं' ति श्रामण्यपर्यायं साधुत्वमित्यर्थः 'पाउणंति' त्ति प्रापयन्ति पूरयन्तीत्यर्थः ११ ॥ 'परिव्वायग'त्ति मस्करिणः 'संख' त्ति साङ्ख्याः बुद्ध्यहङ्कारादिकार्यग्रामवादिनः प्रकृतीश्वरयोः जगत्कारणत्वमभ्युपगताः 'जोई' त्ति योगिनः अध्यात्मशास्त्रानुष्ठायिनः 'कविल' त्ति कपिलो देवता येषां ते कापिलाः, साङ्ख्या एव निरीश्वरा इत्यर्थः, 'भिउच्च' त्ति भृगुः–लोकप्रसिद्ध ऋषिविशेषस्तस्यैते शिष्या इति भार्गवाः, 'हंसा परमहंसा बहुउदगा कुलिव्वया' इत्येते चत्वारोऽपि परिव्राजकमते यतिविशेषाः, तत्र हंसा ये पर्वतकुहरपथाश्रमदेवकुलारामवासिनो भिक्षार्थं च ग्रामं प्रविशन्ति, परमहंसास्तु ये नदीपुलिनसमागमप्रदेशेषु वसन्ति चीरकौपीनकुशांश्च त्यक्त्वा प्राणान् परित्यजन्ति, बहूदकास्तु ग्रामे एकरात्रिका नगरे पञ्चरात्रिकाः प्राप्तभोगांश्च ये भुञ्जन्त इति, कुटीव्रताः–कुटीचराः, ते च गृहे वर्तमाना व्यपगतक्रोधलोभमोहाः अहङ्कारं वर्जयन्तीति, 'कण्हपरिव्वायग' त्ति कृष्णपरिव्राजकाः परिव्राजकविशेषा एव, नारायणभक्तिका इति केचित्, कण्डूवादयः षोडश परिव्राजका लोकतोऽवसेयाः, 'रिउवेदज-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३८] + गाथा: दीप अनुक्रम [४४-४८]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

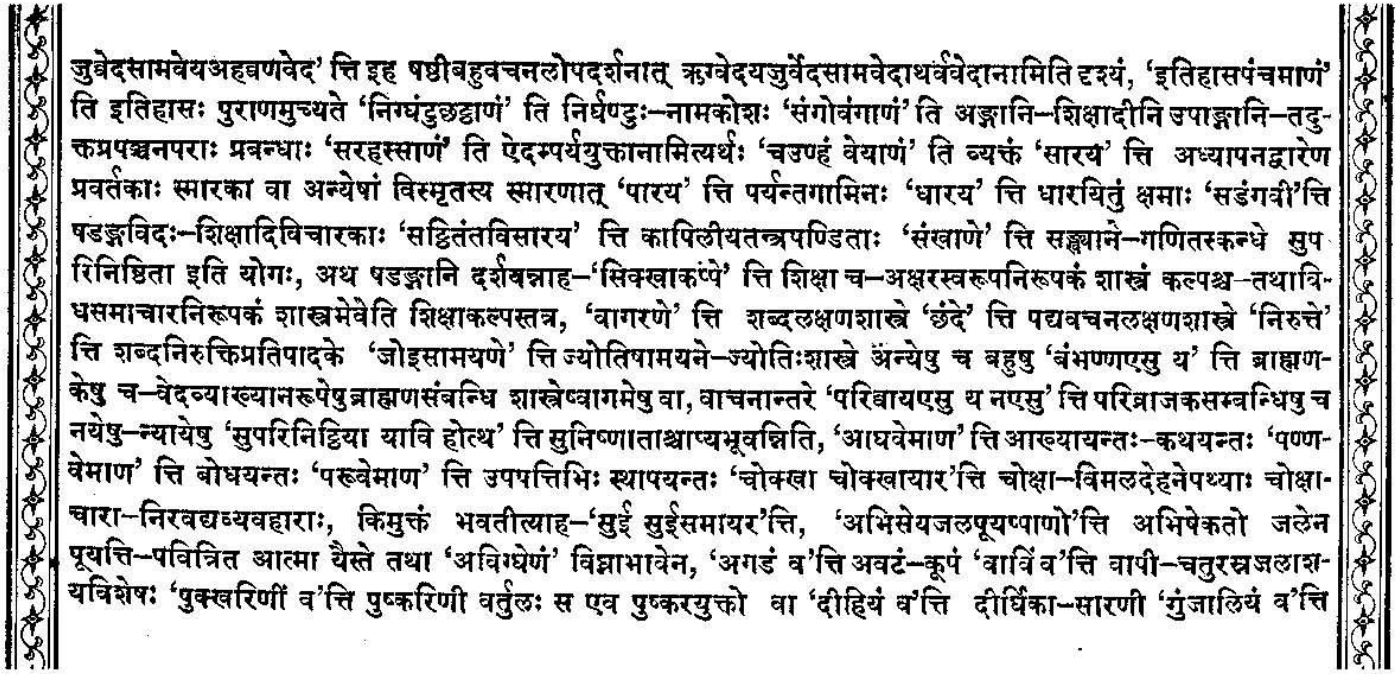

जुवेदसामवेयअहवणवेद' त्ति इह षष्ठीबहुवचनलोपदर्शनात् ऋग्वेदयजुर्वेदसामवेदाथर्ववेदानामिति दृश्यं, 'इतिहासपंचमाणं' ति इतिहासः पुराणमुच्यते 'निग्घंटुछट्ठाणं' ति निर्घण्टुः–नामकोशः 'संगोवंगाणं' ति अङ्गानि–शिक्षादीनि उपाङ्गानि–तदुक्तप्रपञ्चनपराः प्रबन्धाः 'सरहस्साणं' ति ऐदम्पर्ययुक्तानामित्यर्थः 'चउण्हं वेयाणं' ति व्यक्तं 'सारय' त्ति अध्यापनद्वारेण प्रवर्तकाः स्मारका वा अन्येषां विस्मृतस्य स्मारणात् 'पारय' त्ति पर्यन्तगामिनः 'धारय' त्ति धारयितुं क्षमाः 'सडंगवी'त्ति षडङ्गविदः–शिक्षादिविचारकाः 'सट्ठितंतविसारय' त्ति कापिलीयतन्त्रपण्डिताः 'संखाणे' त्ति सङ्ख्याने–गणितस्कन्धे सुपरिनिष्ठिता इति योगः, अथ षडङ्गानि दर्शयन्नाह–'सिक्खाकप्पे' त्ति शिक्षा च–अक्षरस्वरूपनिरूपकं शास्त्रं कल्पश्च–तथाविधसमाचारनिरूपकं शास्त्रमेवेति शिक्षाकल्पस्तत्र, 'वागरणे' त्ति शब्दलक्षणशास्त्रे 'छंदे' त्ति पद्यवचनलक्षणशास्त्रे 'निरुत्ते' त्ति शब्दनिरुक्तिप्रतिपादके 'जोइसामयणे' त्ति ज्योतिषामयने–ज्योतिःशास्त्रे अन्येषु च बहुषु 'बंभण्णएसु य' त्ति ब्राह्मणकेषु च–वेदव्याख्यानरूपेषुब्राह्मणसंबन्धि शास्त्रेष्वागमेषु वा, वाचनान्तरे 'परिवायएसु य नएसु' त्ति परिव्राजकसम्बन्धिषु च नयेषु–न्यायेषु 'सुपरिनिट्ठिया यावि होत्थ' त्ति सुनिष्णाताश्चाप्यभूवन्निति, 'आघवेमाण' त्ति आख्यायन्तः–कथयन्तः 'पण्णवेमाण' त्ति बोधयन्तः 'परूवेमाण' त्ति उपपत्तिभिः स्थापयन्तः 'चोक्खा चोक्खायार'त्ति चोक्षा–विमलदेहनेपथ्याः चोक्षाचारा–निरवद्यव्यवहाराः, किमुक्तं भवतीत्याह–'सुई सुईसमायर'त्ति, 'अभिसेयजलपूयप्पाणो'त्ति अभिषेकतो जलेन पूयत्ति–पवित्रित आत्मा यैस्ते तथा 'अविग्घेणं' विघ्नाभावेन, 'अगडं व'त्ति अवटं–कूपं 'वाविं व'त्ति वापी–चतुरस्रजलाशयविशेषः 'पुक्खरिणीं व'त्ति पुष्करिणी वर्तुलः स एव पुष्करयुक्तो वा 'दीहियं व'त्ति दीर्घिका–सारणी 'गुंजालियं व'त्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८] + गाथा: दीप अनुक्रम [४४-४८]

गुञ्जालिका–वक्रसारणी 'सरसिं व'त्ति क्वचिद्दृश्यते तत्र महत्सरः सरसीत्युच्यते, 'नण्णत्थ अद्धाणगमणेणं'ति न इति यो निषेधः सोऽन्यत्राध्वगमनादित्यर्थः, 'सगडं वे'त्यत्र यावत्करणादिदं दृश्यं–'रहं वा जाणं वा जुग्गं वा गिल्लिं वा थिल्लिं वा पवहणं वा सीयं वे'ति एतानि च प्रागिव व्याख्येयानीति, 'हरियाणं लेसणया व'त्ति संश्लेषणता 'घट्टणया व'त्ति सङ्घट्टनं 'थंभणया व'त्ति स्तम्भनम्–ऊर्ध्वीकरणं 'लूसणया व'त्ति क्वचित्तत्र लूषणं–हस्तादिना पनकादेः सम्मार्जनं 'उप्पाडणया वा' उन्मूलनं, 'अयपायाणि वे'त्यादिसूत्रे यावत्करणात् त्रपुकसीसकरजतजातरूपकाचवेडन्तियवृत्तलोहकंसलोहहारपुटकरीतिकामणिशङ्खदन्तचर्मचेलशैलशब्दविशेषितानि पात्राणि दृश्यानि,'अण्णयराणि वा तहप्पगाराणि महद्धणमोल्लाइं' इति च दृश्यं तत्रायो–लोहं रजतं–रूप्यं जातरूपं–सुवर्णं काचः–पाषाणविकारः वेडंतियत्ति–रूढिगम्यं वृत्तलोहं–त्रिकुटीति यदुच्यते कांस्यलोहं–कांस्यमेव हारपुटकं–मुक्काशुक्तिपुटं रीतिका–पीतला अन्यतराणि वा एषां मध्ये एकतराणि एतद्व्यतिरिक्तानि वा तथाप्रकाराणि भोजनादिकार्यकरणसमर्थानि महत्–प्रभूतं धनं–द्रव्यं मूल्यं–प्रतीतं येषां तानि तथा 'अलाबुपाएणं'ति अलाबुपात्रात् तुम्बकभाजनादित्यर्थः,तथा'अयबन्धणाणि वे'त्यत्र यावत्करणात् त्रपुकबन्धनादीनि शैलबन्धनान्तानि पात्राणि दृश्यानि, 'अण्णयराइं तहप्पगाराइं महद्धणमुल्लाइं' इत्येतच्च दृश्यमिति, पुस्तकान्तरे समग्रमिदं सूत्रद्वयमस्त्येवेति, 'णण्णत्थ एगाए धाउरत्ताए'त्ति इह युगलिकयेति शेषो दृश्यः, हारादीनि प्राग्वत्, नवरं 'दसमुद्दियाणंतयं'ति रूढशब्दत्वादस्य हस्ताङ्गुलीमुद्रिकादशकमित्यर्थः, 'पवित्तएणं'त्ति पवित्रकम्–अङ्गुलीयकं 'गंथिमवेढिमपूरिमसंघाइमे'त्ति ग्रन्थिमं–ग्रन्थनेन निर्वृत्तं मालारूपं वेष्टिमं–मालावेष्टननिर्वृत्तं पुष्पलम्बूसकादि पूरिमं–पूरणनिर्वृत्तं वंशशलाकाजालकपूरणमयमिति सङ्घा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८] + गाथा: दीप अनुक्रम [४४-४८]

तिमं–सङ्घातेननिर्वृत्तम् इतरेतरस्य नालप्रवेशनेन मलेत्ति–माल्यानि मालायां साधूनि तस्यै हितानि वेति पुष्पाणीत्यर्थः 'कण्णपूरएणं'ति कर्णपूरकः–पुष्पमयः कर्णाभरणविशेषः 'मागहए पत्थए'त्ति 'दो असईओ पसई दोहिं पसईहिं सेइया होइ। चउसेइओ उ कुलओ चउकुलओ पत्थओ होइ ॥ १ ॥ चउपत्थमाढयं तह चत्तारि य आढया भवे दोणो' इत्यादिमानलक्षणलक्षितो मागधप्रस्थः, 'सेऽवि य वहमाणए'त्ति तदपि च जलं वहमानं–नद्यादिश्रोतोवर्त्ति व्याप्रियमाणं वा, 'थिमिओदए'त्ति स्तिमितोदकं यस्याधः कर्दमो नास्ति 'बहुपसन्ने'त्ति बहुप्रसन्नम्–अतिस्वच्छं 'परिपूए'त्ति परिपूतं वस्त्रेण गालितं 'पिबित्तए'त्ति पातुं 'चरुचमस'त्ति चरुः–स्थालीविशेषश्चमसो–दर्विकेति १२ ॥ ३८ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं अम्मडस्स परिव्वायगस्स सत्त अंतेवासिसयाइं गिम्हकालसमयंसि जेट्ठामूलमासंसि गंगाए महानईए उभओकूलेणं कंपिल्लपुराओ णयराओ पुरिमतालं णयरं संपट्ठिया विहाराए, तए णं तेसिं परिव्वायगाणं तीसे अगामियाए छिण्णोवायाए दीहमद्धाए अडवीए कंचि देसंतरमणुपत्ताणं से पुव्वग्गहिए उदए अणुपुव्वेणं परिभुंजमाणे झीणे, तए णं ते परिव्वाया झीणोदगा समाणा तण्हाए पारब्भमाणा पार २ उदगदातारमपस्समाणा अण्णमण्णं सद्दावेंति सद्दावित्ता एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्ह इमीसे अगामिआए जाव अडवीए कंचि देसंतरमणुपत्ताणं से उदय जाव झीणे तं सेयं खलु देवाणु-

१ द्वे असती प्रसृतिः द्वाभ्यां प्रसृतिभ्यां सेतिका भवति । चतुःसेतिकस्तु कुलवश्चतुष्कुलवः प्रस्थो भवति ॥ १ ॥ चतुष्प्रस्थमाढकं तथा चत्वारि आढकानि भवेद् द्रोणः ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंबड-परिव्राजकस्य कथा

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [३९]

दीप अनुक्रम [४९]

प्पिया ! अम्ह इमीसे अगामियाए जाव अडवीए उदगदातारस्स सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं करित्तए त्तिकट्टु अण्णमण्णस्स अंतिए एअमट्ठं पडिसुणंति २त्ता तीसे अगामियाए जाव अडवीए उदगदातारस्स सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं करेइ करित्ता उदगदातारमलभमाणा दोच्चंपि अण्णमण्णं सद्दावेन्ति सद्दावेत्ता एवं वयासी–इह णं देवाणुप्पिया ! उदगदातारो णत्थि तं णो खलु कप्पइ अम्ह अदिण्णं गिण्हित्तए अदिण्णं सातिज्जित्तए, तं मा णं अम्हे इयाणिं आवइकालंपि अदिण्णं गिण्हामो अदिण्णं सादिज्जामो मा णं अम्हं तवलोवे भविस्सइ, तं सेयं खलु अम्हं देवाणुप्पिया ! तिदंडयं कुंडियाओ य कंचणियाओ य करोडियाओ य भिसियाओ य छण्णालए य अंकुसए य केसरीयाओ य पवित्तए य गणेत्तियाओ य छत्तए य वाहणाओ य पाउयाओ य धाउरत्ताओ य एगंते एडित्ता गंगं महाणइं ओगाहित्ता वालुअसंथारए संथरित्ता संलेहणाझोसियाणं भत्तपाणपडियाइक्खियाणं पाओवगयाणं कालं अणवकंखमाणाणं विहरित्तएत्तिकट्टु अण्णमण्णस्स अंतिए एअमट्ठं पडिसुणंति, अण्णमण्णस्स अंतिए० पडिसुणित्ता तिदंडए य जाव एगंते एडेइ २ गंगं महाणइं ओगाहेंति२त्ता वेलुआसंथारए संथरंति वालुयासंथारयं दुरुहिंति वा२त्ता पुरत्थाभिमुहा संपलियंकनिसन्ना करयलजावकट्टु एवं वयासी–णमोऽत्थु णं अरहंताणं जाव संपत्ताणं, नमोऽत्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव संपाविउकामस्स, नमोऽत्थु णं अम्मडस्स परिव्वायगस्स अम्हं धम्मायरियस्स धम्मोवदेसगस्स, पुव्विं णं अम्हे अम्मडस्स परिव्वायगस्स अंतिए थूलगपाणाइ–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंबड-परिव्राजकस्य कथा

प्रत सूत्रांक [३९]

दीप अनुक्रम [४९]

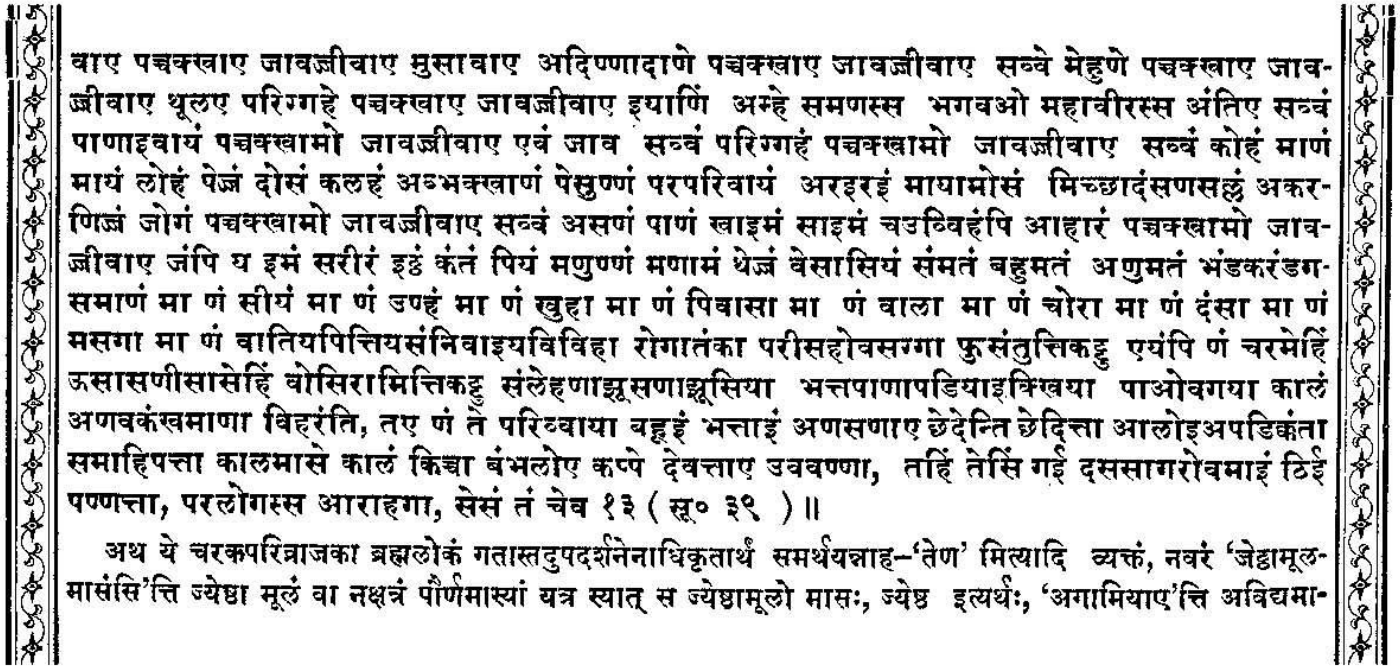

वाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए मुसावाए अदिण्णादाणे पच्चक्खाए जावज्जीवाए सव्वे मेहुणे पच्चक्खाए जावज्जीवाए थूलए परिग्गहे पच्चक्खाए जावज्जीवाए इयाणिं अम्हे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सव्वं पाणाइवायं पच्चक्खामो जावज्जीवाए एवं जाव सव्वं परिग्गहं पच्चक्खामो जावज्जीवाए सव्वं कोहं माणं मायं लोहं पेज्जं दोसं कलहं अब्भक्खाणं पेसुण्णं परपरिवायं अरइरइं मायामोसं मिच्छादंसणसल्लं अकरणिज्जं जोगं पच्चक्खामो जावज्जीवाए सव्वं असणं पाणं खाइमं साइमं चउव्विहंपि आहारं पच्चक्खामो जावज्जीवाए जंपि य इमं सरीरं इट्ठं कंतं पियं मणुण्णं मणामं थेज्जं वेसासियं संमतं बहुमतं अणुमतं भंडकरंडगसमाणं मा णं सीयं मा णं उण्हं मा णं खुहा मा णं पिवासा मा णं वाला मा णं चोरा मा णं दंसा मा णं मसगा मा णं वातियपित्तियसंनिवाइयविविहा रोगातंका परीसहोवसग्गा फुसंतुत्तिकट्टु एयंपि णं चरमेहिं ऊसासणीसासेहिं वोसिरामित्तिकट्टु संलेहणाझूसणाझूसिया भत्तपाणापडियाइक्खिया पाओवगया कालं अणवकंखमाणा विहरंति, तए णं ते परिव्वाया बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेदेन्ति छेदित्ता आलोइअपडिक्कंता समाहिपत्ता कालमासे कालं किच्चा बंभलोए कप्पे देवत्ताए उववण्णा, तहिं तेसिं गई दससागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता, परलोगस्स आराहगा, सेसं तं चेव १३ (सू० ३९) ॥

अथ ये चरकपरिव्राजका ब्रह्मलोकं गतास्तदुपदर्शनेनाधिकृतार्थं समर्थयन्नाह–'तेण' मित्यादि व्यक्तं, नवरं 'जेट्ठामूलमासंसि'त्ति ज्येष्ठा मूलं वा नक्षत्रं पौर्णमास्यां यत्र स्यात् स ज्येष्ठामूलो मासः, ज्येष्ठ इत्यर्थः, 'अगामियाए'त्ति अविद्यमा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंबड-परिव्राजकस्य कथा

नग्रामायाः 'छिन्नावाए'त्ति छिन्ना–व्यवच्छिन्नाः आपाताः–सार्थगोकुलादिसम्पाता यस्यां सा तथा तस्याः 'दीहमद्धाए'त्ति दीर्घाध्वन दीर्घमार्गाया इत्यर्थः 'सद्दाविंति'त्ति शब्दयन्ति–सम्भाषन्ते 'मग्गणगवेसणं'ति मार्गणं च–अन्वयधर्मैरन्वेषणं गवेषणं च–व्यतिरेकधर्मैरन्वेषणमेवेति मार्गणगवेषणं 'साइज्जित्तए'त्ति स्वादयितुं–भोक्तुमित्यर्थः, क्वचित्तु 'अदिन्नं साइज्जित्तए'त्ति पाठः, तत्र 'भुंजित्तए'त्ति भोक्तुं 'साइज्जित्तए'त्ति भोजयितुं भुञ्जानं वाऽनुमोदयितुमिति व्याख्येयं, 'तिदंडए'त्ति त्रयाणां दण्डकानां समाहारस्त्रिदण्डकानि 'कुंडियाओ य'त्ति कमण्डलवः 'कंचणियाओ य'त्ति काञ्चनिकाः–रुद्राक्षमयमालिकाः 'करोडियाओ य'त्ति करोटिकाः–मृण्मयभाजनविशेषाः 'भिसियाओ य'त्ति वृषिका–उपवेशनपट्टडिकाः 'छण्णालए य'त्ति षण्नालकानि त्रिकाष्ठिकाः 'अंकुसाए य'त्ति अङ्कुशकाः–देवार्चनार्थं वृक्षपल्लवाकर्षणार्थं अङ्कुशकाः 'केसरियाओ य' त्ति केशरिकाः–प्रमार्जनार्थानि चीवरखण्डानि 'पवित्तए य'त्ति पवित्रकाणि–ताम्रमयान्यङ्गुलीयकानि 'गणेत्तियाओ य'त्ति गणेत्रिकाः–हस्ताभरणविशेषः छत्रकाण्युपानहश्च प्रतीताः, 'धाउरत्ताओ य'त्ति धातुरक्ता–गैरिकोपरञ्जिताः शाटिका इति गम्यं, 'पडिसुणेन्ति'त्ति प्रतिशृण्वन्ति–अभ्युपगच्छन्ति, 'संपलियंकनिसन्न'त्ति सम्पर्यङ्कः–पद्मासनं, प्राणातिपातादिव्याख्या पूर्ववत्, शरीरविशेषणव्याख्या त्वेवम्–'इट्ठं'ति वल्लभं 'कंतं'ति कान्तं काम्यत्वात् 'पिय'त्ति प्रियं सदा प्रेमविषयत्वात् 'मणुण्णं'ति मनोज्ञं–सुन्दरमित्यर्थः, 'मणोमं'ति मनसा अम्यते–प्राप्यते पुनः पुनः संस्मरणतो यत्तन्मनोऽमं 'पेज्जं'ति सर्वपदार्थानां मध्ये अतिशयेन प्रियत्वात् प्रेयः, प्रकर्षेण वा इज्या–पूजाऽस्येति प्रेज्यं, प्रेयं वा कालान्तरनयनात्, 'थेज्जं'ति क्वचित्तत्र स्थैर्यम्, अस्थिरेऽपि मूढैः स्थैर्यसमारोपणात्, 'वेसासियं'ति विश्वासः प्रयोजनमस्येति वैश्वासिकं, परशरीरमेव हि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंबड-परिव्राजकस्य कथा

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३९]

दीप अनुक्रम [४९]

प्रायेणाविश्वासहेतुर्भवतीति,'संमयं'ति सम्मतं तत्कृतकार्याणां सम्मतत्वात् 'बहुमयं'ति बहुशो बहूनां वा मध्ये मतम्–इष्टं यत्त-द्बहुमतम् 'अणुमयं'ति वैगुण्यदर्शनस्यापि पश्चान्मतमनुमतं 'भंडकरंडगसमाणं'ति आभरणकरण्डकतुल्यमुपादेयमित्यर्थः, तथा 'मा णं सीय' मित्यादि व्यक्तं, नवरं माशब्दो निषेधार्थः, णङ्कारो वाक्यालङ्कारार्थः, इह च स्पृशत्विति यथायोगं योजनीयम्, अथवा'मा णं'ति मा एतच्छरीरमिति व्याख्येयं,'मा णं वाल'त्ति व्यालाः–श्वापदभुजगाः'रोगायंक'त्ति रोगाः–कालमहाव्याधयः आतङ्काः–त एव सद्योघातिनः 'परीसहोवसग्ग'त्ति परीषहाः–क्षुदादयो द्वाविंशतिः उपसर्गा–दिव्यादयः 'फुसंतु' स्पृशन्तु 'इतिकट्टु'त्ति इतिकृत्वा इत्येवमभिसन्धाय यत्पालितमिति शेषः, 'एयंपि णं'ति एतदपि शरीरं 'वोसिरामित्ति कट्टु' इत्यत्र त्तिकट्टुत्ति–इतिकृत्वा इति विसर्जनं विधाय विहरन्तीति योगः, 'संलेहनाझूसिय'त्ति संलेखना–शरीरस्य तपसा कृशीकरणं तां तया वा 'झूसिअ'त्ति जुष्टा वा सेविता ये ते तथा 'संलेहणझूसणाझूसिय'त्ति क्वचित् तत्र संलेखनायां–कषायशरी-रकृशीकरणे या जोषणा–प्रीतिः सेवा वा 'जुषी प्रीतिसेवनयो' रिति वचनात् सा तथा तया तां वा ये जुष्टाः–सेवितास्ते तथा संलेखनाजोषणाया वा झूसियत्ति–झूषिताः क्षीणा ये ते तथा, 'भत्तपाणपडियाइक्खिय'त्ति प्रत्याख्यातभक्तपानाः 'पाओवगया' पादपोपगता वृक्षवन्निष्पन्दतयाऽवस्थिता इत्यर्थः, 'कालं अणवकंखमाण'त्ति मरणमनवकाङ्क्षन्तः, आका-क्षन्ति हि मरणमतिकष्टं गताः केचनेति तन्निषेध उक्तः 'अणसणाए छेइंति'त्ति अनशनेन व्यवच्छिन्दन्ति–परिहरन्तीत्यर्थः, एते च यद्यपि देशविरतिमन्तस्तथापि परिव्राजकक्रियया ब्रह्मलोकं गता इत्यवसेयम्, अन्यथैतद्ग्रहणं वृथैव स्याद्, देश-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंबड-परिव्राजकस्य कथा

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३९]

दीप अनुक्रम [४९]

विरतिफलं त्वेषां परलोकाराधकत्वमेवेति, न च ब्रह्मलोकगमनं परिव्राजकक्रियाफलमेषामेवोच्यते, अन्येषामपि मिथ्यादृशां कपिलप्रभृतीनां तस्योक्तत्वादिति १३ ॥ ३९ ॥

बहुजणे णं भंते ! अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ एवं भासइ एवं परूवेइ एवं खलु अंबडे परिव्वायए कंपिल्लपुरे णयरे घरसते आहारमाहरेइ, घरसए वसहिं उवेइ, से कहमेयं भंते ! एवं ?, गोयमा !, जण्णं से बहुजणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ जाव एवं परूवेइ–एवं खलु अम्मडे परिव्वायए कंपिल्लपुरे जाव घरसए वसहिं उवेइ, सच्चे णं एसमट्ठे, अहंपि णं गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव एवं परूवेमि–एवं खलु अम्मडे परिव्वायए जाव वसहिं उवेइ । से केणट्ठे णं भंते ! एवं वुच्चइ–अम्मडे परिव्वायए जाव वसहिं उवेइ ?, गोयमा !, अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स पगइभद्दयाए जाव विणीयाए छट्ठंछट्ठेणं अनिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय २ सूराभिमुहस्स आतावणभूमीए आतावेमाणस्स सुभेणं परिणामेणं पसत्थाहिं लेसाहिं विसुज्झमाणीहिं अन्नया कयाइ तदावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं ईहावूहामग्गणगवेसणं करेमाणस्स वीरियलद्धीए वेउव्वियलद्धीए ओहिणाणलद्धी समुप्पण्णा, तए णं से अम्मडे परिव्वायए ताए वीरियलद्धीए वेउव्वियलद्धीए ओहिणाणलद्धीए समुप्पण्णाए जणविम्हावणहेउं कंपिल्लपुरे घरसए जाव वसहिं उवेइ, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–अम्मडे परिव्वायए कंपिल्लपुरे णयरे घरसए जाव वसहिं उवेइ । पहू णं भंते ?

॥ ९६ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंबड-परिव्राजकस्य कथा

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४०]

दीप अनुक्रम [५०]

अम्मडे परिव्वायए देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए?, णो इणट्ठे समट्ठे, गोयमा ! अम्मडे णं परिव्वायए समणोवासए अभिगयजीवाजीवे जाव अप्पाणं भावेमाणे विहरइ, णवरं ऊसियफलिहे अवंगुदुवारे चियत्तंतेउरघरदारपवेसी ण वुंचइ अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स थूलए पाणाइवाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए जाव परिग्गहे णवरं सव्वे मेहुणे पच्चक्खाए जावज्जीवाए, अम्मडस्स णं णो कप्पइ अक्खसोतप्पमाणमेत्तंपि जलं सयराहं उत्तरित्तए णण्णत्थ अद्धाणगमणेणं, अम्मडस्स णं णो कप्पइ सगडं एवं चेव भाणियव्वं जाव णण्णत्थ एगाए गंगामट्टियाए, अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स णो कप्पइ आहाकम्मिए वा उद्देसिए वा मीसजाए इ वा अज्झोअरए इ वा पूइकम्मे इ वा कीयगडे इ वा पामिच्चे इ वा अणिसिट्ठे इ वा अभिहडे इ वा ठइत्तए वा रइत्तए वा कंतारभत्ते इ वा दुब्भिक्खभत्ते इ वा पाहुणगभत्ते इ वा गिलाणभत्ते इ वा वद्दलियाभत्ते इ वा भोत्तए वा पाइत्तए वा, अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स णो कप्पइ मूलभोयणे वा जाव बीयभोयणे वा भोत्तए वा पाइत्तए वा, अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स चउव्विहे अणत्थदंडे पच्चक्खाए जावज्जीवाए, तंजहा—अवज्झाणायरिए पमायायरिए हिंसप्पयाणे पावकम्मोवएसे, अम्मडस्स कप्पइ मागहए अद्धाढए जलस्स पडिग्गाहित्तए सेऽविय वहमाणए नो चेव णं अवहमाणए जाव सेऽविय पूए नो चेव णं अपरिपूए सेऽविय सावज्जेत्तिकाऊं णो चेव णं अणवज्जे सेऽविय जीवा इतिकट्टु णो चेव

१ नेदं प्रत्यन्तरे णवरमित्यादितः.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंबड-परिव्राजकस्य कथा

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

णं अजीवा सेऽविय दिण्णे णो चेव णं अदिण्णे सेऽविय दंतहत्थपायचरुचमसपक्खालणट्ठयाए पिबित्तए वा णो चेव णं सिणाइत्तए, अम्मडस्स कप्पइ मागहए य आढए जलस्स पडिग्गाहित्तए, सेऽविय वहमाणे जाव दिन्ने नो चेव णं अदिण्णे सेऽविय सिणाइत्तए णो चेव णं हत्थपायचरुचमसपक्खालणट्ठयाए पिबित्तए वा, अम्मडस्स णो कप्पइ अन्नउत्थिया वा अण्णउत्थियदेवयाणि वा अण्णउत्थियपरिग्गहियाणि वा चेइयाइं वंदित्तए वा णमंसित्तए वा जाव पज्जुवासित्तए वा णण्णत्थ अरिहंते वा अरिहंतचेइयाइं वा । अम्मडे णं भंते ! परिव्वायए कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिति ? कहिं उववज्जिहिति ?, गोयमा ! अम्मडे णं परिव्वायए उच्चावएहिं सीलव्वयगुणवेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासेहिं अप्पाणं भावेमाणे बहूइं वासाइं समणोवासयपरियायं पाउणिहिति २त्ता मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा बंभलोए कप्पे देवत्ताए उववज्जिहिति, तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं दस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता, तत्थ णं अम्मडस्सवि देवस्स दस सागरोवमाइं ठिई। से णं भंते ! अम्मडे देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गच्छिहिति कहिं उववज्जिहिति ?, गोयमा ! महाविदेहे वासे जाइं कुलाइं भवंति अड्ढाइं दित्ताइं वित्ताइं विच्छिण्णविउलभवणसयणासणजाणवाहणाइं बहुधणजायरूवरययाइं आओगपओगसंपउत्ताइं विच्छड्डियपउरभत्तपाणाइं बहुदासीदासगोमहिसगवेलगप्पभूयाइं बहुजणस्स अपरिभूयाइं तहप्पगारेसु कुलेसु

॥ ९७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४०] दीप अनुक्रम [५०]	अंबड-परिव्राजकस्य कथा

प्रत सूत्रांक [४०]

दीप अनुक्रम [५०]

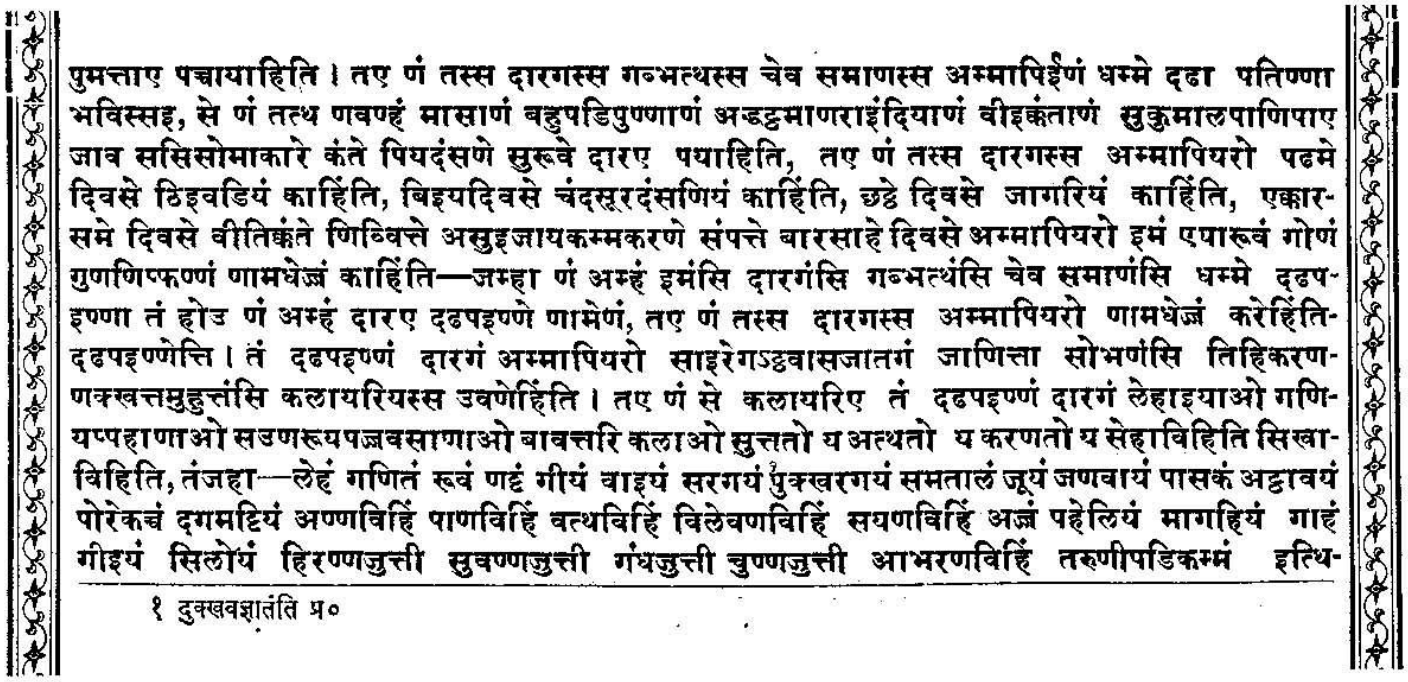

पुमत्ताए पच्चायाहिति। तए णं तस्स दारगस्स गब्भत्थस्स चेव समाणस्स अम्मापिईणं धम्मे दढा पतिण्णा भविस्सइ, से णं तत्थ णवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाणराइंदियाणं वीइक्कंताणं सुकुमालपाणिपाए जाव ससिसोमाकारे कंते पियदंसणे सुरूवे दारए पयाहिति, तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो पढमे दिवसे ठिइवडियं काहिंति, बिइयदिवसे चंदसूरदंसणियं काहिंति, छट्ठे दिवसे जागरियं काहिंति, एक्कारसमे दिवसे वीतिक्कंते णिव्वित्ते असुइजायकम्मकरणे संपत्ते बारसाहे दिवसे अम्मापियरो इमं एयारूवं गोणं गुणणिप्फण्णं णामधेज्जं काहिंति—जम्हा णं अम्हं इमंसि दारगंसि गब्भत्थंसि चेव समाणंसि धम्मे दढपइण्णा तं होउ णं अम्हं दारए दढपइण्णे णामेणं, तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो णामधेज्जं करेहिंति-दढपइण्णेत्ति। तं दढपइण्णं दारगं अम्मापियरो साइरेगऽट्ठवासजातगं जाणित्ता सोभणंसि तिहिकरण-णक्खत्तमुहुत्तंसि कलायरियस्स उवणेहिंति। तए णं से कलायरिए तं दढपइण्णं दारगं लेहाइयाओ गणियप्पहाणाओ सउणरुयपज्जवसाणाओ बावत्तरि कलाओ सुत्ततो य अत्थतो य करणतो य सेहाविहिति सिक्खाविहिति, तंजहा—लेहं गणितं रूवं णट्टं गीयं वाइयं सरगयं पुक्खरगयं समतालं जूयं जणवायं पासकं अट्ठावयं पोरेकच्चं दगमट्टियं अण्णविहिं पाणविहिं वत्थविहिं विलेवणविहिं सयणविहिं अज्जं पहेलियं मागहियं गाहं गीइयं सिलोयं हिरण्णजुत्ती सुवण्णजुत्ती गंधजुत्ती चुण्णजुत्ती आभरणविहिं तरुणीपडिकम्मं इत्थि-

१ दुक्खवज्ञातंति प्र०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंबड-परिव्राजकस्य कथा

लक्खणं पुरिसलक्खणं हयलक्खणं गयलक्खणं गोणलक्खणं कुक्कुडलक्खणं चक्कलक्खणं छत्तलक्खणं चम्मलक्खणं दंडलक्खणं असिलक्खणं मणिलक्खणं काकणिलक्खणं वत्थुविज्जं खंधारमाणं नगरमाणं वत्थुनिवेसणं वूहं पडिवूहं चारं पडिचारं चक्कवूहं गरुलवूहं सगडवूहं जुद्धं निजुद्धं जुद्धातिजुद्धं मुट्ठिजुद्धं बाहुजुद्धं लयाजुद्धं इसत्थं छरुप्पवाहं धणुव्वेयं हिरण्णपागं सुवण्णपागं वट्टखेडं[1] खुत्ताखेडुं णालियाखेडुं पत्तच्छेज्जं कडवच्छेज्जं सज्जीवं निज्जीवं सउणरुतमिति बावत्तरिकलाओ सेहाविति सिक्खावेत्ता अम्मापिईणं उवणेहिति । तए णं तस्स दढपइण्णस्स दारगस्स अम्मापियरो तं कलायरियं विपुलेणं असणपाणखाइमसाइमेणं वत्थगंधमल्लालंकारेण य सक्कारेहिंति सम्माणेहिंति सक्कारेत्ता सम्माणेत्ता विपुलं जीवियारिहं पीइदाणं दलइस्सइ, विपुलं २ त्ता पडिविसज्जेहिंति । तए णं से दढपइण्णे दारए बावत्तरिकलापंडिए नवंगसुत्तपडिबोहिए अट्ठारसदेसीभासाविसारए गीयरती गंधव्वणट्टकुसले हयजोही गयजोही रहजोही बाहुजोही बाहुप्पमद्दी वियालचारी साहसिए अलं भोगसमत्थे आवि भविस्सइ । तए णं दढपइण्णं दारगं अम्मापियरो बावत्तरिकलापंडियं जाव अलं भोगसमत्थं वियाणित्ता विउलेहिं अण्णभोगेहिं पाणभोगेहिं लेणभोगेहिं वत्थभोगेहिं सयणभोगेहिं कामभोगेहिं उवणिमंतेहिंति, तए णं से दढपइण्णे दारए तेहिं विउलेहिं अण्णभोगेहिं जाव सयणभोगेहिं णो सज्जिहिति णो रज्जिहिति णो गिज्झिहिति णो अज्झोववज्जिहिति, से जहाणामए उप्पले इ वा पउमे इ वा कुसुमे इ वा नलिणे इ वा

१ पब्भखेडुं प्र० २ वेज्झखेडुं प्र० ३ नेदं प्र०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंबड-परिव्राजकस्य कथा

प्रत सूत्रांक [४०]

दीप अनुक्रम [५०]

सुभगे इ वा सुगंधे इ वा पोंडरीए इ वा महापोंडरीए इ वा सतपत्ते इ वा सहस्सपत्ते इ वा सतसहस्सपत्ते इ वा पंके जाए जले संवुड्ढे णोवलिप्पइ पंकरएणं णोवलिप्पइ जलरएणं, एवमेव दढपइण्णेवि दारए कामेहिं जाए भोगेहिं संवुड्ढे णोवलिप्पिहिति कामरएणं णोवलिप्पिहिति भोगरएणं णोवलिप्पिहिति मित्तणाइणियगसयणसंबंधिपरिजणेणं, से णं तहारूवाणं थेराणं अंतिए केवलं बोहिं बुज्झिहिति केवलबोहिं बुज्झित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइहिति। से णं भविस्सइ अणगारे भगवंते ईरियासमिए जाव गुत्तबंभयारी। तस्स णं भगवंतस्स एतेणं विहारेणं विहरमाणस्स अणंते अणुत्तरे णिव्वाघाए निरावरणे कसिणे पडिपुण्णे केवलवरणाणदंसणे समुप्पज्जिहिति। तए णं से दढपइण्णे केवली बहूइं वासाइं केवलिपरियागं पाउणिहिति, केवलिपरियागं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेएत्ता जस्सट्ठाए कीरइ णग्गभावे मुंडभावे अण्हाणए अदंतवणए केसलोए बंभचेरवासे अच्छत्तकं अणोवाहणकं भूमिसेज्जा फलहसेज्जा कट्ठसेज्जा परघरपवेसो लद्धावलद्धं परेहिं हीलणाओ खिंसणाओ णिंदणाओ गरहणाओ तालणाओ तज्जणाओ परिभवणाओ पव्वहणाओ उच्चावया गामकंटका बावीसं परीसहोवसग्गा अहियासिज्जंति तमट्ठमाराहित्ता चरिमेहिं उस्सासणिस्सासेहिं सिज्झिहिति बुज्झिहिति मुच्चिहिति परिणिव्वाहिति सव्वदुक्खाणमंतं करेहित्ति ॥ १४ ॥ (सू० ४०) ॥

इहैव ज्ञातान्तरमाह–'बहुजणेण'मित्यादि व्यक्तं, नवरं 'पगइभद्दयाए'इत्यत्र यावत्करणादिदं दृश्यं–'पगइउवसंतयाए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंबड-परिव्राजकस्य कथा

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४०]

दीप अनुक्रम [५०]

पगइतणुकोहमाणमायालोहयाए मिउमद्दवसंपण्णयाए अल्लीणयाए भद्दयाए'त्ति व्याख्या प्राग्वत्, 'अनिक्खित्तेणं'ति अविश्रान्तेन 'पगिज्झिय'त्ति प्रगृह्य विधायेत्यर्थः, 'परिणामेणं'ति जीवपरिणत्या 'अज्झवसाणेहिं'ति मनोविशेषैः 'लेसाहिं'ति तेजोलेश्यादिकाभिः 'तदावरणिज्जाणं'ति वीर्यान्तरवैक्रियलब्धिप्राप्तिनिमित्तावधिज्ञानावरणानामित्यर्थः, 'ईहावूहमग्गणगवेसणं'ति इह ईहा–किमिदमित्थमुतान्यथेत्येवं सदर्थालोचनाभिमुखा मतिः चेष्टा, व्यूह–इदमित्थमेवंरूपो निश्चयः, मार्गणम्–अन्वयधर्मालोचनं यथा स्थाणौ निश्चेतव्ये इह वह्युत्सर्पणादयः प्रायः स्थाणुधर्मा घटन्त इति, गवेषणं–व्यतिरेकधर्मालोचनं यथा स्थाणावेव निश्चेतव्ये इह शिरःकण्डूयनादयः प्रायः पुरुषधर्मा न घटन्त इति, तत एषां समाहारद्वन्द्वः, 'वीरियलद्धीए'त्ति वीर्यलब्ध्या सह 'वेउव्वियलद्धीए'त्ति वैक्रियलब्ध्या सह 'ओहिणाणलद्धि'त्ति अवधिज्ञानलब्धिः समुत्पन्ना, वीर्यलब्ध्यादित्रयमुत्पन्नमित्यर्थः, वाचनान्तरे 'वीरियलद्धी वेउव्वियलद्धी'त्ति पठ्यते, यत्कचित् 'अम्म(म्ब)डे परिव्वायगे'त्ति दृश्यते तदयुक्तं, अम्मडे इत्येतस्य स्थानाङ्गादिपुस्तकेषु दर्शनात्, 'अहिगयजीवाजीवे' इत्यत्र यावत्करणादिदं दृश्यम्–'उवलद्धपुण्णपावे' 'आसवसंवरनिज्जरकिरियाहिगरणबंधमोक्खकुसले' आश्रवाः–प्राणातिपातादयः संवराः–प्राणातिपातविरमणादयः निर्जरा–कर्मणो देशतः क्षपणं क्रियाः–कायिक्यादिकाः अधिकरणानि–खड्गादिनिर्वर्तनसंयोजनानि बन्धमोक्षौ–कर्मविषयौ, एतेन चास्य ज्ञानसम्पन्नतोक्ता, 'असहेज्ज'त्ति अविद्यमानसाहाय्यः कुतीर्थिकप्रेरितः सन् सम्यक्त्वाविचलनं प्रति न परसाहाय्यमपेक्षत इति भावः, अत एवाह–'देवासुरनागसुवण्णजक्खरक्खसकिण्णरकिंपुरिसगरुलगंधव्वमहोरगाइएहिं निग्गंथाओ पावयणाओ अणइक्कमणिज्जे'इति देवा–वैमानिकाः असुरनागत्ति–असुरकुमारा नागकुमारा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंबड-परिव्राजकस्य कथा

श्रेति भवनपतिविशेषाः सुवण्णत्ति–सद्वर्णा ज्योतिष्का इत्यर्थः, क्वचिद्गरुडेत्ति नाधीयते, ततः सुवण्णेत्ति–सुवर्णकुमारा भवनपतिविशेषाः यक्षराक्षसकिन्नरकिम्पुरुषाः व्यन्तरभेदाः, गरुडत्ति–गरुडचिह्नाः सुवर्णकुमाराः, गन्धर्वमहोरगाश्च व्यन्तराः, 'इणमो निग्गन्थे पावयणे'त्ति अस्मिन्निर्ग्रन्थे प्रवचने 'निस्संकिय'त्ति निःसन्देहः 'निक्कंखिय'त्ति मुक्तदर्शनान्तरपक्षपातः 'निव्विइगिच्छे'त्ति निर्विचिकित्सकः फलं प्रति निःशङ्कः 'लद्धट्ठे'त्ति लब्धार्थोऽर्थश्रवणतः 'गहियट्ठे'त्ति गृहीतार्थोऽवधारणतः 'पुच्छियट्ठे'त्ति पृष्टार्थः संशये सति 'अहिगयट्ठे'त्ति अधिगतार्थोऽभिगतार्थो वा अर्थावबोधात् 'विणिच्छियट्ठे'त्ति विनिश्चितार्थः ऐदम्पर्योपलम्भात्, अत एव 'अट्ठिमिंजपेम्माणुरागरत्ते' अस्थीनि च–कीकसानि मिञ्जा च–तन्मध्यवर्ती धातुविशेषः अस्थिमिञ्जास्ताः प्रेमानुरागेण–सार्वज्ञप्रवचनप्रीतिलक्षणकुसुम्भादिरागेण रक्ता इव रक्ता यस्य स तथा, केनोल्लेखेनेत्याह–'अयमाउसो ! निग्गंथे पावयणे अट्ठे अयं परमट्ठे सेसे अणट्ठे'त्ति, अयमिति–प्राकृतत्वादिदम् 'आउसो'त्ति आयुष्मन्निति पुत्रादेरामन्त्रणं, क्वचित् 'इणमो निग्गन्थे'इति दृश्यते, 'सेसे'त्ति शेषं–धनधान्यपुत्रकलत्रमित्रराज्यकुप्रवचनादिकमिति, 'ऊसियफलिहे'त्ति उच्छ्रितम्–उन्नतं स्फटिकमिव स्फटिकं चित्तं यस्य स तथा, मौनीन्द्रप्रवचनावाप्त्या परिपुष्टमना इत्यर्थः, इति वृद्धव्याख्या, अन्ये त्वाहुः–उच्छ्रितः–अर्गलास्थानादपनीयोर्ध्वीकृतो न तिरश्चीनः, कपाटपश्चाद्भागादपनीत इत्यर्थः, उत्सृतो वा अपगतः परिघः–अर्गला गृहद्वारे यस्यासौ उच्छ्रितपरिघ उत्सृतपरिघो वा, औदार्यातिशयादतिशयदानदायित्वेन भिक्षुकप्रवेशार्थमनर्गलितगृहद्वार इत्यर्थः, इदं च किलाम्मडस्य न सम्भवति, स्वयमेव तस्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४०]

दीप अनुक्रम [५०]

भिक्षुकत्वाद्, अत एव पुस्तके लिखितं यथा 'ऊसियफलिहे'त्यादिविशेषणत्रयं नोच्यते, 'अवंगुयदुवारे'त्ति अपावृत्तद्वारः-कपाटादिभिरस्थगितगृहद्वारः, सद्दर्शनलाभेन न कुतोऽपि पाषण्डिकाद्भिभेति, शोभनमार्गपरिग्रहेणोद्घाटशिरास्तिष्ठतीति भाव इति वृद्धव्याख्या, केचित्त्वाहुः-भिक्षुकप्रवेशार्थमौदार्यादस्थगितगृहद्वार इत्यर्थः, इदं चाम्मडस्य न घटते,'चियत्त-अंतेउरघरदारपवेसी'त्ति चियत्तोत्ति-लोकानां प्रीतिकर एव अन्तःपुरे वा गृहे वा द्वारे वा प्रवेशो यस्य स तथा, इन्प्रत्यय-श्चात्र समासान्तः, अतिधार्मिकतया सर्वत्रानाशङ्कनीयोऽसाविति भावः, अन्ये त्वाहुः-चियत्तोत्ति-नाप्रीतिकरोऽन्तःपुरगृहे द्वारेण नापद्वारेण प्रवेशः-शिष्टजनप्रवेशनं यस्य स तथा, अनीर्ष्यालुताप्रतिपादनपरं चेत्थमिदं विशेषणं, न चाम्मडस्येदं घटते, अन्तःपुरस्यैवाभावादिति, क्वचिदेवं दृश्यते-'चियत्तघरंतेउरपवेसी'ति चियत्तेत्ति-प्रीतिकारिण्येव गृहे वाऽन्तःपुरे वा प्रविशतीत्येवंशीलो यः स तथा, त्यक्तो वा गृहान्तःपुरयोरकस्मात् प्रवेशो येन स तथा, 'चउद्दसअट्ठमुद्दिट्ठपुण्णमा-सिणीसु' त्ति उद्दिष्टा-अमावास्या 'पडिपुण्णं पोसहं अणुपालेमाणे'त्ति आहारपौषधादिभेदाच्चतूरूपमपीति, 'समणे निग्गंथे फासुएसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं वत्थपडिग्गहकम्बलपायपुच्छणेणं' अत्र च पडिग्गहत्ति-प्रतिग्रहः पतद्ग्रहो वा-पात्रं पायपुच्छणंति-पादप्रोक्षणं रजोहरणं 'ओसहभेसज्जेणं'ति औषधम्-एकद्रव्याश्रयं भैषज्यं-द्रव्यसमुदायरूपमथवा औषधं-त्रिफलादि भैषज्यं-पथ्यं 'पाडिहारिएणं पीढफलगसेज्जासंथारएणं पडिलाहेमाणे'त्ति प्रतिहारः-प्रत्यर्पणं प्रयोजन-

१ स्वावासस्थानापेक्षया वा स्यादपि, आगतस्यार्थिनो याचनापूर्णकिरणाद्वा, भक्ता वा तस्येदृशाः स्युर्ये तन्निवासस्थाने सत्रशालां तथा-विधां कुर्युः, उल्लिखितस्फटिकवद्वा निर्मलान्तःकरण इति वा, शेषपदद्वये तु न प्रथमव्याख्यानपक्षे दोषलेशावकाशः.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंबड-परिव्राजकस्य कथा

प्रत सूत्रांक [४०] दीप अनुक्रम [५०]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

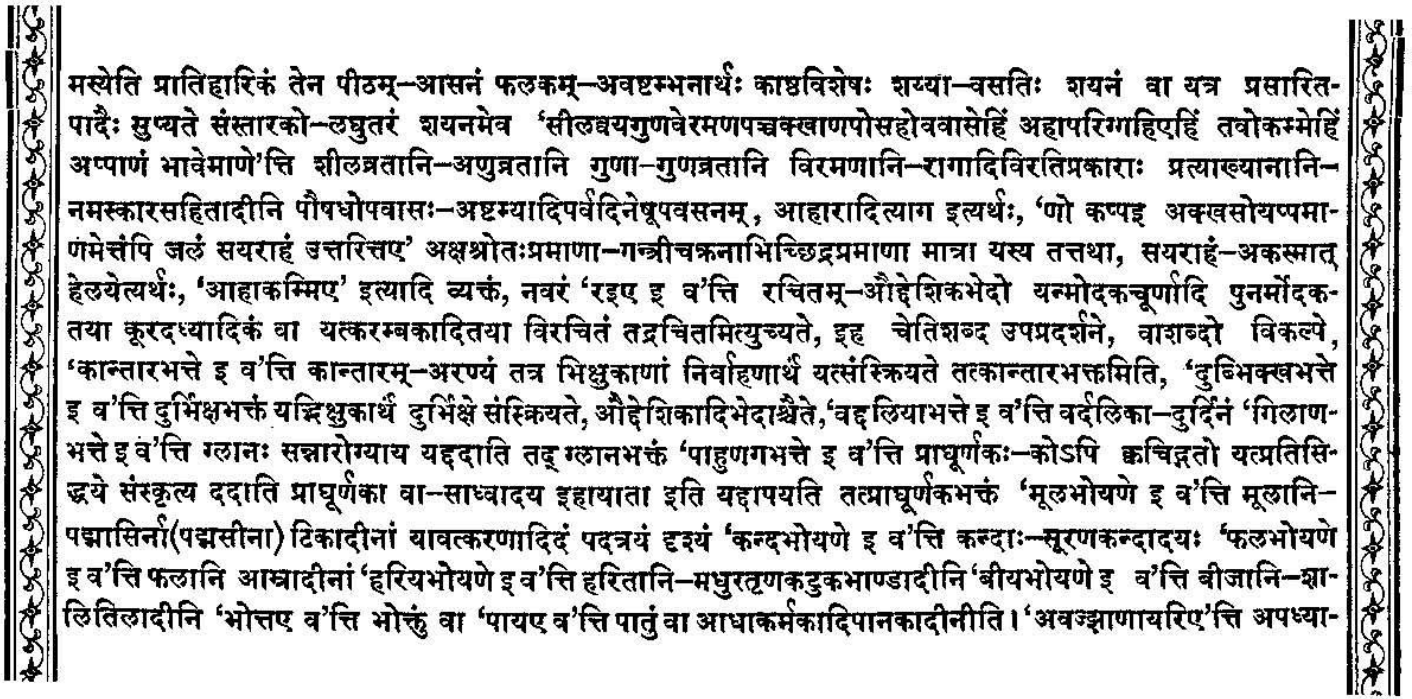

मस्येति प्रातिहारिकं तेन पीठम्–आसनं फलकम्–अवष्टम्भनार्थः काष्ठविशेषः शय्या–वसतिः शयनं वा यत्र प्रसारित-पादैः सुप्यते संस्तारको–लघुतरं शयनमेव 'सीलव्वयगुणवेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासेहिं अहापरिग्गहिएहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे'त्ति शीलव्रतानि–अणुव्रतानि गुणा–गुणव्रतानि विरमणानि–रागादिविरतिप्रकाराः प्रत्याख्यानानि–नमस्कारसहितादीनि पौषधोपवासः–अष्टम्यादिपर्वदिनेषूपवसनम्, आहारादित्याग इत्यर्थः, 'णो कप्पइ अक्खसोयप्पमाणमेत्तंपि जलं सयराहं उत्तरित्तए' अक्षश्रोतःप्रमाणा–गन्त्रीचक्रनाभिच्छिद्रप्रमाणा मात्रा यस्य तत्तथा, सयराहं–अकस्मात् हेलयेत्यर्थः, 'आहाकम्मिए' इत्यादि व्यक्तं, नवरं 'रइए इ व'त्ति रचितम्–औद्देशिकभेदो यन्मोदकचूर्णादि पुनर्मोदक-तया कूरदध्यादिकं वा यत्करम्बकादितया विरचितं तद्रचितमित्युच्यते, इह चेतिशब्द उपप्रदर्शने, वाशब्दो विकल्पे, 'कान्तारभत्ते इ व'त्ति कान्तारम्–अरण्यं तत्र भिक्षुकाणां निर्वाहणार्थं यत्संस्क्रियते तत्कान्तारभक्तमिति, 'दुब्भिक्खभत्ते इ व'त्ति दुर्भिक्षभक्तं यद्भिक्षुकार्थं दुर्भिक्षे संस्क्रियते, औद्देशिकादिभेदाश्चैते,'वद्दलियाभत्ते इ व'त्ति वर्दलिका–दुर्दिनं 'गिलाण-भत्ते इ व'त्ति ग्लानः सन्नारोग्याय यद्ददाति तद् ग्लानभक्तं 'पाहुणगभत्ते इ व'त्ति प्राघूर्णकः–कोऽपि क्वचिद्गतो यत्प्रतिसि-द्धये संस्कृत्य ददाति प्राघूर्णका वा–साध्वादय इहायाता इति यदापयति तत्प्राघूर्णकभक्तं 'मूलभोयणे इ व'त्ति मूलानि–पद्मासिर्ना(पद्मसीना) टिकादीनां यावत्करणादिदं पदत्रयं दृश्यं 'कन्दभोयणे इ व'त्ति कन्दाः–सूरणकन्दादयः 'फलभोयणे इ व'त्ति फलानि आम्रादीनां 'हरियभोयणे इ व'त्ति हरितानि–मधुरतृणकटुकभाण्डादीनि 'बीयभोयणे इ व'त्ति बीजानि–शा-लितिलादीनि 'भोत्तए व'त्ति भोक्तुं वा 'पायए व'त्ति पातुं वा आधाकर्मकादिपानकादीनीति। 'अवज्झाणायरिए'त्ति अपध्या-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अंबड-परिव्राजकस्य कथा

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४०]

दीप अनुक्रम [५०]

नेन–आर्तादिना आचरित–आसेवितो यः अपध्यानस्य वा यदाचरितम्–आसेवनं सोऽनर्थदण्ड इति, 'पमादायरिए'त्ति प्रमादेन–घृतगुडादिद्रव्याणां स्थगनादिकरणे आलस्यलक्षणेन आचरितो यस्तस्य वा यदाचरितं सोऽनर्थदण्डः प्रमादाचरितः प्रमादाचरितं वेति 'हिंसप्पयाणे'त्ति हिंस्रस्य–खड्गादेः प्रदानम्–अन्यस्यार्पणं निष्प्रयोजनमेवेति हिंस्रप्रदानं, 'पावकम्मोवएसे'त्ति पापकर्मोपदेशः–कृष्याद्युपदेशः प्रयोजनं विनेति, 'सावज्जेत्तिकट्टु'त्ति यदिदं जलस्य परिमाणकरणं तज्जलं सावद्यमितिकृत्वा, सावद्यमपि कथमित्याह–'जीवत्तिकट्टु'त्ति जीवा अप्कायिका एत इतिकृत्वा, अथवा कस्मात्परिपूतं गृह्णातीत्यत आह–सावद्यमितिकृत्वा, एतदेव कुत इत्याह–जीवा इतिकृत्वा, पूतरकादिजीवा इह सन्तीतिकृत्वेति भावः। 'अण्णउत्थिए व'त्ति अन्ययूथिका–अर्हत्सङ्घापेक्षया अन्ये शाक्यादयः 'चेइयाइं'ति अर्हच्चैत्यानि–जिनप्रतिमा इत्यर्थः 'णण्णत्थ अरहंतेहि व'त्ति न कल्पते, इह योऽयं नेति प्रतिषेधः सोऽन्यत्रार्हद्भ्यः, अर्हतो वर्जयित्वेत्यर्थः, स हि किल परिव्राजकवेषधारकः अतोऽन्ययूथिकदेवतावन्दनादिनिषेधे अर्हतामपि वन्दनादिनिषेधो मा भूदितिकृत्वा णण्णत्थेत्याद्यधीतं, 'उच्चावएहिं'ति उच्चावचैः–उत्कृष्टानुत्कृष्टैः। 'आउक्खएणं'ति आयुःकर्मणो दलिकनिर्जरणेन 'भवक्खएणं'ति देवभवनिबन्धनभूतकर्मणां गत्यादीनां निर्जरणेनेत्यर्थः, 'ठिइक्खएणं'ति आयुःकर्मणस्तदन्येषां च केषाञ्चित् स्थितेर्विदलनेनेति 'अणंतरं चयं चइत्त'त्ति देवभवसम्बन्धिनं चयं–शरीरं त्यक्त्वा–विमुच्य अथवा 'चयं चइत्त'त्ति च्यवनं चित्वा–कृत्वेत्यर्थः, 'अड्ढाइं'ति परिपूर्णानि 'दित्ताइं'ति दृप्तानि–दर्पवन्ति 'वित्ताइं'ति वित्तानि–व्याख्यातानि शेषपदानि कूणिकवर्णकवद् व्याख्येयानि, 'तहप्पगारेसु कुलेसु'त्ति इह क्वचित् कुले इत्ययं शेषो दृश्यः, 'पुमत्ताए'त्ति पुंस्त्वतया, पुरुषतयेत्यर्थः,

॥ १०१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंबड-परिव्राजकस्य कथा

प्रत सूत्रांक [४०] दीप अनुक्रम [५०]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

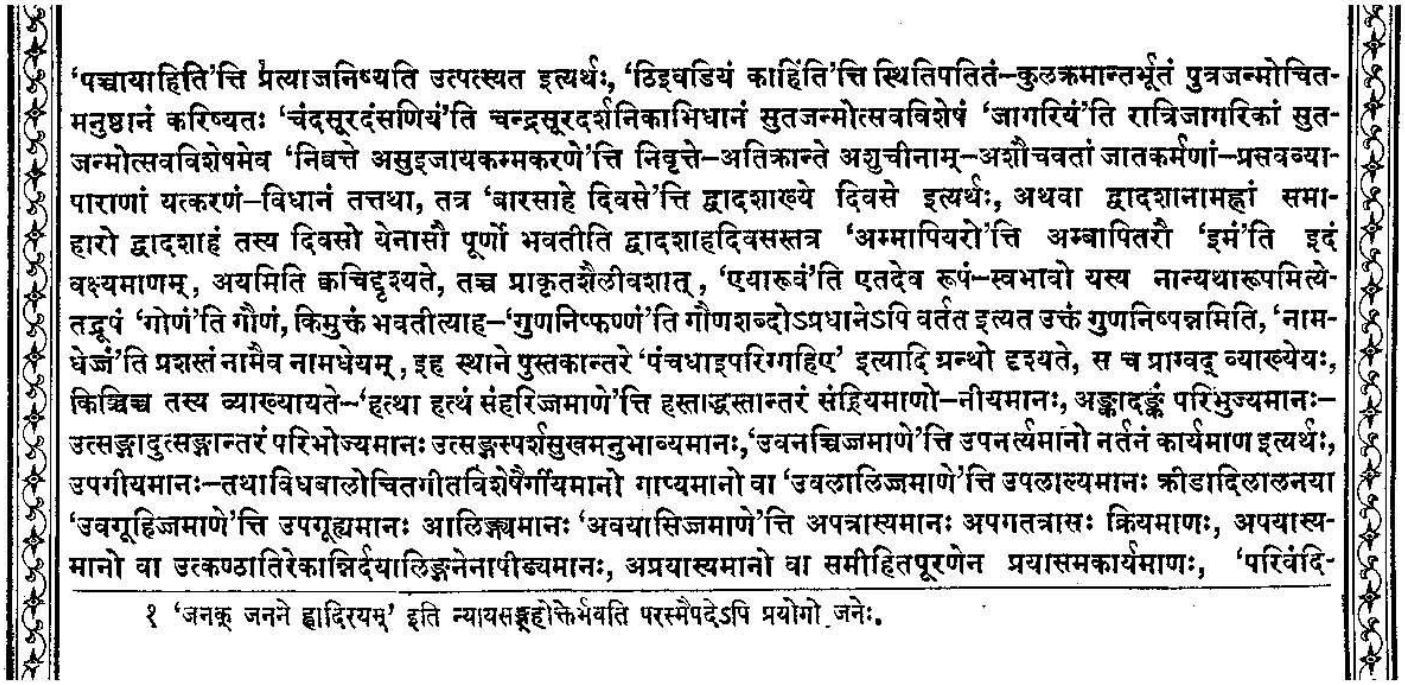

'पच्चायाहिति'त्ति प्रत्याजनिष्यति उत्पत्स्यत इत्यर्थः, 'ठिइवडियं काहिंति'त्ति स्थितिपतितं–कुलक्रमान्तर्भूतं पुत्रजन्मोचितमनुष्ठानं करिष्यतः 'चंदसूरदंसणियं'ति चन्द्रसूरदर्शनिकाभिधानं सुतजन्मोत्सवविशेषं 'जागरियं'ति रात्रिजागरिकां सुतजन्मोत्सवविशेषमेव 'निवत्ते असुइजायकम्मकरणे'त्ति निवृत्ते–अतिक्रान्ते अशुचीनाम्–अशौचवतां जातकर्मणां–प्रसवव्यापाराणां यत्करणं–विधानं तत्तथा, तत्र 'बारसाहे दिवसे'त्ति द्वादशाख्ये दिवसे इत्यर्थः, अथवा द्वादशानामह्नां समाहारो द्वादशाहं तस्य दिवसो येनासौ पूर्णो भवतीति द्वादशाहदिवसस्तत्र 'अम्मापियरो'त्ति अम्बापितरौ 'इमं'ति इदं वक्ष्यमाणम्, अयमिति क्वचिद्दृश्यते, तच्च प्राकृतशैलीवशात्, 'एयारूवं'ति एतदेव रूपं–स्वभावो यस्य नान्यथारूपमित्येतद्रूपं 'गोणं'ति गौणं, किमुक्तं भवतीत्याह–'गुणनिप्फण्णं'ति गौणशब्दोऽप्रधानेऽपि वर्तत इत्यत उक्तं गुणनिष्पन्नमिति, 'नामधेज्जं'ति प्रशस्तं नामैव नामधेयम्, इह स्थाने पुस्तकान्तरे 'पंचधाइपरिग्गहिए' इत्यादि ग्रन्थो दृश्यते, स च प्राग्वद् व्याख्येयः, किञ्चिच्च तस्य व्याख्यायते–'हत्था हत्थं संहरिज्जमाणे'त्ति हस्ताद्धस्तान्तरं संह्रियमाणो–नीयमानः, अङ्कादङ्कं परिभुज्यमानः–उत्सङ्गादुत्सङ्गान्तरं परिभोज्यमानः उत्सङ्गस्पर्शसुखमनुभाव्यमानः,'उवनच्चिज्जमाणे'त्ति उपनर्त्यमानो नर्तनं कार्यमाण इत्यर्थः, उपगीयमानः–तथाविधबालोचितगीतविशेषैर्गीयमानो गाप्यमानो वा 'उवलालिज्जमाणे'त्ति उपलाल्यमानः क्रीडादिलालनया 'उवगूहिज्जमाणे'त्ति उपगूह्यमानः आलिङ्ग्यमानः 'अवयासिज्जमाणे'त्ति अपत्रास्यमानः अपगतत्रासः क्रियमाणः, अपयास्यमानो वा उत्कण्ठातिरेकान्निर्दयालिङ्गनेनापीड्यमानः, अप्रयास्यमानो वा समीहितपूरणेन प्रयासमकार्यमाणः, 'परिवंदि-

१ 'जनकृ जनने ह्वादिरयम्' इति न्यायसङ्ग्रहोक्तेर्भवति परस्मैपदेऽपि प्रयोगो जनेः.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अंबड-परिव्राजकस्य कथा

ज्जमाणे'त्ति परिवन्द्यमानः स्तूयमानः, परिचुम्ब्यमान इति व्यक्तं, 'परंगिज्जमाणे' त्ति परङ्ग्यमाणः चङ्क्रम्यमाणः, एतेषां च संहियमाणादिपदानां द्विर्वचनमाभीक्ष्ण्यविवक्षयेति 'निव्वाघायं'ति निर्वातं निर्व्याघातं च यद्गिरिकन्दरं तदालीन इति। अथाधिकृतवाचना 'साइरेगट्ठवरिसजायगं'ति सातिरेकाण्यष्टौ वर्षाणि जातस्य यस्य स तथा तं 'अत्थउ'त्ति अर्थतो व्याख्यानतः 'करणओ य'त्ति करणतः प्रयोगत इत्यर्थः। 'सेहावेहिति'त्ति सेधयिष्यति निष्पादयिष्यति 'सिक्खावेहिति' शिक्षयिष्यति–अभ्यासं कारयिष्यति 'विन्नयपरिणयमेत्ते'त्ति क्वचित्तत्र विज्ञ एव विज्ञकः स चासौ परिणतमात्रश्च–बुद्ध्यादिपरिणामवानेव विज्ञकपरिणतमात्रः, इह मात्राशब्दो बुद्ध्यादिपरिणामस्याभिनवत्वख्यापनपरः, 'नवंगसुत्तपडिबोहिए'त्ति नवाङ्गानि द्वे श्रोत्रे द्वे नेत्रे द्वे घ्राणे एका च जिह्वा त्वगेका मनश्चैकमिति तानि सुप्तानीव सुप्तानि बाल्यादव्यक्तचेतनानि प्रतिबोधितानि–यौवनेन व्यक्तचेतनावन्ति कृतानि यस्य स तथा, आह च व्यवहारभाष्ये–'सोत्ताइं नव सुत्ताइं'[1] इत्यादि, 'हयजोही'त्ति हयेन–अश्वेन युध्यत इति हययोधी एवं रथयोधी बाहुयोधी च, 'बाहुप्पमर्दी'ति बाहुभ्यां प्रमृद्नातीति बाहुप्रमर्दी 'वियालचारी'त्ति साहसिकत्वाद्विकालेऽपि रात्रावपि चरतीति विकालचारी, अत एव साहसिकः–सात्त्विकः 'अलं भोगसमत्थे'ति अत्यर्थं भोगानुभवनसमर्थः, 'णो सज्जिहिति'त्ति न सङ्गं–सम्बन्धं करिष्यति 'णो रज्जिहिति'त्ति न रागं–प्रेम भोगसम्बन्धहेतुं करिष्यति 'नो गिज्झिहिति'त्ति नाप्राप्तभोगेष्वाकाङ्क्षां करिष्यतीति 'णो अज्झोववज्जिहिति'त्ति नाध्युपपत्स्यते–नात्यन्तं तदेकाग्रमना भविष्यतीति 'से जहाणामए'त्ति से इति अथशब्दार्थे अथशब्दश्च वाक्योपक्षेपार्थः, नामेति

१ श्रोत्रादीनि नव सुप्तानि.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंबड-परिव्राजकस्य कथा

सम्भावनायाम्, एवंशब्दो वाक्यालङ्कारार्थः, 'उप्पलेति वा' उत्पलमिति वा, उत्पलादिपदानां चार्थभेदो वर्णादिभिर्लोकतोऽवसेयो, नवरं पुण्डरीकं–सितपद्मं 'पंकरएणं'ति पङ्क–कर्दमः स एव रजः पद्मस्वरूपोपरञ्जनात् श्लक्ष्णावयवरूपत्वेन वा रेणुतुल्यत्वादिति, 'कामरएणं'ति कामः–शब्दो रूपं च स एव रजः कामरजस्तेन 'भोगरएणं'ति भोगो–गन्धो रसः स्पर्शश्च 'मित्तणाइणियगसयणसंबंधिपरिजणेणं'ति मित्राणि–सुहृदः ज्ञातयः–सजातीयाः निजका–भ्रातृपुत्रादयः स्वजना–मातुलादयः सम्बन्धिनः–श्वशुरादयः परिजनो–दासादिपरिकरः 'केवलं बोहिं बुज्झिहिइ'त्ति विशुद्धं सम्यग्दर्शनमनुभविष्यति तल्लप्स्यत इत्यर्थः, 'अणंते'त्यादि, 'अनन्तम्'–अनन्तार्थविषयत्वात् 'अनुत्तरं'सर्वोत्तमत्वात् 'निर्व्याघातं' कटकुड्यादिभिरप्रतिहतत्वात् 'निरावरणं'क्षायिकत्वात् 'कृत्स्नं'सकलार्थग्राहकत्वात् 'प्रतिपूर्णं' सकलस्वांशसमन्वितत्वात् 'केवलवरणाणदंसणे'त्ति केवलम्–असहायं अत एव वरं ज्ञानं च दर्शनं चेति ज्ञानदर्शनं ततः प्राक्पदाभ्यां कर्मधारयः, तत्र ज्ञानं–विशेषावबोधरूपमिति दर्शनं–सामान्यावबोधरूपमिति, 'हीलणाओ'त्ति जन्मकर्ममर्मोद्घट्टनानि 'निंदणाओ'त्ति मनसा कुत्सनानि 'खिंसणाओ'त्ति तान्येव लोकसमक्षं 'गरहणाओ'त्ति कुत्सनान्येव च गर्हणीयसमक्षाणि 'तज्जणाओ'त्ति शिरोऽङ्गुल्यादिस्फोरणतो ज्ञास्यसि रे जाल्मेत्यादिभणनानि 'तालणाओ'त्ति ताडनाः–चपेटादिदानानि 'परिभवणाओ'त्ति आभाव्यार्थपरिहारेण न्यक्क्रियाः, 'पवहणाओ'त्ति प्रव्यथना–भयोत्पादनानि 'उच्चावय'त्ति उत्कृष्टेतराः 'गामकंटय'त्ति इन्द्रियग्रामप्रतिकूला इति ' सिज्झिहिइ'त्ति सेत्स्यति–कृतकृत्यो भविष्यति 'बुज्झिहिइ'त्ति भोत्स्यते–समस्तार्थान् केवलज्ञानेन 'मुचि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंबड-परिव्राजकस्य कथा

हिइ'त्ति मोक्ष्यते सकलकर्मांशैः 'परिणिव्वाहिइ'त्ति परिनिर्वास्यति कर्मकृतसन्तापाभावेन शीतीभविष्यति, किमुक्तं भवति?–'सव्वदुक्खाणमंतं काहिइ'त्ति व्यक्तमेवेति १४ ॥ ४० ॥

से इमे गामागर जाव सण्णिवेसेसु पव्वइया समणा भवंति, तंजहा–आयरियपडिणीया उवज्झायपडिणीया कुलपडिणीया गणपडिणीया आयरियउवज्झायाणं अयसकारगा अवण्णकारगा अकित्तिकारगा बहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं मिच्छत्ताभिणिवेसेहि य अप्पाणं च परं च तदुभयं च वुग्गाहेमाणा वुप्पाएमाणा विहरित्ता बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणंति बहु० तस्स ठाणस्स अणालोइयअपडिक्कंता कालमासे कालं किच्चा उक्कोसेणं लंतए कप्पे देवकिब्बिसिएसु देवकिब्बिसियत्ताए उववत्तारो भवंति, तहिं तेसिं गती तेरससागरोवमाइं ठिती अणाराहगा सेसं तं चेव १५। से जे इमे सण्णिपंचिंदियतिरिक्खजोणिया पज्जत्तया भवंति, तंजहा–जलयरा खहयरा थलयरा, तेसि णं अत्थेगइयाणं सुभेणं परिणामेणं पसत्थेहिं अज्झवसाणेहिं लेसाहिं विसुज्झमाणाहिं तयावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं ईहापूहमग्गणगवेसणं करेमाणाणं सण्णीपुव्वजाईसरणे समुप्पज्जइ। तए णं ते समुप्पण्णजाइसरा समाणा सयमेव पंचाणुव्वयाइं पडिवज्जंति पडिवज्जित्ता बहूहिं सीलव्वयगुणवेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासेहिं अप्पाणं भावेमाणा बहूइं वासाइं आउयं पालेंति पालित्ता भत्तं पच्चक्खंति बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेयंति २ त्ता आलोइयपडिक्कंता समाहिपत्ता कालमासे कालं किच्चा उक्कोसेणं सहस्सारे कप्पे देवत्ताए उववत्तारो भवंति, तहिं तेसिं गती अट्ठारस सागरोवमाइं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ठिती पण्णत्ता, परलोगस्स आराहगा, सेसं तं चेव १६। से जे इमे गामागर जाव संनिवेसेसु आजीविका भवंति, तंजहा–दुघरंतरिया तिघरंतरिया सत्तघरंतरिया उप्पलवेंटिया घरसमुदाणिया विज्जुअंतरिया उट्टियासमणा, तेणं एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणा बहूइं वासाइं परियायं पाउणित्ता कालमासे कालं किच्चा उक्कोसेणं अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववत्तारो भवंति, तहिं तेसिं गती बावीसं सागरोवमाइं ठिती, अणाराहगा, सेसं तं चेव १७। से जे इमे गामागर जाव सण्णिवेसेसु पव्वइया समणा भवंति, तंजहा–अत्तुक्कोसिया परपरिवाइया भूइकम्मिया भुज्जो२ कोउयकारका, ते णं एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणा बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणंति पाउणित्ता तस्स ठाणस्स अणालोइयअपडिक्कंता कालमासे कालं किच्चा उक्कोसेणं अच्चुए कप्पे आभिओगिएसु देवेसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति, तहिं तेसिं गई बावीसं सागरोवमाइं ठिई परलोगस्स अणाराहगा, सेसं तं चेव १८। से जे इमे गामागर जाव सण्णिवेसेसु णिण्हगा भवंति, तंजहा–बहुरया १ जीवपएसिया २ अव्वत्तिया ३ सामुच्छेइया ४ दोकिरिया ५ तेरासिया ६ अबद्धिया ७ इच्चेते सत्त पवयणणिण्हगा केवल(लं)चरियालिंगसामण्णा मिच्छदिट्ठी बहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं मिच्छत्ताभिणिवेसेहि य अप्पाणं च परं च तदुभयं च वुग्गाहेमाणा वुप्पाएमाणा विहरित्ता बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणंति २ कालमासे कालं किच्चा उक्कोसेणं उवरिमेसु गेवेज्जेसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति, तहिं तेसिं गती एक्कत्तीसं सागरोवमाइं ठिती, परलोगस्स अणाराहगा, सेसं तं चेव १९। से जे इमे गामागर जाव सण्णि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वेसेसु मणुया भवंति, तंजहा–अप्पारंभा अप्पपरिग्गहा धम्मिया धम्माणुया धम्मिट्ठा धम्मक्खाई धम्मप्पलोइया धम्मपलज्जणा धम्मसमुदायारा धम्मेणं चेव वित्तिं कप्पेमाणा सुसीला सुव्वया सुप्पडियाणंदा साहूहिं एक्काओ पाणाइवायाओ पडिविरया जावज्जीवाए एक्काओ अपडिविरया एवं जाव परिग्गहाओ[1] एक्काओ कोहाओ माणाओ मायाओ लोहाओ पेज्जाओ कलहाओ अब्भक्खाणाओ पेसुण्णाओ परपरिवायाओ अरतिरतीओ मायामोसाओ मिच्छादंसणसल्लाओ पडिविरया जावज्जीवाए एक्काओ अपडिविरया, एक्काओ आरंभसमारंभाओ पडिविरया जावज्जीवाए एक्काओ अपडिविरया, एक्काओ करणकारावणाओ पडिविरया जावज्जीवाए एक्काओ अपडिविरया एगच्चाओ पयणपयावणाओ पडिविरया जावज्जीवाए एक्काओ पयणपयावणाओ अपडिविरया, एक्काओ कोट्टणपिट्टणतज्जणतालणवहबंधपरिकिलेसाओ पडिविरया जावज्जीवाए एक्काओ अपडिविरया, एक्काओ ण्हाणमद्दणवण्णगविलेवणसद्दफरिसरसरूवगंधमल्लालंकाराओ पडिविरया जावज्जीवाए एक्काओ अपडिविरया, जेयावण्णे तहप्पगारा सावज्जजोगोवहिया कम्मंता परपाणपरियावणकरा कज्जंति तओ जाव एक्काओ अपडिविरया तंजहा–समणोवासगा भवंति, अभिगयजीवाजीवा उवलद्धपुण्णपावा आसवसंवरनिज्जरकिरियाअहिगरणबंधमोक्खकुसला असहेज्जाओ देवासुरणागजक्खरक्खसकिन्नरकिंपुरिसगरुलगंधव्वमहोरगाइएहिं देवगणेहिं निग्गंथाओ पावयणाओ अणइक्कम-

१ प्रतिविरताप्रतिविरतत्वसूचनार्थमेष द्विकः.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४१]

दीप अनुक्रम [५१]

णिज्जा णिग्गंथे पावयणे णिस्संकिया णिक्कंखिया निव्वितिगिच्छा लद्धट्ठा गहियट्ठा पुच्छियट्ठा अभिगयट्ठा विणिच्छियट्ठा अट्ठिमिंजपेम्माणुरागरत्ता अयमाउसो ! णिग्गंथे पावयणे अट्ठे अयं परमट्ठे सेसे अणट्ठे ऊसियफलिहा अवंगुयदुवारा चियत्तंतेउरपरघरदारप्पवेसा चउद्दसट्ठमुद्दिट्ठपुण्णमासिणीसु पडिपुण्णं पोसहं सम्मं अणुपालेत्ता समणे णिग्गंथे फासुएसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं वत्थपडिग्गहकंबलपायपुंछणेणं ओसहभेसज्जेणं पडिहारएण य पीढफलगसेज्जासंथारएणं पडिलाभेमाणा विहरंति विहरित्ता भत्तं पच्चक्खंति ते बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेदिंति छेदित्ता आलोइयपडिक्कंता समाहिपत्ता कालमासे कालं किच्चा उक्कोसेणं अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववत्तारो भवंति, तहिं तेसिं गई बावीसं सागरोवमाइं ठिई आराहया सेसं तहेव २० । से जे इमे गामागर जाव सण्णिवेसेसु मणुआ भवंति, तंजहा–अणारंभा अपरिग्गहा धम्मिया जाव कप्पेमाणा सुसीला सुव्वया सुपडियाणंदा साहू सव्वाओ पाणाइवाआओ पडिविरया जाव सव्वाओ परिग्गहाओ पडिविरया सव्वाओ कोहाओ माणाओ मायाओ लोभाओ जाव मिच्छादंसणसल्लाओ पडिविरया सव्वाओ आरंभसमारंभाओ पडिविरया सव्वाओ करणकारावणाओ पडिविरया सव्वाओ पयणपयावणाओ पडिविरया सव्वाओ कुट्टणपिट्टणतज्जणतालणवहबंधपरिकिलेसाओ पडिविरया सव्वाओ ण्हाणमद्दणवण्णगविलेवणसद्दफरिसरसरूवगंधमल्लालंकाराओ पडिविरया जेयावण्णे तहप्पगारा सावज्जजोगोवहिया कम्मंता परपाणपरियावणकरा कज्जंति तओवि पडिविरया जावज्जीवाए से जहाणामए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अणगारा भवंति–ईरियासमिया भासासमिया जाव इणमेव णिग्गंथं पावयणं पुरओकाउं विहरंति तेसि णं भगवंताणं एएणं विहारेणं विहरमाणाणं अत्थेगइयाणं अणंते जाव केवलवरणाणदंसणे समुप्पज्जइ, ते बहूइं वासाइं केवलिपरियागं पाउणंति जाव पाउणित्ता भत्तं पच्चक्खंति भत्तं२ बहूइं भत्ताइं अणसणाइ छेदेंन्ति२त्ता जस्सट्ठाए कीरइ णग्गभावे० अंतं करंति, जेसिंपि य णं एगइयाणं णो केवलवरनाणदंसणे समुप्पज्जइ ते बहूइं वासाइं छउमत्थपरियागं पाउ णन्ति२ आबाहे उप्पण्णे वा अणुप्पण्णे वा भत्तं पच्चक्खंति, ते बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेदेन्ति २ त्ता जस्सट्ठाए कीरइ णग्गभावे जाव तमट्ठमाराहित्ता चरिमेहिं ऊसासणीसासेहिं अणंतं अणुत्तरं निव्वाघायं निरावरणं कसिणं पडिपुण्णं केवलवरणाणदंसणं उप्पाडिंति, तओ पच्छा सिज्झिहिन्ति जाव अंतं करेहिन्ति । एगच्चा पुण एगे भयंतारो पुव्वकम्मावसेसेणं कालमासे कालं किच्चा उक्कोसेणं सव्वट्ठसिद्धे महाविमाणे देवत्ताए उववत्तारो भवंति, तहिं तेसिं गई तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिई आराहगा, सेसं तं चेव २१ । से जे इमे गामागर जाव सण्णिवेसेसु मणुआ भवंति, तंजहा–सव्वकामविरया सव्वरागविरया सव्वसंगातीता सव्वसिणेहातिक्कंता अक्कोहा णिक्कोहा खीणक्कोहा एवं माणमायालोहा अणुपुव्वेणं अट्ठ कम्मपयडीओ खवेत्ता उप्पिं लोयग्गपइट्ठाणा हवंति (सू० ४१) ॥

'अयसकारग'त्ति पराक्रमकृता सर्वदिग्गामिनी वा प्रख्यातिर्यशः तत्प्रतिषेधादयशः 'अवण्णकारय'त्ति अवज्ञा–अनादरः अवर्णो वा–वर्णनाया अकरणं 'अकित्तिकारग'त्ति दानकृता एकदिग्गामिनी वा प्रसिद्धिः कीर्तिस्तन्निषेधादकीर्तिः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४१]

दीप अनुक्रम [५१]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

'असब्भावुब्भावणाहिं'ति असद्भावानाम्–अविद्यमानार्थानामुद्भावना–उत्प्रेक्षणानि असद्भावोद्भावनास्ताभिः 'मिच्छत्ताभिनिवेसेहि य'त्ति मिथ्यात्वे–वस्तुविपर्यासे मिथ्यात्वाद्वा–मिथ्यादर्शनाख्यकर्मणः सकाशाद् अभिनिवेशाः–चित्तावष्टम्भा मिथ्यात्वाभिनिवेशास्तैः 'वुग्गाहेमाण'त्ति व्युद्ग्राह्यमाणाः–कुग्रहे योजयन्तः 'वुप्पाएमाण'त्ति व्युत्पादयमानाः-असद्भावोद्भावनासु समर्थीकुर्वन्त इत्यर्थः, 'अणालोइयअपडिक्कंत'त्ति गुरूणां समीपे अकृतालोचनास्ततो दोषादनिवृत्ताश्चेत्यर्थः, एतेषां च विशिष्टश्रामण्यजन्यं देवत्वं प्रत्यनीकताजन्यं च किल्बिषिकत्वं, ते हि चण्डालप्राया एव देवमध्ये भवन्तीति १५ ॥ 'सण्णीपुव्वजाईसरणे'त्ति संज्ञिनां सतां या पूर्वजातिः–प्राक्तनो भवस्तस्या यत्स्मरणं तत्तथा १६ ॥ आजीविकागोशालकमतानुवर्तिनः 'दुघरंतरिय'त्ति एकत्र गृहे भिक्षां गृहीत्वा येऽभिग्रहविशेषाद् गृहद्वयमतिक्रम्य पुनर्भिक्षां गृह्णन्ति न निरन्तरमेकान्तरं वा ते द्विगृहान्तरिकाः, द्वे गृहे अन्तरं भिक्षाग्रहणे येषामस्ति ते द्विगृहान्तरिका इति निर्वचनम्, एवं त्रिगृहान्तरिकाः सप्तगृहान्तरिकाश्च 'उप्पलबेंटिय'त्ति उत्पलवृन्तानि नियमविशेषात् ग्राह्यतया भैक्षत्वेन येषां सन्ति ते उत्पलवृन्तिकाः 'घरसमुदाणिय'त्ति गृहसमुदानं–प्रतिगृहं भिक्षा येषां ग्राह्यतयाऽस्ति ते गृहसमुदानिकाः 'विज्जुयंतरिय'त्ति विद्युति सत्यां अन्तरं भिक्षाग्रहणस्य येषामस्ति ते विद्युदन्तरिकाः, विद्युत्सम्पाते भिक्षां नाटन्तीति भावार्थः, 'उट्ठियासमण'त्ति उष्ट्रिका–महाश्रृण्मयो भाजनविशेषस्तत्र प्रविष्टा ये श्राम्यन्ति–तपस्यन्तीत्युष्ट्रिकाश्रमणाः, एषां च पदामा मुत्प्रेक्षया व्याख्या कृतेति १७ । 'अत्तुक्कोसिय'त्ति आत्मोत्कर्षोऽस्ति येषां ते आत्मोत्कर्षिकाः, 'परपरिवाइय'त्ति परेषां परिवादो-निन्दाऽस्ति येषां ते परपरिवादिकाः'भूइकम्मिय'त्ति भूतिकर्म–ज्वरितानामुपद्रवरक्षार्थं भूतिदानं तदस्ति येषां ते भूतिक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मिकाः,'भुज्जो भुज्जो कोउगकारग'त्ति भूयो भूयः–पुनः पुनः कौतुकं–सौभाग्यादिनिमित्तं परेषां स्नपनादि तत्कर्तारः कौतुककारकाः 'आभिओगिएसु'त्ति अभियोगे–आदेशकर्मणि नियुक्ता आभियोगिका आदेशकारिण इत्यर्थः, एतेषां च देवत्वं चारित्रादाभियोगिकत्वं चात्मोत्कर्षादेरिति १८। बहुषु समयेषु रता–आसक्ताः बहुभिरेव समयैः कार्यं निष्पद्यते नैकसमयेनेत्येवंविधवादिनो बहुरताः–जमालिमतानुपातिनः, 'जीवपएसि'त्ति जीवः प्रदेश एवैको येषां मतेन ते जीवप्रदेशाः, एकेनापि प्रदेशेन न्यूनो जीवो न भवत्यतो येनैकेन प्रदेशेन पूर्णः सन् जीवो भवति स एवैकः प्रदेशो जीवो भवतीत्येवंविधवादिनस्तिष्यगुप्ताचार्यमताविसंवादिनः 'अवत्तिय'त्ति अव्यक्तं समस्तमिदं जगत् साध्वादिविषये श्रमणोऽयं देवो वाऽयमित्यादिविविक्तप्रतिभासोदयाभावात्ततश्चाव्यक्तं वस्त्विति मतमस्ति येषां ते अव्यक्तिकाः, अविद्यमाना वा साध्वादिव्यक्तिरेषामित्यव्यक्तिकाः आषाढाचार्यशिष्यमतान्तःपातिनः 'सामुच्छेइय'त्ति नारकादिभावानां प्रतिक्षणं समुच्छेदं–क्षयं वदन्तीति सामुच्छेदिकाः अश्वमित्रमतानुसारिणः 'दोकिरिय'त्ति द्वे क्रिये–शीतवेदनोष्णवेदनादिस्वरूपे एकत्र समये जीवोऽनुभवतीत्येवं वदन्ति ये ते द्वैक्रिया गङ्गाचार्यमतानुवर्तिनः 'तेरासिय'त्ति त्रीन् राशीन् जीवाजीवनोजीवरूपान् वदन्ति ये ते त्रैराशिकाः रोहगुप्तमतानुसारिणः, 'अबद्धिय'त्ति अबद्धं सत्कर्म कञ्चुकवत्पार्श्वतः स्पृष्टमात्रं जीवं समनुगच्छन्तीत्येवं वदन्तीत्यबद्धिकाः गोष्ठामाहिलमतावलम्बिनः, उपलक्षणं चैतत् सक्रियावर्तिव्यापन्नदर्शनानामन्येषामपीति, 'पवयणनिण्हय'त्ति प्रवचनं–जिनागमं निह्नवते–अपलपन्त्यन्यथा तदेकदेशस्याभ्युपगमात्ते प्रवचननिह्नवकाः, केवलं 'चरियालिंगसामण्णा मिच्छादिट्ठी'त्ति मिथ्यादृष्टयस्ते विपरीतबोधाः नवरं चर्यया–भिक्षाटनादिक्रियया लिङ्गेन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

च–रजोहरणादिना सामान्याः–साधुतुल्या इति १९। 'धम्मिय'त्ति धर्मेण–श्रुतचारित्ररूपेण चरन्ति ये ते धार्मिकाः, कुत एतदेवमित्यत आह–'धम्माणुअ'त्ति धर्मं–श्रुतरूपमनुगच्छन्ति ये ते धर्मानुगाः, कुत एतदेवमित्यत आह–'धम्मिट्ठ'त्ति धर्मः श्रुतरूप एवेष्टो–वल्लभः पूजितो वा येषां ते धर्मेष्टाः धर्मिणां वेष्टाः धर्मीष्टाः अथवा धर्मोऽस्ति येषां ते धर्मिणः त एव चान्येभ्योऽतिशयवन्तो धर्मिष्ठाः, अत एव 'धम्मक्खाइ'त्ति धर्ममाख्यान्ति भव्यानां प्रतिपादयन्तीति धर्माख्यायिनः धर्माद्वा ख्यातिः–प्रसिद्धिर्येषां ते धर्मख्यातयः, 'धम्मपलोइय'त्ति धर्मं प्रलोकयन्ति–उपादेयतया प्रेक्षन्ते पाषण्डिषु वा गवेषयन्तीति धर्मप्रलोकिनः, धर्मगवेषणानन्तरं वा 'धम्मपलज्जण'त्ति धर्मे प्ररज्यन्ते–आसज्यन्ते ये ते धर्मप्ररज्यनाः, ततश्च 'धर्मसमुदाचार'त्ति धर्मरूपचारित्रात्मकः समुदाचारः–सदाचारः सप्रमोदो वाऽऽचारो येषां ते धर्मसमुदाचाराः, अत एव 'धम्मेण चेव वित्तिं कप्पेमाण'त्ति धर्मेणैव–चारित्राविरोधेन श्रुताविरोधेन वा वृत्तिं–जीविकां कल्पयन्तः–कुर्वाणा विहरन्तीति योगः, 'सुव्वय'त्ति सद्व्रताः शोभनचित्तवृत्तिवितरणा वा, 'सुप्पडियाणंदा साहूहिं'ति सुष्ठु प्रत्यानन्दः–चित्ताह्लादो येषां ते सुप्रत्यानन्दाः साधुषु–विषयभूतेषु अथवा साहूहिंति उत्तरवाक्ये सम्बध्यते, ततश्च साधुभ्यः सकाशात् साध्वन्तिके इत्यर्थः, 'एगच्चाओ पाणाइवायाओ'त्ति एकस्मात् न सर्वस्मात् पाठान्तरे 'एगइयाओ'त्ति तत्र एकक एव एककिकः तस्मादेककिकात्, इत इदं सूत्रं प्रायः प्रागुक्तार्थं नवरं 'मिच्छादंसणसल्लाओ'त्ति इह मिथ्यादर्शनं–तज्जन्यान्ययूथिकवन्दनादिका क्रिया ततो भावतो विरताः राजाभियोगादिभिस्त्वाकारैरविरता इति, 'कुट्टणपिट्टणतज्जणतालणवहबंधपरिकिलेसाओ'त्ति कुट्टनं–खदिरादेरिव छेदविशेषकरणं पिट्टनं–वस्त्रादेरिव मुद्गरादिना हननं तर्जनं–परं प्रति ज्ञास्यसि रे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जाल्मेत्यादिभणनं ताडनं–चपेटादिना हननं तालनं वा गृहद्वारादेस्तालकेन स्थगनं वधो–मारणं बन्धो–रज्ज्वादिना यन्त्रणं परिक्लेशो–बाधोत्पादनं 'सावज्जजोगोवहिय'त्ति सावद्ययोगा औपधिका–मायाप्रयोजनाः कषायप्रत्यया इत्यर्थः उपकरणप्रयोजना वा ये ते तथा 'कम्मंत'त्ति व्यापारांशाः, वाचनान्तरे 'सावज्जा अबोहिया कम्मंत'त्ति अत्र अबोधिकाः अविद्यमानबोधिका वेति, एवं सामान्येनोक्तानां मनुष्याणां विशेषनिर्देशार्थमाह–'तंजह'त्ति त एते इत्यर्थः 'से जहानामए'त्ति क्वचित्तत्राप्ययमेवार्थः २० । 'आबाहे'त्ति रोगादिबाधायां 'एगच्चा पुण एगे भयंतारो'त्ति एका–असाधारणगुणत्वाद् अद्वितीया मनुजभवभाविनी वा अर्चा–बोन्दिस्तनुर्येषां ते एकार्चाः, पुनःशब्दः पूर्वोक्तार्थापेक्षया उत्तरवाक्यार्थस्य विशेषद्योतनार्थः, एके–केवलज्ञानभाजनेभ्योऽपरे 'भयंतारो'त्ति भक्तारः–अनुष्ठानविशेषस्य सेवयितारो भयत्रातारो वा, अनुस्वारस्त्वलाक्षणिकः, 'पुव्वकम्मावसेसेण' क्षीणावशेषकर्मणा देवतयोत्पत्तारो भवन्तीति योगः २१ । 'सव्वकामविरय'त्ति सर्वकामेभ्यः–समस्तशब्दादिविषयेभ्यो विरता–निवृत्तास्तेषु वा विरया–विगतौत्सुक्या ये ते तथा, यतः 'सव्वरागविरय'त्ति सर्वरागात्–समस्ताद्विषयाभिमुख्यहेतुभूतात्मपरिणामविशेषाद्विरता–निवृत्ता ये ते तथा, 'सव्वसंगातीत'त्ति सर्वस्मात्सङ्गात्–मातापित्रादिसम्बन्धादतीताः–अपक्रान्ताः सर्वसङ्गातीताः यतः 'सव्वसिणेहाइक्कंत'त्ति सर्वस्नेहं–मात्रादिसम्बन्धहेतुं अतिक्रान्ताः–त्यक्तवन्तो ये ते सर्वस्नेहातिक्रान्ताः 'अकोह'त्ति क्रोधविफलीकरणात् 'निक्कोह'त्ति उदयाभावात्, एतदेव कुत इत्याह–'खीणकोह'त्ति क्षीणक्रोधमोहनीयकर्माण इत्यर्थः, एकार्था वैते शब्दाः २२ ॥ ४१ ॥

अणगारे णं भंते ! भाविअप्पा केवलिसमुग्घाएणं समोहणित्ता केवलकप्पं लोयं फुसित्ता णं चिट्ठइ ?,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हंता चिट्ठइ, से णूणं भंते ! केवलकप्पे लोए तेहिं णिज्जरापोग्गलेहिं फुडे ?, हंता फुडे, छउमत्थे णं भंते ! मणुस्से तेसिं णिज्जरापोग्गलाणं किंचि वण्णेणं वण्णं गंधेणं गंधं रसेणं रसं फासेणं फासं जाणइ पासइ ?, गोयमा !, णो इणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–छउमत्थे णं मणुस्से तेसिं णिज्जरापोग्गलाणं णो किंचि वण्णेणं वण्णं जाव जाणइ पासइ ?, गोयमा, अयं णं जंबुद्दीवे २ सव्वदीवसमुद्दाणं सव्वब्भंतरए सव्वखुड्डाए वट्टे तेल्लपूयसंठाणसंठिए वट्टे रहचक्कवालसंठाणसंठिए वट्टे पुक्खरकण्णियासंठाणसंठिए वट्टे पडिपुण्णचंदसंठाणसंठिए एक्कं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं तिण्णि जोयणसयसहस्साइं सोलससहस्साइं दोण्णि य सत्तावीसे जोयणसए तिण्णि य कोसे अट्ठावीसं च धणुसयं तेरस य अंगुलाइं अद्धंगुलियं च किंचि विसेसाहिए परिक्खेवेणं पण्णत्ते, देवे णं महिड्ढीए महज्जुइए महब्बले महाजसे महासुक्खे महाणुभावे सविलेवणं गंधसमुग्गयं गिण्हइ स २ तं अवदालेइ तं २ जाव इणामेवत्तिकट्टु केवलकप्पं जंबूदीवं तिहिं अच्छराणिवाएहिं तिसत्तखुत्तो अणुपरिअट्टित्ता णं हव्वमागच्छेज्जा, से णूणं गोयमा ! से केवलकप्पे जंबूदीवे २ तेहिं घाणपोग्गलेहिं फुडे ?, हंता फुडे, छउमत्थे णं गोयमा ! मणुस्से तेसिं घाणपोग्गलाणं किंचि वण्णेणं वण्णं जाव जाणंति पासंति ?, भगवं ! णो इणट्ठे समट्ठे, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–छउमत्थे णं मणुस्से तेसिं णिज्जरापोग्गलाणं नो किंचि वण्णेणं वण्णं जाव जाणइ पासइ, एसुहुमा णं ते पोग्गला पण्णत्ता, समणाउसो ! सव्वलोयंपि य णं ते फुसित्ता णं चिट्ठंति । कम्हा णं भंते ! केवली समो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हणंति ? कम्हा णं केवली समुग्घायं गच्छंति ?, गोयमा ! केवलीणं चत्तारि कम्मंसा अपलिक्खीणा भवंति, तंजहा–वेयणिज्जं आउयं णामं गुत्तं, सव्वबहुए से वेयणिज्जे कम्मे भवइ, सव्वत्थोवे से आउए कम्मे भवइ, विसमं समं करेइ बंधणेहिं ठिईहि य, विसमसमकरणयाए बंधणेहिं ठिईहि य एवं खलु केवली समोहणंति एवं खलु केवली समुग्घायं गच्छंति । सव्वेवि णं भंते ! केवली समुग्घायं गच्छंति ?, णो इणट्ठे समट्ठे, 'अकित्ता णं समुग्घायं, अणंता केवली जिणा । जरामरणविप्पमुक्का, सिद्धिं वरगइं गया ॥ १ ॥' कइसमए णं भंते ! आउज्जीकरणे पण्णत्ते ?, गोयमा ! असंखेज्जसमइए अंतोमुहुत्तिए पण्णत्ते । केवलिसमुग्घाए णं भंते ! कइसमइए पण्णत्ते ?, गोयमा ! अट्ठसमइए पण्णत्ते, तंजहा–पढमे समए दंडं करेइ बिइए समए कवाडं करेइ तईए समए मंथं करेइ चउत्थे समए लोयं पूरेइ पंचमे समए लोयं पडिसाहरइ छट्ठे समए मंथं पडिसाहरइ सत्तमे समए कवाडं पडिसाहरइ अट्ठमे समए दंडं पडिसाहरइ पडिसाहरित्ता तओ पच्छा सरीरत्थे भवइ । सेणं भंते ! तहा समुग्घायं गए किं मणजोगं जुंजइ ? वयजोगं जुंजइ ? कायजोगं जुंजइ ?, गोयमा ! णो मणजोगं जुंजइ णो वयजोगं जुंजइ कायजोगं जुंजइ, कायजोगं जुंजमाणे किं ओरालियसरीरकायजोगं जुंजइ ? ओरालियमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ ? वेउव्वियसरीरकायजोगं जुंजइ ? वेउव्वियमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ ? आहारसरीरकायजोगं जुंजइ ? आहारसरीरमिस्सकायजोगं जुंजइ ?, कम्मासरीरकायजोगं जुंजइ ?, गोयमा ! ओरालियसरीरकायजोगं जुंजइ, ओरालियमिस्ससरीरकायजोगंपि जुंजइ, णो वेउव्वियसरीरका-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४२] + गाथा

दीप अनुक्रम [५२-५४]

यजोगं जुंजइ णो वेउव्वियमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ णो आहारगसरीरकायजोगं जुंजइ णो आहारगमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ कम्मसरीरकायजोगंपि जुंजइ, पढमट्ठमेसु समएसु ओरालियसरीरकायजोगं जुंजइ बिइयछट्ठसत्तमेसु समएसु ओरालियमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ तईयचउत्थपंचमेहिं कम्मासरीरकायजोगं जुंजइ । से णं भंते ! तहा समुग्घायगए सिज्झिहिइ बुज्झिहिइ मुच्चिहिइ परिनिव्वाहिइ सव्वदुक्खाणमंतं करेइ ?, णो इणट्ठे समट्ठे, से णं तओ पडिनियत्तइ तओ पडिनियत्तित्ता इहमागच्छइ २ त्ता तओ पच्छा मणजोगंपि जुंजइ वयजोगंपि जुंजइ कायजोगंपि जुंजइ मणजोगं जुंजमाणे किं सच्चमणजोगं जुंजइ मोसमणजोगं जुंजइ सच्चामोसमणजोगं जुंजइ असच्चामोसमणजोगं जुंजइ ?, गोयमा ! सच्चमणजोगं जुंजइ णो मोसमणजोगं जुंजइ णो सच्चामोसमणजोगं जुंजइ असच्चामोसमणजोगंपि जुंजइ, वयजोगं जुंजमाणे किं सच्चवइजोगं जुंजइ मोसवइजोगं जुंजइ [किं] सच्चामोसवइजोगं जुंजइ असच्चामोसवइजोगं जुंजइ ?, गोयमा ! सच्चवइजोगं जुंजइ णो मोसवइजोगं जुंजइ णो सच्चामोसवइजोगं जुंजइ असच्चामोसवइजोगंपि जुंजइ, कायजोगं जुंजमाणे आगच्छेज्ज वा चिट्ठेज्ज वा णिसीएज्ज वा तुयट्टेज्ज वा उल्लंघेज्ज वा पल्लंघेज्ज वा उक्खेवणं वा अवक्खेवणं वा तिरियक्खेवणं वा करेज्जा पाडिहारियं वा पीढफलहगसेज्जसंथारगं पच्चप्पिणेज्जा । (सू० ४२)

तदेवमुक्तो विवक्षितोपपातः, अधुनाऽनन्तरोक्तसिद्धोपपातसम्बन्धेन तत्कारणभूतसमुद्घातादिवक्तव्यतां दर्शयन्नाह– 'अणागारे ण'मित्यादि व्यक्तं, नवरं 'केवलिसमुग्घाएणं'ति न कषायादिसमुद्घातेन 'समोहए'त्ति समवहतो–विक्षिप्त-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रदेशः 'केवलकप्पं'ति केवलज्ञानकल्पं सम्पूर्णमित्यर्थः, वृद्धव्याख्या तु केवलः–सम्पूर्णः कल्पत इति कल्पः–स्वकार्यकरण-समर्थः वस्तुरूप इतियावत्, केवलश्चासौ कल्पश्चेति समासोऽतस्तं 'निज्जरापोग्गलेहिं'ति निर्जराप्रधानाः पुद्गला निर्जरा-पुद्गलाः, जीवेनाकर्मतामापादिताः कर्मप्रदेशा इत्यर्थः, अतस्तैर्निर्जरापुद्गलैः 'फुडे'त्ति स्पृष्टो व्याप्तः, 'छउमत्थे णं'ति छद्मस्थो निरतिशयज्ञानयुक्त इह प्रतिपत्तव्यो यतः छद्मस्थोऽपि विशिष्टावधिज्ञानयुक्तो निर्जरापुद्गलान् जानात्येव 'रूवगयं(चेव)लहइ सव्व'मिति वचनात् 'वण्णेण वण्णं'ति वर्णेन–वर्णतया याथात्म्येनेत्यर्थः वर्ण–कालवर्णादिकं जानाति विशेषतः पश्यति सामान्यतः, 'णो इणट्ठे'त्ति नायमर्थः 'समट्ठे'त्ति समर्थः–सङ्गतः, कर्मपुद्गलानां सातिशयज्ञानगम्यत्वात्, 'सव्वब्भंतराए'त्ति सर्वाभ्यन्तरकः 'सव्वखुड्डाए'त्ति सर्वक्षुल्लकः, दीर्घत्वं चात्र प्राकृतत्वात्, 'वट्टे'त्ति वृत्तः, वृत्तश्च मोदकवद् घनवृत्तोऽपि स्यादतस्तद्व्यवच्छेदेन प्रतरवृत्ततामिधानार्थमाह–'तेल्लापूयसंठाणसंठिए'त्ति उपलक्षणत्वादस्य घृतापूपादेरप्यत्र ग्रहः, 'रह-चक्कवाल'त्ति चक्रवालं–मण्डलं मण्डलत्वधर्मयोगाच्च रथचक्रमपि रथचक्रवालं 'पुक्खरकण्णिय'त्ति पद्मबीजकोशः, 'जाव इणामेवत्तिकट्टु'त्ति यावदिति परिमाणार्थस्तावदित्यस्य गम्यमानस्य सव्यपेक्षः, 'इणामेव'त्ति इदं–गमनम्, एवमिति–चप्पु-टिकारूपशीघ्रत्वावेदकहस्तव्यापारोपदर्शनपरः, अनुस्वाराश्रवणं च प्राकृतत्वात्, द्विर्वचनं च शीघ्रतातिशयोपदर्शनपरम्, इतिरुपप्रदर्शनार्थः, कृत्वा–विधाय 'तिहिं अच्छरानिवाएहिं'ति तिसृभिश्चप्पुटिकाभिरित्यर्थः 'तिस्सत्तखुत्तो'त्ति त्रिगुणाः सप्त त्रिसप्त त्रिसप्तवाराख्विःसप्तकृत्वः एकविंशतिवारा इत्यर्थः, 'हवं'ति शीघ्रं 'घाणपोग्गलेहिं'ति गन्धपुद्गलैः, इह स्थाने यावदित्यस्य सव्यपेक्षस्तावदित्ययंशब्दो दृश्यः, 'एसुहुमाणं'ति एतत्सूक्ष्माः, कोऽर्थः ? एवं नाम सूक्ष्मास्ते यथा तांश्छद्म-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्थो वर्णादिभिर्न जानातीति 'समणाउस्सो'त्ति हे श्रमण ! हे आयुष्मन् !, अथवा श्रमणश्चासावायुष्माँश्चेति समासस्तस्यामन्त्रणं हे श्रमणायुष्मन् !, यथा अतिसूक्ष्मत्वाद्गन्धपुद्गलान्न जानातीत्येवं निर्जरापुद्गलानपीति दृष्टान्तोपनयः । 'कम्हा णं भंते ! केवली समोहणंति'त्ति समवघ्नन्ति–प्रदेशान् दिक्षु प्रक्षिपन्ति, एतदेव सुखप्रतिपत्तये वाक्यान्तरेणाह–'कम्हा णं केवली समुग्घायं गच्छंति'त्ति, 'अपलिक्खीणे'त्ति स्थितेरक्षयात् 'अवेइया अनिज्जिण्ण'त्ति क्वचिद्दृश्यते, तत्र अवेदितास्तद्रसस्याननुभूतत्वात् अनिर्जीर्णाः–तत्प्रदेशानां जीवप्रदेशेभ्योऽपरिशटनात् 'बहुए से वेयणिज्जे'त्ति से–तस्य केवलिनो यः समुद्घातं प्रतिपद्यते न पुनः सर्वस्यैव, केषाञ्चिदकृतसमुद्घातानामपि समभावस्येष्टत्वात् 'बंधणेहिं'ति प्रदेशबन्धानुभागबन्धावाश्रित्येत्यर्थः, 'ठिईहि य'त्ति स्थितिबन्धविशेषानाश्रित्येत्यर्थः, 'विसमसमकरणयाए बन्धणेहिं ठिईहि य एवं खलु केवली समोहणंति' इहैवमक्षरघटना–एवं खलु विषमसमकरणाय बन्धनादिभिः केवलिनः समुद्घातयन्तीति 'आवज्जीकरणे'त्ति आवर्जीकरणम्–उदीरणावलिकायां कर्मप्रक्षेपव्यापाररूपं, तच्च केवलिसमुद्घातं प्रतिपद्यमानः प्रथममेव करोति । 'पढमसमए दंडं करेइ'त्ति प्रथमसमय एव स्वदेहविष्कम्भमूर्ध्वमधश्चायतमुभयतोऽपि लोकान्तगामिनं जीवप्रदेशसङ्घातं दण्डस्थानीयं केवली ज्ञानाभोगतः करोति, 'बिइए कवाडं करेइ'त्ति द्वितीयसमये तु तमेव दण्डं पूर्वापरदिग्द्वयप्रसारणात्पार्श्वतो लोकान्तगामिकपाटमिव कपाटं करोति, 'मंथं'ति तृतीये समये तदेव कपाटं दक्षिणोत्तरदिग्द्वयप्रसारणान्मथिसदृशं मन्थानं करोति लोकान्तप्रापिणमेव, 'लोगं पूरेइ'त्ति चतुर्थसमये सह लोकनिष्कुटैर्मन्थान्तराणि पूरयति, ततश्च सकलोलोकः पूरितो भवति, 'लोयं पडिसाहरइ'त्ति पञ्चमे समये मन्थान्तरापूरकत्वेन ये लोकपूरकाः प्रदेशास्ते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लोकशब्देन उच्यन्ते, अतो मन्थान्तरालपूरकान् प्रदेशान् संहरति मथिस्थो भवतीतियावत्, 'मंथं पडिसाहरइ'त्ति मथ्याकारव्यवस्थापितप्रदेशान् संहृत्य कपाटस्थो भवतीतियावत्, 'कवाडं पडिसाहरइ'त्ति सप्तमसमये कपाटाकारधारकप्रदेशसंहरणाद्दण्डस्थो भवतीत्यर्थः, 'अट्ठमे समए दंडं पडिसाहरइ, साहरित्ता सरीरत्थे भवइ'त्ति, इह यद्यपि संहृत्येत्यनेन संहरणस्य पूर्वकालता शरीरस्थभवनस्य च पश्चात्कालता शब्दवृत्त्या प्रतीयते, तथाऽप्यर्थवृत्त्या न कालभेदोऽस्ति, द्वयोरप्यष्टमसमयभावित्वेनोक्तत्वादिति । 'नो मणजोगं नो वयजोगं जुंजइ'त्ति प्रयोजनाभावात्, काययोगचिन्तायां सप्तविधः काययोगः, तत्र–'ओरालियसरीरकायजोगं'ति योगो–व्यापारः स च वागादेरप्यस्तीति कायेन विशेषितत्वात्काययोगः स चानेकधेति औदारिकशरीरेण विशिष्यते, तत्रोदारैः–शेषपुद्गलापेक्षया स्थूलैः पुद्गलैर्निर्वृत्तमित्यौदारिकं, तच्च तच्छरीरं चेति समासस्तस्य काययोगऔदारिकशरीरकाययोगः, 'ओरालियमीससरीरकायजोगं'ति औदारिकमिश्रकं नाम यच्छरीरं तस्य यः काययोगः स यथा, स च कार्मणौदारिकयोर्युगपद्व्यापाररूप औदारिकशरीरिणामुत्पत्तिकाले केवलिसमुद्घाते वा, औदारिकवैक्रिययोरौदारिकाहारकयोर्वा युगपद्व्यापाररूपः, औदारिकशरीरिणां वैक्रियकरणकाले आहारककरणकाले चेति, 'वेउव्वियसरीरकायजोगं'ति पूर्ववन्नवरं विक्रिया प्रयोजनमस्येति वैक्रियं–सूक्ष्मतरविशिष्टकार्यकरणक्षमपुद्गलनिर्वृत्तमित्यर्थः, अयं च वैक्रियलब्धिमतां बादरवायुकायिकपञ्चेन्द्रियतिर्यग्मनुष्याणां देवनारकाणां च स्यादिति । 'वेउव्वियमिस्ससरीरकायजोगं'ति वैक्रियं सन्मिश्रं यत्कार्मणादिना तद्वैक्रियमिश्रं तच्च तच्छरीरं चेति समासस्तस्य काययोगो वैक्रियमिश्रशरीरकाययोगः, स च वैक्रियकार्मणयोर्युगपद्व्यापाररूपः, स च देवनारकाणामुत्पत्तिकाले यावत् वैक्रि-

॥११०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यमपरिपूर्णमिति, वैक्रियलब्धिमतां वा तिर्यग्मनुष्याणां विहितवैक्रियशरीराणां तत्त्यागेनौदारिकं गृह्णतामिति,'आहारगसरीरकायजोगं'ति प्राग्वत् नवरम्–आहारका–विशिष्टतरपुद्गलास्तन्निष्पन्नमाहारकम्[1], अयं च चतुर्दशपूर्वधरस्य समुत्पन्नविशिष्टप्रयोजनस्य कृताहारकशरीरस्य भवतीति,'आहारगमीससरीरकायजोगं'ति आहारकं सन्मिश्रं यदौदारिकेण तदाहारकमिश्रं तच्च तच्छरीरं चेति, शेषस्तथैव, अयं चाहारकौदारिकयोर्युगपद्व्यापाररूपः, स च कृताहारकस्य तत्त्यागेनौदारिकं गृह्णतो भवतीति, 'कम्मगसरीरकायजोगं'ति प्राग्वत्, अयं चापान्तरालगतौ केवलिसमुद्घाते वा स्यादिति, 'पढमट्ठमेसु समएसु' इत्यादेरयमभिप्रायः–जीवप्रदेशानां दण्डतया प्रक्षेपे संहारे च प्रथमाष्टमसमययोरौदारिककाययव्यापारादौदारिककाययोग एव, द्वितीयषष्ठसप्तमसमयेषु पुनः प्रदेशानां प्रक्षेपसंहारयोरौदारिके तस्माच्च बहिः कार्मणे वीर्यपरिस्पन्दादौदारिककार्मणमिश्रः, तृतीयचतुर्थपञ्चमेषु तु बहिरौदारिकात्कार्मणकाययव्यापारादसहायः कार्मणयोग एव, तन्मात्रचेष्टनाद्, इह च यद्यपि मन्थकरणे कपाटन्यायेनौदारिकस्यापि व्यापारः सम्भाव्यते तथाऽपीत एव वचनादसौ कथञ्चिन्नास्तीति मन्तव्यमिति। 'सच्चमणजोगं जुंजइ, असच्चामोसामणजोगंपि जुंजइ'त्ति मनःपर्यायज्ञानिना अनुत्तरसुरेण वा मनसा पृष्टो मनसैव अस्ति जीव एवं कुर्वित्यादिकमुत्तरं यच्छन्, 'सच्चवइजोगं'ति जीवादिपदार्थान् प्ररूपयन् 'असच्चामोसावयजोगं'ति आमन्त्रणादिष्विति, समुद्घातान्निवृत्तश्चान्तर्मुहूर्तेन योगनिरोधं करोति २२ ॥ ४२ ॥

से णं भंते ! तहा सजोगी सिज्झिहिइ जाव अंतं करेहिइ ?, णो इणट्ठे समट्ठे, से णं पुव्वामेव संण्णिस्स

१ विशिष्टान्तरपुद्गलाः प्र०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

पंचिंदियस्स पज्जत्तगस्स जहण्णजोगस्स हेट्ठा असंखेज्जगुणपरिहीणं पढमं मणजोगं निरुंभइ, तयाणंतरं च णं बिंदियस्स पज्जत्तगस्स जहण्णजोगस्स हेट्ठा असंखेज्जगुणपरिहीणं बिइयं वइजोगं निरुंभइ, तयाणंतरं च णं सुहुमस्स पणगजीवस्स अपज्जत्तगस्स जहण्णजोगस्स हेट्ठा असंखेज्जगुणपरिहीणं तईयं कायजोगं णिरुंभइ, से णं एएणं उवाएणं पढममणजोगं णिरुंभइ मणजोगं णिरुंभित्ता वयजोगं णिरुंभइ वयजोगं णिरुंभित्ता कायजोगं णिरुंभइ कायजोगं निरुंभित्ता जोगनिरोहं करेइ, जोगनिरोहं करेत्ता अजोगत्तं पाउणंति, अजोगत्तं पाउणित्ता इसिंहस्सपंचक्खरउच्चारणद्धाए असंखेज्जसमइयं अंतोमुहुत्तियं सेलेसिं पडिवज्जइ, पुव्वरइयगुणसेढीयं च णं कम्मं तीसे सेलेसिमद्धाए असंखेज्जाहिं गुणसेढीहिं अणंते कम्मंसे खवेति वेयणिज्जाउयणामगुत्ते, इचेते चत्तारि कम्मंसे जुगवं खवेइ वेदणिज्जा २ओरालियतेयाकम्माइं सव्वाहिं विप्पयहणाहिं विप्पजहइ, ओरालियतेयाकम्माइं सव्वाहिं विप्पयहणाहिं विप्पयहित्ता उज्जूसेढीपडिवन्ने अफुसमाणगई उड्ढं एक्कसमएणं अविग्गहेणं गंता सागारोवउत्ते सिज्झिहिइ । ते णं तत्थ सिद्धा हवंति सादीया अपज्जवसिया असरीरा जीवघणा दंसणनाणोवउत्ता निट्ठियट्ठा निरेयणा नीरया णिम्मला वितिमिरा विसुद्धा सासयमणागयद्धं कालं चिट्ठंति । से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–ते णं तत्थ सिद्धा भवंति सादीया अपज्जवसिया जाव चिट्ठंति?, गोयमा ! से जहाणामए बीयाणं अग्गिदड्ढाणं पुणरवि अंकुरुप्पत्ती ण भवइ, एवामेव सिद्धाणं कम्मबीए दड्ढे पुणरवि जम्मुप्पत्ती न भवइ, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—ते णं तत्थ सिद्धा भवंति सादीया अप-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिद्ध एवं सिद्ध्-पद प्राप्ति-विषयकः अधिकारः

प्रत सूत्रांक [४३] दीप अनुक्रम [५५]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

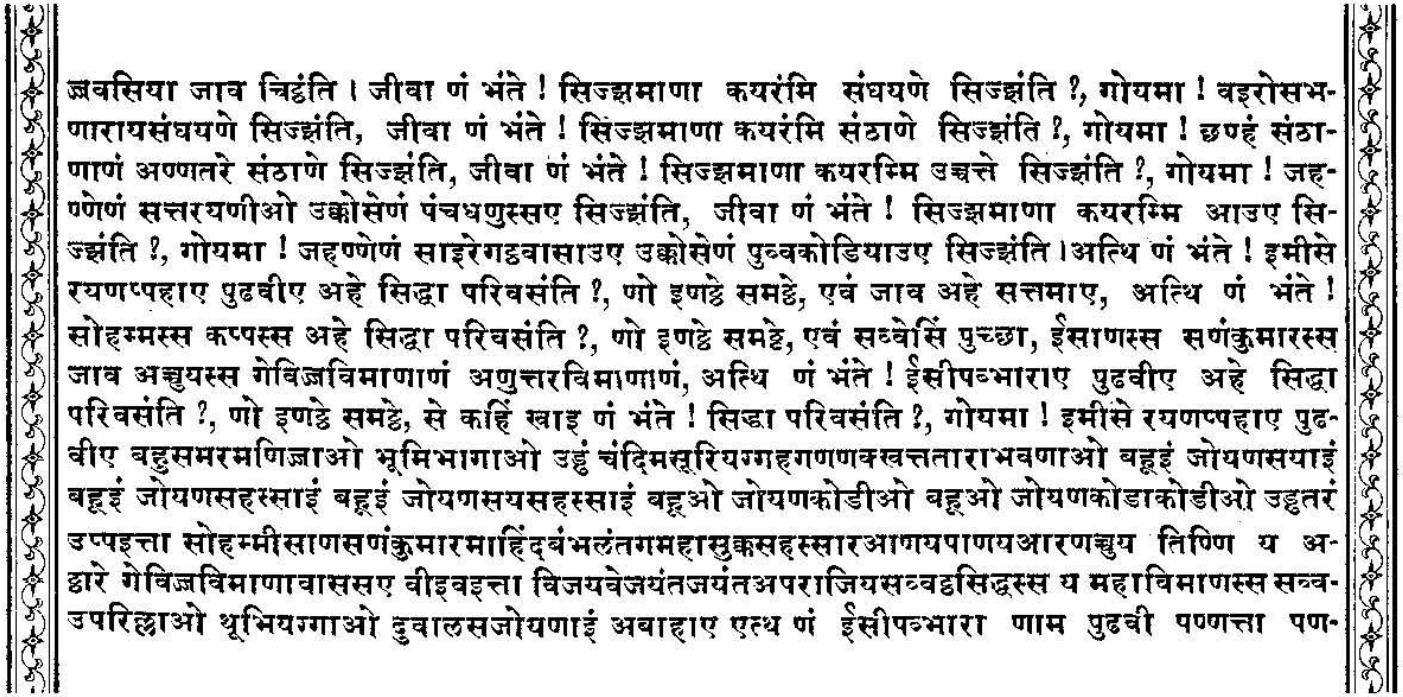

ज्झवसिया जाव चिट्ठंति । जीवा णं भंते ! सिज्झमाणा कयरंमि संघयणे सिज्झंति ?, गोयमा ! वइरोसभणारायसंघयणे सिज्झंति, जीवा णं भंते ! सिज्झमाणा कयरंमि संठाणे सिज्झंति ?, गोयमा ! छण्हं संठाणाणं अण्णतरे संठाणे सिज्झंति, जीवा णं भंते ! सिज्झमाणा कयरम्मि उच्चत्ते सिज्झंति ?, गोयमा ! जहण्णेणं सत्तरयणीओ उक्कोसेणं पंचधणुस्सए सिज्झंति, जीवा णं भंते ! सिज्झमाणा कयरम्मि आउए सिज्झंति ?, गोयमा ! जहण्णेणं साइरेगट्ठवासाउए उक्कोसेणं पुव्वकोडियाउए सिज्झंति । अत्थि णं भंते ! इमीसे रयणप्पहाए पुढवीए अहे सिद्धा परिवसंति ?, णो इणट्ठे समट्ठे, एवं जाव अहे सत्तमाए, अत्थि णं भंते ! सोहम्मस्स कप्पस्स अहे सिद्धा परिवसंति ?, णो इणट्ठे समट्ठे, एवं सव्वेसिं पुच्छा, ईसाणस्स सणंकुमारस्स जाव अच्चुयस्स गेविज्जविमाणाणं अणुत्तरविमाणाणं, अत्थि णं भंते ! ईसीपब्भाराए पुढवीए अहे सिद्धा परिवसंति ?, णो इणट्ठे समट्ठे, से कहिं खाइ णं भंते ! सिद्धा परिवसंति ?, गोयमा ! इमीसे रयणप्पहाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ उड्ढं चंदिमसूरियग्गहगणणक्खत्ततारारूवाणं बहूइं जोयणसयाइं बहूइं जोयणसहस्साइं बहूइं जोयणसयसहस्साइं बहूओ जोयणकोडीओ बहूओ जोयणकोडाकोडीओ उड्ढतरं उप्पइत्ता सोहम्मीसाणसणंकुमारमाहिंदबंभलंतगमहासुक्कसहस्सारआणयपाणयआरणच्चुय तिण्णि य अट्ठारे गेविज्जविमाणावाससए वीइवइत्ता विजयवेजयंतजयंतअपराजियसव्वट्ठसिद्धस्स य महाविमाणस्स सव्वउपरिल्लाओ थूभियग्गाओ दुवालसजोयणाइं अबाहाए एत्थ णं ईसीपब्भारा णाम पुढवी पण्णत्ता पण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	सिद्ध एवं सिद्ध्-पद प्राप्ति-विषयकः अधिकारः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४३]

दीप अनुक्रम [५५]

यालीसं जोयणसयसहस्साइं आयामविक्खंभेणं एगा जोयणकोडी बायालीसं सयसहस्साइं तीसं च सहस्साइं दोण्णि य अउणापण्णे जोयणसए किंचि विसेसाहिए परिरएणं, ईसिपब्भारा य णं पुढवीए बहुमज्झदेसभाए अट्ठजोयणिए खेत्ते अट्ठजोयणाइं बाहुल्लेणं, तयाऽणंतरं च णं मायाए २ पडिहायमाणी २ सव्वेसु चरिमपेरंतेसु मच्छियपत्ताओ तणुयतरा अंगुलस्स असंखेज्जइभागं बाहुल्लेणं पण्णत्ता। ईसीपब्भाराए णं पुढवीए दुवालस णामधेज्जा पण्णत्ता, तंजहा–ईसी इ वा ईसीपब्भारा इ वा तणू इ वा तणूतणू इ वा सिद्धी इ वा सिद्धालए इ वा मुत्ती इ वा मुत्तालए इ वा लोयग्गे इ वा लोयग्गथूभिया इ वा लोयग्गपडिवुज्झणा इ वा सव्वपाणभूयजीवसत्तसुहावहा इ वा। ईसीपब्भारा णं पुढवी सेया संखतलविमलसोल्लियमुणालदगरयतुसारगोक्खीरहारवण्णा उत्ताणयछत्तसंठाणसंठिया सव्वज्जुणसुवण्णयमई अच्छा सण्हा लण्हा घट्ठा मट्ठा णीरया णिम्मला णिप्पंका णिक्कंकडच्छाया समरीचिया सुप्पभा पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा, ईसीपब्भाराए णं पुढवीए सीयाए जोयणंमि लोगंते, तस्स जोयणस्स जे से उवरिल्ले गाउए तस्स णं गाउअस्स जे से उवरिल्ले छब्भागिए तत्थ णं सिद्धा भगवंतो सादीया अपज्जवसिया अणेगजाइजरामरणजोणिवेयणसंसारकलंकलीभावपुणब्भवगब्भवासवसहीपवंचसमइक्कंता सासयमणागयमद्धं चिट्ठंति ॥ (सू० ४३)

से णं पुव्वामेव सन्निस्से'त्यादि, अस्यायमर्थः–स–केवली, णमित्यलङ्कारे, 'पूर्वमेव' आदावेव योगनिरोधावस्थायाः संज्ञिनो–मनोलब्धिमतः पञ्चेन्द्रियस्येति स्वरूपविशेषणं, यतः संज्ञी पञ्चेन्द्रिय एव भवति, 'पज्जत्तस्स'त्ति मनःपर्याप्त्या पर्या-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिद्ध एवं सिद्ध्-पद प्राप्ति-विषयकः अधिकारः

प्रत सूत्रांक [४३]

दीप अनुक्रम [५५]

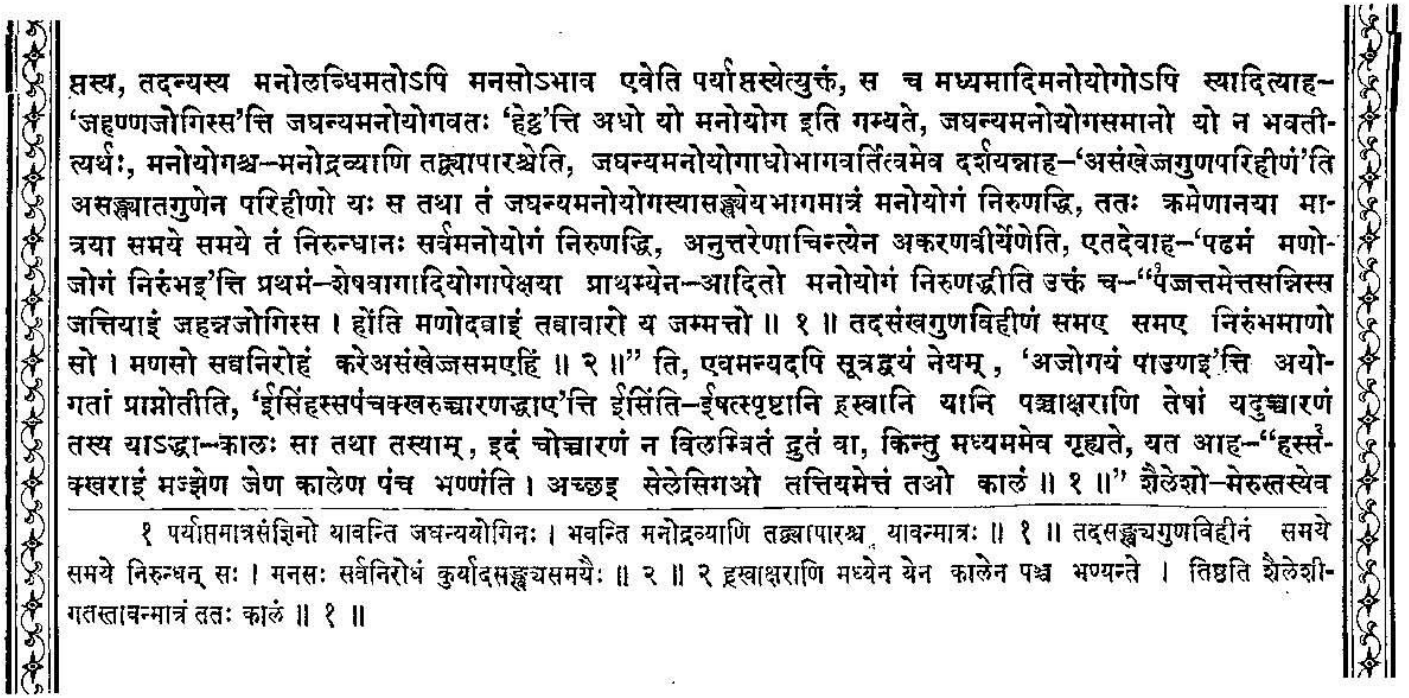

स्य, तदन्यस्य मनोलब्धिमतोऽपि मनसोऽभाव एवेति पर्याप्तस्येत्युक्तं, स च मध्यमादिमनोयोगोऽपि स्यादित्याह–'जहण्णजोगिस्स'त्ति जघन्यमनोयोगवतः 'हेट्ठ'त्ति अधो यो मनोयोग इति गम्यते, जघन्यमनोयोगसमानो यो न भवतीत्यर्थः, मनोयोगश्च–मनोद्रव्याणि तद्व्यापारश्चेति, जघन्यमनोयोगाधोभागवर्तित्वमेव दर्शयन्नाह–'असंखेज्जगुणपरिहीणं'ति असङ्ख्यातगुणेन परिहीणो यः स तथा तं जघन्यमनोयोगस्यासङ्ख्येयभागमात्रं मनोयोगं निरुणद्धि, ततः क्रमेणानया मात्रया समये समये तं निरुन्धानः सर्वमनोयोगं निरुणद्धि, अनुत्तरेणाचिन्त्येन अकरणवीर्येणेति, एतदेवाह–'पढमं मणोजोगं निरुंभइ'त्ति प्रथमं–शेषवागादियोगापेक्षया प्राथम्येन–आदितो मनोयोगं निरुणद्धीति उक्तं च–"[1]पज्जत्तमेत्तसन्निस्स जत्तियाइं जहन्नजोगिस्स । होंति मणोदव्वाइं तव्वावारो य जम्मत्तो ॥ १ ॥ तदसंखगुणविहीणं समए समए निरुंभमाणो सो । मणसो सव्वनिरोहं करेअसंखेज्जसमएहिं ॥ २ ॥" ति, एवमन्यदपि सूत्रद्वयं नेयम्, 'अजोगयं पाउणइ'त्ति अयोगतां प्राप्नोतीति, 'ईसिंहस्सपंचक्खरुच्चारणद्धाए'त्ति ईसिंति–ईषत्स्पृष्टानि ह्रस्वानि यानि पञ्चाक्षराणि तेषां यदुच्चारणं तस्य याऽद्धा–कालः सा तथा तस्याम्, इदं चोच्चारणं न विलम्बितं द्रुतं वा, किन्तु मध्यममेव गृह्यते, यत आह–"[2]हस्सक्खराइं मज्झेण जेण कालेण पंच भण्णंति । अच्छइ सेलेसिगओ तत्तियमेत्तं तओ कालं ॥ १ ॥" शैलेशो–मेरुस्तस्येव

१ पर्याप्तमात्रसंज्ञिनो यावन्ति जघन्ययोगिनः । भवन्ति मनोद्रव्याणि तद्व्यापारश्च यावन्मात्रः ॥ १ ॥ तदसङ्ख्यगुणविहीनं समये समये निरुन्धन् सः । मनसः सर्वनिरोधं कुर्यादसङ्ख्यसमयैः ॥ २ ॥ २ ह्रस्वाक्षराणि मध्येन येन कालेन पञ्च भण्यन्ते । तिष्ठति शैलेशीगतस्तावन्मात्रं ततः कालं ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिद्ध एवं सिद्ध्-पद प्राप्ति-विषयकः अधिकारः

स्थिरतासाम्याद्याऽवस्था सा शैलेशी अथवा शीलेशः–सर्वसंवररूपचारित्रप्रभुस्तस्येयमवस्था योगनिरोधरूपेति शैलेशी तां प्रतिपद्यते, ततः 'पुव्वरइयगुणसेढीयं च णं'ति पूर्वं–शैलेश्यवस्थायाः प्राग् रचिता गुणश्रेणी–क्षपणोपक्रमविशेषरूपा यस्य तत्तथा, गुणश्रेणी चैवं–सामान्यतः किल कर्म बह्वल्पमल्पतरमल्पतमं चेत्येवं निर्जरणाय रचयति, यदा तु परिणामविशेषात्तत्र तथैव रचिते कालान्तरवेद्यमल्पं बहु बहुतरं बहुतमं चेत्येवं शीघ्रतरक्षपणाय रचयति तदा सा गुणश्रेणीत्युच्यते, स्थापना चैवं 'कम्मं'ति वेदनीयादिकं भवोपग्राहि 'तीसे सेलेसिमद्धाए'त्ति तस्यां शैलेशीअद्धायां–शैलेशीकाले क्षपयन्निति यो गः, एतदेव विशेषेणाह–'असंखेज्जाहिं गुणसेढीहिं'न्ति असङ्ख्याताभिर्गुणश्रेणीभिः शैलेश्यवस्थाया असङ्ख्यातसमयत्वेन गुणश्रेण्यप्यसङ्ख्यातसमया ततः तस्याः प्रतिसमयभेदकल्पनया असङ्ख्यातागुणश्रेणयो भवन्ति, अतोऽसङ्ख्याताभिः गुणश्रेणीभिरित्युक्तम्, असङ्ख्यातसमयैरिति हृदयम्, 'अणंते कम्मंसे खवयंतो'त्ति अनन्तपुद्गलरूपत्वादनन्तान् कर्मांशान्–भवोपग्राहिकर्मभेदान् क्षपयन्–निर्जरयन् 'वेयणिज्जाउयणामगोए'त्ति वेदनीयं सातादि आयुः–मनुष्यायुष्कं नाम-मनुष्यगत्यादि गोत्रम्–उच्चैर्गोत्रम् 'इच्चेते'त्ति इत्येतान् 'चत्तारि'त्ति चतुरः 'कम्मंसे'त्ति कर्मांशान्मूलप्रकृतीः 'जुगवं खवेइ'त्ति यौगपद्येन निर्जरयतीति। एतच्चैता भाष्यगाथा अनुश्रित्य व्याख्यातं,यदुत–"[1]तदसंखेज्जगुणाए सेढीए विरइयं पुरा कम्मं।

१ तदसङ्ख्येयगुणया श्रेण्या विरचितं पुरा कर्म । समये समये क्षपयन् कर्म शैलेशीकालेन ॥ १ ॥ सर्वं क्षपयति तत्पुनर्निर्लेपं किञ्चिदुपरितने समये । किञ्चिच्च भवति चरमे शैलेश्यां तद्वक्ष्ये ॥ २ ॥ मनुजगतिजातित्रसबादरं च पर्याप्तं सुभगमादेयम् । अन्यतरवेदनीयं नरायुरुच्चैः यशोनाम ॥ ३ ॥ सम्भवतो जिननाम नरानुपूर्वी च चरमसमये । शेषा जिनसत्का द्विचरमसमये निस्तिष्ठन्ति (निष्ठां यान्ति) ॥४॥

॥ ११३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिद्ध एवं सिद्ध्-पद प्राप्ति-विषयकः अधिकारः

समए समए खवयं कम्मं सेलेसिकालेणं ॥ १ ॥ सव्वं खवेइ तं पुण निल्लेवं किंचिदुवरिमे समए । किंचिच्च होइ चरमे सेलेसीए तयं वोच्छं ॥ २ ॥ मणुयगइजाइतसबायरं च पज्जत्तसुभगमाएज्जं । अन्नयरवेयणिज्जं नराउमुच्चं जसोनामं ॥ ३ ॥ संभवओ जिणनामं नराणुपुवी य चरिमसमयंमि । सेसा जिणसंताओ दुचरिमसमयंमि निट्ठंति' ॥ ४ ॥ त्ति, 'सव्वाहिं विप्पयहणाहिं'ति सर्वाभिः–अशेषाभिः विशेषेण–विविधं प्रकर्षतो हानयः–त्यागा विप्रहाणयो व्यक्त्यपेक्षया बहुवचनं ताभिः, किमुक्तं भवति ?–सर्वथा परिशाटनं न तु यथा पूर्वं सङ्घातपरिशाटाभ्यां देशत्यागतः 'विप्पजहित्त'त्ति विशेषेण प्रहाय–परित्यज्य 'उज्जूसेढिपडिवन्ने'त्ति ऋजुः–अवक्रा श्रेणिः–आकाशप्रदेशपङ्क्तिस्तां ऋजुश्रेणिं प्रतिपन्नः–आश्रितः 'अफुसमाणगई'त्ति अस्पृशन्ती–सिद्ध्यन्तरालप्रदेशान् गतिर्यस्य सोऽस्पृशद्गतिः, अन्तरालप्रदेशस्पर्शने हि नैकेन समयेन सिद्धिः, इष्यते च तत्रैक एव समयः, य एव चायुष्कादिकर्मणां क्षयसमयः स एव निर्वाणसमयः, अतोऽन्तराले समयान्तरस्याभावादन्तरालप्रदेशानामसंस्पर्शनमिति, सूक्ष्मश्चायमर्थः केवलिगम्यो भावत इति, 'एगेणं समएणं'ति, कुत इत्याह–'अविग्गहेणं'ति अविग्रहेण–वक्ररहितेन, वक्र एव हि समयान्तरं लगति प्रदेशान्तरं च स्पृशतीति, 'उड्ढं गंता' ऊर्ध्वं गत्वा 'सागारोवउत्ते'त्ति ज्ञानोपयोगवान् 'सिध्यति' कृतकृत्यतां लभते इति । गतमानुषङ्गिकमथ प्रकृतमाह–किं च प्रकृतं ?, 'से जे इमे गामागर जाव सन्निवेसेसु मणुया हवंति–सव्वकामविरया जाव अट्ठ कम्मपयडीओ खवइत्ता उप्पिं लोयग्गपइट्ठाणा हवंती'ति, लोकाग्रप्रतिष्ठानाश्च सन्तो यादृशास्ते भवन्ति तद्दर्शयितुमाह–'ते णं तत्थ सिद्धा हवंति'त्ति ते पूर्वोद्दिष्टविशेषणा मनुष्याः 'तत्र' लोकाग्रे निष्ठितार्थाः स्युरिति, अनेन च यत्केचन मन्यन्ते, यदुत–'रागादिवासनामुक्तं, चित्तमेव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिद्ध एवं सिद्ध्-पद प्राप्ति-विषयक: अधिकार:

निरामयम् । सदाऽनियतदेशस्थं, सिद्ध इत्यभिधीयते ॥ १ ॥' यच्चापरे मन्यन्ते–"गुणसत्त्वान्तरज्ञानान्निवृत्तप्रकृतिक्रियाः । मुक्ताः सर्वत्र तिष्ठन्ति, व्योमवत्तापवर्जिताः ॥ १ ॥" तदनेन निरस्तं, यच्चोच्यते–सशरीरतायामपि सिद्धत्वप्रतिपादनाय, यदुत–"अणिमाद्यष्टविधं प्राप्यैश्वर्यं कृतिनः सदा । मोदन्ते निर्वृतात्मानस्तीर्णाः परमदुस्तरम् ॥ १ ॥' इति तदपाकरणायाह–'अशरीरा' अविद्यमानपञ्चप्रकारशरीराः, तथा 'जीवघण'त्ति योगनिरोधकाले रन्ध्रपूरणेन त्रिभागोनाऽवगाहनाः सन्तो जीवघना इति, 'दंसणनाणोवउत्त'त्ति ज्ञानं–साकारं दर्शनम्–अनाकारं तयोः क्रमेणोपयुक्ता ये ते तथा, 'निट्ठियट्ठ'त्ति निष्ठितार्थाः–समाप्तसमस्तप्रयोजनाः 'निरेयण'त्ति निरेजनाः–निश्चलाः 'नीरय'त्ति नीरजसो–बध्यमानकर्मरहिता नीरया वा–निर्गतौत्सुक्याः 'निम्मल'त्ति निर्मलाः पूर्वबद्धकर्मविनिर्मुक्ताः द्रव्यमलवर्जिता वा 'वितिमिर'त्ति विगताज्ञानाः 'विसुद्ध'त्ति कर्मविशुद्धिप्रकर्षमुपगताः 'सासयमणागयद्धं कालं चिट्ठंति'शाश्वतीम्–अविनश्वरीं सिद्धत्वस्याविनाशाद्, अनागताद्धा–भविष्यत्कालं तिष्ठन्तीति 'जम्मुप्पत्ती'ति जन्मना–कर्मकृतप्रसूत्या उत्पत्तिर्या सा तथा, जन्मग्रहणेन परिणामान्तररूपात्तदुत्पत्तिर्भवतीत्याह, प्रतिक्षणमुत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तत्वात्सद्भावस्येति, 'जहण्णेणं सत्त रयणीए'त्ति सप्तहस्ते उच्चत्वे सिध्यन्ति महावीरवत्, 'उक्कोसेणं पंचधणुस्सए'त्ति ऋषभस्वामिवद्, एतच्च द्वयमपि तीर्थङ्करापेक्षयोक्तम्, अतो द्विहस्तप्रमाणेन कूर्मापुत्रेण न व्यभिचारो न वा मरुदेव्या सातिरेकपञ्चधनुःशतप्रमाणयेति, 'साइरेगट्ठवासाउए'त्ति सातिरेकाण्यष्टौ वर्षाणि यत्र तत्तथा तच्च तदायुश्चेति तत्र सातिरेकाष्टवर्षायुषि, तत्र किलाष्टवर्षवयाश्चरणं प्रतिपद्यते, ततो वर्षे अतिगते केवलज्ञानमुत्पाद्य सिध्यतीति, 'उक्कोसेणं पुव्वकोडाउए'त्ति पूर्वकोट्यायुर्नरः पूर्वकोट्या अन्ते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिद्ध एवं सिद्ध्-पद प्राप्ति-विषयकः अधिकारः

प्रत सूत्रांक [४३] दीप अनुक्रम [५५]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

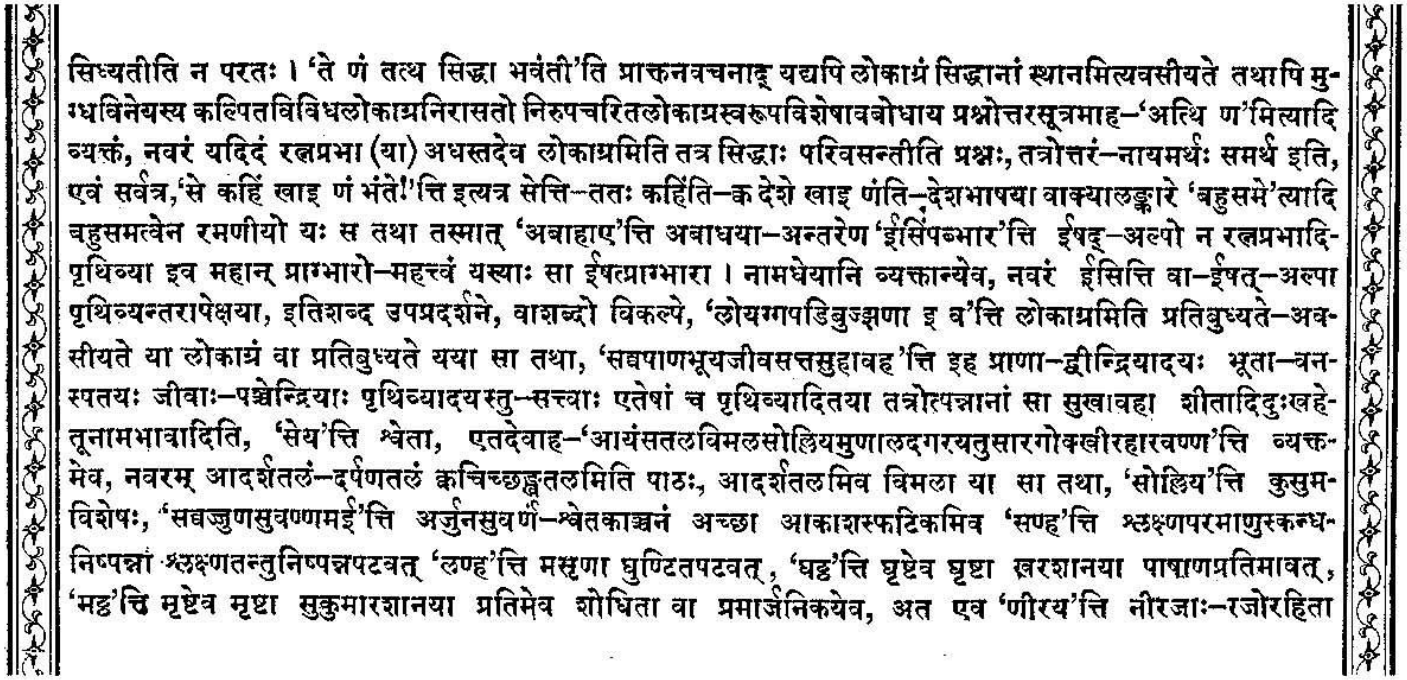

सिध्यतीति न परतः । 'ते णं तत्थ सिद्धा भवंती'ति प्राक्तनवचनाद् यद्यपि लोकाग्रं सिद्धानां स्थानमित्यवसीयते तथापि मुग्धविनेयस्य कल्पितविविधलोकाग्रनिरासतो निरुपचरितलोकाग्रस्वरूपविशेषावबोधाय प्रश्नोत्तरसूत्रमाह–'अत्थि ण'मित्यादि व्यक्तं, नवरं यदिदं रत्नप्रभा (या) अधस्तदेव लोकाग्रमिति तत्र सिद्धाः परिवसन्तीति प्रश्नः, तत्रोत्तरं–नायमर्थः समर्थ इति, एवं सर्वत्र,'से कहिं खाइ णं भंते!'त्ति इत्यत्र सेत्ति–ततः कहिंति–क्व देशे खाइ णंति–देशभाषया वाक्यालङ्कारे 'बहुसमे'त्यादि बहुसमत्वेन रमणीयो यः स तथा तस्मात् 'अबाहाए'त्ति अबाधया–अन्तरेण 'ईसिंपब्भार'त्ति ईषद्–अल्पो न रत्नप्रभादिपृथिव्या इव महान् प्राग्भारो–महत्त्वं यस्याः सा ईषत्प्राग्भारा । नामधेयानि व्यक्तान्येव, नवरं ईसित्ति वा–ईषत्–अल्पा पृथिव्यन्तरापेक्षया, इतिशब्द उपप्रदर्शने, वाशब्दो विकल्पे, 'लोयग्गपडिबुज्झणा इ व'त्ति लोकाग्रमिति प्रतिबुध्यते–अवसीयते या लोकाग्रं वा प्रतिबुध्यते यया सा तथा, 'सव्वपाणभूयजीवसत्तसुहावह'त्ति इह प्राणा–द्वीन्द्रियादयः भूता–वनस्पतयः जीवाः–पञ्चेन्द्रियाः पृथिव्यादयस्तु–सत्त्वाः एतेषां च पृथिव्यादितया तत्रोत्पन्नानां सा सुखावहा शीतादिदुःखहेतूनामभावादिति, 'सेय'त्ति श्वेता, एतदेवाह–'आयंसतलविमलसोल्लियमुणालदगरयतुसारगोक्खीरहारवण्ण'त्ति व्यक्तमेव, नवरम् आदर्शतलं–दर्पणतलं क्वचिच्छङ्खतलमिति पाठः, आदर्शतलमिव विमला या सा तथा, 'सोल्लिय'त्ति कुसुमविशेषः, 'सव्वज्जुणसुवण्णमई'त्ति अर्जुनसुवर्णं–श्वेतकाञ्चनं अच्छा आकाशस्फटिकमिव 'सण्ह'त्ति श्लक्ष्णपरमाणुस्कन्धनिष्पन्ना श्लक्ष्णतन्तुनिष्पन्नपटवत् 'लण्ह'त्ति मसृणा घुष्टितपटवत्, 'घट्ठ'त्ति घृष्टेव घृष्टा खरशानया पाषाणप्रतिमावत्, 'मट्ठ'त्ति मृष्टेव मृष्टा सुकुमारशानया प्रतिमेव शोधिता वा प्रमार्जनिकयेव, अत एव 'णीरय'त्ति नीरजाः–रजोरहिता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	सिद्ध एवं सिद्ध्-पद प्राप्ति-विषयकः अधिकारः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४३] + गाथाः ॥१-२२॥

दीप अनुक्रम [५५]

'णिम्मला' कठिनमलरहिता 'णिप्पंक'त्ति निष्पङ्का–आर्द्रमलरहिता अकलङ्का वा 'णिक्कंकडच्छाय'त्ति निष्कङ्कटा–निष्कवचा निरावरणेत्यर्थः छाया–शोभा यस्याः सा तथा अकलङ्कशोभा वा, 'समरीचिय'त्ति समरीचिका–किरणयुक्ता, अत एव 'सुप्पभ'त्ति सुष्ठु प्रकर्षेण च भाति–शोभते या सा सुप्रभेति 'पासादीय'त्ति प्रासादो–मनःप्रमोदः प्रयोजनं यस्याः सा प्रासादीया 'दरसणिज्ज'त्ति दर्शनाय–चक्षुर्व्यापाराय हिता दर्शनीया, तां पश्यच्चक्षुर्न श्राम्यतीत्यर्थः,'अभिरूव'त्ति अभिमतं रूपं यस्याः सा अभिरूपा, कमनीयेत्यर्थः, 'पडिरूव'त्ति द्रष्टारं द्रष्टारं प्रति रूपं यस्याः सा प्रतिरूपा, 'जोयणंमि लोगंते'त्ति इह योजनमुत्सेधाङ्गुलयोजनमवसेयं, तदीयस्यैव हि क्रोशषड्भागस्य सत्रिभागस्रयस्त्रिंशदधिकधनुःशतत्रयीप्रमाणत्वादिति, 'अणेगजाइजरामरणजोणिवेयणं' अनेकजातिजरामरणप्रधानयोनिषु वेदना यत्र स तथा तं 'संसारकलंकलीभावपुणब्भवगब्भवासवसहीपवंचमइक्कंता' संसारे कलङ्क (ग्रन्था० ३०००) लीभावेन–असमञ्जसत्वेन ये पुनर्भवाः–पौनःपुन्येनोत्पादा गर्भवासवसतयश्च–गर्भाश्रयनिवासास्तासां यः प्रपञ्चो–विस्तरः स तथा तमतिक्रान्ता–निस्तीर्णाः, पाठान्तरमिदम् 'अणेगजाइजरामरणजोणिसंसारकलंकलीभावपुणब्भवगब्भवासवसहिपवंचसमइक्कंत'त्ति अनेकजातिजरामरणप्रधाना योनयो यत्र स तथा स चासौ संसारश्चेति समासः, तत्र कलङ्कलीभावेन यः पुनर्भवेन–पुनःपुनरुत्पत्त्या गर्भवासवसतीनां प्रपञ्चस्तं समतिक्रान्ता ये ते तथा ॥ ४३ ॥

गाथाः–कहिं पडिहया सिद्धा ?, कहिं सिद्धा पडिट्ठिया ? । कहिं बोंदिं चइत्ता णं, कत्थ गंतूण सिज्झई ? ॥ १ ॥ अलोगे पडिहया सिद्धा, लोयग्गे य पडिट्ठिया । इहं बोंदिं चइत्ता णं, तत्थ गंतूण सिज्झई ॥ २ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिद्ध एवं सिद्ध्-पद प्राप्ति-विषयकः अधिकारः

प्रत सूत्रांक [४३] + गाथा: ||१-२२|| दीप अनुक्रम [५५-७७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

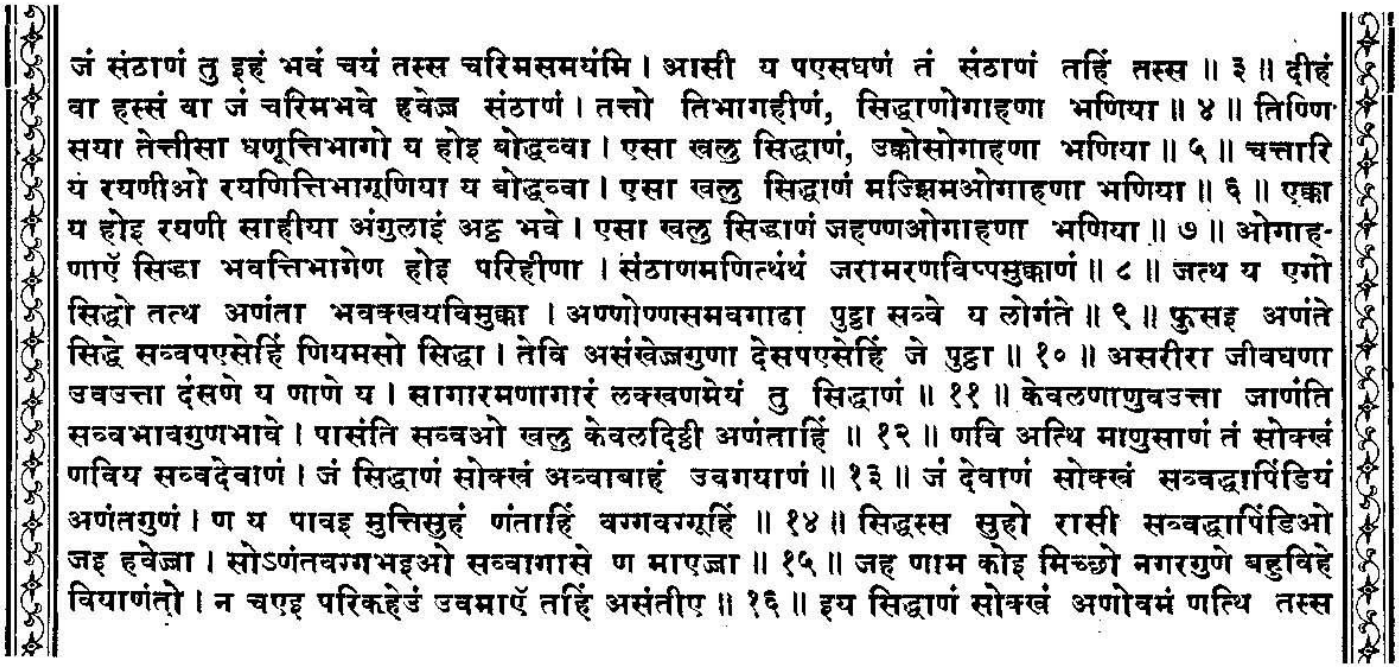

जं संठाणं तु इहं भवं चयं तस्स चरिमसमयंमि। आसी य पएसघणं तं संठाणं तहिं तस्स ॥ ३ ॥ दीहं वा हस्सं वा जं चरिमभवे हवेज्ज संठाणं। तत्तो तिभागहीणं, सिद्धाणोगाहणा भणिया ॥ ४ ॥ तिण्णि सया तेत्तीसा धणूत्तिभागो य होइ बोद्धव्वा। एसा खलु सिद्धाणं, उक्कोसोगाहणा भणिया ॥ ५ ॥ चत्तारि य रयणीओ रयणित्तिभागूणिया य बोद्धव्वा। एसा खलु सिद्धाणं मज्झिमओगाहणा भणिया ॥ ६ ॥ एक्का य होइ रयणी साहीया अंगुलाइं अट्ठ भवे। एसा खलु सिद्धाणं जहण्णओगाहणा भणिया ॥ ७ ॥ ओगाहणाएँ सिद्धा भवत्तिभागेण होइ परिहीणा। संठाणमणित्थंथं जरामरणविप्पमुक्काणं ॥ ८ ॥ जत्थ य एगो सिद्धो तत्थ अणंता भवक्खयविमुक्का। अण्णोण्णसमवगाढा पुट्ठा सव्वे य लोगंते ॥ ९ ॥ फुसइ अणंते सिद्धे सव्वपएसेहिं णियमसो सिद्धा। तेवि असंखेज्जगुणा देसपएसेहिं जे पुट्ठा ॥ १० ॥ असरीरा जीवघणा उवउत्ता दंसणे य णाणे य। सागारमणागारं लक्खणमेयं तु सिद्धाणं ॥ ११ ॥ केवलणाणुवउत्ता जाणंति सव्वभावगुणभावे। पासंति सव्वओ खलु केवलदिट्ठी अणंताहिं ॥ १२ ॥ णवि अत्थि माणुसाणं तं सोक्खं णविय सव्वदेवाणं। जं सिद्धाणं सोक्खं अव्वाबाहं उवगयाणं ॥ १३ ॥ जं देवाणं सोक्खं सव्वद्धापिंडियं अणंतगुणं। ण य पावइ मुत्तिसुहं णंताहिं वग्गवग्गूहिं ॥ १४ ॥ सिद्धस्स सुहो रासी सव्वद्धापिंडिओ जइ हवेज्जा। सोऽणंतवग्गभइओ सव्वागासे ण माएज्जा ॥ १५ ॥ जह णाम कोइ मिच्छो नगरगुणे बहुविहे वियाणंतो। न चएइ परिकहेउं उवमाएँ तहिं असंतीए ॥ १६ ॥ इय सिद्धाणं सोक्खं अणोवमं णत्थि तस्स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	सिद्ध एवं सिद्ध्-पद प्राप्ति-विषयक: अधिकार:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४३] + गाथा: ॥१-२२॥

दीप अनुक्रम [५५-७७]

ओवम्मं। किंचि विसेसेणेत्तो ओवम्ममिणं सुणह वोच्छं ॥ १७ ॥ जह सव्वकामगुणियं पुरिसो भोत्तूण भोयणं कोइ। तण्हाछुहाविमुक्को अच्छेज्ज जहा अमियतित्तो ॥ १८ ॥ इय सव्वकालतित्ता अतुलं निव्वाणमुवगया सिद्धा। सासयमव्वाबाहं चिट्ठंति सुही सुहं पत्ता ॥ १९ ॥ सिद्धत्ति य बुद्धत्ति य पारगयत्ति य परंपरगयत्ति। उम्मुक्ककम्मकवया अजरा अमरा असंगा य ॥ २० ॥ णिच्छिण्णसव्वदुक्खा जाइजरामरणबंधणविमुक्का। अव्वाबाहं सुक्खं अणुहोंति सासयं सिद्धा ॥ २१ ॥ अतुलसुहसागरगया अव्वाबाहं अणोवमं पत्ता। सव्वमणागयमद्धं चिट्ठंती सुही सुहं पत्ता ॥ २२ ॥ उववाईउवंगं समत्तं ॥ शुभं भवतु ॥ ग्रन्थाग्रं १६०० ॥ सूत्राणि त्रिचत्वारिंशत्, गाथाः २५ ॥ श्री ॥

अथ प्रश्नोत्तरद्वारेण सिद्धानामेव वक्तव्यतामाह–'कहिं' इत्यादिश्लोकद्वयं, क्व प्रतिहताः–क्व प्रस्खलिताः सिद्धाः–मुक्ताः ?, तथाः क्व सिद्धाः प्रतिष्ठिता–व्यवस्थिता इत्यर्थः ?, तथा क्व बोन्दिं–शरीरं त्यक्त्वा ?, तथा क्व गत्वा सिज्झइत्ति–प्राकृतत्वात् 'से हु चाइत्ति वुच्चई'त्यादिवत् सिध्यन्तीति व्याख्येयमिति ॥ १ ॥ अलोके–*अलोकाकाशास्तिकाये प्रतिहताः–स्खलिताः सिद्धा–मुक्ताः, प्रतिस्खलनं चेहानन्तर्यवृत्तिमात्रं, तथा लोकाग्रे च–पञ्चास्तिकायात्मकलोकमूर्धनि च प्रतिष्ठिता–अपुनरागत्या व्यवस्थिता इत्यर्थः, तथा इह–मनुष्यक्षेत्रे बोन्दिं–तनुं परित्यज्य तत्रेति–लोकाग्रे गत्वा सिज्झईत्ति–सिध्य-

१ बहुवचनप्रक्रमेऽप्युपसंहार एकवचनेन यथा तत्र 'जे य कन्ते' इत्यादिनोपक्रम्य 'वुच्चइ' इति क्रिययोपसंहार एकवचनेन, व्याख्यायां तु बहुवचनं कृतं तथाऽत्रापीतिभावः. * केवलाकाशास्तिकाये प्र०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिद्ध एवं सिद्ध्-पद प्राप्ति-विषयक: अधिकार:

प्रत सूत्रांक [४३] + गाथा: ॥१-२२॥ दीप अनुक्रम [५५-७७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्ति:

न्ति निष्ठितार्था भवन्ति ॥ २ ॥ किञ्च–'जं संठाणं' गाहा व्यक्ता, नवरं प्रदेशघनमिति त्रिभागेन रन्ध्रपूरणादिति, 'तहिं' ति सिद्धिक्षेत्रे 'तस्स'त्ति सिद्धस्येति ॥ ३ ॥ तथा चाह–'दीहं वा'गाहा, दीर्घं वा–पञ्चधनुःशतमानं ह्रस्वं वा–हस्तद्वयमानं, वाशब्दान्मध्यमं वा, यच्चरमभवे भवेत्संस्थानं 'ततः' तस्मात् संस्थानात् त्रिभागहीना त्रिभागेन शुषिरपूरणात् सिद्धानामवगाहना–अवगाहन्ते–अस्यामवस्थायामिति अवगाहना स्वावस्थैवेति भावः, भणिता–उक्ता जिनैरिति ॥ ४ ॥ अथावगाहनामेवोत्कृष्टादिभेदत आह–'तिण्णि सये'त्यादि, इयं च पञ्चधनुःशतमानानां 'चत्तारि ये'त्यादि तु सप्तहस्तानाम् 'एगा ये'त्यादि द्विहस्तमानानामिति । इयं च त्रिविधाऽप्यूर्ध्वमानमाश्रित्यान्यथा सप्तहस्तमानानां च उपविष्टानां सिद्धतामन्यथाऽपि स्यादिति । आक्षेपपरिहारौ पुनरेवमत्र–ननु नाभिकुलकरः पञ्चविंशत्यधिकपञ्चधनुःशतमानः प्रतीत एव, तद्भार्याऽपि मरुदेवी तत्प्रमाणैव,[1]'उच्चत्तं चेव कुलगरेहिं सम'मिति वचनात्, अतस्तदवगाहना उत्कृष्टावगहनातोऽधिकतरा प्राप्नोतीति कथं न विरोधः ?, अत्रोच्यते, यद्यप्युच्चत्वं कुलकरतुल्यं तद्योषितामित्युक्तं, तथापि प्रायिकत्वादस्य स्त्रीणां च प्रायेण पुम्भ्यो लघुतरत्वात् पञ्चैव धनुःशतान्यसावभवत्, वृद्धकाले वा सङ्कोचात् पञ्चधनुःशतमाना सा अभवद्, उपविष्टा वाऽसौ सिद्धेति न विरोधः, अथवा बाहुल्यापेक्षमिदमुत्कृष्टावगाहनामानं, मरुदेवी त्वाश्चर्यकल्पेत्येवमपि न विरोधः, ननु जघन्यतः सप्तहस्तोच्छ्रितानामेव सिद्धिः प्रागुक्ता, तत्कथं जघन्यावगाहना अष्टाङ्गुलाधिकहस्तप्रमाणा भवतीति ?, अत्रोच्यते, सप्तहस्तोच्छ्रितेषु सिद्धिरिति तीर्थङ्करापेक्षं, तदन्ये तु द्विहस्ता अपि कूर्मपुत्रादयः सिद्धाः अतस्तेषां जघन्याऽवसेया, अन्ये

१ उच्चत्वमेव कुलकरैः समं.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	सिद्ध एवं सिद्ध्-पद प्राप्ति-विषयक: अधिकार:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४३] + गाथा: ॥१-२२॥ दीप अनुक्रम [५५-७७]

त्वाहुः–सप्तहस्तमानस्य संवर्तिताङ्गोपाङ्गस्य सिद्धयतो जघन्यावगाहना स्यादिति ॥ ७ ॥ 'ओगाहणाए' गाहा व्यक्ता, नवरम् 'अणित्थंथं'ति अमुं प्रकारमापन्नमित्थं इत्थं तिष्ठतीति इत्थंस्थं न इत्थंस्थं अनित्थंस्थं–न केनचिल्लौकिकप्रकारेण स्थितमिति ॥ ८ ॥ अथैते किं देशभेदेन स्थिता उतान्यथेत्यस्यामाशङ्कायामाह–'जत्थ य'गाहा, यत्र च–यत्रैव देशे एकः सिद्धो–निर्वृत्तस्तत्र देशे अनन्ता किम् ?–'भवक्षयविमुक्ता' इति भवक्षयेण विमुक्ता भवक्षयविमुक्ताः, अनेन स्वेच्छया भवावतरणशक्तिमत्सिद्धव्यवच्छेदमाह । अन्योऽन्यसमवगाढाः तथाविधाचिन्त्यपरिणामत्वाद्धर्मास्तिकायादिवदिति, स्पृष्टाः–लग्नाः सर्वे च लोकान्ते, अलोकेन प्रतिस्खलितत्वाद् , अत एव 'लोयग्गे य पइट्ठिया'इत्युक्तमिति ॥ ९ ॥ तथा 'फुसइ' गाहा, स्पृशत्यनन्तान्सिद्धान् सर्वप्रदेशैरात्मसम्बन्धिभिः 'णियमसो'त्ति नियमेन सिद्धः, तथा तेऽप्यसङ्ख्येयगुणा वर्तन्ते देशैः प्रदेशैश्च ये स्पृष्टाः, केभ्यः?–सर्वप्रदेशस्पृष्टेभ्यः, कथम् ?–सर्वात्मप्रदेशैस्तावदनन्ताः स्पृष्टाः, एकसिद्धावगाहनायामनन्तानामवगाढत्वात् , तथैकैकदेशेनाप्यनन्ता एवमेकैकप्रदेशेनाप्यनन्ता एव, नवरं देशो–द्व्यादिप्रदेशसमुदायः, प्रदेशस्तु–निर्विभागोऽंश इति, सिद्धश्चासङ्ख्येयदेशप्रदेशात्मकः, ततश्च मूलानन्तकमसङ्ख्येयैर्देशानन्तकैरसङ्ख्यैरेव च प्रदेशानन्तकैर्गुणितं यथोक्तमेव भवतीति । स्थापना चेयं ॥ १० ॥ अथ सिद्धानेव लक्षणत आह–'असरीरा' गाहा, उक्तार्था, सङ्ग्रहरूपत्वाच्चास्या न पुनरुक्तत्वमिति ॥ ११ ॥ 'उवउत्ता दंसणे य णाणे य'त्ति यदुक्तं, तत्र ज्ञानदर्शनयोः सर्वविषयतामुपदर्शयन्नाह—'केवल'गाहा, केवलज्ञानोपयुक्ताः सन्तः न त्वन्तःकरणोपयुक्ताः, भावतस्तदभावात् , जानन्ति 'सर्वभावगुणभावान्' समस्तवस्तुगुणपर्यायान् , तत्र गुणाः–सहवर्तिनः पर्यायास्तु–क्रमवर्तिन इति, तथा पश्यन्ति 'सर्वतः खलु' सर्वत

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिद्ध एवं सिद्ध्-पद प्राप्ति-विषयक: अधिकार:

प्रत सूत्रांक [४३] + गाथा: ॥१-२२॥ दीप अनुक्रम [५५-७७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

एवेत्यर्थः केवलदृष्टिभिरनन्ताभिः–केवलदर्शनैरनन्तैरित्यर्थः, अनन्तत्वात् सिद्धानामनन्तविषयत्वाद्वा दर्शनस्य केवलदृष्टिभिरनन्ताभिरित्युक्तम्, इह चादौ ज्ञानग्रहणं प्रथमतया तदुपयोगस्थाः सिध्यन्तीति ज्ञापनार्थमिति ॥ १२ ॥ अथ सिद्धानां निरुपमसुखतां दर्शयितुमाह–'णवि अत्थि'गाहा व्यक्ता, नवरम् 'अव्वाबाहं'ति विविधा आबाधा व्याबाधा तन्निषेधादव्याबाधा तामुपगतानां–प्राप्तानामिति ॥ १३ ॥ कस्मादेवमित्याह–'जं देवाणं'गाहा, 'यतो'यस्माद्देवानाम्–अनुत्तरसुरान्तानां 'सौख्यं'त्रिकालिकसुखं सर्वाद्धया–अतीतानागतवर्तमानकालेन पिण्डितं–गुणितं सर्वाद्धापिण्डितं, तथाऽनन्तगुणमिति, तदेवंप्रमाणं किलासद्भावकल्पनयैकैकाकाशप्रदेशे स्थाप्यत इत्येवं सकललोकालोकाकाशानन्तप्रदेशपूरणेनानन्तं भवति, न च प्राप्नोति मुक्तिसुखं–नैव मुक्तिसुखसमानतां लभते, अनन्तानन्तत्वात्सिद्धसुखस्य, किंविधं देवसुखमित्याह–अनन्ताभिरपि 'वर्गवर्गाभिः' वर्गवर्गैर्वर्गितमपि, तत्र तद्गुणो वर्गो यथा द्वयोर्वर्गश्चत्वारः तस्यापि वर्गो वर्गवर्गो यथा षोडश एवमनन्तशो वर्गितमपि। चूर्णिकारस्त्वाह–अनन्तैरपि वर्गवर्गैः–खण्डखण्डैः खण्डितं सिद्धसुखं तदीयानन्तानन्ततमखण्डसमतामपि न लभत इत्यर्थः, ततो नास्ति तन्मानुषादीनां सुखं यत्सिद्धानामिति प्रकृतम् ॥१४॥ सिद्धसुखस्यैवोत्कर्षणाय भङ्ग्यन्तरेणाह–'सिद्धस्स'गाहा, 'सिद्धस्य'मुक्तस्य सम्बन्धी 'सुखः' सुखानां सत्को 'राशिः' समूहः सुखसङ्घातः इत्यर्थः, 'सर्वाद्धापिण्डितः' सर्वकालसमयगुणितो यदि भवेद्, अनेन चास्य कल्पनामात्रतामाह, सोऽनन्तवर्गभक्तो–अनन्तवर्गापवर्तितः सन्समीभूत एवेति भावार्थः, 'सर्वाकाशे'लोकालोकरूपे न मायात्, अयमत्र भावार्थः–इह किल विशिष्टाह्लादरूपं सुखं गृह्यते, ततश्च यत आरभ्य शिष्टानां सुखशब्दप्रवृत्तिस्तमाह्लादमवधीकृत्य एकैकगुणवृद्धितारतम्येन तावदसावाह्लादो विशिष्यते यावद-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिद्ध एवं सिद्ध्-पद प्राप्ति-विषयक: अधिकार:

प्रत सूत्रांक [४३] + गाथा: ॥१-२२॥ दीप अनुक्रम [५५-७७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

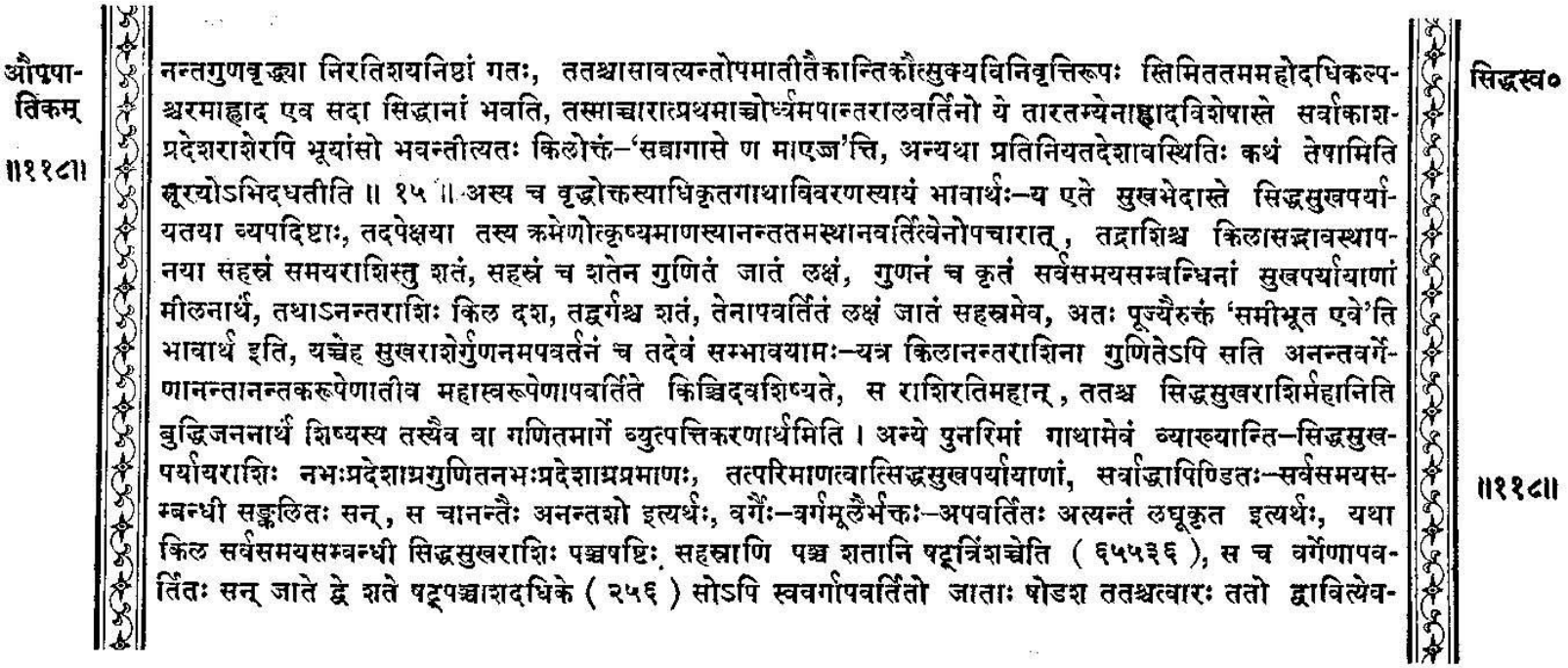

औपपा-तिकम् ॥११८॥

नन्तगुणवृद्ध्या निरतिशयनिष्ठां गतः, ततश्चासावत्यन्तोपमातीतैकान्तिकौत्सुक्यविनिवृत्तिरूपः स्तिमिततममहोदधिकल्प-श्चरमाह्लाद एव सदा सिद्धानां भवति, तस्माच्चारात्प्रथमाच्चोर्ध्वमपान्तरालवर्तिनो ये तारतम्येनाह्लादविशेषास्ते सर्वाकाश-प्रदेशराशेरपि भूयांसो भवन्तीत्यतः किलोक्तं–'सव्वागासे ण माएज्ज'त्ति, अन्यथा प्रतिनियतदेशावस्थितिः कथं तेषामिति सूरयोऽभिदधतीति ॥ १५ ॥ अस्य च वृद्धोक्तस्याधिकृतगाथाविवरणस्यायं भावार्थः–य एते सुखभेदास्ते सिद्धसुखपर्या-यतया व्यपदिष्टाः, तदपेक्षया तस्य क्रमेणोत्कृष्यमाणस्यानन्ततमस्थानवर्तित्वेनोपचारात्, तद्राशिश्च किलासद्भावस्थाप-नया सहस्रं समयराशिस्तु शतं, सहस्रं च शतेन गुणितं जातं लक्षं, गुणनं च कृतं सर्वसमयसम्बन्धिनां सुखपर्यायाणां मीलनार्थं, तथाऽनन्तराशिः किल दश, तद्वर्गश्च शतं, तेनापवर्तितं लक्षं जातं सहस्रमेव, अतः पूज्यैरुक्तं 'समीभूत एवे'ति भावार्थ इति, यच्चेह सुखराशेर्गुणनमपवर्तनं च तदेवं सम्भावयामः–यत्र किलानन्तराशिना गुणितेऽपि सति अनन्तवर्गे-णानन्तानन्तकरूपेणातीव महास्वरूपेणापवर्तिते किञ्चिदवशिष्यते, स राशिरतिमहान्, ततश्च सिद्धसुखराशिर्महानिति बुद्धिजननार्थं शिष्यस्य तस्यैव वा गणितमार्गे व्युत्पत्तिकरणार्थमिति । अन्ये पुनरिमां गाथामेवं व्याख्यान्ति–सिद्धसुख-पर्यायराशिः नभःप्रदेशाग्रगुणितनभःप्रदेशाग्रप्रमाणः, तत्परिमाणत्वात्सिद्धसुखपर्यायाणां, सर्वाद्धापिण्डितः–सर्वसमयस-म्बन्धी सङ्कलितः सन्, स चानन्तैः अनन्तशो इत्यर्थः, वर्गैः–वर्गमूलैर्भक्तः–अपवर्तितः अत्यन्तं लघूकृत इत्यर्थः, यथा किल सर्वसमयसम्बन्धी सिद्धसुखराशिः पञ्चषष्टिः सहस्राणि पञ्च शतानि षट्त्रिंशच्चेति (६५५३६), स च वर्गेणापव-र्तितः सन् जाते द्वे शते षट्पञ्चाशदधिके (२५६) सोऽपि स्ववर्गापवर्तितो जाताः षोडश ततश्चत्वारः ततो द्वावित्येव-

सिद्धस्व०

॥११८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	सिद्ध एवं सिद्ध्-पद प्राप्ति-विषयक: अधिकार:

प्रत सूत्रांक [४३] + गाथा: ॥१-२२॥ दीप अनुक्रम [५५-७७]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

मतिलघूकृतोऽपि सर्वाकाशे न मायाद्, एतदेवाह–'सव्वागासे न माएज्ज'त्ति । अथ सिद्धसुखस्यानुपमतां दृष्टान्तेनाह–'जह' गाहा, पूर्वार्धं व्यक्तं,'न चएइ'त्ति न शक्नोति परिकथयितुं नगरगुणानरण्यमागतोऽरण्यवासिम्लेच्छेभ्यः, कुत इत्याह–उपमायां त्वत्र नगरगुणेष्वरण्ये वाऽसत्यामिति, कथानकं पुनरेवम्–म्लेच्छः कोऽपि महारण्ये, वसति स्म निराकुलः । अन्यदा तत्र भूपालो, दुष्टाश्वेन प्रवेशितः ॥ १ ॥ म्लेच्छेनासौ नृपो दृष्टः, सत्कृतश्च यथोचितम् । प्रापितश्च निजं देशं, सोऽपि राज्ञा निजं पुरम् ॥ २ ॥ ममायमुपकारीति, कृतो राज्ञाऽतिगौरवात् । विशिष्टभोगभूतीनां, भाजनं जनपूजितः ॥ ३ ॥ ततः प्रासादशृङ्गेषु, रम्येषु काननेषु च । वृतो विलासिनीसार्थैर्भुङ्क्ते भोगसुखान्यसौ ॥ ४ ॥ अन्यदा प्रावृषः प्राप्तौ, मेघाडम्बरमण्डितम् । व्योम दृष्ट्वा ध्वनिं श्रुत्वा, मेघानां स मनोहरम् ॥ ५ ॥ जातोत्कण्ठो दृढं जातोऽरण्यवास-गमं प्रति । विसर्जितश्च राज्ञाऽपि, प्राप्तोऽरण्यमसौ ततः ॥ ६ ॥ पृच्छन्त्यरण्यवासास्तं, नगरं तात ! कीदृशम् ? । स स्वभावान् पुरः सर्वान्, जानात्येव हि केवलम् ॥ ७ ॥ न शशाक तकां (तरां) तेषां, गदितुं स कृतोद्यमः । वने वने-चराणां हि, नास्ति सिद्धोपमा यतः(तथा) ॥ ८ ॥ १६ ॥ अथ दार्ष्टान्तिकमाह–'इय' गाहा,'इति' एवम्–अरण्ये नगरगुणा इवेत्यर्थः, सिद्धानां सौख्यमनुपमं वर्तते, किमित्याह–यतो नास्ति तस्यौपम्यं, तथापि बालजनप्रतिपत्तये किञ्चिद्विशेषेणाह-'एत्तो'त्ति आर्षत्वादस्य–सिद्धिसुखस्य इतो वाऽनन्तरम् औपम्यम्–उपमानम् 'इदं' वक्ष्यमाणं शृणुत वक्ष्ये इति ॥ १७ ॥ 'जह'गाहा, 'यथे'त्युदाहरणोपन्यासार्थः 'सर्वकामगुणितं' सञ्जातसमस्तकमनीयगुणं, शेषं व्यक्तम्, इह च रसनेन्द्रियमे-वाधिकृत्येष्टविषयप्राप्त्या औत्सुक्यनिवृत्त्या सुखप्रदर्शनं सकलेन्द्रियार्थावाप्त्याऽशेषौत्सुक्यनिवृत्त्युपलक्षणार्थम्, अन्यथा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	सिद्ध एवं सिद्ध्-पद प्राप्ति-विषयक: अधिकार:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[११], अंगसूत्र-[११]"विपाकश्रुत" मूलं एवं अभयदेवसूरिरचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४३] + गाथा: ॥१-२२॥

दीप अनुक्रम [५५-७७]

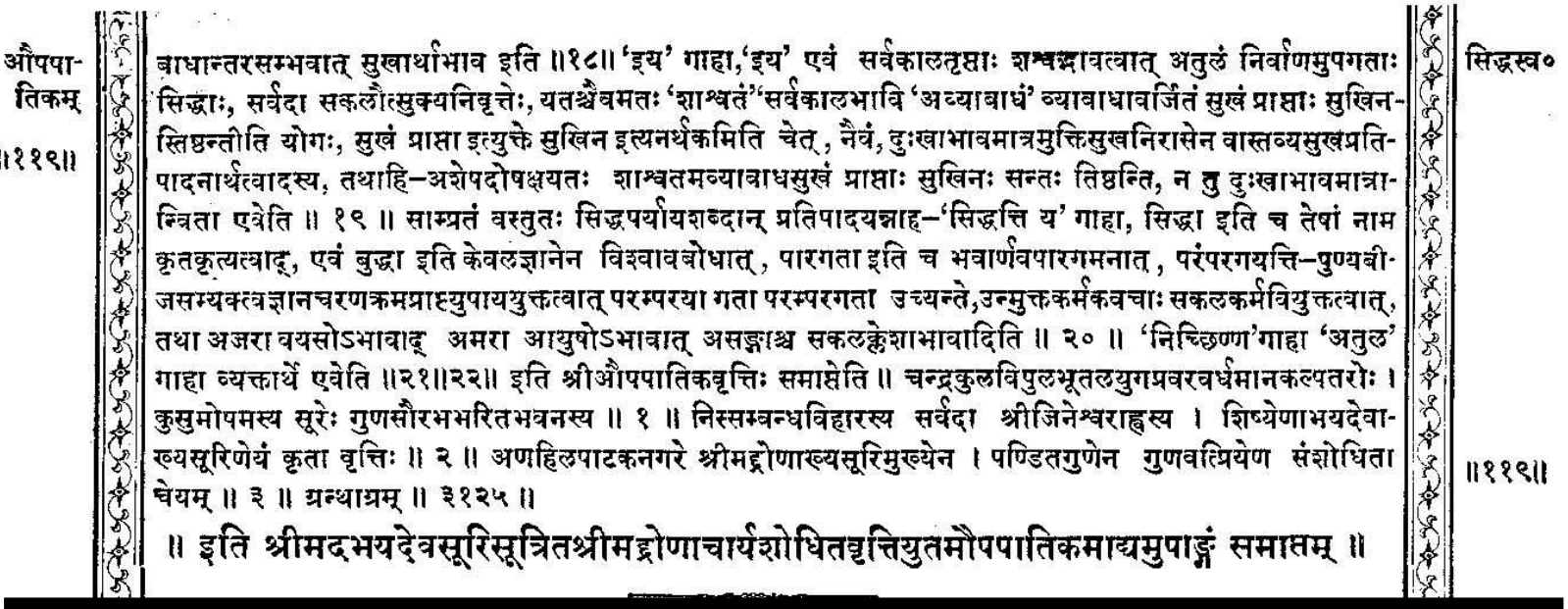

औपपातिकम् ॥११९॥

बाधान्तरसम्भवात् सुखार्थाभाव इति ॥१८॥ 'इय' गाहा,'इय' एवं सर्वकालतृप्ताः शश्वद्भावत्वात् अतुलं निर्वाणमुपगताः सिद्धाः, सर्वदा सकलौत्सुक्यनिवृत्तेः, यतश्चैवमतः 'शाश्वतं''सर्वकालभावि 'अव्याबाधं' व्याबाधावर्जितं सुखं प्राप्ताः सुखिनस्तिष्ठन्तीति योगः, सुखं प्राप्ता इत्युक्ते सुखिन इत्यनर्थकमिति चेत्, नैवं, दुःखाभावमात्रमुक्तिसुखनिरासेन वास्तव्यसुखप्रतिपादनार्थत्वादस्य, तथाहि–अशेषदोषक्षयतः शाश्वतमव्याबाधसुखं प्राप्ताः सुखिनः सन्तः तिष्ठन्ति, न तु दुःखाभावमात्रान्विता एवेति ॥ १९ ॥ साम्प्रतं वस्तुतः सिद्धपर्यायशब्दान् प्रतिपादयन्नाह–'सिद्धत्ति य' गाहा, सिद्धा इति च तेषां नाम कृतकृत्यत्वाद्, एवं बुद्धा इति केवलज्ञानेन विश्वावबोधात्, पारगता इति च भवार्णवपारगमनात्, परंपरगयत्ति–पुण्यबीजसम्यक्त्वज्ञानचरणक्रमप्राप्त्युपाययुक्तत्वात् परम्परया गता परम्परगता उच्यन्ते,उन्मुक्तकर्मकवचाः सकलकर्मवियुक्तत्वात्, तथा अजरा वयसोऽभावाद् अमरा आयुषोऽभावात् असङ्गाश्च सकलक्लेशाभावादिति ॥ २० ॥ 'निच्छिण्ण'गाहा 'अतुल' गाहा व्यक्तार्थे एवेति ॥२१॥२२॥ इति श्रीऔपपातिकवृत्तिः समाप्तेति ॥ चन्द्रकुलविपुलभूतलयुगप्रवरवर्धमानकल्पतरोः । कुसुमोपमस्य सूरेः गुणसौरभभरितभवनस्य ॥ १ ॥ निस्सम्बन्धविहारस्य सर्वदा श्रीजिनेश्वराह्वस्य । शिष्येणाभयदेवाख्यसूरिणेयं कृता वृत्तिः ॥ २ ॥ अणहिलपाटकनगरे श्रीमद्द्रोणाख्यसूरिमुख्येन । पण्डितगुणेन गुणवत्प्रियेण संशोधिता चेयम् ॥ ३ ॥ ग्रन्थाग्रम् ॥ ३१२५ ॥

॥ इति श्रीमदभयदेवसूरिसूत्रितश्रीमद्द्रोणाचार्यशोधितवृत्तियुतमौपपातिकमाद्यमुपाङ्गं समाप्तम् ॥

सिद्धस्व० ॥११९॥

आगमसूत्र १२, [उपांगसूत्र ०१] 'औपपातिक' सूत्र + अभयदेवसूरि सूत्रित वृत्तिः परिसमाप्तः

भाग 14	विपाकश्रुत- अंगसूत्र- [११] औपपातिक- उवंगसूत्र-[१] मूलं एवं टीका परिसमाप्ताः मूल संशोधकः सम्पादकश्च पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब किंचित् वैशिष्ट्य समर्पितेन सह पुनः संकलनकर्ता मुनि दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

	सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि भाग १ से ४० में कहां क्या मिलेगा?		
भाग	इस भागमे समाविष्ट आगम के नाम और आगम-क्रम		कुलपृष्ठ
01	आगम ०१ आचार मूलं एवं वृत्ति भाग-१ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन- १,२		३१४
02	आगम ०१ आचार मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन- ३ से ९, श्रुतस्कन्ध- २		५८६
03	आगम ०२ सूत्रकृत मूलं एवं वृत्ति, भाग-१ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन- १ से १३		४९८
04	आगम ०२ सूत्रकृत मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन १४ से १६, श्रुतस्कन्ध-२		३९२
05	आगम ०३ स्थान मूलं एवं वृत्ति, भाग-१ स्थान- १ से ४		५९४
06	आगम ०३ स्थान मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ स्थान- ५ से १० संपूर्ण		४९४
07	आगम ०४ समवाय मूलं एवं वृत्ति.		३३८
08	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-१ शतक- १ से ६		५९२
09	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ शतक- ७ से ११		५५२
10	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-३ शतक- १२ से २०		५१४
11	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-४ शतक- २१ से ४१ संपूर्ण		३८४
12	आगम ०६ ज्ञाताधर्मकथा मूलं एवं वृत्ति.		५२२
13	आगम-७,८,९,१०उपासकदशा, अंतकृतदशा, अनुत्तरोपपातिकदशा, प्रश्नव्याकरण मूलं एवं वृत्ति.		५३८
14	आगम-११,१२, विपाक, उववाई मूलं एवं वृत्ति.		३८४
15	आगम १३ राजप्रश्नीय मूलं एवं वृत्ति.		३१४
16	आगम१४ जीवाजीवाभिगम भाग-१ मूलं एवं वृत्ति. [प्रतिपत्ति-३-अतर्गत] सूत्र- १ से १३८		४८०
17	आगम१४ जीवाजीवाभिगम भाग-२ मूलं एवं वृत्ति. [प्रतिपत्ति-३-अतर्गत] सूत्र- १३९ से प्रतिपत्ती-१० संपूर्ण		४८८
18	आगम १५ प्रज्ञापना भाग-१ मूलं एवं वृत्ति. पद- १ से ५		४२६
19	आगम १५ प्रज्ञापना भाग-२ मूलं एवं वृत्ति. पद- ६ से २२		५१४
20	आगम १५ प्रज्ञापना भाग-३ मूलं एवं वृत्ति. पद- २३ से ३६ संपूर्ण		३३६
21	आगम १६ सूर्यप्रज्ञप्ति मूलं एवं वृत्ति.		६१०

	सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि भाग १ से ४० में कहां क्या मिलेगा?		
भाग	इस भागमे समाविष्ट आगम के नाम और आगम-क्रम		कुलपृष्ठ
22	आगम १७ चन्द्रप्रज्ञप्ति मूलं एवं वृत्ति.		६१४
23	आगम१८ जंबूद्विपप्रज्ञप्ति भाग-१ मूलं एवं वृत्ति. वक्षस्कार- १ एवं २.		३७६
24	आगम१८ जंबूद्विपप्रज्ञप्ति भाग-२ मूलं एवं वृत्ति. वक्षस्कार- ३ एवं ४.		४२६
25	आगम१८ जंबूद्विपप्रज्ञप्ति भाग-३ मूलं एवं वृत्ति. वक्षस्कार- ५ से ७.		३४४
26	आगम १९-३२ निरयावलिका, कल्पवतंसिका, पुष्पिका, पुष्पचूलिका, वृष्णिदशा, चतु:शरण, आतुरपरत्याख्यान, महाप्रत्याख्यान, भक्तपरिज्ञा, तंदुलवैचारिक, संस्तारक, गच्छाचार, गणिविदया, देवेन्द्रस्तव मूलं एवं छाया		३१२
27	आगम ३३ थी ३९ मरणसमाधि मूलं एवं छाया, निशीथ, बृहत्कल्प, व्यवहार, दशाश्रुतस्कंध, जीतकल्प/पंचकल्प, महानिशीथ मूलं एव		३३०
28	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-१, निर्युक्ति- १ से ५२१		४६६
29	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-२, निर्युक्ति- ५२२ से ९५१		४४२
30	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-३ निर्युक्ति- ९५२ से १२७३ अपूर्ण, [अध्ययन- १ से ४ अपूर्ण]		४६४
31	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-४ निर्युक्ति- १२७३ अपूर्ण से १६२३, [अध्ययन- ४ अपूर्ण से ६ संपूर्ण]		४२६
32	आगम ४१/१ ओघनिर्युक्ति मूलं एवं वृत्ति.		४७२
33	आगम ४१/२ पिंडनिर्युक्ति मूलं एवं वृत्ति.		३७६
34	आगम ४२ दशवैकालिक मूलं एवं वृत्ति.		५९०
35	आगम ४३ उत्तराध्यन मूलं एवं वृत्ति, भाग-१, अध्ययन- १ से ५		५२२
36	आगम ४३ उत्तराध्यन मूलं एवं वृत्ति, भाग-२, अध्ययन- ६ से २१		४८२
37	आगम ४३ उत्तराध्यन मूलं एवं वृत्ति, भाग-३, अध्ययन- २२ से ३६		४६६
38	आगम ४४ नन्दिसूत्र मूलं एवं वृत्ति.		५२८
39	आगम ४५ अनुयोगद्वार् मूलं एवं वृत्ति.		५६०
40	कल्प[बारसा]सूत्र... चतु:शरण, तन्दुलवैचारिक, गच्छाचार मूलं एवं वृत्ति.		३९४

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य आनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

आगम [11-12]

पूज्य आगमोध्धारक आचार्य श्री सागरानंदसूरीश्वरेण संशोधित: संपादितश्च

विपाकश्रुत(अंगसूत्र) एवं "औपपातिक(उपांग)सूत्र"

[मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:]

(किंचित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

मुनि दीपरत्नसागरेण पुन: संकलित:

"विपाकश्रुत + औपपातिक" मूलं एवं वृत्ति: नामेण परिसमाप्त:

"सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि" श्रेणि, भाग- 14

आगम
वाचना शताब्दी वर्ष

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि

मूल संशोधक

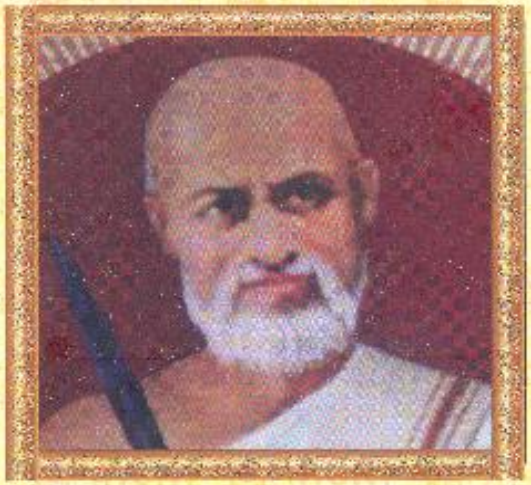

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य
श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज

अभिनव-संकलनकर्ता

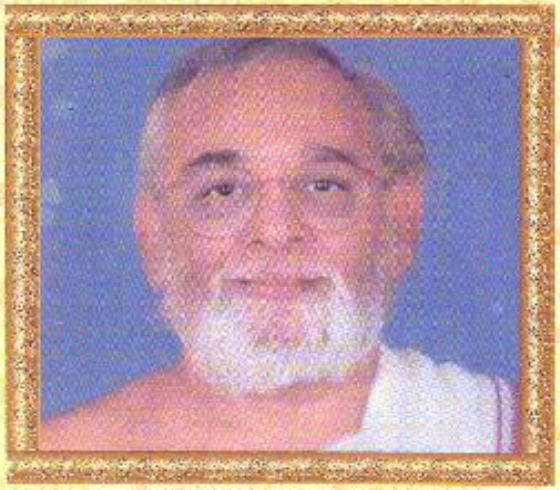

आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी
[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

प्रत-प्राप्ति और पेज-सेटिंग कर्ता : www.jainelibrary.org के चेरमन श्री प्रवीणभाई शाह, अमेरिका
मुद्रक : नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस अमदावाद Mo 9825598855 / 9825306275

ईस प्रोजेक्ट के संपूर्ण-अनुदान-दाता

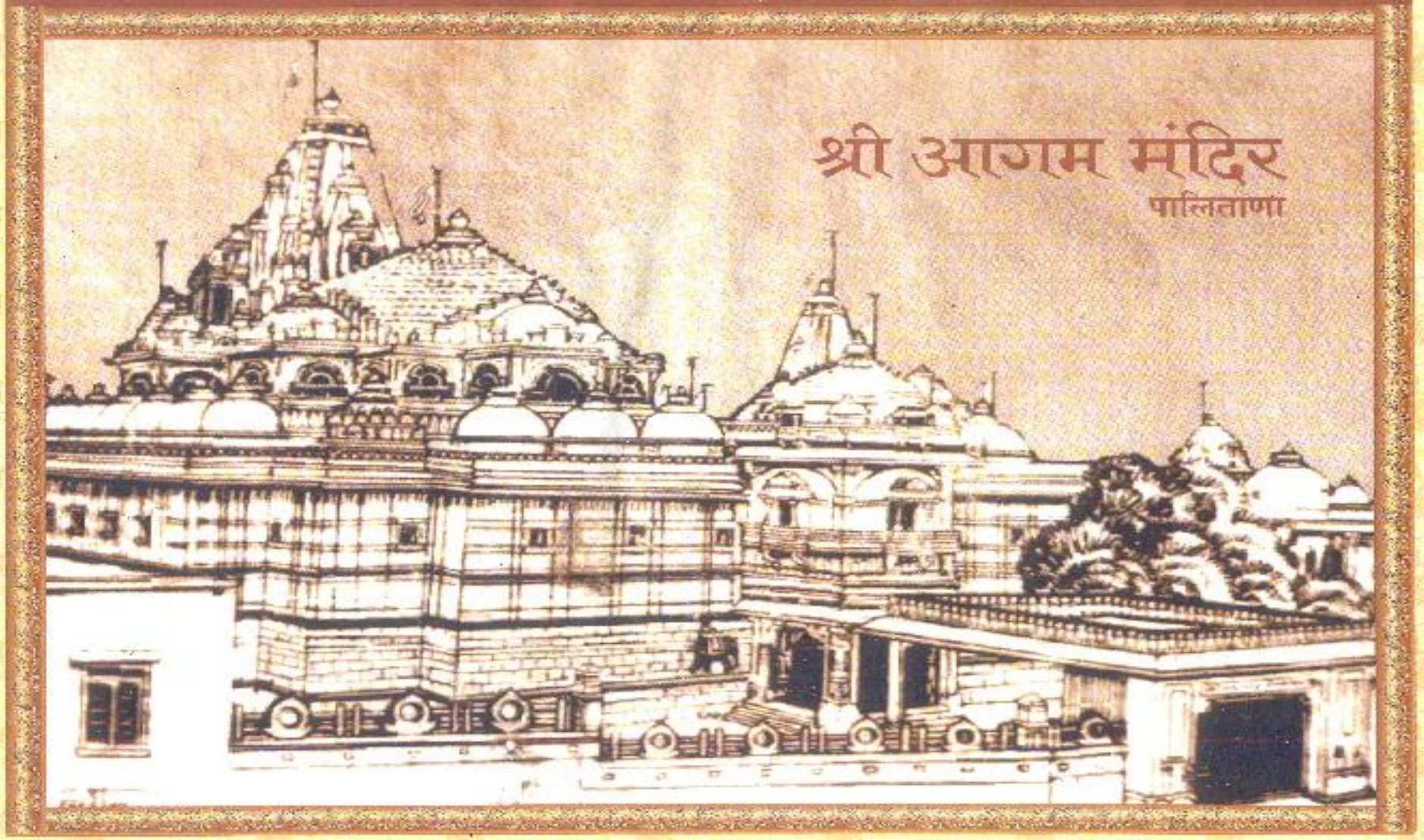

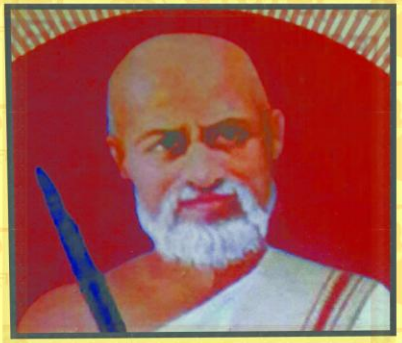

मूल संशोधक

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य

श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराजसाहेब

आगम ११-१२

"विपाकश्रुत तथा औपपातिक" मूलं एवं वृत्तिः

अभिनव-संकलनकर्ता

आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी

[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]